

भारत में विस्थापन की अवधारणा और इतिहास

वासवी किड़ो

खण्ड-एक

भारत में विस्थापन की अवधारणा और इतिहास

डॉ. वासवी किड़ो

स्वराज प्रकाशन
नई दिल्ली-110002

प्रधान कार्यालय

स्वराज प्रकाशन

4648/1, 21-अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

दूरभाष : 011-23289915

Email : swaraj_prakashan@yahoo.co.in

शाखा

288, ई. डब्लू.एस., शास्त्रीपुरम

आगरा-282007 (उ.प्र.)

मूल्य : ₹ 350

प्रथम संस्करण : 2017

ISBN : 978-93-83514-16-8

अजय मिश्रा द्वारा **स्वराज प्रकाशन**, 4648/1, 21, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 से प्रकाशित तथा ओम आफसेट, जगतपुरी शाहदरा, दिल्ली- 110093 में मुद्रित

यह ग्रंथ कोयल कारो, नेतरहाट के शहीदों,
एच.ई.सी., सी.ई.एस.सी. और कर्णपुरा घाटी
बचाओ आंदोलन के शहीदों और आंदोलनकारियों, पकरी बरवाडीह
सोयको, और भैरवी जलाशय के शहीदों
को समर्पित

हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति और हमारा
स्वराज्य अपनी जरुरतें दिनोंदिन रहने पर,
भोग्यमय जीवन पर निर्भर नहीं करते;
परन्तु अपनी जरुरतों को नियंत्रित रखने पर,
त्यागमय जीवन पर, निर्भर करते है।

6/10/1921-गांधीजी

दो शब्द

विस्थापन आदिवासी भारत की एक ऐसी पीड़ा है जिसके अनकहे अव्यक्त गाथाएं अब भी दफन हैं। विस्थापन को समझना और इस समस्या की तह में जाने का काम अब भी बाकी है। विकास से उपजी विस्थापन की समस्या को आदिवासी समाज का जिनोसाइड कहा जा सकता है। जहां आदिवासी धीरे धीरे धीमी मौत की ओर अग्रसर हो रहे हैं। ऐसी मौत जिसमें कोई खून तो नहीं बह रहा है लेकिन लगातार अभाव कमी और जीवन की बुनियादी समस्याओं से जूझते जूझते वह कमजोर और असहाय हो जाता है जो उनके जीवन में अंधेरा लाती है और वह निराशा में जीते हुए मर जाता है। उसके जीवन में प्रगति के तमाम रास्ते बंद हो जाते हैं। विस्थापितों की समस्याओं से रूबरू होने पर ऐसे ही अनेक बातें उभर आती हैं।

वासवी किड़ो प्रारंभ से ही विस्थापन के विरोध में लड़ रही हैं। मैं इन्हें शुरू से इस मसले पर लड़ता देखता आया हूं। मैं वासवी किड़ो को पिछले तीस सालों से जानता हूं। वासवी किड़ो लेखिका ने अपनी पुस्तक भारत में विस्थापन का इतिहास उसकी अवधारणा में समूचे भारत में आजादी के बाद से लगातार हो रहे बड़ी परियोजनाओं के कारण हुए विस्थापन की एक व्यापक तस्वीर प्रस्तुत की है। वासवी जी ने अनेक आंकड़े प्रस्तुत किए हैं और बताया है कि विस्थापन की मार से न केवल आदिवासी बल्कि दलित भी तबाह हैं और अन्य जातियों को भी विस्थापन का दंश झेलना पड़ रहा है। उन्होंने पुस्तक में इस बात का उद्घाटन किया है कि विस्थापन की समस्या का शिलान्यास झाड़खंड से ही 1908 से प्रारंभ हुआ जो बदस्तूर अब भी जारी है। उन्होंने बताया है कि विस्थापन केवल बड़े बांधों की वजह से ही नहीं बल्कि कोयला खनन से, बॉक्साइट के खनन से, यूरेनियम के खनन से बड़े पैमाने पर हुआ है। यही नहीं राष्ट्रीय पार्क, सेचुरी की स्थापना से भी बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ है। वर्त्तमान दौर में ग्लोबलाइजेशन के चरम दौर में जब कारपोरेट सेक्टर बड़े पैमाने पर फैक्टरी और कारखाना लगाना चाहती है बड़े पैमाने पर

विस्थापन की संभावना बढ़ गई है। दुखद पहलू तो यह है कि भारत में विस्थापन की समस्या को आजादी के लगभग 70 सालों में एक बड़ी त्रासदी के तौर पर सरकार ने चिन्हित करने का काम किया। लेकिन आज तक पुनर्वास की समस्या का कोई निदान नहीं ढूंढा जा सका है। पूरे देश में विकासजनित विस्थापन स्थल पर कोई ऐसा उदाहरण नहीं मिलता है जिससे लगे में आदर्श पुनर्वास के प्रयास किए जा चुके हैं।

संभव है कि विस्थापन पर हो रहे अध्ययन और इस पुस्तक से विस्थापन के विभिन्न पहलूओं पर रोशनी पड़ सकेगी और आने वाले दिनों में विस्थापन के बिना विकास की अवधारणा को गढ़ा जा सकेगा। विस्थापन पर अब भी अकादमिक तौर पर काम करने की आवश्यकता है। विस्थापन पर अधिक शोध और अधिकाधिक पुस्तकों की आवश्यकता महसूस की जा रही है ताकि आदिवासी समाज के सामाजिक सांस्कृतिक आध्यात्मिक अवमूल्यन का सबसे बड़ा कारण विस्थापन का सर्वमान्य हल निकाला जा सके।

यहां यह उल्लेखनीय होगा कि यू. पी. ए. की सरकार ने 2013 में द राइट टू फेयर कमपनसेशन एंड ट्रांसपरेंसी इन लैंड एक्वीजेशन रिहैबीलिटेशन रिसेटेलमेंट एक्ट लाया है जिसके तहत यह व्यवस्था है कि पांचवीं अनुसूची के इलाके में अर्थात् आदिवासी इलाके भूमि की जमीन का अधिग्रहण नहीं किया जा सकेगा। यदि जमीन का अधिग्रहण आवश्यक है तो ग्राम सभा की सहमति के बाद ही जमीन का अधिग्रहण नहीं किया जा सकेगा। अगर इसे अक्षरशः लागू किया जाए तो आनेवाले समय में विस्थापन का दंश कम हो सकेगा।

पुस्तक के लिए वासवी किड़ो को बधाई देना चाहता हूं साथ ही यह कामना करता हूं कि वे भविष्य में पुस्तक को विस्तार देंगी। यह पुस्तक विस्थापन की समस्या को समग्रता में समझने में सहायता प्रदान करेगी।

—डॉ. रामेश्वर उरांव

अध्यक्ष

राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग, नई दिल्ली

12 सितम्बर 2016,

करमा भादो शुक्ल पक्ष

दो शब्द

विस्थापन की अवधारणा और इतिहास पर पुस्तकों का अभाव रहा है। विस्थापितों की पीड़ा को उकेरती पुस्तकें कम ही लिखी गई हैं। ऐसे में वासवी किड़ो के द्वारा लिखी पुस्तक का खास महत्व है। पुस्तक में इन्होंने विस्थापन की अवधारणा, विस्थापन की परिभाषा को गढ़ने का काम किया है। यही नहीं विस्थापन के इतिहास पर भी तीक्ष्ण दृष्टि डालने में उन्होंने कोई कोर कसर नहीं छोड़ी है। राज्य गठन के पूर्व तमाड़ विधान सभा चुनाव प्रचार के दरम्यान एक ढाबे में वासवी से व अन्य पत्रकारों से पहली बार मुलाकात हुई थी। तब से वासवी की गतिविधियों के बारे में अवगत होती रही हूं। वे राइटर भी रही हैं और फाइटर भी। वे न केवल डेढ़ दशक से भी अधिक पत्रकारिता करती रही हैं बल्कि एक्टिविस्ट की तरह मुद्दों को उठाती भी रही हैं। फलतः विस्थापन विरोधी बड़े आंदोलनों के साथ इनका गहरा जुड़ाव रहा है। उन्होंने लिखते हुए नेतरहाट आंदोलन को नेतृत्व देने का काम किया। इससे विस्थापन की समस्या को गहरे तौर पर समझने और उस पर विस्तारपूर्वक लिखने का वासवी किड़ो ने बीड़ा उठाया यह सराहनीय है। उन्होंने विस्थापन के विविध पहलूओं औरतों और बच्चों पर सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक, मनोवैज्ञानिक, भावनात्मक प्रभाव की विशद् चर्चा की है। आजादी पूर्व और आजादी के बाद झाड़खंड के चप्पे चप्पे में हो रहे विस्थापन और 2013 के लारा कानून के आने के बाद विस्थापन की हर संभव बढ़ोतरी के मद्देनजर सी एन टी व एस पी टी एक्ट के संशोधन करने की सरकार की जिद् से होनेवाले बड़े पैमाने पर विस्थापन को उन्होंने रेखांकित किया है और अनेक आंकड़े प्रस्तुत किए हैं। यह सच है कि आज आदिवासियों और दलितों को विस्थापित तो किया गया लेकिन आज तक पुनर्वास के कोई आदर्श गांव स्थापित नहीं किए जा सके। न ही आदिवासियों और दलितों को विकास की प्रक्रिया में भागीदार ही बनाया गया। पंचशील के सिद्धान्तों को दफन ही कर दिया गया। मैं वासवी किड़ो को धन्यवाद देती हूं कि उसने यह

काम किया। उम्मीद है वे अपने काम को विस्तार देंगी और इससे देश का आदिवासी और दलित समाज लाभान्वित होगा। यह किताब देश के लोगों को आदिवासियों की त्रासदी से अवगत कराने के लिए का एक माकूल किताब है। देश के लोगों की आदिवासियों के प्रति मानसिकता बदलने में यह पुस्तक कारगर सिद्ध होगी। यह किताब अदेखा भारत का आइना है।

—रमणिका गुप्ता
संस्थापक
रमणिका फाउंडेशन
अखिल भारतीय आदिवासी साहित्यिक मंच

आभार

विस्थापन के विभिन्न पहलूओं पर यह शोध ग्रंथ आधारित किताब है। वैसे तो विस्थापन के इतिहास को पूरी तरह समेट पाना एक चुनौती है। फिर भी यह कोशिश की गई है कि विस्थापन लानेवाली विकास की मेगा परियोजनाओं के बारे में जानकारी एकत्रित हो जाए। झाड़खंड देश के उन राज्यों में से है जहां विकासजनित विस्थापन के सबसे अधिक मामले हैं।

यों तो विस्थापन की अनेक तरीके से व्याख्या की जाती है। भारत पाकिस्तान विभाजन के समय भी 15 मिलियन लोगों के विस्थापित होने की बात कही जाती है। बाढ़, सुखाड़, भूकंप के कारण भी होनेवाले विस्थापन की चर्चा की जाती है। लेकिन यह तो प्राकृतिक आपदा की वजह से समय समय पर होनेवाला विस्थापन है। विकास की बड़ी परियोजनाओं की वजह से हो रहे सतृत विस्थापन की एक लम्बी कड़ी है जिसे कभी समस्या मानने का काम किया ही नहीं गया। ब्रिटिशकालीन परियोजनाओं के कारण विस्थापन के आंकड़े प्रमाणिक तौर पर रिकार्ड के अभाव में बहुत दावे के साथ प्रस्तुत नहीं किए जा सकते हैं। आजाद भारत में भी जिन विकास की मेगा परियोजनाओं के कारण विस्थापन हुए उनमें से भी बहुत से प्रोजेक्ट के रिकार्ड उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे में आजादी के पूर्व और आजादी के बाद के विस्थापन के सही आंकड़ों को प्रस्तुत करना अनुमान लगाने के बराबर है।

यह सर्वविदित है कि विभिन्न केंद्रीय सरकारों ने कभी भी पूरे देश में विकास के कारण हुए विस्थापन की समस्या को रेखांकित करते हुए इसके ठोस आंकड़ों को प्रस्तुत नहीं किया है। विभिन्न शोधवेत्ताओं, शोधार्थियों ने अलग अलग विकास की योजनाओं पर शोध करके अलग अलग आंकड़े प्रस्तुत किए हैं। साधारणतः शोधवेत्ताओं के आंकड़े सरकार के विभिन्न केद्रीय संस्थानों के द्वारा जारी आंकड़ों से मेल नहीं खाते हैं। यह आंकड़े सरकारी आंकड़ों से अधिक बताए गए हैं। अतएव विस्थापन का भारत में सही सही आंकड़े प्रस्तुत कर पाना किसी के लिए भी चुनौती

भरी बात है। अनुमान से 8 करोड़ के विस्थापन का आंकड़ा प्रस्तुत किया जाता रहा है। यह आंकड़ा अब पुराना पड़ चुका है और नए आंकड़ों पर गौर करने की जरूरत है। यह आंकड़ा 10 करोड़ से भी अधिक है।

विस्थापन का सबसे नकारात्मक प्रभाव महिलाओं और बच्चों पर पड़ता है। लेकिन इसपर भी बहुत काम नहीं किए गए। ऐसा कोई शोध विश्लेषण उपलब्ध नहीं है जो महिलाओं और बच्चों के हालात पर फोकस करता हो।

कई विस्थापितों के पुनर्वासित गांवों और क्षेत्रों से लड़कियों की ट्रैफिकिंग होती है और उनके अधिकारों की रक्षा नहीं हो पाती है। आजीविका के साधन के छीन जाने पर वे पलायन करने को मजबूर होते हैं। रैयत से रेजा बनने की उनकी पीड़ा को कहीं भी स्थान नहीं मिल पाता है। बाल मजदूरी और बाल श्रमिकों की तादाद बढ़ जाती है। विस्थापितों की पारम्पारिक सामाजिक सांस्कृतिक रीति रिवाज और पर्यावरण का एक बार नुकसान होती है तो उसकी भरपाई कभी नहीं हो पाती है। ऐसा देखा गया है कि एक बार उजड़ने के बाद कोई पारम्पारिक रूप से बस नहीं सका है।

पुस्तक में विस्थापन विरोधी आंदोलन को भी समेटने की कोशिश की गई है।

उम्मीद है कि पुस्तक विकासजनित विस्थापन की समस्याओं के अध्ययन के लिए उपयोगी होगी साथ ही विस्थापन की समस्या से जूझ रहे लोगों के लिए उपयोगी जानकारी मुहैया करा पाएगी।

विस्थापन के मसले पर किताब लिखने का विचार वर्षों पहले मन में पनपा था। तब मैं अखबार के लिए समाचार संकलन का कार्य कर रही थी। एक अखबारनवीस के बतौर उन इलाकों में घूमने और विस्थापन विरोधी आंदोलनों को नजदीक से देखने समझने का अवसर प्राप्त हुआ था। विस्थापन की समस्या झाड़खंड के चप्पे चप्पे में व्याप्त रही है और अब यह दिनोंदिन भयावह होती जा रही है।

झाड़खंड में विस्थापन के विरोध में चले रहे आंदोलनों में कोइलकारो जलविद्युत परियोजना विरोधी आंदोलन और नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज विरोधी आंदोलन हाल के दशकों यानी अस्सी और नब्बे के दशक के बड़े आंदोलनों में से एक रहा है। इन आंदोलनों की खबरों का कवर करने के साथ आंदोलनों का नेतृत्व करने का अवसर प्रदान हुआ है। नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज आंदोलन का नेतृत्व करने और उसे मजबूती प्रदान कर विस्थापन की गहरी पीड़ा को समझने और उसे मुकाम देने का अवसर मिला है। ऐसे में विस्थापन के विभिन्न पहलूओं को ग्रंथ का आधार बनाने

का मकसद इस मसले पर अकादमिक तौर पर अध्ययन और शोध के मार्ग को प्रशस्त करना भी रहा है।

इस महत्ती उद्देश्य के लिए मैं सबसे पहले रांची विश्वविद्यालय के कुलपति डा. रमेश पांडेय, मेरी निर्देशिका राजनीति विभाग की विभागाध्यक्ष, रांची विश्वविद्यालय, डा. टुलु सरकार को हृदय से धन्यवाद देना चाहती हूं जिन्होंने शोध ग्रंथ के लिए मार्गनिर्देशन किया।

मैं ग्रंथ के निर्देशन में सहयोग के लिए डॉ. एस पी सिंह और सहायक प्रो. जे. पी. खरे को भी हार्दिक धन्यवाद करती हूं। उन्होंने भी अनेक सुझाव देकर पुस्तक के अनेक बिन्दुओं की ओर ध्यान आकृष्ट कराया।

शोध कार्य के लिए सामग्री संकलन में आंदोलन के विभिन्न साथियों कोइलकारो जनसंगठन के अध्यक्ष सोमा मुण्डा, धनिक गुड़िया, रेजन गुड़िया, विजय गुड़िया, सदर कंडुलना, मुक्ता कंडुलना, मसीहदास कंडुलना, अन्नाकालेतुस कंडुलना, अनिता मुंडु, निमी, नरमी गुड़िया, स्व. पौलूस गुड़िया, माइकल गुड़िया और जोलेन गुड़िया, वारसेलयानी मुण्डा, शांति, बसंती, आदि ने मदद किया। विस्थापन विरोधी एकता मंच के कुमार चंद्र मार्डी, अरविंद अंजुम कर्णपुरा बचाओ संघर्ष समिति के दीपक दास, एच ई सी. हटिया विस्थापित परिवार समिति के सभी युवा नेताओं का भी शुक्रिया अदा करना चाहती हूं। नर्मदा आंदोलन के 30 सालों का इतिहास उपलब्ध कराने के लिए मेधा दी का हार्दिक धन्यवाद करती हूं। ई मेल द्वारा सामग्री भेजने के लिए मधुरेश जी का भी शुक्रिया अदा करती हूं। विस्थापन विरोधी आंदोलन की अगुवाई करनेवाले विभिन्न सामाजिक कार्यकर्त्ताओं एन. ए. पी. एम. से जुड़े प्रफुल्ल सामन्तरा, डॉ. सुनीलम्, विमल भाई, मीरा, रमणिका गुप्ता, बंधुआ मुक्ति मार्चा के स्वामी अग्निवेश, इंसाफ के अनिल चौधरी, राष्ट्रीय वन जन श्रमजीवी यूनियन के महासचिव श्री अशोक चौधरी, कामरेड रोमा, नदी घाटी मार्चा के गौतम बंदोपाध्याय, फादर साबरी, सिस्टर इमीलिया, तरसिला खलखो, जेरोम जेराल्ड, इन सबका सहयोग नहीं होता तो शोध के लिए आवश्यक सामग्री का संग्रह संभव नहीं हो पाता।

राज्य के प्रथम मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी, भाकपा के पूर्व सांसद भुवनेश्वर प्रसाद मेहता, माकपा के सचिव गोपीकांत बक्सी, प्रफुल्ल लिंडा, अजय सिंह, सुशांतो, निरसा के विधायक अरूप चटर्जी, सपा नेता मनोहर यादव, जदयू नेता जलेश्वर महतो, कांग्रेस के पूर्वमंत्री सुबोधकांत सहाय आदि ने विचार विमर्श में सहयोग दिया। इसके लिए उनका हार्दिक शुक्रिया अदा करती हूं।

इस ग्रंथ को पूरा करने में मेरे परिवार के सभी सदस्यों पत्रकार संतोष किड़ो, राजेंद्र मुण्डा, आशीष किड़ो, सेत मालतो, आलोका कुजूर ने भी इसके लिए अपने स्तर से सहयोग किया जिनकी वजह से यह संभव हो पाया। पारिवारिक व घरेलू कार्यों में सहयोग करने से मेरे लिए लेखन संभव हो पाया।

–वासवी किड़ो

14 अक्टूबर 2016

अनुक्रमणिका

भारत में विस्थापन की अवधारणा एवं उसका इतिहास

विस्थापन की समस्या के उत्स की खोज, इसका प्रारंभ और इसके अवधारणा के रूप में विकास की पड़ताल जरूरी है। विस्थापन की समस्या को किस दौर में समझा गया और इसे किस तरह से विश्लेषित किया गया। भारत के किस क्षेत्र से विस्थापन के खिलाफ आवाज उठी और इसे देशव्यापी सवाल के तौर पर उठाया गया। भारत के किन किन इलाकों में यह समस्या गंभीरतम रूपों में है। विस्थापन से प्रभावित होनेवालों में किन समुदायों के लोग ज्यादा है। विकास क्या बिना विस्थापन के हो सकता है? या फिर विस्थापन से उपजी पीड़ा के समाधान के लिए पुनर्स्थापन और पुनर्वास नीति का सही तरीके से पालन के लिए कोई प्रयास किए गए हैं या नहीं। विस्थापन का पूरे देश में और विशेषकर आदिवासी इलाकों में क्या असर पड़ा है। इससे सामाजिक सांस्कृतिक जीवन कितना प्रभावित है। विस्थापन की समस्या ने आध्यात्मिक और आर्थिक जीवन को कितना प्रभावित किया है। औरतों और बच्चों का जीवन किस स्तर तक प्रभावित हुआ है। जहां कहीं भी थोड़े पुनर्वास के काम हुए हैं वहां वास्तव में आज क्या हालात हैं। विस्थापन का पर्यावरण पर कितना नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। जंगलों और हरे भरे इलाके के उजड़ने का समूचे मानव जाति पर क्या असर पड़ा है।

ग्लोबलाइजेशन के इस दौर में जब विकास की तीव्र आंधी चल रही है और विकास का मानवीय चेहरा गौण होता जा रहा है ऐसे में विस्थापन जैसी समस्या का महत्व बढ़ जाता है। आज के दौर में जब प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और औद्योगिक विकास की रफ्तार में शामिल बहुराष्ट्रीय कंपनियां और देशी कंपनियां विकास की गंगा बहाने का दावा कर रही हैं। विस्थापन पर बहस करना अति आवश्यक है। पूर्व में किए गए विकास से बड़े पैमाने पर लोगों को उजाड़ने की कार्रवाई हुई है। उनका सही तरीके से पुनर्वास नहीं किया गया है।

इसलिए इस अध्ययन का महत्व बढ़ जाता है कि विकास की बलि बेदी पर कुर्बान हुए लोगों के नागरिक अधिकारों के सुरक्षा की गांरटी हर हाल में सुनिश्चित होनी चाहिए।

विकास के इस दौर में खान खनिजों पर कंपनियां मालिकी कायम तो करना चाहती हैं लेकिन किसी कीमत पर मानवाधिकार की रक्षा नहीं करना चाहती हैं। विकास के नाम पर फैक्टरी की स्थापना के साथ सामाजिक विकास और सामुदायिक विकास के दायित्व से विमुख कंपनियां केवल और केवल मुनाफा कमाना चाहती हैं। मुनाफा की राशि सामुदायिक विकास के लिए व्यय नहीं करना चाहती हैं। विकास के साथ किसी तरह के सामाजिक और कल्याणकारी कार्य कंपनियां नहीं करना चाहती है। ऐसे में मानव सभ्यता और संस्कृति पर सवालिया निशान लगता है और समाज और देश की प्रगति केवल मुट्ठी भर लोगों तक ही सीमित रह जाएगी। ऐसे में गरीब और गरीब और अमीर और अमीर होते जाएंगे। जैसा कि 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद हुआ है। पूरी दुनिया में अरबपतियों की संख्या बढ़ गई है और झाड़खंड जैसे गरीब और पिछड़े इलाके का विकास अवरूद्ध है। आदिवासी इलाके के विकास के लिए जिस तरह पंडित नेहरू के पंचशील के सिद्धान्त दिए उसका अनुपालन कंपनियां नहीं करना चाहती। न ही संविधान प्रदत्त आदिवासी अधिकारों की रक्षा और सम्मान करना चाहती है। यह कंपनियों के साथ बहुत बड़ा संकट है। कंपनियां अपने को सविधान से उपर मानती हैं।

विकास के साथ प्रत्येक नागरिकों की मौलिक अधिकारों की रक्षा कैसे हो यह इस अध्ययन का प्रमुख पहलू है। इसलिए अध्ययन का महत्व बढ़ जाता है।

समस्या की प्रासंगिकता इस तरह समझी जा सकती है कि खगोलीकरण के इस युग में केवल और केवल औद्योगिकीकरण की तेज आंधी को ही विकास का बुनियादी आधार माना जा रहा है। ग्लोबलाइजेशन के इस युग में उद्योगों को ही आर्थिक विकास और जीवन जीविका का आधार बताया जा रहा है। भारत विकसित देशों का एक बड़ा बाजार है। इसलिए बहुराष्ट्रीय कंपनियां यहां निवेश कर अपना विस्तार करना चाहती है। इस प्रतिर्स्पधा में देशी और बहुराष्ट्रीय कंपनियां यहां निवेश कर मुनाफा कमाना चाहती हैं। औद्योगिक विस्तार के साथ विस्थापन की बड़ी त्रासदी सामने आएगी। जैसा

कि ठीक भारत की आजादी के बाद हुआ है। विकास के नाम पर स्थापित कल कारखानों से व्यापक पैमाने पर लोग उजाड़े गए। विस्थापन की विकराल होती समस्या आम तौर पर आदिवासी भारत की है। यानी कि जिन राज्यों व आदिवासी क्षेत्रों में खान खनिजों का अकूत भंडार है। इन प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के लिए ही पोस्को, वेदान्त, टाटा जैसी देशी विदेशी कंपनियां पूंजी निवेश करने को हर तरह का दमन उत्पीड़न कर रही है। कंपनियां खून खराबा करने को तैयार हैं। कोइलकारो गोलीकांड, दुमका काठीकुंड गोली कांड, कलिंगनगर गोली कांड, गोला गोली कांड, बड़कागांव गोलीकांड, सोयको गोली कांड जैसी वारदातों ने इसकी प्रांसगिकता को बढ़ा दिया है।

जन आंदोलनों ने विस्थापन का सवाल उठाकर विभिन्न तरह के अन्याय और अत्याचार का खुलासा किया है। इस समस्या ने सरकार का कल्याणकारी विरोधी चेहरा उजागर किया है। विस्थापित लोगों को स्कूल, अस्पताल, खेल के मैदान, पानी, बिजली की सुविधा उपलब्ध नहीं होती है। जहां कहीं भी विस्थापन हुआ लोग गरीबी, बेरोजगारी के चंगुल में फंस गए। आज जब सैकड़ों एम. ओ. यू. किए गए। इन्हें सरजमीं पर उतारा गया तो झाड़खंड का दो तिहाई हिस्सा उद्योगों से भर जाएगा और झाड़खंड की हरियाली और सामान्य जनजीवन समाप्त हो जाएगा। आज के दौर में विकास के विकल्प की तलाश की जानी चाहिए। जरूरत इस बात की है कि बिना विस्थापन के विकास की बात की जानी चाहिए। विस्थापन से एक बड़ी आबादी बर्बाद होती है और केवल मुट्रठी भर चंद लोगों को ही फायदा होता है।

इस अध्ययन का उद्देश्य विस्थापन की अवधारणा और इसके उत्पत्ति के इतिहास का अध्ययन कर इसे व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करना। तमाम तरह के विस्थापन का अध्ययन कर सामग्री का एक संग्रहात्मक तौर पर प्रस्तुत करना है। विस्थापन के विभिन्न पहलूओं का गहराई से अध्ययन कर समाज को और शैक्षणिक जगत को विशेष जानकारी से लैस करना है।

विस्थापन का समुदाय विशेष और महिलाओं तथा बच्चों पर प्रभाव का विशेष अध्ययन करना और इसके विभिन्न पक्ष को उजागर करना है। ताकि इनके कल्याण और हितों में बनाए गए कानूनों का लाभ समाज को मिल सके। इसके अध्ययन से समाजशास्त्रीय प्रभाव और परिवर्त्तनों की जानकारी

मिल सकेगी जो कि समाज के लिए उपयोगी होगी। विस्थापन के राजनीतिक और आर्थिक पहलू का अध्ययन कर सामाजिक और सांस्कृतिक बदलाव का दस्तावेज तैयार किया जा सकेगा। झाड़खंड जंगलों और पहाड़ों की धरती है और खान खनिजों से भरूपर होने से कंपनियां की गिद्ध दृष्टि लगी रहती है। लेकिन विस्थापन की पीड़ा झेल रहे आदिवासियों और दलितों के विकास के लिए उनकी कोई चिंता नहीं है। झाड़खंड राज्य विभिन्न विकास परियोजनाओं के कारण विस्थापन का दंश झेलने को अभिशप्त है।

इस अध्ययन से विकास के नए पहलूओं पर रोशनी पड़ेगी और इसका व्यापक लाभ सभी समाजों को मिलेगा। साधारण एवं आम जन और कंपनियों के बीच की दूरी कम होगी और सर्वसम्मत कोई रास्ता बनेगा जिससे कि पूरा समाज लाभान्वित होगा।

विस्थापन की अवधारणा

हमारी सभ्यता, हमारी संस्कृति और हमारा स्वराज्य अपनी जरूरतें दिनोंदिन बढ़ाते रहने पर, भोगमय जीवन पर निर्भर नहीं करते; परन्तु अपनी जरूरतों को नियंत्रित रखने पर, त्यागमय जीवन पर निर्भर करते हैं।

6 /10 /1921 महात्मा गांधी

विस्थापन शब्द आज देशव्यापी शब्द बन गया है। आज से पांच–छह दशक पूर्व तक भी विस्थापन शब्द और विस्थापन की समस्या जैसे सवाल किसी के जेहन में उतरते ही नहीं थे। साधारणतः विस्थापन के सवाल देश के खास समुदाय आदिवासी के द्वारा उठाए जाते रहे हैं। लेकिन तब भी इस बात पर गौर करने की जरूरत पहले नहीं समझी गई कि आखिर विस्थापन क्या है और विस्थापन की समस्या उपजी कहां से हैं। आखिर आदिवासी समुदाय के लोग ही विस्थापन के मुद्दे को क्यों उठाते रहे हैं। कालान्तर में विस्थापन के तरह तरह के अर्थ, परिभाषाएं और कारण गढ़े जाने लगे।एक जगह से हटकर या एक जगह को छोड़कर दूसरी जगह जाने को पलायन तो कहा गया।ऐसे तो गरीबी की वजह से रोजी रोटी कमाने के लिए एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर जाने को भी विस्थापन से जोड़ा जाने लगा। लोग अपनी जरूरत और प्रगति के लिए भी अपने पुराने स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर जाने लगे, उसको भी विस्थापन कहा गया। उंची शिक्षा पाने या फिर बेहतर जीवन के लिए भी लोग एक देश को छोड़कर दूसरे

देशों में गए और वहीं बस गए। लेकिन क्या वे विस्थापित कहलाएंगे! यह सवाल बहस के केंद्र में आया। लोग शिक्षा और रोजगार के लिए एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थानों में गए तो यह स्वैच्छिक तौर पर पलायन हुआ न कि किसी तरह की जोर जबरदस्ती के कारण वे अपनी जगह छोड़ने को मजबूर हुए। सम्पूर्ण भूमंडल में विस्थापन की समस्या एक नई समस्या के तौर पर उभरी है। इसके बावजूद विश्व के ख्याति प्राप्त विश्वविद्यालयों उदाहरणस्वरूप कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय इंग्लैड के शब्दकोष में विस्थापन की परिभाषा बहुत ही संक्षेप में और एक पंक्ति में दी गई है। अंग्रेजी में लिखा गया है कि "**द सिचवेशन इन विच पीपुल आर फोर्सड टू लिभ द प्लेस वेर दे नोरमली लीभ। यानी कि ऐसी परिस्थिति जिसमें लोगों को अपनी रहनेवाली जगह को छोड़ने के लिए जबरन बाध्य करना ही विस्थापन है।**[1]

संयुक्त राष्ट्र संघ के आर्थिक, सामाजिक सांस्कृतिक अधिकार समिति द्वारा 1997 में अपनाई गई सामान्य टिप्पणी 7 में जबरन बेदखली को इस तरह परिभाषित किया गया है–व्यक्तियों, परिवारों व समुदाय को उनकी ख्वाहिश के विरूद्ध उस भूमि या घर जिस पर उनका कब्जा हो और जिसके लिए जायज कानूनी व अन्य सुरक्षा प्रावधान न हों, से स्थाई या अस्थाई तौर पर हटा देना। इसमें कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को आवास का अधिकार एक मानवाधिकार है। उपयुक्त आवास का मानवाधिकार व भूमि का अधिकार एक सम्मानयुक्त जीवनयापन का अह्म हिस्सा है।इसलिए भूमि के अधिकार को मानवाधिकार के रूप में स्वीकार करना महत्वपूर्ण हो जाता है। उपयुक्त आवास के मानव अधिकार से जुड़े होने के अलावा भूमि का मानवअधिकार अन्य मानव अधिकारों मसलन भोजन, श्रम, स्वास्थ्य, व्यक्ति व निवास की सुरक्षा के साथ भी जुड़ा है।

इसके अलावा जबरन बेदखली उपयुक्त आवास के मानव अधिकार का उल्लंघन है और बेघरबारी को बढ़ाता है।

इस विचार को संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार आयोग के प्रस्ताव 1993/77 व 2004 /28 में भी पुनः दोहराया गया है।

कहा गया है कि जबरन बेदखली की वजह से अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकारों का भी उल्लंघन होता है, मसलन व्यक्ति की सुरक्षा और निवास सुरक्षा के मानवाधिकार। कुछ अन्य मामलों में जहां जबरन बेदखली के साथ

हिंसा जुड़ी हो और उचित प्रक्रिया का अभाव हो वहां इससे स्वास्थ्य भोजन, जल, आजीविका, शिक्षा क्रूर अमानवीय व अपमानजनक व्यवहार से स्वतंत्रता व आवाजाही की स्वायत्ता के मानवाधिकारों का भी हनन होता है।

विकास आधारित बेदखलीं एवं विस्थापन पर संयुक्त राष्ट्र के मूल सिद्धान्त व दिशानिर्देश 1993/77 के अनुच्छेद 4 से 8 में विस्थापन की परिभाषा देने की कोशिश की गई है। अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार मानकों के संदर्भ में जबरन बेदखली के वर्णन व अन्य प्रस्तावों के आधार पर कहा गया है कि दिशानिर्देश उन प्रक्रियाओं व त्रुटियों पर लागू किए जा सकते है जिनमें व्यक्तियों, जगह कम कर दें समूहों व समुदायों का जबरर्दस्ती अथवा अनचाहा विस्थापन किया गया हो। ऐसी स्थिति में जहां लोगों को उन आवासों, जमीनों या साझे संसाधनों से विस्थापित किया गया हो जिन पर वे आश्रित थे। जब इस बेदखली ने इन व्यक्तियों, समूहों व समुदायों को उस विशेष जगह पर बसने/घर बनाने या आजीविका कमाने से महरूम कर दिया हो तथा यह विस्थापन उन्हें कोई कानूनी व अन्य या सुरक्षा या प्रावधान मुहैया करवाए बगैर किया गया हो। इसके अनुच्छेद 5 में कहा गया है कि अर्न्तराष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत जबरन बेदखली एक विशेष मसला है जिसे कानूनी रूप से काश्तकारी की अवधि सुरक्षा के अभाव के साथ जोड़ा जाता है और जो उपयुक्त आवास के अधिकार का एक महत्वूपर्ण एवं अभिन्न अंग है। जबरन बेदखली के साथ लगभग उसी तरह के दुष्प्रभाव जुड़े हैं जैसे मनमाने विस्थापन के फलस्वरूप होते हैं। इनमें बड़े पैमाने पर लोगों का स्थानान्तरण, निष्कासन, निष्क्रमण, जातीय शुद्धिकरण तथा घरों,जमीनों व समुदायों से लोगों का अनचाहा व जबरन विस्थापन करनेवाली प्रक्रियाएं शामिल हैं। दिशानिर्देश के अनुच्छेद 6 में विस्थापन के संदर्भ में कहा गया है कि जबरन बेदखली से विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकारों का उल्लंघन होता है जिसमें उपयुक्त आवास, भोजन, जल, स्वास्थ्य, शिक्षा, काम, व्यक्ति की सुरक्षा, घर की सुरक्षा, क्रूर अमानवीय व अपमानजनक व्यवहार से सुरक्षा तथा आवाजाही की स्वतंत्रता शामिल है। बेदखली कानूनी प्रक्रिया के तहत केवल अपरिहार्य परिस्थिति में ही की जानी चाहिए तथा इसके चलते अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकारों व लोकोपकारी कानूनों का पालन किया जाना चाहिए। इसके अनुच्छेद 7 में जबरन बेदखली की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि जबरन बेदखली असमानता, सामाजिक संघर्ष, अलगाव, "जमघटवादी"

प्रक्रिया को बढ़ावा देती है। इसका पुरजोर प्रभाव सामाजिक व आर्थिक रूप से कमजोर, अत्यधिक गरीब व हाशिए के वर्गों पर पड़ता है। विशेषतः महिलाएं, बच्चे, मूलवासी व अल्पसंख्यक समूह। दिशानिर्देश के अनुच्छेद 8 में विकासजनित बेदखली के बारे कहा गया है कि विकास आधारित बेदखली अक्सर सार्वजनिक हित के नाम पर योजनाबद्ध तरीकों से की जाती रही है।इनमें वे तमाम बेदखलियां शामिल हैं जो विकास व ढांचागत परियोजनाओं जैसे बड़े बांध, औद्योगिकीकरण, व उर्जा परियोजनाएं, खनन व अन्य उद्योग से जुड़ी हैं या फिर भूमि अधिग्रहण, शहरी नवीनीकरण, बस्ती सुधार, आवास संरक्षण,शहरी सुन्दरीकरण व अन्य भूमि उपयोग से जुड़े कार्यक्रमों का हिस्सा है। इसके अलावा सम्पत्ति, भूमि विवाद व हस्तान्तरण, जमीन की सट्टेबाजी व अवैध खरीद–फरोख्त, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार व खेलकूद के बड़े कार्यक्रमों या पर्यावरण से जुड़े मुद्दों के नाम पर भी बेदखली की जाती है। इनमें अन्तर्राष्ट्रीय विकास सहयोग के अन्तर्गत आनेवाले कार्यक्रम भी शामिल किए जाते है।

विकास के साथ आज के युग में जिन दो शब्दों का अन्योन्याश्रय संबंध बना है वे हैं विस्थापन और विपन्नता। विकास जनित विस्थापन के जो इतिहास और विवरण उपलब्ध है उनमें विकास का मतलब ही विस्थापन कहा जाने लगा है। जो कि विपन्नता लाती है। विकास यानी की अंग्रेजी के शब्द डेवलेपमेंट के साथ भी दो शब्दों का अन्योन्याश्रय संबंध हाल के दशकों में उभरा है। डेवलपमेंट के साथ अंग्रेजी के शब्द डिसप्लेसमेंट और डिप्राइवेशन, डिसएडवान्टेज यानी कि विस्थापन के साथ सभी तरह मानवाधिकारों से वंचित होना है। ऐसे में जब भी विस्थापन पर अध्ययन होता है तो डेवलपमेंट डिसएग्रीमेंट और डिप्राइवेशन शब्द स्वतः एक दूसरे से जुड़ जाते हैं। इस आधुनिक युग में विस्थापन का दूसरा पर्याय मानवाधिकार का उल्लंघन होना भी बताया जाता है। विस्थापितों के मानवाधिकार की रक्षा अब तक होने के उदाहरण नहीं मिलते है। विस्थापित होना मतलब ही आवास के अधिकार से वंचित होना, मतलब ही जीवनयापन की सुविधाओं से बेदखल होना, मतलब पारम्परिक जीवन पद्धति से सदा के लिए अलग थलग हो जाना, मतलब की भोजन और अन्य बुनियादी जरूरतों की चीजों से ही वंचित हो जाना है। यह मानवाधिकार का घनघोर उल्लंघन है। अध्ययनों में यह बात आई है कि राष्ट्र का विकास अब विस्थापन के बाद मानवाधिकार का सबसे बड़ा मुद्दा बन

कर रहा गया है। अब विस्थापन का संदर्भ आता है तो विकास यानी कि किसका विकास और किसके लिए विकास के सवाल उठ खड़े होते है। विकास की प्रचलित अवधारणा में इस बात का समाधान नहीं किया गया है कि विकास के लिए जिन लोगों ने जमीन दी और अपने पुश्तों के आजीविका का कुर्बान कर दिया उनका कितना विकास हो पाया है। विस्थापन की अवधारणा विकास के नाम पर उजाड़े गए लोगों के जीवन और उनके ताजा हालातों से जुड़ता है। जो राष्ट्रीय विकास की अवधारणा पर भी प्रश्न चिन्ह लगाता है।राष्ट्रीय विकास यानी कि चंद लोगों का विकास और उनका क्या जो अपनी जमीन छोड़ कर थोड़े से मुआवजा और रहने के लिए जमीन का छोटा टुकड़ा में ही संतुष्ट हो जाते हैं। विकास की परिभाषा समझाते हुए आदिवासियों और अन्य विस्थापितों को कहा गया कि आप राष्ट्र के मुख्यधारा में शामिल हो जाएंगे। यह मुख्यधारा क्या है? यह बता पाने में भी सरकार असमर्थ है। विकास के नाम पर तथाकथित मुख्यधारा में उनको ही लाया जा सका जिन्होंने विकास के नाम पर कुछ भी नहीं खोया। बल्कि विकास के लिए कुछ नहीं देनेवाले ही अमीर से और अमीर होते चले गए और विकास के नाम पर भूमि देने वाले गरीब से और गरीब होते चले गए।

विकास संबंधी मुख्यधारा के प्रश्न को अब भी हल किया जाना बाकी है। विकास के मसले पर इस बात का ध्यान रखने की जरूरत है कि राष्ट्र के विकास के नाम पर देश को और गरीबी की तरफ तो नहीं धकेला जा रहा है। जिनका विस्थापन हुआ वे कितने विकास के पथ पर अग्रसर हुए यह देखा जाना आवश्यक है। इसलिए विस्थापन की एक सोची समझी शासकवर्ग के द्वारा पैदा की गई ऐसी चुनौती है जिस पर अब बहस विचार और विमर्श करने का उचित समय आ गया है। विस्थापन की परिभाषा और उससे उत्पन्न सवालों का जब तक अंत नहीं होगा विकास के सवाल बेमानी होगें। तब यह समझा जाएगा कि विकास राष्ट्र के चंद लोगों के लिए किया जा रहा है और वंचितों के हिस्से में घोर गरीबी, बेकारी, और भूखमरी छोड़ दी जा रही है।ऐसे में विस्थापन की समस्या संवैधानिक पहलू से जुड़ता है। देश एक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के साथ सभी नागरिकों के साथ समान व्यवहार की वकालत करता है।भारत के संविधान में एक तरफ लोगों के कल्याण की बात कही गई हैं वहीं विकास के नाम पर विस्थापित किए गए लोगों के कल्याण की कोई योजना नहीं बनाई जाती है। न ही विस्थापन की

समस्या को हल करने के लिए संविधान के तहत कोई कार्रवाई की जाती है। कहने का तात्पर्य यह है कि विस्थापन के नाम पर कुछ ही लोगों का पुनर्वास कर बाकी लोगों को अपने हाल पर छोड़ दिया जाता हैं।

दरअसल विस्थापन और पलायन को एक सिक्के के दो पहलू माना गया। लेकिन वास्तव में ऐसी बात नहीं रही है।विस्थापन को लेकर तरह तरह के विचार और परिभाषाएं समय समय पर दी जाती रही हैं। लेकिन विस्थापन की कोई सर्वमान्य परिभाषा तय नहीं की जा सकी है। इसके बावजूद विकासजनित विस्थापन और उससे उपजी समस्या ने विस्थापन को बहुत हद तक रेखांकित और परिभाषित कर दिया है। विकासमूलक विस्थापन साधारणतः विकास की किसी भी प्रकार की योजनाओं के कारण एक बड़ी आबादी को उनके परम्परागत क्षेत्र से बेदखल करने की नीति और प्रक्रिया को विस्थापन की संज्ञा दी जाती है। विस्थापन के मसले पर अब तक जो सवाल उठाए जाते रहे हैं उससे विस्थापन को चिन्हित करना आसान हुआ है। विस्थापन की अवधारणा को इसलिए विकास के संदर्भ में ही देखने और समझने की जरूरत है। विकास की बड़ी, मध्यम और छोटी परियोजनाओं के कारण लोगों को एक जगह से उजाड़कर दूसरी जगह पर बसने को मजबूर करने को विस्थापन कहा जाने लगा। आज खगोलीकरण के इस युग में परिवर्त्तित शब्दों में मेगा, मध्यम और माइक्रो परियोजनों की अवधारणाओं को विकास हुआ है और इसे लागू करने के लिए सरकारी मशीनरी किसी तरह के विस्थापन की समस्या के समाधान के लिए वृहत् पुनर्वास योजनाओं का भी प्रारूप लेकर तैयार है।

दरअसल विस्थापन महाविनाशकारी विकास परियोजनाओं की महागाथा है जिसे केवल विकास की मेगा परियोजनाओं के परिप्रेक्ष्य में ही नहीं बल्कि विकास के अलावा बनी अन्य परियोजनाओं और नीतियों के संदर्भ में समझा जा सकता है।

भारत में विस्थापन की एक विशाल वैविध्यपूर्ण पृष्ठभूमि रही है। इसके बावजूद विकासजनित विस्थापन के मसले को एक समस्या के रूप में चिन्हित करने और सामाजिक सांस्कृतिक और राजनीतिक तौर पर स्वीकृत करने में अनेक दशक लग गए। वहीं दूसरी तरफ विस्थापन की समस्या को समय समय पर उद्घाटित किया जाता रहा है जिसपर राजनीति भी होती रही है। इसके साथ ही विस्थापन के जनविरोध का व्यापक पहलू भी रहा है। यानी

विस्थापन विरोधी आंदोलन का एक विस्तृत इतिहास है। विकास के गर्भ से पैदा हुई समस्या को विस्थापन कहा गया और इससे उत्पन्न समस्याओं के खिलाफ व्यापक स्वतःस्फूर्त विभिन्न तरह के आंदोलन हुए। इन विभिन्न आंदोलनों में राजनीति के अलग अलग तत्वों का समावेश होता रहा है। इस शोध अध्ययन में इन पहलूओं का समावेश किया गया है। भारत में विस्थापन विरोधी आंदोलनों की अपनी खास किस्म की राजनीति रही है। प्रारंभ में इसे प्रचलित विकास के मॉडल के खिलाफ बताया गया। लेकिन बाद में अनेक मुद्दे उभर आए। जो विस्थापन की समस्या की जटिलता को उजागर करते हैं। विस्थापन विरोधी तमाम आंदोलनों को सामान्यतः भारत में "विकास विरोधी" करार दिया गया है। इसे लेकर मतभिन्नता रही है। परन्तु विस्थापन विरोधी आंदोलन साधारणतः अनेक सवालों को समेटे हुए है।इसमें विकास पर व्यापक बहस यानी राष्ट्रीय व राज्य स्तरीय विमर्श, कम विस्थापन और बिना विस्थापन के विकास के प्रश्न भी शामिल हैं।

विस्थापन एक ऐसा शब्द है जिससे एक पारम्पारिक जीवन व्यवस्था को सम्पूर्ण रूप से तहस नहस कर बेदखल करने अथवा सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक तौर पर एक स्थान से उजाड़कर दूसरे स्थान पर बसने को बाध्य करना प्रतीत होता है। सरल शब्दों में एक स्थान से हटाकर दूसरे स्थान में ले जाने की प्रक्रिया को विस्थापन कहा जा सकता है। हालांकि विस्थापन शब्द को अभी तक बहुत ही सटीक तरीके से परिभाषित नहीं किया जा सका है। लेकिन सामान्य तौर इसका अर्थ एक स्थायी पारम्पारिक बसाहट से उजाड़कर उसे किसी नए स्थान पर अपारम्पारिक परिवेश में बसने को विवश करना ही विस्थापन कहा जा सकता हैं। साधारणतः विस्थापन का यही मतलब लगाया जाता है। विस्थापन अलग अलग परिस्थितियों में और अपने पूवर्जो के द्वारा पारम्पारिक तौर अपने अपने गोत्र या किलि आधारित गांवों की बसाहट, जो एक विशेष पारिस्थितिकी संतुलन वाले पर्यावरण,जहां जंगल, पहाड़, नदियां, झरने, डाड़ी चुआं और अपने पशुओं के विचरण के लिए पर्याप्त खुला चारागाह आदि के साथ प्राकृतिक सामंजस्य वाला रमणीय स्थल जहां प्रकृति के साथ देशज जनों का अन्योन्याश्रय संबंध आधारित जीवन हो और इस पारम्परिक जीवन व्यवस्था चक्र को एकबारगी उखाड़ फेंकना " विस्थापन" कहलाता है।

यह ग्रंथ सौ सालों के जबरिया विस्थापन की कहानी को समेटे हुए है।

जिसके कारण पारम्परिक समाज को खास सामाजिक सांस्कृतिक, पारम्परिक अर्थव्यवस्था व प्राकृतिक विनाशलीला का सामना करना पड़ रहा है।

इस ग्रंथ में योजनाबद्ध तरीके से विस्थापित किए जाने का क्रमवार उल्लेख किया जा रहा है। इसलिए विकासजनित विस्थापन की ही चर्चा जोरदार तरीके से की गई है। इस ग्रंथ में प्राकृतिक आपदा विपदा और सामाजिक प्रकोप की वजह से हुए विस्थापन को शामिल नहीं किया गया है। कुछ उदाहरण और आंकड़े अवश्य विस्थापन के संदर्भ को समझने हेतु दिया गया है।

योजनाबद्ध तरीके से विकास की सुचिंतित योजनाओं को अमलीजामा पहनाकर विकास के विद्रुप चेहरे को ढंकने का काम किया जाता रहा है। विकासजनित विस्थापन का सौ साल का इतिहास विकास कुछ दूसरी ही कहानी कहता है।यानी कि तस्वीर का दूसरा पहलू प्रस्तुत करता है। जिसके अवलोकन का प्रयास भर इस किताब के माध्यम से किया गया है। लेकिन विस्थापन जो आदिवासियों, दलितों अत्यंत पिछड़े वर्ग के साथ संबंधित है उससे कुछ और गंभीर भी तथ्य उभरते हैं। अध्ययन में यह पाया गया कि आजादी के पूर्व और बाद में विस्थापन तब कि या जबकि पुनर्वास की कोई योजना सरकार के पास नहीं थी। बिना पुनर्वास योजना के लोगों को उनकी सहमति के बिना विस्थापित करने से भयंकर गरीबी और भूखमरी का उनको सामना करना पड़ रहा है। यह उनके जीवन के अधिकार से जुड़ता है जो गरिमापूर्ण जीवन के खिलाफ है।

बिना सहमति के और बिना पुनर्वास के विस्थापितों का जीवन स्वाभिमान और स्वालम्बन समाप्त हो जाता है। यह एक कल्याणकारी राज्य के लिए शुभ संकेत नहीं है। विस्थापन जिन बुनियादी कारणों को रेखांकित करता है उनमें राष्ट्र निर्माताओं द्वारा मानव विकास की जगह आर्थिक विकास को केंद्रित कर किया गया विकास है। विस्थापन के कारणों की यह सबसे बड़ी वजह रही है कि देश के नेताओं ने जो विकास की योजनाएं बनाई उसके मॉडल पश्चिम के देशों में विकास की योजनाओं पर आधारित रही हैं। देश की आजादी के बाद भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू जैसे नेताओं की शिक्षा दीक्षा विदेशों में होना बड़ी वजह है जो उनके समग्र दृष्टिकोण को ही बदल दिया। जो विकास पश्चिमी देशो में हुए उसमें सदियों लग गए लेकिन भारत के नेताओं ने रातोंरात महज कुछ की दशकों में वह

हासिल करने की नीति अपना ली। विकास का इस वजह से विस्थापन के रूप में भयानक परिणाम सामने आया है। यह एक भारी भूल थी जिसका खामियाजा आज विस्थापितों की आई बाढ़ के रूप में देखा जा सकता है। आज विकासजनित विस्थापन से विस्थाापित और प्रभावितों की एक बड़ी आबादी देश के विभिन्न कोने में अपने आजीविका और मानवाधिकार के लिए संघर्ष कर रही है। इसकी सुध लेने वाला भी कोई नहीं है। क्योंकि इस संदर्भ में कानून का पालन तो होता ही नहीं है। पंडित नेहरू ने अपनी पुस्तक द डिसकभरी ऑफ इंडिया में लिखा है कि औद्योगिकीकरण लोकतंत्र के ढांचे में श्रम का बिना पूंजीवादी शोषण किए हुए और बिना समाजवादी अधिनायकत्व के संभव है। भारत में इसे परम्पराओं और अंधविश्वासों से मुक्त कर ही आधुनिकीकरण किया जा सकता है। उनके इस दृष्टिकोण का ही नतीजा हीराकुंड डैम, एच ई सी, भाखड़ा नांगल जैसी परियोजनाओं के संदर्भ में समझा जा सकता है। जहां विदेशी सहयोग के नाम पर विदेशी तकनॉलोजी लाकर करोड़ों आबादी को कुछ ही दशकों में विस्थापित कर दिया गया। विस्थापित चूंकि निर्बल, कमजोर और शक्तिहीन होते हैं अतएव उनकी आवाज शासक वर्ग सुनते ही नहीं है।

विस्थापन की अवधारणा यदि संयुक्त राष्ट्र संघ के देशज जनों के लिए घोषणापत्र के संदर्भ में देखें तो कहा जा सकता है कि आदिवासियों के परम्परागत भूमि प्रक्षेत्र और संसाधनों का अतिक्रमण कर उन्हें बेदखल करना ही विस्थापित है। क्योंकि आदिवासी अपने खास परम्परागत बसाहटों में ही रहना पसंद करते हैं और वहां से उनकी इच्छा के बगैर विस्थापित करना ही विस्थापन है। जमीन, प्रक्षेत्र और संसाधनों से उनके जीवन मूल्य, परम्पराएं, रीति रिवाज, जीने के तरीके, पारम्पारिक भोजन, पारम्परिक औषधियां और प्रकृति के साथ उनके लेन देन के रिश्ते जिसे शब्दों में नहीं बांधा जा सकता है, से बेदखल करना ही विस्थापन है। इस तरह की जोर जबरदस्ती के खिलाफ सरकारों के खिलाफ भी मुकदमे दर्ज करने की अपील संयुक्त राष्ट्र संघ के आदिवासी जन के स्थायी मंच की पूर्व अध्यक्ष विक्टोरिया टाउली कोरपज ने किया है।

योजनाबद्ध जबरिया बेदखलीकरण

आजादी के बाद राष्ट्र के विकास के नाम पर नीतिगत योजनाएं बनाई

गई और पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा उन इलाकों में ही विकास की परियोजनाओं को थोपा गया जहां देश के सबसे पिछड़े उपेक्षित और गरीब जन निवास करते रहे हैं। यह एक खास वर्ग है जो आदिवासियों, दलितों के साथ अन्य गरीबजनों का है। इन बातों को समझने के लिए विभिन्न योजनाओं के गहरे अन्वेषण की जरूरत है ताकि समाज और देश के सबसे उपेक्षित जनों की गहरी पीड़ा को उकेरा जा सकेगा।

राष्ट्र विकास के लिए पूर्व व निर्धारित योजना के तहत जो विकास के मॉडल लागू किए गए उससे महाविनाश की जो विभीषिका का इतिहास पैदा हुआ उसके हल अब तक नहीं ढूंढे जा सके हैं।

आदिवासियों के भूमि, प्रक्षेत्र और प्राकृतिक संसाधनों पर पारम्पारिक और मालिकाना हक का संघर्ष संयुक्त राष्ट्र संघ के आदिवासी जनों के स्थायी मंच से उठाया गया। भूमि सुधार के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में यह बात उठी। यह आवाज इसलिए भी क्योंकि जबरन बेदखलीकरण की जबरदस्त प्रक्रिया दशकों से चली आ रही है।

विकासजनित विस्थापन की समस्या

लेकिन यह शोध ग्रंथ सामाजिक विपदा और प्राकृतिक आपदा के कारण विस्थापन की समस्याओं को अध्ययन में शामिल नहीं करता है। इस शोध अध्ययन में केवल विकासजनित विस्थापन के विभिन्न पहलूओं को शामिल किया गया है। प्राकृतिक तौर पर आती रहती विपदा की निरन्तरता बनी रहती है। लेकिन विकास से विस्थापन एक सुनियोजित रणनीति के तहत किया जा रहा है। विभिन्न तरह की विकास की योजनाएं जैसे बड़े बांध, मध्यम बांध, छोटे बांध, विभिन्न खनिजों के लिए खनन, थर्मल पावर प्लांट, उद्योग, रेलवे, सड़क, बंदरगाह, राष्ट्रीय पाक्र, सेंचरी, आश्रयणी, सेना की स्थायी छावनी, सेना के लिए रूटीन फायरिंग अभ्यास के लिए अस्थायी और स्थायी स्थान, सरकारी कार्यालयों के लिए भवनों व इमारतों, व अन्य छोटी छोटी और बड़ी विकास की योजनाओं से विस्थापन योजनाबद्ध तरीके से किया जाता रहा है। इन विकास की योजनाओं के लिए दुर्भाग्य से सुदूर ग्रामीण अंचलों व जंगल क्षेत्रों का चयन किया जाता रहा है। विकास की योजनाओं के लिए इन इलाकों की भूमि का ही अधिग्रहण किया जाता रहा है। संयोग से और दुर्भाग्य से इन तमाम इलाकों की भूमि पर आदिवासी व

अन्य निर्भर जातियों का निवास होता है और उनकी आजीविका और अस्तित्व इन्हीं भूमि और प्राकृतिक संसाधनों जंगलों पर निर्भर होती है। नीति निर्धारकों के द्वारा अथवा अभिजात्य विद्धानजन के द्वारा प्राकृतिक विपदा से उपजे विस्थापन और विकास योजनाओं से पैदा हुई विस्थापन की समस्या का तुलनात्मक अध्ययन या विचार करना पसंद नहीं करते हैं। जबकि प्राकृतिक विपदा मानव के द्वारा नियंत्रित की भी जा सकती है और नहीं भी की जा सकती है। वैसे यह नियंत्रण का मामला है। लेकिन विकास से हुए विस्थापन की समस्या विशुद्ध तौर पर "मानव सृजित" प्रवृति है। दोनों ही परिस्थितियों में प्रभावितों के पहचान का सवाल जुड़ा है जो पीढ़ी दर पीढ़ी उन्हें भुगतना पड़ता है। बुनियादी अन्तर केवल इतना है कि विकास योजना अग्रिम तौर पर तैयार और योजनाबद्ध होती है जिसे न्यूनतम किया जा सकता है। अगर इच्छाशक्ति हो तो उसे कमतर कर उचित पुनर्वास किया जा सकता है। लेकिन ऐसा नहीं किया जाता रहा है। सरकारी मशीनरी यह कोशिश करता है कि अधिक से अधिक भूमि का अधिग्रहण हो जाए और जमीन उनके नियंत्रण में रहे। इससे विस्थापन के कम होने और विस्थापितों की संख्या के कम होने की संभावना समाप्त हो जाती है। अब तक के तमाम उदाहरणों में तमाम मेगा परियोजनाओं के लिए विभिन्न सरकारों ने जरूरत से तीन या चार गुना अधिक भूमि का अधिग्रहण किया है। बाद में जरूरत के मुताबिक कारखाना या बांध स्थापित करने के बाद अतिरिक्त रह गई भूमि को रैयतों को या असली भू स्वामियों को लौटाया नहीं जाता है। ऐसे अनेक उदाहरण भरे पड़े हैं। 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के समाप्त होने के बावजूद और नए कानून 2013 के भूमि अधिग्रहण में पारदर्शिता, प्रतिकर भुगतान और पुनर्वास पुनर्स्थापन अधिनियम के एक जनवरी 2014 से लागू होने के बावजूद अनेक परियोजनाओं की अतिरिक्त भूमि को सरकार ने लैंड बैंक बनाकर उसके अधीन करने का निर्णय लिया है। जबकि भू स्वामी, रैयत और कानूनी उत्तराधिकारी अतिरिक्त भूमि की वापसी के लिए कानूनी लड़ाई लड़ रहे हैं। अस्वैच्छिक तौर पर विस्थापित किए जाने और इस पर बहस होने पर अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों ने इसे "अस्वैच्छिक पुनर्स्थापन" कहना प्रारंभ किया। जबकि यह "जबरिया बेदखली" के सिवा कुछ नहीं था। इस दृष्टिकोण ने संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार सम्मेलन में एक प्रस्ताव लाने को स्वीकृत प्रदान किया। 1993 में वियना में हुए इस कांफ्रेंस वियना

घोषणापत्र जारी हुआ और कार्य योजना तैयार की गई। इसमें भारत भी शामिल था। भारत ने इस सम्मेलन में ''जबरिया विस्थापन'' को ''मानवाधिकार का उल्लंघन'' बताया गया। इसे व्यापक तरीके से समझने की जरूरत थी।

विकास के नाम पर तब एक जुमला उछाला गया कि '' राष्ट्र की समृद्धि के लिए कुछ लोगों को कुर्बानी देनी पड़ती है।''लेकिन अनेक अध्ययनों ने यह साबित कर दिया कि जंगलों और पहाड़ों पर रहनेवालों आदिवासियों और अन्य निर्भर जातियों ने विकास के नाम पर बार बार कुर्बानी दी है और विकास की योजनाओं के शिकार हुए हैं। आदिवासियों और जंगलों व पहाड़ों पर निर्भर अन्य जातियों के विस्थापन का प्रभाव दूरगामी होता है और यह उनके मनोविज्ञान और मनोभावों पर भारी असर डालता है। मनोवैज्ञानिक और मनोभावपूर्ण सदमे की भरपाई नहीं हो पाती है। विस्थापन की समस्या के अनेक प्रभावों में उनके पारम्पारिक जीवन पद्धति का बिखरना, पारम्पारिक गोत्र और जरूरत के हिसाब से बसे गांवों का छिन्न भिन्न होना, पारम्पारिक रिश्तेदारी नातेदारी का खात्मा होना, जीविका के प्राकृतिक संसाधनों का खतम हो जाना, काम के पारम्पारिक आधार का समाप्त होना, बाजार व्यवस्था का समाप्त होना, खाद्य सुरक्षा,अन्तरजातीय समूहों का लेन देन का रिश्ता, बच्चों के पारम्पारिक देखभाल आदि बहुत की बातों का खात्मा होता है। पुरखों के चिन्ह और मौखिक परम्परा के संकेत लुप्तप्राय हो जाते हैं। इतिहास का अर्थ यानी ऐतिहासिक संवेदना मर जाती है और सांस्कृतिक पहचान पूरी तरह से समाप्त हो जाती है। सामाजिक व्यवस्था में उत्तराधिकारी की परम्परा और गांव नेतृत्व ही खत्म हो जाते हैं। इस अचानक बदलाव का सामाजिक और आर्थिक प्रभाव पड़ता है। भूमिहीनता, नौकरीहीनता, आवासहीनता, खाद्य संकट और समुदाय के संसाधनों का समाप्त होने का गहरा मनोवैज्ञानिक असर होता है। संवेदनाओं पर गहरा आघात लगता है।

यह एक क्रूर मजाक ही है कि आजादी के लगभग 70 सालों बाद भी सरकार ने पुनर्स्थापना और पुनर्वास की कोई नीति की घोषणा नहीं की। न ही पुनर्वास और पुनर्स्थापन के लिए ही कोई सरकारी तंत्र को विकसित किया है।

विस्थापन का इतिहास

वैसे तो विश्व के अनेक मुल्कों में विकासजनित विस्थापन की समस्या

है। लेकिन खासकर तीसरी दुनिया के देशों की ओर एक झलक देखें तो तस्वीर ज्यादा साफ होती है। तीसरी दुनिया के देशों में इंडोनेशिया, थाईलैंड, इक्वाडोर, पाकिस्तान और भारत में विस्थापितों के दस्तावेजों से यह जाहिर होता है कि योजनाओं के कारण से होनेवाले विस्थापितों की संख्या को कम करने का काम किया गया इंडोनेशिया के सगुलिंग डैम की पुनर्रचना कर उंचाई 5 मीटर कम कर 99,000 से 55,000 लाया गया। इसके लिए थोड़ा उर्जा उत्पादन का घाटा सहने की नीति बनाई गई। थाईलैंड में पकमंग डैम की उंचाई 20,000 से 5000 की गई। वहीं इक्वाडोर में कनाल सिस्टम की पुनर्रचना कर बाढ़ नियंत्रण कर विस्थापन को रोका गया। पाकिस्तान में लेफट बैंक फॉल आउट प्रोजेक्ट जो कि विश्व का सबसे बड़ा नाली निर्माण योजना मानी जाती है को पुनर्रूपरेखा बनाकर विस्थापितों की संख्या को 10,000 से घटाकर 5000 किया गया। यह अत्यंत की खेद की बात है कि भारत में इस तरह का कोई दस्तावेजीकरण का काम बीते पांच दशकों में नहीं किया गया।

विस्थापितों की संख्या विस्थापितों की संख्या मिलियन में होगी। लेकिन इसका कोई अधिकृत आंकड़ा नहीं है। पुनर्वास तो तब तक संभव ही नहीं है जब तक कि विस्थापितों की सही संख्या का पता नहीं चल जाए। किसी भी प्रोजेक्ट का मुश्किल से ही सही डाटा उपलब्ध है। यहां तक कि चर्चित सरदार सरोवर डैम के विस्थापितों के अलग अलग आंकड़े हैं। एन. सी. ए. 1986:2/5 के मुताबिक 45,000 से 90,000 बब्बर 1992 दत्ता एंड रे 1986:14 के मुताबिक 70,000 और 108,000 एन. आई. यू. ए. के मुताबिक है। परांजपे ने विस्तृत अध्ययन कर 1991 तक 3,25,000 व्यक्तियों के विस्थापन की बात कही है। आंकड़ों के अभाव में काम की कठिनाईयों को देखते हुए फर्नाडीस, दास और राव ने 1989 से 91 के अध्ययन में 145 लाख विस्थापित होने का आंकड़ा जुटाया। भारत में विकासजनित विस्थापन का एक आंकड़ा 1994 में उपलब्ध हुआ। इस अध्ययन में प्रस्तुत आंकड़े में 1951 से 1990 तक 213 लाख लोगों के विस्थापित होने का दावा किया है। लेकिन अध्ययन में कहा गया है कि यह ग्रामीण विस्थापितों का आंकड़ा है। शहरी विस्थापितों का आंकड़ा कुछ ज्यादा ही होगा। क्योंकि शहरों में सड़क निर्माण, विश्वविद्यालयों और सरकारी कार्यालयों की स्थापना से उजड़े लोगों के बारे में इस दृष्टिकोण से कोई अध्ययन नहीं किया गया है। बताया जाता

है कि कुल विस्थापितों में से 30 प्रतिशत से कम विस्थापितों का ही पुनर्वास किया जा सका है।

एक अध्ययन में उल्लेख किया गया है कि 13 राज्यों में और प्रथम से आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं के प्रभाव का अध्ययन करने पर पाया गया कि 20.4 मिलियन लोग विभिन्न योजनाओं से उजाड़े गए और प्रभावित हुए। इसमें मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र राज्य शामिल नहीं हुए जहां बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ है।

एक अन्य अध्ययन और अन्य स्त्रोतों के अनुसार देश के विभिन्न राज्यों में 5500 बड़े बांधों से लगभग 5.5 करोड़ लोग विस्थापित हुए हैं। इससे 44,00,000 हेक्टेयर जमीन 4528 बांधों में डूबी है। विस्थापितों में 47 प्रतिशत आदिवासी इंडिजिनिस लोग हैं।

आर्थिक उदारवादी नीतियों की वजह से अनैच्छिक रूप से हुए विस्थापन भारत में कोई नया नहीं है। 1950 से 1991 के दरम्यान 2,13,00,000 लोग विस्थापित हुए हैं। यह विस्थापन बांध, खनन, वन्यप्राणी पार्क, सेंचुरी, आश्रयणी, और उद्योगों के कारण हुए हैं। 19 वीं सदी के प्रारंभ में 1830 से 1842 के बीच में ब्रिटिश सरकार के द्वारा औपनिवेशिक औद्योगिक नीति के कारण बड़े पैमाने पर विस्थापन प्रारंभ हुआ।तब ब्रिटिश सरकार ने भारतीय उत्पादों और भारतीय हस्तशिल्प के कारीगरों को नेस्तनाबूद करने का कार्य प्रारंभ किया। ब्रिटिश सरकार ने बड़ी तादाद में भारतीय खासकर देशज वस्त्रोद्योग के मालों को गोदाम में सड़ने के लिए छोड़ दिया। ऐसा भारतीय कारीगरों के द्वारा ब्रिटिश वुलेन और सिल्क के वस्त्रों के बाजार का संरक्षण करने के लिए किया गया। इससे भारतीय व्यापार पूरी तरह से ठप पड़ गया और भारी संख्या में लोग बेरोजगार हो गए और उन्हें विस्थापित हो कर चले जाना पड़ा। एक अनुमानित सीमित आंकड़े के मुताबिक 35 मिलियन लोग इस योजनाबद्ध तरीके से भारतीय उद्योगों को उजाड़े जाने की वजह ये 19 वीं सदी में विस्थापित हुए थे।

इसका विस्तारित आंकड़ा उपलब्ध नहीं है। लेकिन 13 प्रतिशत शहरी आबादी जो हस्तशिल्प के कार्य में लगे थे वे पलायन कर अनैच्छिक रूप से ग्रामीण इलाकों की तरफ चले गए जो भूमिहीन श्रमिक हो गए।

1834 में लार्ड विलियम बेंटिक का यह वक्तव्य कि व्यापार के इतिहास में ऐसी घटना शायद ही हुई हो कि रूई क़ातनेवाले बुनकरों की रीढ़ ही तोड़

दी गई हो। यह मजदूर सस्ते दरों पर सड़क, पुल, बांध,और वृक्षारोपण के काम में चले गए और एक जगह से दूसरे जगह पर आने जाने लगे।

भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894

भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 ने विस्थापन की आधारशिला का शिलान्यास किया। यह अधिनियम केवल भूमि अधिग्रहण के प्रावधान की वकालत करता रहा है।

यह अधिनियम ब्रिटिश काल में एक ताकतवर कानूनी हथियार के रूप में दमन,शोषण करने और आर्थिक नियंत्रण का यंत्र साबित हुआ। जन हित की व्यापक परिभाषा का हवाला देकर कानूनी और सैद्धान्तिक तौर पर भूमि पर नियंत्रण किया गया।इस अधिनियम की आड़ में देश के आदिवासी इलाकों व राज्यों में काश्तकारी कानूनों की घनघोर अनदेखी की गई। राज्य की सम्प्रभुता का हवाला देकर हमेशा से छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम और संतालपरगना काश्तकारी अधिनियम एवं विलिकिन्सन रूल की अवहेलना की जाती रही है।इससे आदिवासियों के भूमि व वन संबंधी पारम्पारिक अधिकारों की घनघोर उपेक्षा की जाती रही है।

वन नीति 1894

भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 के पूर्व भी बड़े पैमाने पर विस्थापन किया गया है। ब्रिटिश साम्राज्यवादी सरकार ने 1864 में वन विभाग की स्थापना की।एक जर्मन विशेषज्ञ डिटरिच ब्रानडिस भारत के वन महानिरीक्षक होकर आए। उन्होंने वन की महत्ता को समझते हुए 1865 में भारतीय वन अधिनियम पारित किया। इसके माध्यम से वन भूमि के अधिग्रहण का कार्य किया गया और बड़े पैमाने पर रेल लाइनें बिछा दी गई। काफी बहसों के बाद एक समग्र कानून भारतीय वन कानून 1878 लाया गया। इस कानून ने पूरा का पूरा भूमि पर नियंत्रण का अधिकार सरकार को दे दिया। एक तरह का सरकार का एकाधिकार स्थापित हो गया। अधिकतर पारम्पारिक सामुदायिक भूमि पर भी सरकार ने अपना स्वामित्व स्थापित कर लिया। इन सामुदायिक भूमि का कोई निजी पट्टा नहीं था। इसके लिए 1878 के कानून का बखूबी इस्तेमाल किया गया और जब जरूरी हुआ भूमि का अधिग्रहण कर उसे कानूनी जामा पहना दिया गया। इस तरह सरकार ने 1890 के आते तक 84,700 वर्ग किलोमीटर तक के वन भूमि को अपने स्वामित्व में ले लिया।

इस तरह भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 के पूर्व सरकार ने एक कार्यपालक आदेश के तहत ग्रामीण भारत के सदियों के काश्तकारी इस्तेमाल की भूमि को ले लिया। वन में रहनवाले सुरक्षित और आरक्षित वन के तहत सभी वन भूमि में रहनेवालों को एक कानून के द्वारा गैरकानूनी करार दिया गया। जबकि वनों के अन्दर गांव अवस्थित थे। ग्रामीणों के तीव्र विरोध के कारण उन्हें वन भूमि में अतिक्रमणकारी घोषित कर दिया गया। इससे भी विस्थापन की समस्या खड़ी हो गई। 1894 में ब्रिटिश सरकार की वन नीति एक ऐतिहासिक कानून के रूप में भारत के अनैच्छिक विस्थापन के इतिहास के रूप में चिन्हित हो गया। 1947 तक वन विभाग ने 99,000 वर्ग मील भूमि का अधिग्रहण कर लिया और 16 मिलियन कुल आबादी को विस्थापित कर दिया गया।

1907 ई. में झाड़खंड में विस्थापन का प्रथम शिलान्यास

जमशेदजी टाटाजी ने 1907 में भारत में विस्थापन की पहली नींव डाली।

भारत में विस्थापन की पहली नींव झाड़खंड के जमशेदपुर से प्रारंभ होती है और वहां भी टाटा स्टील कंपनी ने ही स्टील फैक्टरी के नाम पर आदिवासियों को विस्थापित किया और कंपनी की स्थापना की। झाड़खंड की समरगाथा के लेखक शैलेन्द्र महतो ने लिखा है कि जमशेदजी नेशरवान जी टाटा ने टाटा स्टील कारखाना स्थापित करने के लिए सर्वप्रथम साकची, बेलडीह, जुगसलाई और सुसनीगड़िया गांवों का अधिग्रहण किया। इसके बाद कम्पनी का विस्तारीकरण करने के लिए अनेक गांवों कालामाटी, साकची, बिष्टुपर, केसीकुदर, महुलबेड़ा, काशीडीह, नीलडीह, गोलमुरी, बारीडीह, रानीकुदर, कदमा, धातकीडीह, भाटिया, सोनारी, खूंटाडीह, उलियान, गमरियागोड़ा, सिदगोड़ा, भालूबासा, बाड़ा, भुइंयाडीह, मोहरदा,जोजोबेड़ा का बाद में अधिग्रहण किया गया। डिमनालेक के लिए पटमदा प्रखंड के तीन गांवों मिर्जाडीह, लालम और गेडुआ,की जमीन का अधिग्रहण किया गया। सिंहभूम डिस्ट्रिक्ट गजेटियर 1958 के पेज नं. 302 और 303 में टाटा द्वारा टिस्को कम्पनी स्थापित करने का वर्णन है।

गजेटियर के मुताबिक टाटा स्टील कम्पनी की स्थापना पहले मयूरभंज के गोरूमहीसानी पहाड़ में आयरन ओर की बहुतायत के कारण 1904 में वहां

प्रारंभ की गई थी। लेकिन पानी की कमी के कारण उसे कालामाटी रेलवे स्टेशन के पास होने और सुवर्णरेखा और खरकई नदी से पानी मिलने के लालच में साकची में स्थापित करने के लिए 1907 में कार्य प्रारंभ किया गया। साकची सुवर्णरेखा और खरकई नदी के संगम में अवस्थित है। कालामाटी रेलवे स्टेशन का नाम 1919 में बदलकर टाटानगर रेलवे स्टेशन कर दिया गया। यह कोलकाता रेलवे स्टेशन से 156 माइल दूर था। 5 अप्रैल 1908 को टाटा आयरन एंड स्टील कम्पनी लिमिटेड ने धालभूम सिंडीकेट लिमिटेड से लीज पर भूमि का अन्तरण किया। 3510 एकड़ भूमि स्टील कारखाना और शहर के लिए अधिग्रहण की प्रक्रिया प्रारंभ की गई और 1912 में 46000 रू. में खरीद की प्रक्रिया पूरी की गई। बाद में जिन 12 से अधिक गांवों का अधिग्रहण किया गया उसके अधिग्रहण की प्रक्रिया 1917 से 1920 के बीच पूरी की गई और 15 लाख रू. व्यय किए गए।

1927 का प्रथम विस्थापन विरोधी संघर्ष

पश्चिमी भारत के मुम्बई प्रेसीडेंसी के तहत विस्थापन के खिलाफ मुलसी बांध और हाइड्रो इलेक्ट्रिक कार्य के विरोध में ऐतिहासिक विरोध हुआ। यह टाटा कंपनी की परियोजना थी। 11,000 लोग उनके पारम्पारिक धान के खेतों से विस्थापित हो गए। विरोध में 1300 लोगों के हस्ताक्षर अभियान चलाकर लिए गए और सरकार को प्रेषित किया गया। 16 अप्रैल 1927 को 1200 मावला औरतों और बच्चों ने सत्याग्रह करके बांध स्थल पर ही जम गए। लगभग ढाई सालों तक सत्याग्रह चला और अनेक लोगों को गिरफतार कर जेल में डाल दिया गया। सेनापति बापट के नेतृत्व में मुलसी बांध विरोधी आंदोलन चला और मुआवजा को लेकर भी तीखा प्रतिरोध का सामना सरकार को करना पड़ा। लेकिन सूदखोरों ने दबाब बनाकर मावला लोगों को मुआवजा लेने को बाध्य किया और भूमि छोड़ने पर विवश किया। किसानों के आंदोलन की वजह से सही मुआवजा उनको मिल सका। इस तरह से पहला बांध से उपजे विस्थापितों को धनविहीन, भूमिविहीन और घरविहीन होना पड़ा।

लगातार ही आजादी के बाद से औपनिवेशिक कानून 1894 के तहत विस्थापन बदस्तूर जारी है। सामाजिक अन्याय और सांस्कृतिक सदमे से लोग उबर नहीं पाए हैं।

नर्मदा नदी यानी सरदार सरोवर परियोजना और विस्थापन विरोधी संघर्ष –

जीने दो हमें रहने दो, मां नर्मदा को बहने दो

नर्मदा घाटी में सरदार सरोवर के विस्थापितों के 30 सालों से चल रहे संघर्ष के इतिहास को समेट पाना आसान नहीं होगा। अब भी शासन की धोखाधड़ी, अधिकारों की अवमानना, पुनर्वास बिना 50 हजार परिवारों को डुबो देना पारम्पारिक धरोहर और सम्पदा की परवाह नहीं करना जैसे अनेकों सवालों से सरकार घिरी हुई है। नर्मदा बचाओ आंदोलन के सामने ऐसे कई अनुत्तरित प्रश्न खड़े हैं जिनसे संगठन आज भी जूझ रहा है। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय से गठित न्यायिक झा आयोग की 7 सालों से चली जांच के बाद की रिर्पोट एन वी डी ए और राज्य शासन नर्मदा बचाओ आंदोलन को भी याचिकाकर्त्ता होते हुए भी नहीं देने की साजिश रची। विधान सभा के नाम पर रिर्पोट को उच्च न्यायालय को भी खोलने की इजाजत नहीं दी गई। यहां तक कि विधायकों को भी रिर्पोट की प्रति नहीं दी गई। तब यह प्रमाणित होने लगा कि नर्मदा घाटी विकास प्राधिकरण का भ्रष्टाचार भी शासन छुपाना चाहती है। नर्मदा बचाओ आंदोलन की रिर्पोट में कहा गया है कि सुप्रीम कोर्ट में अपील याचिका के द्वारा शासन को चुनौती देते हुए सर्वोच्च न्यायालय के आदेश से रिर्पोट को नर्मदा बचाओं आंदोलन ने अपने हाथ में लिया है। यह रिर्पोट मध्य प्रदेश के मुख्य सचिव को भी उपलब्ध कराया गया। इस आधार पर राज्य शासन को कार्यवाही रिर्पोट सुप्रीम कोर्ट में पेश करनी है। इस पर फिर से सुप्रीम कोर्ट से आंदोलन की सुनवाई होनी है। झा आयोग की रिर्पोट इस बात का खुलासा करती है कि कितनी फर्जी रजिस्ट्रियां हुई हैं। लगभग 2000 फर्जी लोगों ने विस्थापितों के नाम पर भूमि बंदोबस्त करा लिया है।नर्मदा बचाओ आंदोलन का दावा है कि फर्जी रजिस्ट्रियों की संख्या 2000 से भी अधिक होगी। फर्जीवाड़ा में कितने करोड़ रू. का खेल हुआ। इसमें कौन कौन अधिकारी और कितने किस्म के बिचौलिए शामिल रहे हैं। घर के लिए प्लॉट के आबंटन और पुनर्वास स्थलों के निर्माण कार्य में कितना घोटाला हुआ है। न केवल करोड़ो रू. बल्कि जमीन, अधिकारी और न जाने किस किस तरह के जाली कारनामों को अंजाम दिया गया। यह सब घोटाला का खुलासा होना बाकी है। पुनर्वास स्थल रहने लायक है या भी कि नहीं। अगर पुनर्वास स्थल रहने लायक नहीं है तो ऐसी जमीन का चयन क्यों किया गया। इसके लिए दोषी कौन लोग हैं। इस बात का खुलासा कर नर्मदा

बचाओ आंदोलन उन अधिकारियों पर कार्रवाई की मांग कर रही है। उनको सजा मिलनी चाहिए। 2007 में जब नर्मदा बचाओ आंदोलन के तहत विस्थापित आंदोलन कर रहे थे तब उन्हें ही दोषी बताकर जेल भेजा जा रहा था। इसके लिए भी उच्च न्यायालय जाने पर ही विस्थापितों को जेल भेजा जाना बंद किया गया। उच्च न्यायालय ने विस्थापितों के जेल भेजे जाने पर रोक लगा दी थी।

विगत 30 सालों में 14000 आदिवासियों, दलितों और किसानों को गुजरात और महाराष्ट्र में जमीन के साथ पुनर्वास मिला। मध्यप्रदेश सरकार ने वहीं लगभग 50 लोगों को ही जमीन दी। आज भी डूब क्षेत्र में 50 हजार विस्थापित पुनर्वास की बाट जोह रहे हैं। मध्यप्रदेश सरकार ने पहले 4374 और अब 15900 परिवारों को आधे अधूरे पुनर्वास का लाभ देने के बाद डूब क्षेत्र से ही बाहर कर दिया जो कि गैरकानूनी और मानवाधिकार का ऐसा हनन दुनिया में देखने को नहीं मिलेगा। पारम्पारिक गांवों में ही जीवन बसा है और धर्मशालाएं, मंदिरें, पंचायतें, दुकानें, और पारम्पारिक हाट बाजार लगते रहे रहे हैं। गांवों में भरी पूरी आबादी है और लाखों लाख की संख्या में पेड़ और जैव विविधता वाले पेड़ हैं। बिना पुनर्वास के विस्थापितों को डुबा नहीं सकते और न ही उन्हें बेदखल कर सकते हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने 1992, 2000 और 2005 में जो फैसले दिए हैं, इसके आलोक में विस्थापितों का पहले हर हाल में पुनर्वास किया जाना है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों की धज्जी उड़ाकर 50 हजार विस्थापितों के जीवन की परवाह किए बगैर बांध की उंचाई बढ़ाने के आदेश को अमली जामा पहनाया जाने लगा है। इससे 245 गांवों पूरी तरह से नर्मदा में विलीन हो जाएंगे। आज जब झा आयोग की रिर्पोट आने के बाद बिना पुनर्वास के विस्थापितों को न्याय देना बाकी है और दोषियों को सजा देना भी। नई सरकार प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने मध्यप्रदेश, गुजरात और महाराष्ट्र की सरकारों से हाथ मिलाकर उनके हितों की अनदेखी करते हुए सरदार सरोवर बांध की उंचाई 122 मीटर से 17 मीटर आगे यानी 139 मीटर की अंतिम उंचाई तक बढ़ा दी है। गेट लगाने का कार्य भी पूरा करते आए हैं। यह विस्थापितों के साथ हम ऐतिहासिक अन्याय नहीं किया जाना चाहिए नर्मदा बचाओ आंदोलन ने इसके विरोध में जलसमाधि आंदोलन चलाया। अप्रैल 27 से 29 अप्रैल 2016 तक बड़ी संख्या में चेतावनी उपवास का आयोजन भी किया गया। विस्थापन और विनाशलीला

का कोई उदाकरण देखना हो तो नर्मदा में ही देखा जा सकता है। जहां विस्थापित त्राहि त्राहि कर रहे हैं।

महेश्वर जल विद्युत परियोजना फिर से समीक्षा के लिए सरकार तैयार

मध्य प्रदेश सरकार ने महेश्वर परियोजना पर नए तरीके से विचार करने की आंदोलनकारियों की मांग को स्वीकार कर लिया है। नर्मदा बचाओ आंदोलन की यह एक भारी जीत है। आंदोलन की इस जीत से उन लोगों को प्रेरणा मिलेगी जो विभिन्न इलाकों में बांधों का विरोध कर रहे हैं या विस्थापनमूलक योजनाओं महेश्वर परियोजना विरोध आंदोलन ने वैकल्पिक ऊर्जा नीति पर जोर दिया है।

आज मध्यप्रदेश में खरगोन जिले के जलूद गांव में नर्मदा पर बनने वाली महेश्वर जल विद्युत परियोजना के हर पहलू पर गंभीर सवाल खड़े हुए हैं। यह परियोजना नर्मदा नदी पर नीचे बनी ही है और रूकी हुई सरकार सरोवर परियोजना सरीखी ही नर्मदा घाटी के 30 बड़े बांधों में से है। आज इस बांध का पहलू विस्थापन, लाभ हानि, तकनीकी उपयुक्तता, निजीकरण, विदेशी पूंजी निवेश तथा समझौते की शर्तें आदि पर गंभीर सवाल हैं व उन्हें खोलकर देखने की अत्यन्त आवश्यकता है। पिछले दिनों में राज्य सरकार ने इस परियोजना का बांध निर्माण व बिजली उत्पादन के कार्यों को निजी कम्पनी एस. कुमार्स को सौंपा है। एक कुमार्स ने इस परियोजना में बहुराष्ट्रीय कम्पनी एशिया ब्राऊन बोवरी, सिमेन्स, पैक जैन को शेयर पूंजी में शरीर किया है तथा जर्मनी के वेरेन्स बैंक से इस परियोजना हेतु कर्ज भी ले ली है।

विस्थापन तथा पुनर्वास

इस परियोजना से होने जा रहे विस्थापन की मात्रा का आकलन अधूरा है और बदलता रहा है। सरकारी आंकड़ों में डूब में आने वाले जिन 61 गांव का विवरण दिया जाता है उनका आकलन पूर्ण जलाशय स्तर 162.76 मीटर (Ful reservoir Level) पर किया गया है। लेकिन पानी तो इससे बढ़कर अधिकतम जलस्तर 165.8 मीटर (Maximum WaterAlevel) तक चढ़ेगा। लेकिन इस स्तर पर तथा उनाव से प्रभावित होने वाली जमीनों का आज तक कोई आकलन प्रस्तुत नहीं किया गया है। आश्चर्य की बात है कि अधिकतम जल स्तर 170.53 बताया गया था। अब उसे 165.8 मीटर बताया जा रहा है। स्पष्ट है कि सरकार के द्वारा आज बताई गई डूब से वास्तविक डूब कहीं अधिक होगी। अन्य बांध परियोजनाओं के अनुभव, विशेषत: बरगी जहां 101 के जगह 162 गांव प्रभावित हुए और सरकार द्वारा बनाए

गए 26 पुनर्वास स्थल भी डूब गए इसी बात को स्पष्ट करते हैं।

इसी तरह से विस्थापितों की संख्या भी घटती बढ़ती गई है। सन् 1982 की मध्यप्रदेश सिंचाई विभाग की महेश्वर परियोजना पर रिपोर्ट में प्रभावितों की संख्या 14,500 बताई गई है जबकि सन् 1985 में इसी विभाग की नई रिपोर्ट में प्रभावितों की संख्या 19,710 बतायी गई। अब पूरे 15 साल बाद आबादी की वृद्धि को अनदेखा करके अब उसी क्षेत्र के प्रभावितों की संख्या 13.690 बतायी जा रही है। इससे नर्मदा तटों पर यह संपन्न इलाका, जिसकी सपाट तथा उपजाऊ जमीन, पाइप लाइन तथा कुंओं से लगभग पूर्ण सिंचित है और जहां उगते हैं कपास, गन्ना तुअर, गेहूं और हर तरह के मसाले, बनता है गुड़ और स्थानीय मजदूरों के अलावा आसपास के जिलों के मजदूरों को भी मौसमी रोजगार मिलता है उस क्षेत्र को सरकारी पुनर्वास एक्शन प्लान में असिंचित और पिछड़ा माना गया है। साथ ही खेती पर भी आश्रित मजदूरों तथा इस इलाके में काफी संख्या में रहने वाले केवट कहार मछुआरे जो नाव चलाकर, मछली मारकर, तरबूज खरबूज की बाड़ियां लगाकर तथा रेत की खदानों में काम करके अपनी जीविका उपार्जन करने वालों को अनदेखा किया गया है तथा पुनर्वास नीति में भी इनके लिए प्रावधान नहीं है। दूसरी तरफ जमीन के बदले जमीन की नीति होने के बावजूद,आज तक किसी प्रभावित को कृषि जमीन नहीं दी गई है।

स्पष्ट है कि 61 प्रभावित गांवों का पुनर्वास असंभव है। हालांकि 7 जनवरी 1994 को परियोजना को प्राप्त पर्यावरणीय मंजूरी के अनुसार पुनर्वास का कार्य 1997-98 तक पूरा जाना चाहिए था, सच्चाई यह है कि 21 मार्च 1997 को महेश्वर परियोजना पर गठित उच्चस्तरीय समिति में यह पाया गया कि अभी तक कोई पुनर्वास योजना नहीं बनी है। मध्यप्रदेश विद्युत मंडल ने दिसम्बर 1997 के पुनर्वास विवरण में और स्पष्ट किया है कि निजी कम्पनी एस. कुर्मास को पुनर्वास मद में जो धन देना था, वह उसे राज्य सरकार को उपलब्ध कराने में असफल रही है। यानि कि पुनर्वास का कार्य पूरा करना तो दूर आज तक न तो योजना है और न उसके लिए धन, पर्यावरणीय मंजूरी की शर्तों का तो उल्लंघन हुआ ही है, दूसरी तरफ बिना मंजूरी के ही बांध तथा विद्युत गृह का कार्य चालू कर दिया गया था।

पर्यावरण

1986 में पहली बार परियोजना के लिए पर्यावरणीय मंजूरी की मांग की गई। तो उसे नामंजूर का दिया गया था। 1994 में परियोजना को कुछ शर्तों पर मंजूरी मिली। इसमें वर्णित तमाम अध्ययन व सुधारकारी कदम आज भी पूरे नहीं हुए हैं जबकि मंजूरी में स्पष्ट तौर पर यह निर्देश था कि ये कदम परियोजना शुरू होने के

पहले ही पूरे होने चाहिए। इस में जरूरी माने गए अध्ययनों के अलावा कई ऐसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय पहलू हैं जिनका पूरा दखल दिए बिना परियोजना को आगे बढ़ाना निरर्थक होगा। पिछले दो तीन सालों में निकटवर्ती ऊपरी क्षेत्र बड़वाह के शराब कारखानों से कचरा नर्मदा में फेंका गया, जिसके असर से लाखों मछलियां मर गई। फिर भी बांध न होने के कारण यह जहर पानी में बह गया।

इस तरह से बांध के कारण बने जलाशय के पर्यावरण तथा जन स्वास्थ्य पर असर, पानी को राकने या साल भर उसे छोड़ने का, निचले क्षेत्र के मछुआरों, तर बूबाड़ी वालों पर असर का कोई अध्ययन नहीं हुआ है। उसी तरह से नर्मदा नदी पर बनने वाले बांधों की एक श्रृंखला के संदर्भ में अतिवृष्टि की दशा में बनने वाली सम्भावित प्रलयकारी स्थिति या उसके संयुक्त प्रभाव या घाटी में भूकंपीय सक्रियता का नए दौर के संदर्भ में जलाशय निर्मित भूकम्पनीयता का कोई अध्ययन नहीं हुआ है। यह अत्यन्त गम्भीर है। इससे ने सिर्फ महेश्वर क्षेत्र पर बल्कि समस्त नर्मदा घाटी में भयंकर प्रभाव पड़ सकता है।

जाहिर है इनअध्ययनों के बिना बांध का कार्यआगे नहीं बढ़ाया जा सकता है।

स्पष्ट है कि परियोजना के मानवीय, आर्थिक तथा पर्यावरणीय नुकसानों का आकलन या तो हुआ ही नहीं है या कम कर के दर्शाया गया है, साथ में हमेशा के लिए विनष्ट हो जो वाली हमारी सामाजिक, सांस्कृतिक तथा पुरातत्त्वीय धरोहर का कोई सटीक और समग्र आकलन नहीं हुआ है जिसमें बेलसर, भामपुरा के मंदिर, मर्दाना के ऐतिहासिक अवशेष, आवेर की बाजीराव पेशवा की छत्री व नवड़ाटोली से जुड़े इस क्षेत्र में जहां-तहां स्थित कितने ही ताम्र पाषाण युगीन अवशेष शामिल हैं।

दूसरी तरफ पिछले एक साल में परियोजना की लागत 465 करोड़ रूपए से बढ़कर 1572 करोड़ रूपए कर दी गई है। जिससे परियोजना के लाभों का पूरा चित्र ही बदल गया है। परियोजना से बनने वाली बिजली की स्थापित क्षमता भी बदलती रही है। बांध की एक ही ऊँचाई पर 1982, 1985 और 1989 तक स्थापित क्षमता जहां 200 मेगावॉट की थी अब वह 4co मेगावॉट बताई जा रही है। हालांकि शुरूआती तौर पर फर्मपॉवर 92 मेगावॉट का रहेगा और अन्तिम तौर पर 48.6 मेगावॉट ही रहेगा।

निजीकरण के सवाल

देश में निजी हाथों में सौंपी जाने वाली इस पहली जल विद्युत परियोजना के लिए, राज्य शासन ने बिना टेण्डर बुलाए एस. कुमार्स कम्पनी को उसकी मनचाही बिजली की दर, परियोजना की लागत और अनुबंध की शर्तों को मंजूर करके उन्हें

परियोजना में बनने वाली बिजली की दर 4 रूपए यूनिट से भी अधिक होगी, और पीकिंग के लिए तो दस रूपए यूनिट से भी ऊपर जा सकती है जबकि मध्यप्रदेश से सरकारी प्रतिष्ठानों द्वारा बनने वाली बिजली आज सिर्फ 1.67 रूपए यूनिट है। जाहिर है यही सवाल खड़ा हो जाएगा कि इतनी महंगी बिजली घरेलू क्षेत्र, उद्योग क्षेत्र तथा कृषि क्षेत्र के उपभोक्ता खरीद भी पाएंगे या नहीं और यह परियोजना नियमानुसार न्यूनतम लागत योजना के हिस्से के तहत बनाई गई है या नहीं।

राज्य शासन और विद्युत निगम को उत्पादित ऊर्जा एक तयशुदा उत्पादन "डीम्ड जनरेशन" के आधार पर एस. कुर्मास से खरीदना होगा, चाहे वह डिम्ड जनरेशन बने या नहीं। आश्चर्य की बात तो यह है कि यह डीम्ड जनरेशन नर्मदा नदी में उपलब्ध होने वाले पानी के एक अवास्तविक, गलत आकलन के आधार पर तय की गई है, जबकि राज्य शासन खुद हलफनामे के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय में यह बयान दे चुकी थी कि 75 प्रतिशत विश्वसनीयता पर केन्द्रीय जल आयोग के अनुसार नर्मदा नदी में सरदार सरोवर बांध स्थल में 28 नहीं बल्कि 23 एस.एस.एफ. बहाव ही उपलब्ध है। एस. कुमार्स के साथ हुए अनुबंध में बहाव के पुराने आंकड़े ही दिए गए हैं। साथ ही, विशालकाय नर्मदा सागर बांध बनने पर साल भर में छोड़े जाने वाले पानी को महेश्वर परियोजना तथा एस. कुमार्स के साथ अनुबंध का आधार बनाया गया है जबकि नर्मदा सागर परियोजना नर्मदा बांधों की श्रृखंला में सबसे अधिक हानिकारक है और उसका भविष्य भी अनिश्चित है। ऐसे अवास्तविक और गलत आधारों के कारण राज्य शासन को व्यर्थ ही हर साल एस. कुमार्स को करोड़ों रूपए का भुगतान करना पड़ेगा.अनुबंध की शर्तों के अनुसार पर्यावरण के कार्यों में हुई देरी का हर्जाना भी राज्य सरकार एस. कुमार्स को देगी। राज्य शासन ने एस. कुमार्स को इस आशय की पुष्टि में लेटरऑफ क्रेडिट एस्क्यू एकाउन्ट सरीखी कई गारंटियां दे रखी हैं। स्पष्ट है कि सारी जोखिम तो सरकार और प्रदेश की जनता उठा रही है, तो कम्पनी को 16 प्रतिशत मुनाफा क्यों दिया जाए? इस तरह से तय है कि प्रदेश की जनता तथा सरकार दोनों ही दिवालिया हो जाएंगे।

विकल्पों को टटोला नहीं गया

आज जब मध्य प्रदेश वि.मं.तथा केन्द्रीय प्रतिष्ठानों द्वारा उत्पादन की स्थापित क्षमता के एक बहुत बड़े हिस्से का इस्तेमाल नहीं किया जा रहा है, तो सवाल है नए संयंत्र बनाने के पहले इस क्षमता के उपयोग का। थोड़े सुधार,

रखरखाव तथा आधुनिकीकरण से यह बिजली जो स्थापित क्षमता का उपयोग पूरी तरह नहीं हो पाने से हमें नहीं मिल पा रही है बहुत थोड़ी सी अतिरिक्त लागत से हमें मिल सकती है। इसी तरह ऊर्जा की स्थिति में वितरण में बहुत बदलाव या नुकसान,औद्योगिक चोरी से बचाव तथा मांग पक्ष प्रबंधन उत्पादन का बेहतर और अधिक लाभकारी उपयोग किया जा सकता है।

विदेशीकरण

परियोजना में विदेशी कम्पनियों की भागीदारी तथा विदेशी कर्ज से भी गंभीर सवाल उठाए हैं। इस परियोजा में जर्मनी के वेरेंस बैंक से कर्ज लिया जा रहा है। इसके अलावा एशिया ब्रॉउन बोवेरी, सीमेंस तथा फैक जेन जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भी पूंजी में शरीक किया जा रहा है। संपूर्ण परियोजना में विदेशी हिस्सेदारी 76 प्रतिशत होगी। फिर सवाल खड़ा होता है न केवल विदेशी कर्ज में डूबने का व देश में विदेशी मुद्रा बाहर जाने का जिससे भुगतान संतुलन में गड़बड़ी होगी, बल्कि हमारी मुख्य ढांचागत परियोजनाओं पर विदेशी नियंत्रण का भी साथ ही परियोजना में विदेशी पैसा लगने से मशीनरी सारी विदेशी कम्पनियों ए.बी.बी., सीमेंस आदि से आएगी। अगर ऐसी ही नीति जारी रहेगी तो सारा रोजगार बाहर जाएगा और भेल जैसी उत्कृष्ट देशी सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियां खत्म हो जाएंगी।

जनसहभागिता काअभाव

सबसे बड़ा सवाल तो यह है कि शुरू से ही यह प्रक्रिया एक तरफा और प्रभावित लोगों को नजरअंदाज करके ही आगे बढ़ाई गई है। जन सहभागिता का संपूर्ण अभाव रहा है और इसलिए जिन विस्थापितों से आज त्याग मांगा जा रहा है, वे मांग कर रहे हैं कि परियोजना यदि सही में देश के तथा प्रदेश के हित में है तो यह उनके सामने साबित किया जाए।

इन सभी मुद्दों से स्पष्ट है कि इस परियोजना के भूअअर्जन, निर्माण कार्य, वित्तीय अनुबंध, टेंडर्सआदि कामों को रोक कर सभी संबंधित मुद्दों वा गंभीर व जनसह भागिता के साथ पुनर्विचार किया जाए।

एक साल के सतत् संघर्ष, सरकार व निजी कम्पनी एस. कुमार्स से निरंतर सवाल जवाब, तथा 25अप्रैल व 3अक्टूबर की विशाल रैली के बाद, अपनी लड़ाई को एक निर्णायक मोड़ देने के लिए 11 जनवरी को महेश्वर बांध से प्रभावित 25,000 महिला पुरूषों ने जलूद ग्राम में स्थित महेश्वर बांध पर कब्जा किया। मांग है कि महेश्वर बांध को रोककर संपूर्ण पुनर्विचार किया जाए।

लेकिन इस बांध से कोई सिंचाई नहीं होगी, सिर्फ बिजली उत्पादन होगा। ऊर्जा संयंत्र की स्थापित क्षमता 400 मेगावॉट की है लेकिन अन्तिम रूप से उपलब्ध "फर्म पावर" सिर्फ 48.6 मेगावॉट होगी ऐसे में इतनी सी बिजली उत्पादन के लिए क्या इतना भंयकर विनाश और विस्थापन मोल लेना वाजिब है?

ऊर्जा उत्पादन करने वाली निजी कम्पनियों द्वारा संचालित परियोजनाओं की उत्पादकता तथा सार्थकता के बारे में आज प्रचलित तमाम मिथकों के बावजूद, यही वास्तविकता है कि आज मध्य प्रदेश के विद्युत मंडल तथा केन्द्रीय परियोजनाओं के द्वारा पैदा की जाने वाली बिजली (बिजली अधिकतर दर रू. 1.89 प्रति यूनिट है) के दरों का दो से चार गुना दरों पर एस. कुमार्स द्वारा बिजली उत्पादित होगा।

और जब कि बिजली की निर्धारित दर परियोजना का लागत पर आधारित होगी। जो सरकारी स्रोतों के अनुसार 465 करोड़ से बढ़कर रूपए तक पहुँच गई है, इस परियोजना के लिए कोई अन्तराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धात्मक निविदाएं नहीं बुलायी गई थी। जो कि उचित प्रक्रिया का एक गंभीर उल्लंघन है। शेयर पूंजी में हिस्सेदार है बहुराष्ट्रीय कंपनियां "पैक जेर" तथा पावर फाईनैन्स कॉपोरेशन तथा अन्तराष्ट्रीय ऊर्जा संयंत्र विक्रेता "सिमेन्स" एवं "एशिया ब्राउन बोवरी" विदेशी कर्जा जमीन बैंक "बेयरिश वेरेन्स बैंक" से लिया जाअहा है।

यह स्पष्ट है कि इन बहुराष्ट्रीय तथा एस. कुमार्स का लाभ खोजी हितों का ही बोलबाला रहेगा और इस कारण ऐसी महंगी बिजली का उत्पादन होगा जो राज्य के लिए नुकसानदायक होगी।

फिर भी मध्य प्रदेश सरकार तथा मध्य प्रदेश विद्युत मंडल ने इन दरों पर संपूर्ण ऊर्जा उत्पादन की खरीदी का समझौता किया है और यह उन्हें उन परिस्थितियों में भी करना पड़ेगा जब नदी में पानी की कमी के कारण से बिजली उत्पादन कम होगा, अब कम्पनी ने "एस्क्रो एकाउंट" की मांग की है तथा सरकार से यह सुविधा प्राप्त भी हुई है। इस एकाउंट के अन्तर्गत सरकारी खजाने से, प्राथमिकता के आधार पर और खुद ब खुद भुगतान सीधा एस. कुमार्स के खाते में चल जाएगा।

बाँध नहीं विकास चाहिए नदी दिवस का यही आगाज़

उत्तराखंड में गंगा के मायके अलकनंदा घाटी से विष्णुगाड पीपलकोटी बाँध प्रभावितों ने अंतर्राष्ट्रीय जगत को ये संदेश दिया है कि नदियों के जीवन से हमारा जीवन है । टी. एच. डी. सी. और विश्व बैंक का गठजोड़ पूरी तरह से गंगा घाटी के लोगों की आकांक्षाओं को पूरा करने में असफल रहा है, अब अन्य देशों में जैसे भूटान

में भी टी. एच. डी. सी. जाने की कोशिश कर रही है। विश्व बैंक स्वच्छ उर्जा के नाम पर अन्य देशों में भी बड़े बांधों के लिए पैसा उधार दे रहा है उन सब को अपील करते हैं कि वे भी इनका पुरजोर विरोध करें।

लगभग 20 से ज्मादा बांध प्रभावित गाँवों के लोगों ने एकमत में उत्तराखंड की संस्कृति की रक्षा के लिए बड़े बांधों का विरोध किया, सभी वक्ताओं ने कहा – सलू गाँव, भरत सिंह – अब आवाज नहीं दब सकती, जल जंगल जमीन की कीमत पर उर्जा प्रदेश नहीं चाहिए । जखोला गाँव, मनवर सिंह व मातवर सिंह – बांधों से जलवायु परिवर्तन हो रहा है । लांजी गाँव, दिनेश राणा – गंगा में बांधों से प्रदूषण हो रहा है। पोखनी गाँव, जगदीश भंडारी – सरकार व टी. एच. डी. सी. ने हमे धोखा दिया है । पोखनी गाँव, बाल सिंह – भविष्य की बर्बादी हमसे छुपायी गई है । ह्युना गाँव, राकेश भंडारी – जब नदी ही नहीं होगी तो गंगा संस्कृति कहाँ होगी । दुर्गापुर गाँव, रामलाल – हम पर 23 मुक़दमे है मगर हम लड़ेंगे । द्विंग गाँव, उमा देवी – हम बाँध विरोधी हैं और रहेंगे, गंगा अविरल रहेगी । नरेन्द्र सिंह– बांधों से भूस्खलन हैं । पीपलकोटी, वृहन्श्राज तडमाल – पहाड़ की जवानी व पानी बांधों से लुप्त हो रही है । पोखरी गाँव, धनेश्वरी देवी – हम पर्यावरण की शर्त पर कोई समझौता नहीं करेंगे । राजेंद्र हतवाल (हात) – हात का पुनर्वास धोखा रहा है हमने गाँव नहीं छोड़ा है, कम्पनी, राजनेता और शासन से भी धोखा ही मिला है, पुरातत्व विभाग ने ना ही बेलपत्री के जंगल और ना ही लक्ष्मी नारायण मंदिर का सर्वे किया। माटू जन संगठन के समन्वयक विमल भाई – संगठन से ही समस्या का निदान होगा, बड़े बांधों ने आजतक विस्थापन व पर्यावरणीय क्षति ही दी है, जिससे देश में व गंगा घाटी में साढ़े पांच हज़ार बांधों के बाद भी दोहराया जा रहा है । आज इस टी. एच. डी. सी. व विश्व बैंक के गठजोड़ से बन रहे बाँध से लगभग 80 लोगों पर मुक़दमे हैं, तानाशाही और आतंक के सामने में इस बाँध को आगे बढाया जा रहा है, किंतु हम न्याय के लिए, जन हकूकों व गंगा के लिए जमीन से लेकर कानूनी लड़ाई के लिए तैयार हैं । हमारा गांधी के मूल्यों व आदर्शों में विश्वास है, हम अहिंसक संघर्ष जारी रखेंगे ।

कल सुबह कार्यक्रम का आरम्भ ढोल नगाड़ा व तुरही के साथ गाँव वालों ने गाँव से लायी मिटटी को गंगा कलश में इकठ्ठा किया, जिसे कार्यक्रम के बाद संघर्ष व रचना के प्रतीक रूप में रोपे गए पीपल के पेड़ के लिए डाला गया । कार्यक्रम का संचालन नरेन्द्र पोखरियाल द्वारा किया गया, जो कि दस वर्ष से अधिक समय से इस बाँध के खिलाफ संघर्षरत हैं ।

गंगा चलेगी अपनी चाल, ऊँचा रहेगा उसका भाल, देख रहा है आज हिमालय

गंगा के रखवालों को, इन नारों के साथ भविष्य की संघर्ष की घोषणा के साथ मोर्चा निकाला गया।

नरेन्द्र पोखरिमाल, अजम भंडारी, राम लाल, विमल भाई

यह त्रासदी ही है कि आजादी के 48 सालों बाद 1993 में भारत सरकार की नींद खुली और ग्रामीण विकास मंत्रालय ने पुनवार्स नीति का एक प्रारूप तैयार किया। इस पर विभिन्न वर्गों से राय ली गई। लेकिन इसे 2013 में नए स्वरूप में भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास कानून बनाकर लाया गया। यानी कि लगभग 20 साल प्रारूप को अंतिम रूप देकर घोषणा करने और ससंद से अधिनियम बनाने में लग गए। इस दौरान छोटी बड़ी परियोजनाओं से विस्थापन होता रहा और सरकारी और निजी कंपनियां मनमानी करती रही और मुआवजा भुगतान में कोई पारदर्शिता और आदर्श पुनर्वास का कार्य नहीं किया जा सका। सरकार केवल विश्लेषकों की राय ही लेती रही और विस्थापितों और प्रभावितों को सुनने की जरूरत ही नहीं समझी गई. जनपक्षीय विश्लेषकों ने निर्णय प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने की बात बार बार की। लेकिन नीति में ऐसे प्रावधान नहीं किए गए। प्रारंभ में तो सरकार ऐसी कोई नीति की जरूरत ही नहीं बता रही थी।

आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय कानून की धारा 11.1 में दर्ज उपयुक्त आवास अधिकार की विषय – वस्तु को आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक अधिकार कमेटी सी. ई. एस. सी. आर. ने अपनी सामान्य टिप्पणी 4 में परिभाषित किया है। इसके अनुसार आवास के उपयुक्त होने का पैमाना निम्न सात मूल घटकों पर निर्भर है।

काश्तकारी अवधि की कानूनी सुरक्षा, सेवाओं की उपलब्धि, कीमत या आर्थिक मूल्य, पहुंच, वास योग्यता, उपयुक्त स्थान, सांस्कृतिक अनुकूलता को शामिल किया गया है।

देश जब आजाद हुआ तो आत्मनिर्भरता के नाम पर विकास की जो धारा बहाई गई उसने विस्थापन की समस्या को जन्म दिया। लेकिन तब इसे समस्या के रूप में चिन्हित करने का काम नहीं किया गया। लेकिन विस्थापन की समस्या के खिलाफ जनसाधारण का जनविरोध प्रारंभिक काल से ही था। तब जनविरोध के स्वर को विकास की तथाकथित राजनीति के नीचे सुनियोजित तरीके से दफन कर दिया गया। चाहे वह भाखड़ा नांगल हो या हीराकुंड डैम हो या फिर भारी अभियंत्रण निगम यानी एच. ई. सी. की

स्थापना के समय जो जनप्रतिरोध के स्वर गूंजे उसे राजकीय दमन के जरिए नेस्तनाबूद कर दिया गया। आदिवासियों पर देश की आजादी के पूर्व से ही डंडों और गोलियों की बौछार होती रही है। आजादी के बाद पंडित नेहरू और जयपाल सिंह मुण्डा ने आदिवासियों को विकास के लिए बलिदान का आहवान किया था। आदिवासियों को कहा गया कि विकास का लाभ उन्हें मिलेगा। नौकरियां होगी और बच्चों को उंची शिक्षा के अवसर मिलेगें। अस्पताल स्थापित होगें और लोग बीमारी से नहीं मरेगें। भूख, गरीबी और बीमारी का खात्मा होगा और बदहाली मिटेगी और खुशहाली आएगी।

विकास का जो मतलब पंडित नेहरू और जयपाल सिंह नें समझाया हुआ ठीक इसके विपरीत। जिन इलाकों में लोग उजड़े वे फिर से वायदे के अनुरूप बसाए नहीं जा सके। भूख, गरीबी और बीमारी बढ़ गई लोग बेरोजगार हो गए। एक खेत जो सालों भर और पूरे परिवार का पेट भरता था उसकी जगह परिवार के मात्र एक आदमी को नौकरी दी गई। इससे पूरे परिवार का भरण पोषण मुश्किल हो गया। विकास के नाम पर जिन कल कारखानों की नींव डाली गई उससे बाहर का समाज भारी लाभान्वित हुआ। लेकिन वास्तव में जिन लोगों की जमीन गई उन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी बेरोजगार होना पड़ा और वे रोजगार के तमाम अवसरों से वंचित होते गए।

झाड़खंड के कोइलकारो जलविद्युत परियोजना का संदर्भ उदाहरण के लिए लें। विकास के लिए उर्जा की जरूरत बताकर लगभग 256 गांवों को उजाड़ने की योजना सरकार ने बनाई। सत्तर के दशक में ग्रामीणों ने अपनी भूमि देने और बदले में मुआवजा को आदर्श गांव बनाकर दिखाया जाएगा ताकि विस्थापन के बाद लोगों का पुनर्वास उसी तरह से किया जा सके। लेकिन आश्वासन के बाद भी सरकार ने दो गांवों को पुनर्वासित करने का बीड़ा नहीं उठाया। नतीजा यह हुआ कि 722 मेगावाट विद्युत बिजली उत्पादन करने की सरकार की महत्ती योजना खटाई में पड़ गई। जनप्रतिरोध के स्वर उभर आए और जो ग्रामीण परियोजना बनाने को तैयार थी वे सभी परियोजना के विरोधी हो गए। जनप्रतिरोध के स्वर इतने तीखे थे कि 2001 को पुलिस ने फायरिंग कर 8 लोगों की हत्या कर दी। लगभग 1973 से प्रारंभ परियोजना 1995 के आते आते तरह तरह की राजनीति का शिकार हो गई। 1995 से परियोजना विरोधी नए स्वर फूटे और यह विवादों से घिर गई। इसे विकास नहीं महाविनाशकारी परियोजना बताया जाने लगा कोइलकारो

जनसंगठन का कहना था कि परियोजना से 256 गांव उजड़ेगें। लेकिन सरकार का कहना था कि 12 गांव की डूबेगें। गांवों के अलावा वन क्षेत्रों का भी नुकसान होगा।

कोइलकारो जनसंगठन का कहना था कि लोगों को उजाड़ने की योजना सरकार के पास तो है लेकिन उनके पुनर्वास को लेकर सरकार की चिंता दिखाई नहीं देती। सरकार नौकरी व मुआवजा की बात तो करती है। लेकिन सांस्कृतिक और सामाजिक पुनर्वास की सरकार परवाह नहीं करती है।

संदर्भ विशेष की बात करें तो विस्थापन शब्द ने देश के एक खास समुदाय को गहरे प्रभावित किया है जिससे सामाजिक और सांस्कृतिक आलोड़न पैदा हुआ है। आदिवासी भारत में राजनीति भी गहरे प्रभावित हुई है।

आजाद भारत में विस्थापन एक नियमित यानी कि सतत प्रक्रिया रही है। लेकिन राष्ट्र स्तर पर इसे एक सर्वव्यापी समस्या के रूप में नब्बे के दशक में ही देखा गया। राष्ट्र के विकास के नाम पर बड़ी परियोजनाओं और कल कारखानों की स्थापना के साथ ही विस्थापन का बीजारोपण होता गया। लेकिन किसी भी सरकार ने इसे वृहत् और देशव्यापी समस्या के रूप में नहीं देखा। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने जब हीराकुंड बांध, दामोदर घाटी निगम, भारी अभियंत्रण निगम, बोकारो स्टील फैक्टरी आदि की आधारशिला रखी तो विस्थापन का मानो कि शिलान्यास हो गया। यह समस्या प्रारंभ में विकास की आंधी में बह गई और लाखों लोगों को उजाड़ने और बसाने की कार्रवाई राष्ट्र हित का हिस्सा नहीं बन पाई। लेकिन धीरे धीरे विकास के नाम पर देश के खास भौगोलिक क्षेत्रों में स्थापित कल कारखानों, बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं से विस्थापित लोगों ने अपने नागरिक अधिकारों, मानवाधिकारों और पारम्पारिक सांस्कृतिक सामाजिक जीवन व्यवस्था को लेकर बड़े पैमाने पर सवाल खड़े करने लगे। इनमें खान खनिजों और प्राकृतिक संसाधनों से भरा इलाका ही विकास की चपेट में आता दिखाई दिया। तब यह सवाल उठा कि आखिर आदिवासी भारत में ही विकास की गंगा बहाने को सरकारें क्यों आतुर हैं। प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर इलाके में विकास की विविध योजनाओं से जो विस्थापन हुआ उसने सरकार को कटघरे मे खड़ा कर दिया है।

देश के स्वतंत्र होने के बाद जो विस्थापन हुआ उसका लेखा जोखा अभी हाल के सालों में किया जाने लगा। इससे अनेक महत्वपूर्ण पहलूओं पर रोशनी पड़ने लगी। देश का मध्य क्षेत्र पूर्वी भारत के इलाके में विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और समाज के सबसे आखिर आदमी या सम्पूर्ण समुदाय के विस्थापन ने बड़े बड़े आंदोलनों को जन्म दिया। मुख्य तौर पर देखा गया कि बड़ी परियोजनाओं में बड़े बांध, मध्यम और लघु सिंचाई परियोजनाएं, कल कारखाने, स्टील और पावर प्लांट, स्पंज आयरन, बड़े बड़े अभयारण्य, भेड़िया, मगरमच्छ आश्रयणी और पार्कों के नाम पर लोगों को उजाड़ने यानी कि विस्थापित करने का बेरोकटोक सिलसिला आजाद भारत में जारी रहा है।

विस्थापन की विकराल समस्या के मद्देनजर यह प्रमुख पहलू उजागर हुआ है कि देश की बड़ी आबादी इससे गहरे प्रभावित हुई है। इनमें बड़ी संख्या आदिवासियों, दलितों और गरीब लोगों की है। इनके सम्पूर्ण पुनर्वास के लिए सरकार के पास न तो कोई नीति है और न ही नीयत ही। आजाद भारत में करोड़ों लोगों के विस्थापन का सवाल आज नीतिविहीन सरकार के लिए बड़ी मुसीबत बना है। खान खनिजों और प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण इलाकों में ही विस्थापन की गंभीर समस्या पैदा हुई. इसने पर्यावरण असंतुलन से लेकर जंगलों ओर पृथ्वी की सुरक्षा का सवाल उठाया।

विस्थापन के आरंभिक पहलू में 1947 के विभाजन और उसके बाद सामाजिक और राजनीतिक कारणों से भारत से पाकिस्तान और पाकिस्तान से भारत पलायन व विस्थापन का संदर्भ जिक्र किया जाता है। इस विस्थापन को जबरिया विस्थापन कहा जाता है। कहा जाता है कि 15 मिलियन लोग दोनों तरफ से विस्थापित हुए। इस मामले के समाधान के लिए भारत सरकार ने पुनर्वास विभाग की स्थापना की थी। जो 1960 के आखिरी सालों तक काम करती रही। बाद में इसे अज्ञात कारणों से बंद कर दिया गया।जब 1971 में पाकिस्तान युद्ध हुआ और इसी समय तत्कालीन बर्मा में राजनीतिक उथल पुथल हुआ जिसका असर तिब्बत पर पड़ा इन वारदातों ने बांग्लादेश और अन्य सीमाओं से शरणार्थियों की बाढ़ लाई। तब भी भारत को पुनर्वास की समस्याओं का सामना करना पड़ा था।

एशिया उप महाद्वीप में भी प्राकृतिक आपदा के कारण भी बड़े पैमाने पर विस्थापन होता रहा है। सूखा, अकाल, भूकंप,बाढ़, सूनामी और साइक्लोन

आदि की वजह से बड़ी संख्या में लोग उजड़ जाते रहे हैं। इनमें गरीबों और वंचितों की तादाद अधिक रही है। ऐसे में पुनर्वासित विभाग की स्थापना और उसके निरन्तरता की आवश्यकता महसूस की जाती रही है। उसके कार्य कलाप और संभावनाओं में परिवर्त्तन कर उसे चलाया जाना चाहिए। विस्थापनजनित विकास की अवधारणा के अन्तर्गत दो तरह के विस्थापन को रेखांकित किया गया है। एक स्वैच्छिक विस्थापन और दूसरा जबरिया विस्थापन के अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। देश के विभिन्न राज्यों से आर्थिक प्रगति के लिए रोजी रोजगार की तलाश में लोग स्वैच्छिक तौर पर अपना पारम्पारिक परिवेश को छोड़कर विस्थापित हो जाते हैं। बेहतर आर्थिक जीवन की आशा में यह पलायन होता है। बतौर उदाहरण बिहार के गरीब किसानों को देखा जा सकता है। सामंती व्यवस्था और गरीबी के कारण वे विस्थापित होकर बाहर चले जाते हैं।

जबरन विस्थापन के भी अनेक उदाहरण है। खासकर बड़ी योजनाओं से जबरन बेदखली और विस्थापन का वीभत्स रूप आजादी के बाद देखने को मिल रहा है।

प्राकृतिक विपदा, एथनिक, धार्मिक संघर्ष और विकास योजनाओं से बड़े पैमाने पर लोगों को अपनी इच्छा के विरूद्ध विस्थापित होना पड़ता है। भारत के विभाजन के दरम्यान 1947 में 15 मिलियन लोग विस्थापित हुए। 1996 में हुए बोड़ो संथाल के बीच हुए खूनी टकराव से 1,26,263 लोग शरणार्थी बनकर आसाम में 38 राहत शिविरों में शरण लिए हुए हैं।

26 जनवरी 2001 के गुजरात में आए भूकंप से हजारों परिवार विस्थापित हो गए। गुजरात के 2002 के दंगे हजारों मुस्लिमों को घर छोड़ने को बाध्य कर दिया। 2004 में आसाम में आई बाढ़ से पांच मिलियन लोग बेघरबार हो गए। 26 दिसम्बर 2004 को दक्षिण भारत में आई सूनामी से अनेक परिवार उजड़ गए। मिजो और गैर मिजो के जातीय हिंसा में मई 2004 में 487 गैर मिजो परिवारों को भागकर आसाम में शरण लेना पड़ा। विकास योजनाओं के कारण जैसे बड़े बांध, औद्योगिक इकाईयों, खनन, उर्जा, परिवहन और पाक्र अभयारण्य आदि के लिए किए गए भूमि अधिग्रहण से बड़े पैमाने पर लोग विस्थापित हुए हैं।

आजादी के बाद राष्ट्र निर्माण के लिए विकास के जिस मॉडल को अपनाया गया उसे पश्चिमी मॉडल कहा गया। विकास के पश्चिमी मॉडल को

अंगीकृत कर भारत सरकार समस्याओं के गहरे समुन्दर में डूबती गई और इससे उपजे विस्थापन के मामले की गंभीरता की घनघोर अनदेखी की गई। आजादी के पचास सालों बाद उससे निकलने के हर संभव उपाय किए जा रहे हैं। जिन आदिवासियों और दलितों को मुख्यधारा में शामिल करने का पंडित नेहरू का सपना था, वे आजाद भारत में विकास की सबसे अधिक मार झेलने को अभिशप्त हैं। इस प्रचलित विकास ने गरीबी, भूखमरी, अशिक्षा और बदहाली बढ़ाई है जबकि पंडित नेहरू ने विकास का मतलब यह समझाया कि गरीबी मिटेगी, भूखमरी समाप्त होगी, शिक्षा का प्रचार प्रसार होगा और समृद्धि होगी। यही नहीं विस्थापन का सबसे अधिक प्रभाव महिलाओं और बच्चों के जीवन पर पड़ा है। आधी आबादी की समस्याओं को कभी गौर करने का काम नहीं किया गया। औरतों का जंगल जाना दूभर हो गया। उनके लिए पीने और खाना बनाने के लिए पानी का जुगाड़ करना कठिन हो गया। बच्चों की शिक्षा दीक्षा प्रभावित हो गई बच्चों के खेल के मैदान और अस्पताल दुर्लभ हो गया। एक जगह से उजड़े बच्चे कभी दूसरी जगह पर पारम्पारिक तौर पर बस नहीं सके। मानवाधिकार का बड़े पैमाने पर उल्लंघन हुआ और उससे भी बड़ी बात कि मानवाधिकार के उल्लंघन की अनदेखी की गई।

क्या है डी पी और पी ए पी यानी कि डिसपलेस्ड पीपुल और प्रोजेक्ट अफेक्टेड पीपुल

अनेक पुस्तकों में डी पी और पी ए पी शब्द का इस्तेमाल किया गया है। यह शब्दावली भी विस्थापन समस्या की ही देन है। विविध तरह के शोध अध्ययनों में यह बात सामने आई है कि भारत के विभिन्न राज्यों में जहां आदिवासी बहुल संख्या में हैं वहां उनका आधा से ज्यादा प्रतिशत डी पी और पी ए पी का है। अलग अलग शोधवेत्ताओं ने विभिन्न राज्यों के जो शोध आंकड़े दिए हैं उन्हें प्रस्तुत किया जा रहा है। सरकारी दस्तावेज के 2001 की जनगणना के मुताबिक भारत में आदिवासियों का प्रतिशत 8.08 है इनमें से 40 प्रतिशत आदिवासी विस्थापित हैं या प्रोजेक्ट के कारण प्रभावित हैं। विस्थापितों में 20 प्रतिशत आबादी दलितों, अन्य पिछड़े वर्ग और गांव के अन्य जातियों के गरीब लोग शामिल हैं। जिनकी हर हमेशा अनदेखी की जाती रही है। एक अध्ययन में कहा गया है कि श्रीहरिकोटा और सिमहाद्री प्रोजेक्टस और कुछ अन्य प्रोजेक्ट में मछली व्यापार से जुड़े आदिवासी और क्वारी वर्कर की लगभग 30 प्रतिशत आबादी विस्थापित और प्रभावित है।

आंध्रप्रदेश में आदिवासियों की आबादी 6.6 प्रतिशत है और इनमें से 30. 19 प्रतिशत विस्थापित और विस्थापन व परियोजना के कारण प्रभावित हैं।

उड़ीसा में आदिवासियों की आबादी कुल आबादी का 22.1 प्रतिशत है और इनमें से 40.8 प्रतिशत विस्थापित और परियोजना प्रभावित लोगों की है। आसाम में आदिवासी कुल आबादी के 12.4 प्रतिशत हैं और उनका अधिकांश हिस्सा विस्थापित और परियोजना प्रभावित है। त्रिपुरा में कुल आबादी का 31.1 प्रतिशत आदिवासी आबादी है और इसमें से 56.6 प्रतिशत

विस्थापितों और परियोजना प्रभावितों की है।

2010 और 2011 की वाल्टर फर्नांडीस की "रिहैबिलिटेशन पोलिसी एंड लॉ इन इंडिया ए राइट टू लाइभलीहूड" किताब में मिजोरम, मेघालय, नगालैंड और सिक्किम में आदिवासियों की बड़ी आबादी को परियोजना के कारण विस्थापित बताया गया है। यहां तक केरल और कर्नाटक में जहां आदिवासी अल्पसंख्यक में है। इडुकी और काबिनी डैम प्रोजेक्ट में बड़ी संख्या में आदिवासी आबादी प्रभावित हैं। लगभग 30.1 प्रतिशत आबादी इन प्रोजेक्ट की वजह से प्रभावित व विस्थापित हैं। वाल्टर फर्नांडीस की मान्यता यह है कि आम तौर पर विस्थापितों और प्रभावितों में आदिवासियों और दलितों के अनुपात को कम करके आंका जाता है।

1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत केवल जो पट्टाधारी है उन्हीं की गिनती की जाती थी। इसलिए केवल अधिकारिक तौर पर उन्हीं आंकड़ों को माना जाता रहा है। गैरपट्टाधारी की गिनती नहीं की जाती रही है। अधिकतर आदिवासी वनों और अन्य प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित जीवन जीते हैं उनकी कोई गिनती नहीं की जाती रही है। इसके उदाहरण छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव के दल्ली राजहरा खनन, उड़ीसा के हीराकुंड डैम, आंध्रप्रदेश के नागार्जुन सागर और त्रिपुरा के डमबर डैम के संदर्भ में देखा जा सकता है। बहुत से दलित परिवार जो भूमिहीन हैं वे गांव के समूदाय आधारित जीवन पर उनकी जीविका टिकी होती है। बिना पट्टा के वे विस्थापितों और प्रभावितों की श्रेणी में नहीं रखे जाते हैं। केरल के नेदुमबासेरी हवाई अड्डा के कारण ऐसे ही 43 प्रतिशत विस्थापित हो गए। इसी तरह अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों के हालात हैं।

पुनर्वासित गांवो का दोबारा और बार– बार विस्थापन

दूरगामी योजना के अभाव में मल्टी विस्थापन की घटनाओं के भी उदाहरण हैं।ऐसा दूरगामी योजना के अभाव की वजह से हुआ है। मध्य प्रदेश के रिहंद डैम जो 1960 में स्थापित किया गया। इसके बाद 30 सालों में तीन बार उन्हें एक जगह से उजाड़ कर दूसरे जगह पर जाने को मजबूर किया गया।

कर्नाटक के सोलिगा आदिवासी काबिनी डैम से 1970 में विस्थापित हुए। इन विस्थापितों को राजीव गांधी नेशनल पार्क बनाने के लिए उनको

दोबारा से विस्थापित किया गया। मछुवारे परिवारों को 1960 में मंगलोर हवाई अड्डा के लिए विस्थापित किया गया और कृषक के तौर पर उनको दोबारा 1980 में कोंकण रेलवे के लिए विस्थापित किया गया।

अब 1894 का भूमिअधिग्रहण अधिनियम समाप्त हो गया है।

प्राकृतिक और मानवनिर्मित आपदा

प्राकृतिक और मानवनिर्मित आपदा की वजह से भूकंप, बाढ़ और औद्योगिक हादसे की वजह से विश्व के लगभग आधे मिलियन लोगों के प्रभावित होने की बात कही जाती है। 2001 के गुजरात और 2005 के कश्मीर के भूकंप के कारण 20,000 से 30,000 लोगों के मरने और 200,000 लोग आंतरिक विस्थापन के शिकार हो गए।

2004 की सूनामी की वजह से 300,000 लाख लोग मारे गए और 500,000 लोग घरविहीन हो गए। आम तौर पर ग्लोबल आंकड़े आंतरिक तौर पर विस्थापितों की संख्या 500,000 बताई जाती है। लेकिन इन आंकड़ों में भी बाढ़ के कारण विस्थापितों की संख्या जो कि मिलियन में है उसे शामिल नहीं किया गया है। इसमें सूखा और लैंडस्लाइड की वजह से हुए विस्थापित भी शामिल नहीं हैं।

पूरे विश्व में पांच मिलियन लोगों के एथनिक और धार्मिक संघर्षों के कारण शरणार्थी शिविरों में होने का अध्ययन किया गया है। हर साल उनमें 2 मिलियन की बढ़ोतरी हो रही है। लेकिन बिलकुल सही आंकड़ा पेश करना संभव नहीं हैं। क्योंकि वे अपने रिश्तेदारों के यहां चले जाते हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघ के स्त्रोतों के अनुसार 1999 में 5,07000 लोग संघर्ष की वजह से आंतरिक विस्थापित हुए।

उत्तर पूर्व और आसाम में चले बांग्लादेशियों और अन्य बाहरी लोगों के खिलाफ आंदोलन की वजह से 1979—1985 के बीच 1,37,000 लोग विस्थापित हुए।

कबीलाई संघर्षों के कारण पश्चिम आसाम के बोड़ो इलाके में 1990 में 3,50,000 लोग आंतरिक तौर पर विस्थापित हुए उनमे 1,90,000 आदिवासी थे। इस तरह उत्तर पूर्व में एथनिक संघर्षों में मेघालय त्रिपुरा लगभग क्रमशः 35000 और 190000 लोग विस्थापित हुए.नगा कुकी संघर्ष में भी 50,000

लोग विस्थापित हो गए। यह विस्थापन आपसी संघर्षों की वजह से हुए हैं।

आंकड़ों की उलझन : शोधवेत्ताओं के अलग अलग अलग आंकड़े

दूसरी पंचवर्षीय योजना जो 1956 से 1961 तक चली के दौरान मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाने और उसके पोषण की बात कही गई। इसी योजना के दरम्यान हीराकुंड, नागार्जुनसागर, भाखड़ा नांगल, दामोदर घाटी निगम, बोकारो स्टील प्लांट,भारत हेवी इलेक्ट्रिकलस, मशीन टूल्स आदि की स्थापना की गई।

आजादी के बाद विकास के जो मानदंड तय किए गए उसकी सबसे वीभत्स शिकार औरत और बच्चे हुए। विकास के विभिन्न पैमाने में यह भूला दिया गया कि भारत में जाति आधारित व्यवस्था है और जिन इलाकों में विकास की परियोजनाएं लागू की गई उन इलाकों में आदिवासी दलितों की आबादी बहुतायत में निवास करती रही है। साथ ही लिंग आधारित गैरबराबरी वाले समाज में विकास की इन योजनाओं को उतारा गया जिसका गहरा प्रभाव औरतों और बच्चों के जीवन पर पड़ा।

राष्ट्र के विकास के नाम पर जो विकास हुआ उसके कारण विस्थापन की जो बाढ़ आई उसका आज तक सरकारी तौर पर मूल्यांकन नहीं किया जा सका है। इसीलिए विस्थापन के विविध आंकड़े प्रस्तुत किए जाते हैं। इसके कारण सही विस्थापितों के आंकड़े और प्रभावितों के आंकड़ों का लेखा जोखा नहीं हो पाया है। 1960 के दशक के आते आते यह स्पष्ट हो गया था कि विकास का लाभ सबों का नहीं मिल पा रहा है। लेकिन सरकार ने इसके आकलन के कोई उपाय नहीं किए।

1951 से 1990 तक विस्थापितों की अनुमानित संख्या 213 लाख बताई जा रही थी। उड़ीसा सरकार ने हीराकुंड डैम के विस्थापितों का आंकड़ा 1,10,000 बताया है। लेकिन उड़ीसा के कुछ शोधकर्त्ताओं पटनायक मिश्रा और दास आदि ने इसकी संख्या 1,80,000 बताई है। इसी तरह से त्रिपुरा के डमबर डैम के कारण हुए विस्थापितों का सरकारी आंकड़ा 2361 परिवार बताया गया है। लेकिन शोधकर्त्ताओं ने 9000 परिवारों के लगभग 40000 हजार लोगों की संख्या बताई है। इनमें से अधिकांश आदिवासी हैं। आसाम के पगलाडिया डैम के कारण 3271 लोगों के विस्थापन की बात सरकारी तौर पर कही गई। लेकिन फील्ड के आंकड़े बताते हैं कि 20,000 परिवार विस्थापित हुए।

अरूंधती राय ने 1999 में कहा था कि 56 मिलियन लोग 4200 बड़े डैमों से विस्थापित हुए।

प्रथम से आठवीं पंचवर्षीय परियोजना यानी कि 1951 से 1995 के दौरान लागू की गई विकास की योजनाओं के विस्थापितों का आंकड़ा सरकारी तौर पर उपलब्ध नहीं कराया गया है। वाल्टर फर्नाडीस ने अपने अध्ययन में बताया है कि भारत में 4260 बांधों में 300 बांध बड़े बांध हैं। अध्ययन के दरम्यान 70 से 80 प्रोजेक्ट की फाइल ही उपलब्ध है और आंकड़े उन्ही के आधार पर दिए गए हैं। जैसा कि करें मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ में व्यापक पैमाने पर विस्थापन हुआ। लेकिन वहां के कोई अध्ययन उपलब्ध नहीं है। अनुमान से केवल 60 मिलियन विस्थापितों की बात कही जाती है।

एक अध्ययन के मुताबिक भारत के 28 राज्यों में से 13 राज्यों में विकास के कारण विस्थापितों और प्रभावितों की संख्या 20.4 मिलियन है।

अध्ययन बताते हैं कि विस्थापितों में केवल 20 प्रतिशत लोगों को ही पुनर्वासित किया जा सका है। 1894 के भूमि अधिग्रहण कानून के तहत केवल पट्टा धारकों को ही गिना जाता रहा है और वनों और वन सम्पदाओं पर आश्रित रहनवालों को विस्थापितों की गिनती में शामिल नहीं किया गया।

देश के कुछ राज्यों में विस्थापितों व प्रभावितों के आंकड़े प्रस्तुत हैं। यह आंकड़े विभिन्न शोधकर्त्ताओं ने 2001 से 2010 के दौरान एकत्रित किए हैं।

तालिका नं. 1.1

क्रसं	राज्य	आदिवासी		दलित		अन्य		एँन. ए.		कुल
1.	आंध्रप्रदेश	970654	30.19	628824	19.56	1467286	45.63	148856	4.63	3215620
2.	आसाम	416321	21.80			609015	31.90	893538	46.30	1918874
3.	गोवा							66820	100	66820
4.	गुजरात	18212883	44.43	462626	11.29	1791142	43.70	23818	0.58	4098869
5.	झाड़खंड	620372	40.08	212892	13.75	676575	43.71	38178	02.47	1548017
6.	केरल							552233	100	552233
7.	मेघालय	110158	100	0	0	0	0	0	0	110158
8.	मिजोरम	200139	100	0	0	0	0	0	0	200139
9.	नगालैंड	62675	100	0	0	0	0	0	0	62675
10.	ओड़िसा	616116	40.38	178442	11.64	671351	48.01	0	0	1465909
11.	सिक्किम	20178	36.74	1190	2.13	25720	40.79	8747	15.66	55835
12.	त्रिपुरा	100195	56.66	20518	11.60			56082	31.72	176828
13.	पश्चिम बंगाल	1330663	19.16	1689607	24.33	2566223	36.95	1357999	19.55	6944492
	कुल	6268754	30.70	3195099	15.65	7807312	38.24	3146271	15.41	20416469

सरकारी और गैरसरकारी आंकड़ों का अन्तर देखें—

तालिका नं. 1.2

क्र.सं.	प्रोजेक्ट का नाम	सरकारी आंकड़ा	शोधवेत्ताओं का आंकड़ा
1.	हीराकुंड डैम, उड़ीसा	1,10,000लोग / 1968	1,80,000 लोग
2.	डमबर डैम, त्रिपुरा	2361 परिवार	9000 परिवार / 40000 लोग
3.	पगलाडिया डैम, आसाम	3271 परिवार	20,000 परिवार

स्त्रोत् वाल्टर फर्नांडीस और विजय परांजपे रिहैबिलिटेशन पोलिसी एंड लॉ इन इंडिया।

विस्थापन की समस्या का सही आकलन भी सरकारी तौर पर नहीं किया जा सका है। करोड़ों लोगों के उजाड़े जाने के सही आंकड़े के अभाव ने सरकार को हर मोर्चे पर कटघरे में खड़ा कर दिया। सरकार के कल्याणकारी भूमिका पर प्रशन चिन्ह लगे। भारत देश के संविधान में कल्याणकारी राष्ट्र होने की बात बेमानी साबित होने लगी। आदिवासियों और दलितों को मुख्यधारा में लाने के नाम पर उन्हें उजाड़ने की कार्रवाई ने सरकारी षडयंत्र का खुलासा किया।

विस्थापन की समस्या राष्ट्रव्यापी होने और आदिवासी भारत खासकर पूर्वी और मध्य भारत में आदिवासी आंदोलन खड़े होने से भारत सरकार पुनर्वास और पुनर्स्थापन नीति का एक प्रारूप तैयार किया जिसे 1894 के भूमि अधिग्रहण कानून को समाप्त कर उसकी जगह बने नए कानून द राइट टू फेयर कम्पनशेसन एंड ट्रांसपरेंसी इन लैंड एक्वीजिशन रिहैबीलिटेसन एंड रिसेटेलमेंट एक्ट 2013 में लाया गया। इस कानून के एक जनवरी 2014 से लागू होने के बावजूद सरकारें गरीबों आदिवासियों और दलितों की जमीन पर कानून की अनदेखी कर अवैध कब्जा कर रही है। यह गैरकानूनी कब्जा बड़े पैमाने पर की जा रही है। इस कब्जे के खिलाफ ग्रामीण आंदोलित हैं। ग्रामीणों को पुनर्वास का कोई पैकेज भी उनकी सहमति और भावनाओं के अनुरूप न तो तैयार किया गया है और न ही उन्हें यह पेश किया गया है। 2013 के भू अर्जन व पुनर्वास कानून के धारा 24 के उपधारा 2 में साफ कहा गया है कि भू अर्जन के पांच साल या अधिक साल होने पर उसपर भौतिक तौर पर कब्जा न किए जाने की हालात में भूमि रैयतों को वापस हो जाएगी। अधिग्रहण स्वतः रद्द हो जाएगा।लेकिन इस प्रावधान का उल्लंघन कर सरकारें भी अपनी मनमर्जी चला रही है।

नतीजा यह है कि छोटे राज्यों के विकास के नाम पर जिन तीन राज्यों का गठन हुआ उनमें झाड़खंड और छत्तीसगढ़ में विस्थापन के खिलाफ जन उबाल पैदा हुआ है। नक्सलवाद माओवादी विचारधारा से लबरेज संगठनों की फौज खड़ी हो गई है। जिसने गृह युद्ध जैसे हालात बना दिए हैं। छत्तीसगढ़ की सरकार ने 100 से अधिक एम. ओ. यू. किया। पूर्व में झाड़खंड की सरकार ने 107 एम. ओ. यू. किया। 16–17 फरवरी 2017 को रांची में हुए ग्लोबल इंवेस्टर्स मीट में 210 एम.ओ.यू किए गए साढ़े 3 लाख करोड़ के निवेश का प्रस्ताव किया गया। उड़ीसा की सरकार ने 102 एम. ओ. यू. किया। लेकिन तीव्र जनप्रतिरोध के कारण किसी भी एम. ओ. यू. को अमली जामा पहनाया नहीं जा सका है। सलवा जुडुम के नाम पर 644 गांव और 3 लाख आदिवासियों को बेघरबार होना पड़ा है। इन गंभीर समस्याओं के मद्देनजर विस्थापन पर विस्तार पूर्वक और सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, आर्थिक, राजनीतिक पड़ताल आवश्यक है। इस पर वृहत् शोध के जरिए समूचे संदर्भ पर विस्तार पूर्वक रोशनी डाली जा सकेगी। विस्थापन के खिलाफ आंदोलन करनेवाले अनेक फोरम में से एक विस्थापन विरोधी जनविकास आंदोलन भी है।विस्थापन विरोधी अनेक संगठनों ने विस्थापन पर अपना स्पष्ट नजरिया रखते हुए सरकार के प्रतिनिधियों को समय समय पर स्मार पत्र दिया है और कहा है कि हम झारखंड के आदिवासी और अन्य मूल निवासी ग्रामीण विस्थापन की खास समस्या पर सरकार का ध्यान आकृष्ट करते रहे हैं। झाररखंड की सरकारों ने विकास के नाम पर परियोजनाएं लगाने के लिए विभिन्न कंपनियों के साथ करीब 100 एमओयू (मेमोरंडम ऑफ अंडरस्टैडिंग) कर रखे हैं। जनविकास आंदोलन का मानना है कि इन परियोजनाओं के लगने से झारखंडी जनता की भारी तबाही होगी। अब तक का इतिहास इस तबाही का गवाह है। औपनिवेशिक अंग्रेज सरकार ने झारखंड क्षेत्र के संसाधनों का दोहन करने के लिए झारखंड पर कब्जा किया। जंगलों और खनिजों के दोहन के सिलसिले में उसने लाखों आदिवासियों को उनके गांवों से जबरन विस्थापित किया और विस्थापितों में से बड़ी संख्या में लोगों को पलायन करके चाय बगानों में मजदूर बनने के लिए मजबूर किया। तब से झारखंडी जनता के विस्थापन, पलायन और तबाही का जो सिलसिला चला वह थमने का नाम नहीं ले रहा है। अंग्रेजों के ही जमाने में जमशेदपुर में टाटा का कारखाना लगा उसकी बेशुमार प्रशंसा चारों तरफ की

जाती रही है। लेकिन झारखंडी जनता के लिए सचाई यह है इस कारखाने के लगने और जमशेदपुर शहर के बसने और फैलने से झारखंडी जनता के विस्थापित होने का वहां जो सिलसिला शुरू हुआ वह आज भी बेरोक जारी है। दूसरे इलाकों में उद्योगों, खदानों और शहरों के विकास से भी झारखंडियों की तबाही होती गयी।

देश की आजाद होने के बाद भी झारखंडियों के हालात नहीं बदले, बल्कि और भी तेजी से बदतर होते गये। लाखों की संख्या में लोग विस्थापित हुए। लगभग दो प्रतिशत लोगों को आरक्षण द्वारा कुछ पक्की नौकरियां मिलीं। लेकिन मूलतः झारखंड के लोग अकुशल ठेका मजदूर ही बने रहे। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में ही बाकायदा एक नीति घोषित की गयी थी कि झारखंड क्षेत्र खेती के लिए उपयुक्त नहीं है, सिर्फ उद्योगों के लिए उपयुक्त है। इस नीति को आधारित करके जानबूझकर झारखंड की खेती का कोई विकास नहीं किया गया, और यही उद्योगपतियों और उनकी पक्षधर सरकारों का मकसद था क्योंकि इससे जमीनें सस्ती और मजदूर सस्ते बने रहे। आज भी इसी सोच के आधार पर झारखंड की विकास नीति चल रही है। 1400 मि. मी. की वार्षिक वर्षा के जल का सही प्रबंध करने के लिए सरकार ने कभी कोई योजना नहीं बनायी है जबकि झारखंडी मूल की जनता का 78 प्रतिशत ग्रामांचल में ही रहता है।

अंग्रेजों के आने के समय करीब सारा झारखंड वनाच्छादित था। झारखंड की जनता का जीवन आधार काफी हद तक जंगल थे। लेकिन जंगलों से बेदखल कर दिये जाने, जंगलों के कट जाने के चलते काफी हद तक जंगल के संसाधन लोगों से छिन गये। दूसरी तरफ कारखानों, खदानों शहरों बांधों आदि के लिए जमीनें जबरन लोगों से छीनी जाती रहीं। सिंचाई का झूठा वादा करके बांध बनाये गये लेकिन वास्तव में जलाशयों के पानी का उपयोग शहरों और उद्योगों के लिए ही किया जाता रहा। बांधों में पानी भरा है लेकिन चारों तरफ के खेत सूखे हैं। इन सब कारणों से विस्थापित लोग भुखमरी के शिकार होते रहे, पलायन के लिए मजबूर होते रहे। एक तरफ आदिवासियों की ईमानदारी और भोलेपन का गुणगान करते हुए और आदिवासी महिलाओं को सरकारी गैर–सरकारी समारोहों में नचाने की परम्परा तो दूसरी तरफ लोगों की तबाही का उपरोक्त सिलसिला जारी रखा गया।

झारखंड के आदिवासियों ने पूरी 19वीं शताब्दी अंग्रेजी शासन के खिलाफ लगातार विद्रोह किए। कोई ऐसा दशक नहीं जब यहां की भूमि पर रक्तपात न हुआ हो। भारी जनसंहार करके विद्रोहों को कुचलने के बाद भी अंग्रेजों को आशंका बनी रही कि विद्रोहों का सिलसिला थमेगा नहीं। एक अघोषित समझौते के रूप में झारखंडी जनता की जमीनों की रक्षा के लिए छोटानागपुर और संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम पारित किये गये। संताल हूल और बिरसा के विद्रोह उलगुलान के बाद संतालपरगना काश्तकारी अधिनियम और छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम 1908 बनाए गए। उससे कुछ हद तक जमीनों की रक्षा हुई लेकिन इन अधिनियमों को बेअसर करने की कोशिशें भी लगातार जारी रहीं। सबसे पहले बहुत–से लोगों को आदिवासी जनों की सूची से हटाया गया। जिससे कलम की एक मार से आधे से ज्यादे लोगों को इस कानून के संरक्षण से हटा दिया गया। उसके बाद कानून में रखे गये और बाद में शामिल किये गये कई छिद्रों का इस्तेमाल करते हुए कानून को बेअसर करके और कानून का उल्लंघन करके आदिवासियों की जमीनें छीनी जाती रहीं। आज भी झारखंड में यह हर दिन की घटना है। मूलतः शहरों का ही विकास करने की सरकार की नीति का एक नतीजा यह हुआ है कि बाहर से आकर बसे हुए माफिया लोग चारों तरफ के ग्रामीणों की जमीनों को छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम का उल्लंघन करके हड़प रहे हैं और पुलिस और प्रशासन के अधिकारी उन माफियाओं को संरक्षण देते हैं। इस प्रक्रिया में निरीह आदिवासियों की लाखों एकड़ जमीन गैर–कानूनी ढंग से हड़प ली गयी है इसके पीछे एक तरफ सरकार की जन–विरोधी नीतियां हैं और दूसरी तरफ झारखंडी जनता से कोई हमदर्दी नहीं रखने वाले नौकरशाह। जब कभी किसी मजिस्ट्रेट की कृपा से निचले कोर्ट में आदिवासी अपने पक्ष में डिग्री हासिल भी कर ले तो ऊपर के कोर्ट में 20–30 साल तक मुकद्में विचाराधीन लटके रहते हैं। ऐसे तो बहुत कम ही आदिवासी इस तरह केस लड़ पाते हैं।

दूसरी तरफ जब खेती चौपट होने के चलते भुखमरी से त्रस्त झारखंडी ग्रामीण अपने ही राज्य में शरणार्थियों की तरह शहरों के किनारे झोपड़ियां बनाकर किसी तरह गुजारे की कोशिश करते हैं। तब उसी झारखंड के खनिजों, मिट्टी, पानी, हवा, सस्ती मेहनत और अन्य संसाधनों से हजारों–लाखों करोड़ रुपयों का मुनाफा कमा रहे पूंजीपति की सेवा में जिला का उपायुक्त

एक तरफ उन बस्तियों को उजाड़कर शहरों के सौदर्यीकरण में लगे रहते है। दूसरी तरफ जब वे भुखमरी के शिकार लोग लालकार्ड मांगने उसी अफसर के पास जाते हैं तब वह इस गलत आधार पर अमानवीय ढंग से इनकार कर देता है कि वे चूंकि वे जिस जमीन पर बसे हैं वह उनका नहीं है इसलिए वे लालकार्ड के हकदार नहीं हो सकेंगे। इस तरह की दुर्दशा झाड़खंडी जनता झेल रही है।

झारखंड में औद्योगीकरण का एक विनाशकारी नतीजा है भारी प्रदूषण। प्रदूषण के चलते नदियों का पानी जहरीला होता गया। जल--जीवन नष्ट हुआ पानी पीने लायक नहीं रहा। स्पंज आयरन कारखाने हाल की एक दुर्भाग्यपूर्ण परिघटना है। 50 से अधिक स्पंज आयरन कारखानों से होने वाले प्रदूषण से खेती, लाह और महुआ उत्पादन पर नकारात्मक असर पड़ा है और उत्पादन में भारी गिरावट आ गई है। लोग और जानवर तरह--तरह की बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। अभी उससे भी अधिक संख्या में स्पंज आयरन कारखाने खडे करने की तैयारी चल रही है।

भारत में उदारीकरण की नयी आर्थिक नीति के फलस्वरूप झारखंड के संसाधनों को लूटने के लिए नई कंपनियों का एक नेटवर्क प्रवेश कर गया है। विकास के नाम पर झारखंड की सरकारों ने इन सही--गलत औद्योगिक घरानों के साथ एक सौ से ज्यादा एमओयू (मेमोरंडम ऑफ अंडरस्टैंडिंग) किये। सारे कानूनों--नियमों को ताक पर रखकर खदानों से खनिज निकाले जा रहे हैं। इसका फायदा किसी भी तरह झारखंड को नहीं मिलता। पिछले कटु अनुभवों से सीख लेकर हर दिशा में झारखंडी जनता ने इन एमओयूओ का मजबूती से विरोध किया और सरकार से कहा कि पूंजीपतियों और उनके लग्गू--भग्गुओं की सेवा में तुम्हारा यह विकास कार्यक्रम हमारी बरबादी का कार्यक्रम है। यह हमें बिलकुल स्वीकार नहीं है। इस कार्यक्रम से हमारा भारी विस्थापन होगा। उद्योगों, उनसे जुड़े शहरों और गतिविधियों के लिए बड़े पैमाने पर जमीनें छीनी जायेंगी। बाहर से बड़े पैमाने पर लोग आकर बसेंगे; झारखंडी जनता भारी संख्या में पलायन को मजबूर होगी। अभूतपूर्व रूप से प्रदूषण बढ़ेगा। भविष्य में झारखंड की एक मुख्य संपदा खनिज खतम हो जायेंगे। झारखंड और झारखंडी बरबाद हो जायेंगे। उद्योगों से रोजगार मिलने का सरकार का दावा झूठ साबित हो चुका है। झारखंडी जनता को सिर्फ ठेका और दिहाड़ी मजदूर बनाया गया है और उससे बेहतर कुछ नहीं।

मूलतः स्थायी नौकरियां झारखंडी जनता को मिलने से रही। विस्थापन जारी रहा तो यही हुआ है और यही होगा। मुनाफाखोर पूंजीपति, भ्रष्ट नेता और भ्रष्ट नौकरशाहों के जो कारनामे हमने आज तक देखे हैं उससे कोई बेहतर निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है। आंदोलनकारी जनता को सरकार की पुनर्वास नीति पर भरोसा नहीं है। अगर सरकार अपनी निष्ठा और ईमानदारी का दावा करती है तो पहले अब तक हुए विस्थापितों का उचित पुनर्वास करे, फिर बात करे।

आंदोलनकारी जनता की सबसे बड़ी एक शिकायत यह रही है कि सरकार गांव की गैर–मजरुआ जमीन को उद्योगपतियों को दे रही है। गैर–मजरुआ जमीन तो गांव की विभिन्न जरूरतों के लिए है। जैसे – चारागाह, स्कूल, धार्मिक–सांस्कृतिक समारोह आदि। जिस तरह बड़े शहरों में गुंडे–माफिया कुछ पैसों की पेशकश करके भवनों के मालिकों को भवन बेचने के लिए मजबूर करते हैं, उसी तरह प्रशासन के बल पर उद्योगपति ग्रामीणों को जमीन बेचने के लिए मजबूर करते हैं। जनता इस जबर्दस्ती के सौदे का विरोध करती है और गैर–मजरुआ जमीन को हड़पने का विरोध करती है।

सरकार यह सारा कार्यक्रम विकास के नाम से पेश करती है जो वास्तव में हमारे विनाश का कार्यक्रम है। चंद लोग करोड़पति बन रहे हैं और शहरों में भवन बनते जा रहे हैं, और इसी को सरकार तरक्की बताती है। दूसरी तरफ सूखे खेतों और भुखमरी से त्रस्त ग्रामीणों का पलायन लगातार जारी है। ग्रामीणों को आत्म–सम्मान और आत्म–विश्वास से हीन भिखारियों में बदला जा रहा है। इन हालातों का आकलन विश्लेषण कर सरकार को अपनी नीति बदलने की जरूरत है। सरकार झारखंडी जनता के विकास के लिए कार्यक्रम बनाये। 1400 मि.मी. वर्षा के पानी का सही उपयोग करके साल भर खेतों में कुछ न कुछ उपयोगी फसल पैदा करने योजना सरकार बना सकती है। लेकिन इस दिशा में ठोस पहल नहीं किए गए हैं। गाँवों को फलदार और अन्य उपयोगी बाग बगीचों से भरना है। सभी गाँवों में गहरे तालाब मछली पालन के योग्य बनाने हैं और मछली पालन आजीविका का एक मुख्य साधन बनाना है। मुर्गी, बत्तख, गाय आदि पशुपालन करना है। वनों के विकास को गाँवों के साथ जोडना है। इन सबके लिए आधारभूत ढाँचा तैयार करना होगा। गांवों में लघु खाद्य प्रसंस्करण के उद्योग लगे और खाद्य भंडारण के

लिए शीतगृह बनें। कुल मिलाकर गाँवों के विकास से पलायन रूके, ग्रामीणों को पर्याप्त भोजन जुटाने के अलावा, उनके पास इतनी आमदनी हो कि उनकी जरूरतें पूरी हों। इसी प्रक्रिया से ग्रामीणों द्वारा किये गये उपभोग से जो उद्योग पनपेंगे उसी से सही औद्योगिक विकास होगा। आंदोलनकारी समय समय पर मांग करते रहे हैं कि सभी एमओयू (मेमोरंडम ऑफ अंडरस्टैंडिग) रद्द किया जाए। झारखंड में अब तक विस्थापित किये गये लोगों का उचित पुनर्वास ठीक तरह से हो। देश को लूटने के लिए अंग्रेजों द्वारा बनाये गये भूमि अधिग्रहण कानून को रद्द किया जाए। छोटानागपुर और संथालपरगना काश्तकारी अधिनियमों का उल्लंघन करके हड़पी गयी आदिवासियों की जमीनें वापस की जाएं। अधिग्रहित जिन जमीनों का उपयोग अधिग्रहण के उद्देश्य के लिए नहीं किया जा रहा है उनको मूल रैयतों को वापस किया जाए। चौपट खेती, वनों से बेदखली और अन्य कारणों से शहरी बस्तियों में बसनेके लिए मजबूर झारखंडी ग्रामीणों को उन बस्तियों में मालिकाना हक दिया जाए। खेती, वनस्पति और मनुष्यों एवं पशुओं के स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचा रहे स्पंज आयरन कारखानों को बंद किया जाए। शहरों के विकास की प्रक्रिया में चारों तरफ के गांवों की जमीनें दबंग लोगों द्वारा हड़पी गयी हैं उन जमीनों को वापस किया जाए। ग्रामांचल में उचित जल प्रबंधन करके खेती, मछलीपालन, बागवानी, कोल्डस्टोरेज, खाद्य–प्रसंस्करण उद्योग, विद्युतीकरण आदि द्वारा समग्र ग्रामीण विकास और इसके लिए बजट का 80 प्रतिशत खर्च किया जाए। विस्थापन एवं जनांदोलन नामक पुस्तक के संकलन में कहा गया है कि विस्थापन की समस्या हमारे देश के किसी विशेष स्थान की समस्या न होकर देशव्यापी है। खासकर देश के आदिवासी बहुल क्षेत्रों में तथा दूर दराज क्षेत्रों में जहां प्राकृतिक और भूम्पदा का भंडार है।विकास के नाम पर आदिवासियों को उनकी जमीन से बेदखल कर सम्पदाओं को हथियाने की साजिश रची जाती रही है। झाड़खंड के विभिन्न जिलों, छत्तीसगढ़ के बस्तर, उड़ीसा के नियामगिरी पर्वतों में अकूत खनित सम्पदा है और सभी विदेशी देशी कंपनियां वहीं अपना वर्चस्व कायम करना चाहती है। इसका विरोघ करने वाले आदिवासियों को नक्लसली, उग्रवादी और देश विरोधी बताकर उन्हें कुचला जाता है। जबकि विकास की योजनाएं अपने साथ अनेक त्रासदियों को लेकर आती हैं उनमें से विस्थापन सर्वोपरि है। इसके संपादकीय में कहा गया है कि विस्थापन विकास की असलियत

को उजागर करती है। विस्थापन साम्राज्यवादी शोषण का एक वीभत्स रूप है। विकास का लाभ कुछ पूंजीपतियों, नौकरशाहों और अमीर तबकों को ही हासिल हो पाया है। विस्थापन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था की रीढ़ ही टूट गई है। कृषक अब विस्थापित होकर सड़कों में बदहाल का जीवन जीने को अभिशप्त हैं। विस्थापितों का जीवन, जीविका, पहचान, संस्कृति और स्वाभिमान सब समाप्त कर दिया गया। विकास का मकसद कृषि व्यवस्था को नष्ट कर औद्योगिक व्यवस्था को मजबूत बनाना है। इससे विस्थापितों को कोई लाभ नहीं होनेवाला है। वह अकुशल मजदूर बताकर हाशिए पर धकेला जाता रहा है।

आदिवासियों के धरती मां की अवधारणा को ही नेस्तनाबूद किया जा रहा है। मंदर अर्थ यानी धरंती मां आदिवासी जीवन दर्शन का ऐसा पहलू है जिससे प्रकृति की महत्ता उसकी उपयोगिता और धरती की रक्षा का सम्पूर्ण विश्व को संदेश जाता है। धरती माता की पूजा और उसकी रखवाली करके ही सभी लोग समान भाव से संसार में जीवन का अधिकार हासिल कर सकते हैं। लेकिन चारों तरफ धरती को घेरने और उसे नष्ट करने के आधुनिक विकास और तकनीक का अंधाधुंध उपयोग किया जा रहा है। परिणाम क्या होगा इसपर कोई चिंता जाहिर नहीं की जा रही है। आज पूरी दुनिया में पानी का संकट गहराया है और धरती के उपरी और मध्य हिस्से में पानी के सूख जाने के कारणों का भी अन्वेषण नहीं किया जा रहा है। मनुष्य को पानी मिलेगा कहां से इस सवाल का उत्तर नहीं दिया जा रहा है। यह धरती माता मदर अर्थ की रक्षा करके ही संभव है। जबकि विकास के नाम पर अंधाधुंध बांध, खनन और उद्योगों की स्थापना करके धरती माता को पानी और मिट्टी से वंचित किया जा रहा है।

विकास करना है तो किसी भी तरह से यहां तक कि नियमों को तोड़ मरोड़ कर आर्थिक विकास की उंचाईयां हासिल करने की कोशिश की जा रही है। इसके लिए औद्यागिक घरानों के पास न तो पैसे की न ही पहुंच की और न ही सत्ता के पावर की कमी है। विकास यानी औद्यागिक घरानों का अपना आर्थिक विकास न कि जमीन और संसाधन दिए लोगों का विकास और उत्थान। ऐसे में विस्थापन जैसे अभिशाप से विस्थापित मुक्त नहीं हो सकते हैं।

बहुउद्देशीय हाईडल पावर एवं विविध बांध योजनाओं के कारण हुए

झाड़खंड प्रदेश में हुए विस्थापन की एक झलक इन आंकड़ो में देखी जा सकती है।

तालिका नं. 1.3

योजना का नाम	जिला	आदिवासी	%	एस. सी.	%	अन्य	%	कुल
1. मैथन डैम	धनबाद	18220	65.0	4204	15.0	5606	20.0	28030
2. तिलैया	कोडरमा	9672	60.0	1612	10	4836	30.0	16120
3. पंचेत	हजारीबाग	35242	85.0	2073	0.50	4146	10.0	41461
4. कोनार	हजारीबाग	5747	100	0	00.0	0	00.0	5747
5. मयूराक्षी	दुमका	8000	48.5	2000	12.1	6500	39.4	16500
6. चांडिल	सरायकेला	20820	61.4	2220	06.6	10825	32.0	33865
7. ईचा	सरायकेला	22400	90.0	1400	05.0	4200	15.0	28000
8. कोइल कारो	रांची गुमला	48326	90.0	2500	04.7	2869	05.3	53695
9. ओरंगा / नोर्थ कोयल	पलामू	3060	81.7	240	06.4	445	11.9	3745
10. सुदंरपहाड़ी	गोड्डा	730	100	0	00.0	0	00.0	730
11. टोराई आइपी	पाकुड़	1730	100	0	00.0	0	00.0	1730
12. अजय बराज	देवघर	700	58.4	250	20.8	250	20.8	1200
13. घाघरा	हजारीबाग	250	16.7	990	66.0	260	17.3	1500
14. भैरवी रिजर्ववायर	हजारीबाग	50	13.5	0	00.0	320	86.5	370
15. बालसो	साहेबगंज	70	100	0	00.0	0	00.0	70
16. रामरेखा डैम	गुमला	110	53.7	65	31.7	30	14.6	205
कुल		**175127**	**75.2**	**17554**	**07.5**	**40287**	**17.3**	**2,32,968**

स्त्रोत अलेक्स एक्का, मोहम्मद आसिफ, डेवलपमेंट इनडयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झाड़खंड, 1951 से 1995 : ए डाटाबेस ओन इटस एक्सटेंट एंड नेचर, इंडियन सोशन इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली, दिसम्बर 2000 पृष्ठ 90

कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठानों और थर्मल पावर प्रोजेक्टस से विस्थापितों का विवरण

तालिका नं. 1.4

प्रोजेक्ट का नाम	जिला	आदिवासी	%	एस.एस.एस.सी.		%	अन्य%	कुल
1. बोकारो स्टील प्लांट	बोकारो	6701	22.6	10382	35.1	12532	42.3	29615
2. एच ई.सी.	रांची	11370	73.6	800	05.2	3280	21.2	15450
3. आई ई एल, गोमिया	गिरिडीह	155	12.5	168	13.3	942	74.5	1265
4. बी ए एंड सी एल रेहला	गढ़वा	225	25.0	540	60.0	135	15.0	900
5. सिंदरी खाद	धनबाद	410	08.4	757	15.5	3718	76.1	4885
6. एच जेड एल टुन्डू	धनबाद	23	08.4	43	15.5	217	76.7	283
7. एच सी एल घाटशिला	पूर्वी सिंहभूम	1734	28.9	228	0.48	3978	66.3	6000
8. उषा मार्टिन	रांची	123	73.6	8	05.2	38	22.4	169
9. बिहार स्पोंज	पश्चिमी सिंहभूम	105	54.7	10	05.0	78	40.4	193
10. एसी. सी. खलारी	रांची	94	73.6	6	05.0	28	21.8	128
11. बोकारो थर्मल	बोकारो	383	22.6	595	35.1	719	42.3	1697
12. सी.टी.पी. एस	बोकारो	187	22.6	290	35.1	352	42.4	829
13. पी.टी.पी. एस	हजारीबाग	164	08.8	354	18.9	1356	72.3	1874
14. तेनुघाट	बोकारो	515	22.6	799	35.1	965	42.3	2279
15. ग्लास फैक्टरी	पश्चिमी सिंहभूम	284	54.7	26	05.0	210	40.3	520
कुल		**22473**	**34.0**	**15006**	**22.7**	**28548**	**43.0**	**66087**

स्त्रोत् अलेक्स एक्का मोहम्मद आसिफ डेवलपमेंट इनडयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झाड़खंड, 1951 से 1995 : ए डाटाबेस ओन इटस एक्सटेंट एंड नेचर, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली, दिसम्बर 2000 पृष्ठ 92

राष्ट्रीय और आंतरिक सुरक्षा योजनाओं से झाड़खंड के ग्रामीण इलाके में विस्थापितों का आंकड़ा

तालिका नं. 1.5

योजना का नाम	जिला	आदिवासी	%	एस. सी.	%	अन्य	%	कुल
1.नेतरहाट प्रस्तावित	लातेहार,पलामू	236567	90.0	18399	07.0	7887	03.3	262853
2.डीपा टोली	रांची	500	100	00	0	00	0	500
3.हजारीबाग	हजारीबाग	40	08.0	65	13.0	395	79.0	500
4.बी. एस. एफ, मेरू	हजारीबाग	40	08.8	65	13.0	395	79.0	500
कुल		**237147**	**89.7**	**18529**	**7.0**	**8677**	**3.2**	**264353**

स्त्रोत् अलेक्स एक्का मोहम्मद आसिफ डेवलपमेंट इनडयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झाड़खंड, 1951 से 1995 : ए डाटाबेस ओन इटस एक्सटेंट एंड नेचर, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली, दिसम्बर 2000 पृष्ठ 94

राष्ट्रीय पार्कों और सेंचुरी से विस्थापितों का आंकड़ा

तालिका नं. 1.6

प्रोजेक्ट का नाम	जिला	आदिवासी	%	आजाति	%	अन्य	%	कुल
1. बेतला	पलामू	8006	18.0	11120	25.0	25354	57.0	44480
2. हजारीबाग	हजारीबाग	4179	08.0	6174	13.0	37140	78.2	47493
3. पलामू	पलामू	27451	18.8	38127	25.0	86933	57.0	152511
4. महुआडांड	लातेहार	2185	18.0	3036	25.0	6923	57.0	12144
5. दलमा	पूर्वी सिंहभूम	25518	28.9	6445	07.3	56338	63.0	88301
6. तोपचांची	धनबाद	656	08.4	953	12.2	6204	79.4	7813
7. लावालौंग	चतरा	4222	08.0	6862	13.0	41701	79.0	52785
8. कोडरमा	कोडरमा	3617	08.0	5879	13.0	35729	79.0	45224
9. पारसनाथ	गिरिडीह	7218	12.2	9005	10.1	42944	72.5	59167
कुल		**80867**	**15.8**	**87601**	**17.1**	**339266**	**66.5**	**509918**

स्त्रोत् अलेक्स एक्का मोहम्मद आसिफ डेवलपमेंट इनडयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झाड़खंड, 1951 से 1995 : ए डाटाबेस ओन इटस एक्सटेंट एंड नेचर, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली, दिसम्बर 2000 पृष्ठ 94

प्रस्तुत चार्ट में 1951 से 1995 के दरम्यान हुए विस्थापन का आंकड़ा दिया गया है जो झाड़खंड के आदिवासी अंचलों में विकास के नाम पर लाई गई परियोजनाओं के प्रभाव को रेखांकित करता है।

तालिका नं. 1.7

परियोजनाएं	आदिवासी	%	अनुसूचितजाति	%	अन्य	%	कुल
1. जल परियोजनाएं	175127	75.2	17554	07.5	40287	17.3	232968
2. उद्योग	29888	34.0	19956	22.7	87969	4.3	87896
3. खनन /कोल/ नोन कोल	83543	29.0	63352	15.7	220076	54.6	402882
4. सुरक्षा से संबंधित	237147	89.7	18529	07.0	8677	03.2	264353
5. सेंचुरी और राष्ट्रीय पार्क	80867	15.8	87601	17.1	339266	66.7	509918
6. बुनियादी ढांचा विकास	13800	27.8	5900	11.8	30300	60.6	50000
कुल	**620372**		**212892**		**676575**		**1548017**

स्त्रोत् अलेक्स एक्का मोहम्मद आसिफ डेवलपमेंट इनडयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झाड़खंड, 1951 से 1995 : ए डाटाबेस ओन इटस एक्सटेंट एंड नेचर, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली, दिसम्बर 2000 पृष्ठ 95

कोल इंडिया लिमिटेड की विभिन्न अनुषंगी इकाईयों के कारण झाड़खंड में विस्थापित हुए परिवारों और विस्थापितों की संख्या

तालिका नं. 1.8

क्रम	कंपनी का नाम	विस्थापित परिवारों की संख्या	प्रति परिवार एक नौकरी
1.	ईस्टर्न कोलफील्डस लिमिटेड	14,750	4,915
2.	सेंट्रल कोलफील्डस लिमिटेड	7,928	3,984
3.	वेस्टर्न कोलफील्डस लिमिटेड	6,232	2,250
4.	भारत कोकिंग कोल लिमिटेड	3,841	752
	कुल	**32,751**	**11,091**

स्त्रोत् मैथ्यू अरीपरम्पील, ट्राइबल्स ऑफ झाड़खंड भिक्टिमस ऑफ डेवलवमेंट, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, द्वितीय संस्करण, नई दिल्ली, पृष्ठ 19

एक अनुमान के मुताबिक 1981 से 1985 के बीच सेन्ट्रल कोलफील्ड लिमिटेड ने 1,20,300 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया। इसी तरह ईस्टर्न कोलफील्ड लिमिटेड ने लगभग 30,000 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया। कोल इंडिया लिमिटेड की चारों अनुषंगी इकाईयों के द्वारा 32,750 परिवारों को विस्थापित किया गया और केवल 11,901 लोगों को नौकरी दी गई।

तालिका नं. 1.9
झाड़खंड में 1947 के पूर्व बने बांध का विवरण

डैम का नाम	जिला	नदी	डैम की लम्बाई मीटर में	डूब क्षेत्र एकड़ में	कुल क्युबिक मी.	प्रभावी क्युबिक मी.
सुधारीनाल	चतरा	सुधारीनाला	396.34	395.00	1380	1110
बतरे	पलामू	बतरे	748.77	9000.00	3000	2960
चतनियाघाट	गढ़वा	चतनियाघाट	362.34	218.49	1600	1550
पंचखेरे	हजारीबाग	पंचखेरे	2088.50	681.72	8990	5910
सलैया डैम	हजारीबाग	दरसाती	1006.00	1047.28	11700	8700
चिनदा	रांची	चिनदा	121.00	415.83	9900	8300

स्त्रोत : डाटाबेस ओन डेवलपमेंट इन्डयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झारखंड 1951-1955 इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नयी दिल्ली, 2000

तालिका नं. 1.10

झाड़खंड में कोयला और यूरेनियम खनन से विस्थापित की सूची

क्र. सं.	प्रोजेक्ट का नाम	**District**	आदिवासी	%	दलित	%	अन्य	%	कुल
1.	बी.सी.सी.एल.	Dhanbad	52293	38.2	22692	16.9	60290	44.9	134275
2.	सी.सी.एल.	Haz; Ran; Palan	6630	23.4	4675	16.5	17030	60.1	28335
3.	राजमहल	Godda	3530	48.5	0	00.0	3755	51.5	7285
4.	पिपरवार	Hazaribagh	1358	08.8	2901	18.8	11174	72.4	15433
5.	टिस्को	Dhanbad	105	08.4	193	15.5	952	76.1	1250
6.	तुलसीदामर	Garhwa	100	25.0	240	60.0	60	15.0	400
7.	यू.सी.आई.एल.	E. Singbhum	2543	28.9	422	04.8	5835	66.3	8800
8.	बी.सी.सी.एल. 1985 के पूर्व		1772	08.4	3270	15.5	16058	76.1	21100
9.	सी.सी.एल. 1985 के पूर्व		10202	23.4	7194	16.5	56204	60.1	43600
10.	ई.सी.एल. 1985 के पूर्व		2035	25.0	681	08.4	5394	66.5	8110
	कुल		**79568**	**29.6**	**12268**	**15.7**	**146752**	**54.6**	**268588**

तालिका नं. 1.11

झाड़खंड में विभिन्न तरह के स्थापित फैक्ट्ररियों की सूची

क्र. सं.	प्रोजेक्ट का नाम	निजी जमीन	%	कॉमन लैंड	%	जंगल भूमि	%	कुल भूमि
1.	दुर्गा सीमेंट	87.00	845	1600	155	000	000	10300
2.	छोटानागपुर केमिकल	5000	743	1732	257	000	000	6732
3.	नालंदा सेरामिक्स	4500	1000	000	000	000	000	4500
4.	माइका ट्रेडिंग कारपोरेशन	12000	800	3000	2000	000	000	9500
5.	एशियन रिफैक्ट्रीज	8000	842	1500	158	000	000	9500
6.	एलाइड रिफैक्ट्रीज	2000	625	1200	375	000	000	3200
7.	मैंथन सेरामिक्स	9500	864	1000	091	500	045	11000
8.	नवीन इंडस्ट्रीज	2500	1000	000	000	000	000	2500
9.	प्रोग्रेसिभ सीमेंट	8700	696	2600	208	1200	096	12500
10.	लोदना कोक प्लांट	1200	240	3800	760	000	000	5000
	कुल योग	62100	774	16432	205	1700	021	80232

स्त्रोत : डाटाबेस ओन डेवलपमेंट इन्डयूस्ट डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झारखंड 1951-1955 इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नयी दिल्ली, 2000

कर्णपुरा बचाओ संघर्ष समिति के दीपक दास बताते हैं कि राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम लिमिटेड के द्वारा कोयला खनन की वजह से 40 गांव उजाड़ दिए गए। इसमें लगभग एक लाख लोग विस्थापित और प्रभावित हैं। लेकिन एन.टी.पी. सही आंकड़े नहीं बताता है और न ही उसके किसी दस्तावेज में वास्तविक विस्थापितों और प्रभावितों की संख्या का विवरण है।

कोयला खनन से झाड़खंड में विस्थापितों और प्रभावितों की संख्या 50 लाख से भी अधिक होने का गैरसरकारी आंकड़ा प्रस्तुत किया जाता है।

हजारीबाग जिला में विभिन्न कोयला खनन योजना से विस्थापितों और प्रभावितों की सूची-

तालिका नं. 1.12

क्र. सं.	कोल प्रोजेक्ट का नाम	गावों की संख्या	विस्थापितों प्रभावितों की आबादी
1.	एन.टी.पी.सी.	40	1,00,000
2.	मोतरा कोल ब्लॉक	8	20,000
3.	मगध कोल ब्लॉक	10	30,000
4.	आम्रपाली कोल ब्लॉक	10	20,000
5.	उषा मार्टिन वृन्दा कोल ब्लॉक	8	19,000
6.	हिंडालको	10	25,000
7.	रूंगटा कोल ब्लॉक	5	18,000
8.	गेंदलपुरा कोल ब्लॉक	5	15,000
9.	बादमपुर कोल ब्लॉक	5	18,000
10.	एस्सार देवगढ़ कोल ब्लॉक	8	15,000
11.	रोहने कोल ब्लॉक	7	20,000

तालिका नं. 1.13

क्र. सं.	कोल प्रोजेक्ट का नाम	गांवों की संख्या	विस्थापितों प्रभावितों की आबादी
1.	चानो रिकवा कोल ब्लॉक	9	22,000
2.	पूर्वी परेज	6	12 हजार

तालिका नं. 1.14

क्र. सं.	कोल प्रोजेक्ट का नाम	गांवों की संख्या	विस्थापितों प्रभावितों की आबादी
1.	अभिजीत चितरपुर पावर प्लांट	9	20,000
2.	टाटा तेतरिया खांड	8	13,000

रांची जिला का विस्थापन का इतिहास

रांची जिला के कांके प्रखंड के तहत आजादी के तुरत बाद अनेक राज्यस्तरीय और राष्ट्रीय स्तरीय संस्थान की स्थापना की गई। इसके लिए अनेक गांवों को विस्थापित किया गया। उस समय के विस्थापित और आस पास के प्रभावित गांवों के बारे में अधिकारित तौर पर सरकारी आंकड़ा तो उपलब्ध ही नहीं है और न ही कोई रिकार्ड इस सिलसिले में उपलब्ध है। अतएव गैरसरकारी तौर पर उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर विस्थापितों और प्रभावितों की आबादी का आकलन किया गया है।

तालिका नं. 1.15

क्र. सं.	संस्थान का नाम	गांवों व जमीन का रकबा	विस्थापितों प्रभावितों की आबादी
1.	बिरसा कृषि विश्वविद्यालय	700 एकड़/4 मौजा	15000
2.	रिनपास	150 एकड़	1000
3.	बेकन फैक्टरी	50 एकड़	
4.	लाइभ स्टॉक रिसर्च स्टेशन	10 एकड़	1000
5.	पिगरी फार्म	10 एकड़	1000
6.	केंद्रीय मनःचिकित्सा संस्थान		
7.	आई. आई. एम.	70 एकड़	
8.	आई. आई. आई. टी.	55 एकड़	
9.	आई. आई. सी. एम.	20 एकड़	

बिरसा कृषि विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए 700 एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया गया था। ड्राई लैंड के तौर पर 150 एकड़ का अधिग्रहण किया गया था।

विश्वविद्यालय के तीनों संकाय कृषि, वानिकी और भेटनरी की स्थापना की गई। इसके लिए सेमर टोली मौजा, हुसिर मौजा, नगड़ी मौजा, कदमा मौजा की जमीन

का अधिग्रहण किया गया। अनुमान लगाया जाता है कि तब लगभग 2000 लोग विस्थापित और प्रभावित हुए होंगे।

रिनपास की स्थापना के लिए 150 एकड़ जमीन कदमा, गारू और सुकुरहूटू मौजा के गांवों का अधिग्रहण किया गया था। केंद्रीय मनःचिकित्सा संस्थान की स्थापना के लिए पतरा टोली और चूड़ी टोला की जमीन का अधिग्रहण किया गया था।

इंडियन इंस्टीच्यूट ऑफ कोल मैनेजमेंट के लिए 20 एकड़ भूमि गारू मौजा से ली गई है। यह जानकारी ऑल झाड़खंड स्टूडेन्टस यूनियन के प्रथम संस्थापक अध्यक्ष श्री प्रभाकर तिर्की ने दी है। उन्होंने बताया कि जो दस्तावेज उपलब्ध हैं उसके आधार पर अनुमान ही लगाया जा सकता है। अनेक बातों का विवरण उपलब्ध नहीं है।

रांची मास्टर प्लान 2037

रांची के पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चारों दिशाओं के गांवों का खाली कराकर नई राजधानी 7 चरणों में तैयार करने की योजना बनाई गई है। इसके तहत लगभग 398 गांवों को खाली करा कोर कैपिटल, नई रांची राजधानी, सिटी सेंटर, शोपिंग मॉल, गोल्फ कोर्स, कृषि फार्म आदि बनाने की योजना है। इससे लगभग 3 लाख लोग विस्थापित और लगभग 2 लाख लोग प्रभावित हो जाएंगे। सरकार ने 2013 कानून के मानदंडों को मानने से मना कर दिया है और पेसा कानून या पांचवीं अनुसूची की गरिमा का भी ख्याल नहीं रखा जा रहा है। मास्टर प्लान की शुरूआत मास्टर प्लान फेज वन कूटे और आस पास के गांव की खेती वाली जमीन पर नया विधान सभा और नया हाई कोर्ट बनाकर किया जा रहा है। यहां नया राजभवन और नया सचिवालय भी बनाया जाएगा तथा बहुत कुछ यहां नया होगा।

पूर्वी सिंहभूम में विस्थापन विरोधी गोलबंदी

विस्थापन विरोधी एकता मंच के कुमार चंद्र मार्डी ने बताया कि टाटा स्टील कंपनी की स्थापना 1907 में की गई। इसके बाद आज 109 से अधिक साल हो गए टाटा की अनेक फैक्टरी स्थापित की गई है। टाटा मोटर्स, टाटा पावर, टाटा टिमकेन, टाटा रायसन, टाटा पिगमेंटस, टाटा ब्लूस्कोर, टाटा कोमिन्स, टाटा रोबिन्स, टाटा टिनप्लेट आदि से 18 से अधिक गांव विस्थापित हुए। इससे लगभग 30 हजार आबादी विस्थापित और प्रभावित हुई है। इसके अलावा यूरेनियम और कॉपर की माइनिंग के कारण दूर-दूर तक की लगभग 50 हजार से अधिक की आबादी प्रभावित

और विस्थापित हुई है। प्रभावित लोगों के स्वास्थ्य पर जानलेवा असर पड़ा है। यूरेनियम के विकिरण से मानव शरीर की रक्त कोशिकाओं को हो रही क्षति का तो अनुमान ही नहीं लगाया जा रहा है।

सुवर्णरिखा बहुउद्देश्यीय योजना जो कि 1974 में प्रारंभ की गई थी से 120 गांव के लगभग एक लाख लोग विस्थापित और प्रभावित हुए हैं। ईचा खरकई बांध के कारण और 100 गांवों का विस्थापन हुआ है। इससे विस्थापितों और प्रभावितों की तादाद लगभग 3 लाख हो गई है।

झाड़खंड में प्रस्तावित परियोजनाओं के संभावित विस्थापितों के आंकड़े सरकारी और गैरसरकारी की एक बानगी।

तालिका नं. 1.16

क्र.	परियोजना	गांवों की संख्या /गैरसरकारी	सरकारी	आबादी
1.	कोइलकारो जल विद्युत परियोजना	256	12	लगभग दो लाख
2.	नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज	245	34	लगभग दो लाख
3.	मास्टर प्लान फेज वन टू सेभन	398	212	लगभग 5 लाख

स्त्रोत् : कोइलकारो जनसंगठन, नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज केंद्रीय जन संघर्ष समिति और एच.ई.सी. हटिया विस्थापित परिवार समिति।

झारखंड में विस्थापन एवं मानवाधिकार पी.ए. चाको, 2008, प्रकाशक जेस्यूट्स ऑफ संथाल सोसायटी, दुधानी, दुमका

तालमेल के स्मारकपत्र-मुण्डा सरकार, झारखण्ड

तालिका नं. 1.17

क्र.	कम्पनी का नाम	उत्पादन करोड़ में	पूंजी निवेश	भूमि/एकड़
1.	मित्तल गुप्ता	स्पन्ज लोहा	40,000	8,000 एकड़
2.	बल्लभ स्टील	स्पन्ज लोहा	288	268
3.	आधुनिक एलौय	स्पंज लोहा	790	....
4.	नीलांचल आयरन एण्ड स्टील	स्पंज लोहा	450	300
5.	झारखण्ड इस्पात प्राइवेट लिमिटेड	स्पंज लोहा	400	850 हजारीबाग
6.	अभिजीत इन्फ्रास्ट्रकचर	स्पंज लोहा कोयले की खान फेरी एलाय	300	275 हजारीबाग
7.	AAML स्टील	इन्टीग्रेटेड स्टील	2000	1000 सरायकेला
8.	कोरपोरेट इस्पात	स्पंज लोआ केप्टीभ कोल माइंस, पावर प्लांट	300	227 हजारीबाग
9.	अन्नपूर्णाग्लोबल	सपंज लोहा, केप्टीभ कोल माइंस, पावर प्लांट	500	....
10.	प्रसाद गुप्ता	सपंजलोह पावर एंड स्टील प्लांट	400	80 हजारीबाग
11.	प्रकाश इस्पात	स्पंज लोहा केप्टीभ	71.40	50 पश्चिमी सिंहभूम
12.	Horizil lk Jimp	स्पंज लोहा केप्टीभ कोल माइंस	74.15	....
13.	स्पेक्ट्रम मरकेन्टाइल	सपंज लोहा केप्टीभ कोल माइंस	74.15	50 चाईबासा
14.	बारबील इस्पात	स्पंज लोहा कैप्टीभ कोल माइंस	75.15	50 चाईबासा
15.	टेकअल कोरपोरेशन	अलमूनियम प्लांट	6,500	....
16.	इलोक्ट्रो स्टील	स्पंज लोहा एवं पावर	1422	सरायकेला
17.	बालाजी इंडस्ट्रीज	स्पंज लोहा	211.70	40 पश्चिमी सिहंभूम
18.	पवनजय स्टील एंड पावर	स्पंज लोहा	200	200 लोहरदगा
19.	पवनजय स्टील एंड पावर	स्पंज लोहा इंडक्शन फ़रनेश	122	100 हजारीबाग
20.	छत्तीसगढ़ इलेक्ट्रीसीटी	स्पंज लोहा फेरो एलाय	1000	600
21.	राज रेफ्रेक्टोरीज	स्पंज लोहा फेरी एलाय केप्टीव पावर	68	....
22.	बालाजी नेटट्ल	स्पंज लोहा	160	....
23.	सन फ्लेम आयरन एंड स्टील	स्टील प्लांट	937.61	425 सरायकेला
24.	हाईग्लेड पेलैट्स लि.	स्टील	4,285	850 हे. मनोहरपुर
25.	हिंडालको इंडस्ट्रीज	अलमूनियम	7,600	लोहरदगा

26.	B.T.M.W. इंडस्ट्रीज लि.	अलमूनियम	591	....
27.	अजन्ता आइस लि.	स्पंज लोहा एवं अन्य	517	....
28.	अनिनदाता ट्रेडर्स	स्टील	94	....
29.	नाभेराम हाउस पाइप	स्पंज लोहा	200	....
30.	गोयल स्पंज आयरन	स्पंज लोहा	67	....
31.	जिन्दल स्टील	स्पंज लोहा	11,500	3,000 चाण्डील
32.	भूसा स्टील	स्पंज प्लांट	5,510	200 जमशेदपुर
33.	कल्याणी स्टील	स्टील प्लांट	1483,10	1,500 मूरी
34.	क्वालिटी स्टील	स्टील प्लांट	1,507	1,400 नीभडीह
35.	कोहिनूर स्टील	स्टील पलांट	400	150 चंडील
36.	टाटा स्टील	एनार्जी	53,000	18,000 चांडली मनोहरपुर
37.	R.P.O	पावर प्लांट	5,000	1,500 गोड्डा
38.	लीडींग टरपास	स्टील	1,400	503 हजारीबाग
39.	गोयेलका	पावर प्रोजेक्ट	5,000	....
40.	टाटा पावर	पावर प्लांट	1,350	....

स्त्रोत : हिन्दुस्तान रांची 03, अक्तूबर 2005

नीचे की सारिणी में दर्शाए गए बोकारो, टिसको, टेलको जैसे प्रसिद्ध कारखानों में आदिवासियों के नियोजन की स्थिति चौंकाने वाली है। कुल 1.11, 593 कर्मचारियों में केवल 7681 आदिवासी हैं जिनका प्रतिशत 6.88 है, नियुक्त किए गए हैं। झारखण्ड के विकास का यही असली चेहरा हैं।

तालिका नं. 1.18
बोकारो स्टील प्लांट, बोकारो
टिसको, जमशेदपुर
टेलको जमशेदपुर

श्रेणी	कुल मजदूर			आदिवासी कर्मचारी				आदिवासी कामगरों का प्रतिशत				
	B.S.P	TISCO	TELCO	कुल	B.S.P	TISCO	TELCO	कुल	B.S.P	TISCO	TELCO	कुल
1.	5339			5339	236			236	4.42			
2.	15850			15850	697			697	4397			
3.	21883			21883	3141			3141	1435			
4.		50521		50521		3022		3022		598		
5.			18000	18000			585				332	
				111593			7681				688	

स्त्रोत : 'आदिवासी और झारखण्ड का औद्योगिकरण' डॉ. एतवा उरावं डॉ. शिव शंकर उरांव, हरी धाटी, अंक-3, अगस्त सितम्बर 2002, (File Collection Stan Swami Bagaicha, रांची)

इस प्रकार आदिवासियों को बहुत थोड़ा या अल्पाश मुआवजा एवं ढेर सारे ऐसे आश्वासनों के साथ, जिसे कभी पूरा नहीं किया गया, असहाय अवस्था में छोड़ दिया

गया। यहां ध्यान देना जरूरी है कि ऐसे वृहद रूप में किए गए हस्तांतरण एवं बड़ी मध्यम एवं छोटी योजनाओं से झारखंडवासियों विशेषकर आदिवासियों की जमीन ली गई है, उन्हें नौकरी पाने के हक से भी वंचित रखा गया है। नीचे की सारिणी दर्शाती है कि किस हद तक विकास केन्द्रित योजनाओं के लिए आदिवासी सताए जाते है-

हेवी इन्जिनीयरिंग कॉरपोरेशन (HEC), रांची।

तालिका नं. 1.19

क्र.	श्रीणी	कुल मजदूर	आदिवासी मजदूर %	आदिवासी मजदूरों का प्रतिशत
1.		2622	55	209
2.		1185	14	118
3.		12694	2194	1727
4.		4367	2022	4630
	भंगी	565	292	5150
	दैनिक मजदूर	210	32	1524
	कुल	**21643**	**4608**	**2124**

स्त्रोत : आदिवासी और झारखण्ड का औद्योगिकरण : डॉ. एतवा उराव, शिवशंकर उराव, हरीघाटी, अंक 3, अगस्त-सितम्बर 2002। File Collection, Stan Swaami, Bagaicha, रांची।

सारिणी : 1.20

भारत कुकींग कोल लि. (B.C.C.L), धनबाद।

श्रेणी	कुल मजदूर	आदिवासी मजदूर %	आदिवासी मजदूरों का प्रतिशत
1.	3026	24	079
2.	3239	37	114
3.	30264	3291	1032
4.	34096	2359	691
कुल	**70625**	**5711**	**8086**

स्त्रोत : आदिवासी और झारखण्ड का औद्योगिकरण : डॉ. एतवा उराव, शिवशंकर उराव, हरीघाटी, अंक 3, अगस्त-सितम्बर 2002। File Collection, Stan Swaami, Bagaicha, रांची।

नीचे की सारिणी दिखाती है कि रांची में किस प्रकार गैर आदिवासियों एवं योजना धारियों को भूमि हस्तांतरित की गई। इस के अध्ययन से पता चलता है कि किस हद तक 1960 से लेकर 2002 तक भूमि का हस्तांतरण हुआ है।

तालिका नं. 1.21

रांची में आदिवासियों की जमीन का गैर आदिवासियों को हस्तांतरण (1960-03.05.2002)

अंचल	कुल आदिवासी भूमि	गैर आदिवासीयों को हस्तांतरित	योजनाओं के लिए आदिवासियों की भूमि का अधिग्रहण	आवासीय समवाय के लिए आदिवासियों भूमि का अधिग्रहण	शेष
अंगारा	3055651	12212	32495	0	3010644
सिल्ली	186025	6537	-	0	179488
ओरमांझी	1292311	1590	22465	0	1268255
खुंटी	3155611	28261	-	0	3127346
कर्रा	6875677	4073	3944	0	6867660
टोरपा	6278784	16247	-	0	6262537
रनिया	2946630	-	-	0	2946630
मुरहू	8377567	6010	-	0	8371557
तभाड़	1270740	11454	-	0	1259286
आरकी	590938	2019	4840	0	584079
बुंडू	2278108	11763	1685	0	2264660
सोनाहाटु	890409	12558	964	0	876887
रांची	1193422	38133	38552	17787	1098950
सदर		46			
कांके	3039541	26908	37249	0	2981384
रातू	2972419	46132	17355.	0	2908932
मांदेर	2889700				2889700
चान्हो	2422489	26106		0	2396383
बरमो	1620591	25202		0	1595389,
बेरो	4662588	1380	36939	0	4624269
लापुंग	3953579	33628	13071	0	3906880
नामकुम	4994350	20650	91164	0	4882536

स्त्रोत : समाहर्ता कार्यालय रांची के रिकार्डो से S.K. Singh द्वारा Jharkhand Journal of Development and Management Studies में उद्धृत Tribal Land Alienation, XISS रांची के Inaugural Issue के नवम्बर 2002 P. 121 को XISS रांची द्वारा प्रकाशित से उद्धृत।

विकास के नाम से आदिवासियों का विनाश निश्चित है। झारखण्ड में कार्यरत सभी बड़ी पार्टियों के नेता आदिवासी हैं। किन्तु चूंकि उनके पास न आदिवासी एजेन्डा है, न आदिवासी कार्य योजना। अतः झारखण्ड में आज आदिवासी की दुर्दशा सर्वत्र व्याप्त है।

"आदिवासी घोषणा-पत्र"
(आदिवासी अधिकार मोर्चा, झारखण्ड, 2006)

तालिका नं. 1.22
के लिए भूमि अधिग्रहण।

भूमि अधिग्रहण केस न. एवं वर्ष	भूमि अधिग्रहण का प्रकार	कुल भूमि	मुआवजा राशि	कुल गावों की संख्या	विस्थापितों से भूमि उपार्जन
केस नं. 10,19, 20,34,40 1958-59	Foundry & Forge Plant Heavy Machines 5467.61 एकड़	रैयती	27510160	27	1100 एकड
केस नं. 2,3,9 17,24,25,232, 1960-61	Heavy Machinery Building Plant	गैर मजरूआ आम 1174.52 एकड़			
केस नं. 11/62-63 14/63-64 11/62-63	Heavy Machines Tools Plant Township 10-98 एकड़	गैर मजरूआ मालिक 525.43 जंगल P.W.D. 1.32 एकड़ कैसर-1 हिन्द 7.57 एकड़			

स्रोत : 'Land Aquisition Office, Ranchi, as quoted in S.K Sing, Tribal Land Alienation, Jharkhand Jouranal of Development & management Studies, Vol. I-P. 119, Publ. XISS, Ranchi, 2004.

विभिन्न योजनाओं के लिए कुल 15,45,947 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया। ऐसी भूमि तीन श्रेणियों में आती है-निजी, सामान्य एवं वन्यभूमि। हिन्दुस्तान टाइम्स, रांची अनिता शर्मा के रिपोर्ट के अनुसार अब तक 65.40 लाख आदिवासी विस्थापित किए गए है।

तालिका नं. 1.23
आदिवासियों का विस्थापन

	(लाख में)
खनन	25.50
उद्योग	12.50
सिंचाई परियोजना	16.40
सुरक्षित वन एवं वन्य प्राणी उद्यान	11.0

स्त्रोत : हिन्दुस्तान टाइम्स, रांची, 1 फरवरी 2002, 'डिसप्लेसमेन्ट आफ आदिवासीस'

रांची में विभिन्न परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण आंख खोलने वाली बात है। नीचे का अध्ययन रांची की योजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण दर्शाता है। हेवी इंजीनियरिंग कोरपेरेशन ने रांची के 27 गांवों को विस्थापित किया है।

तालिका नं. 1.24

Sl.	Type of Industry Plant	Name of Industry/Plant	District
1.	Alumina	Hindalco Industries Ltd., Muri	Ranchi
2.	Asbestos Products	Hyderabad Industries Ltd. Jasidih	Deoghar
3.	Cement	Acc Ltd., Chaibasa	West Singhbhum
4.	Cement	Acc Ltd., Sindri	Dhanbad
5.	Cement	Lafarge, Joiobera	West Singhbhum
6.	Cement	Lemos Cement, Khalari	Rachi
7.	Cement	Sri Durga Cement Ltd., Hosla	Ramgarh
8.	Cement	Sone Vally, Japla	Palamau
9.	Cement	Bihar Industrial Corp. Ltd. Madhupura	Deoghar
10.	Cement	Maithan Ceramics Pvt. Ltd., Dhanbad	Dhanbad
11.	Chemicals	Castic & Chemical Ltd., Garhwa Road	Palamau
12.	Copper Smelter	HCL, ICC, Ghatsila	West Singhbhum
13.	Foundry	Hindustan Malleables & Forgings Ltd., Jalan Nagar, Dhanbad	Dhanbad
14.	Iron & Steel	Bakaro Steel Plant, Bokaro	Bokaro
15.	Iron & Steel	Tata Steel Ltd., Jamshedpur	East Singhbhum
16.	Sinters & Pellets	Tata Steel Ltd., Noamundi	West Singhbhum
17.	Pig Iron	Usha Martin Industries, Jamshedpur	East Singhblum
18.	Sopnge Iron	Bihar Sponge Iron Ltd., Chandil	Saraikela- Kharsawan
19.	Sponge Iron	Jai Durga Iron Pvt. Ltd., Jhumari Tellaiya	Koderma
20.	Sponge Iron	Zoom Vallabh Steels Ltd., Dugdha	Saraikela-Kharsawan
21.	Tin Plating	The Tin Plate Co. of India Lted., Jamshedpur	East Singhbhum
22.	Glass	IAG Co. Ltd. Bhandainagar	Deoghar
23.	Refractory	Allied Refractories (P) Ltd., Amaghata	
24.	Refractory	Bharat Refractoreis Ltd., Marar, (Ranchi Road Refractories Ltd.)	Hazaribagh
25.	Refractory	Bharat Refractoreis Ltd., Marar, (IFICO Refractories Ltd.)	Hazaribagh
26.	Refractory	Bharat Refractoreis Ltd., Bhandaridah (Bhandaridah Refractory Plant)	Bokaro
27.	Refractory	Jharia Firebricks Pottery Works (P)	

	Ltd., Dhansar	Dhanbad
28. Refractory	Mineral & Chemical Products, Kendposi	West Singhbhum
29. Refractory	Raj Refracrtory (P) Ltd., Hardag	Ranchi

कर्णपुरा बचाओ संघर्ष समिति के दीपक दास ने बताया कि सरकारी आंकड़े के अभाव में कार्यकर्ता और गांववालों ने मिलकर विस्थापितों और प्रभावितों का अनुमानित आंकड़ा निकाला है।

कोई भी कंपनी विस्थापितों और प्रभावितों का सही आंकड़ा बताने को तैयार नहीं है और न ही कंपनियां इस बाबत कोई रिकार्ड की प्रस्तुत कर रही है।

ऐसे में विस्थापितों और प्रभावितों की सही जानकारी अनुमान के द्वारा ही लगाई जा सकती है। दीपक दास का कहना है कि कोयला खनन से हुए विस्थापितों का तो कुछ हद तक सही जानकारी एकत्रित कर ली जाती है। लेकिन प्रभावितों के बारे में सूचनाओं को एकत्रित करना और उनके हालात का सही पता करना कठिन होता है। कंपनियां प्रभावितों के बारे में कोई आंकड़ा तैयार करने के लिए इच्छुक नहीं होती हैं। उनका अगर थोड़ा बहुत सरोकार होता भी है तो विस्थापितों से ही होता है। ऐसे में महिलाओं और बच्चों की बहुत ही खराब हालात होती है।

राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम लिमिटेड के बेबसाइट में जो जानकारी उपलब्ध है उसके मुताबिक एन.टी.पी.सी. की 11 मेगा प्रोजेक्टस हैं। 1. परिवार, 2. कल्याणी, 3. कारो, 4. अशोक, 5. आम्रपाली, 6. कोनार, 7. केडीएच, 8. मगध, 9. नोर्थ उरीमारी, 10. आमलो और 11. पुरनाडीह। इन प्रोजेक्टस को 10वीं पंचवर्षीय योजना के तहत एक्सटेनशन देने की योजना बनाई गई। भविष्य की योजना में शामिल मगध ओपनकास्ट को विस्तारित किया जा रहा है। आम्रपाली को भी विस्तारित किया जा रहा है। कारो ओपनकास्ट माइनिंग को भी विस्तारित किया जा रहा है। इसके अलावा संघमित्रा ओपनकास्ट, चंद्रगुप्त ओपनकास्ट, चूरी बेंती ओपनकास्ट और परेज ईस्ट भूमिगत खनन का भी विस्तार किया जा रहा है। इसके लिए भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया चलती रहती है और विस्थापन होता रहता है। लेकिन इसके लिए कोई आवाज नहीं उठती है।

अलबत्ता पुनर्वास और पुनर्स्थापन की नीति और पुनर्वास के बारे सम्पूर्ण प्रावधान का जिक्र किया गया है। इस नीति का कितना पालन किया गया इसका जिक्र नहीं किया गया है।

कोल इंडिया लिमिटेड की अनुषंगी इकाईयों में सेन्ट्रल कोलफील्डस लिमिटेड और बी.सी.सी.एल के खदान झाड़खंड में चल रहे हैं। सी.सी.एल. के तहत 62

तालिका नं. 1.25

MINERAL PRODUCTION

(Comparative Figure of Mineral Production in Jharkhand & in India)

Si. No.	Mane of Mineral	2005-06		2006-07		2006-08		2008-09		2009-10	
		India	Jharkhand	India	Jharkhan	India	Jharkhand	India	Jharkhand	India	Jharkhand
1	Coal	407.03	85.42	430.85	88.76	457.08	90.89	492.75	96.27	532.06	105.93
2.	Iron Ore	165.23	17.97	180.91	18.58	213.24	20.75	212.96	21.20	218.63	23.00
3.	Lime Stone	170.00	1.42	179.26	1.95	193.08	2.03	221.56	1.94	228.93	1.91
4.	Bauxite	12.59	1.50	15.66	1.48	22.62	1.24	15.55	1.58	13.95	1.66
5.	Copper ore (Conc.)	0.12	0.00	0.15	0.00	0.21	0.04	0.13	0.01	0.12	0.01
6.	Graphite	0.12	0.01	0.12	0.01	0.17	0.01	0.11	0.01	0.10	0.02
7.	Pyroxenite	0.34	0.06	0.30	0.08	0.28	0.04	0.28	0.05	0.27	0.04
8.	Dolomite	4.75	0.30	4.78	0.26	5.85	0.30	5.50	0.30	5.18	0.42
9.	Quartz	0.30	0.02	0.23	0.03	0.31	0.02	0.43	0.03	0.50	0.06
10.	Felspar	0.42	0.00	0.37	0.01	0.48	0.01	0.53	0.01	0.45	0.01
11.	Kyanite	0.00	0.00	0.00	0.00	0.01	0.00	0.00	0.00	0.01	0.00
12.	Fireclay	0.53	0.01	0.44	0.02	0.54	0.01	0.49	0.01	0.41	0.01
13.	Quartizite	0.10	0.00	0.09	0.21	0.09	0.01	0.09	0.00	0.10	0.01
14.	Kaoline	1.33	0.11	1.30	0.07	1.46	0.15	2.08	0.12	2.28	0.10
15.	Sukuca sabd	2.36	0.05	2.28	0.11	4.30	0.11	2.83	0.12	2.28	0.10
16.	Copper ore	0.00	0.00	0.00	0.00	3.24	0.04	3.45	0.32	3.22	0.38
	Total	765.22	106.87	816.74	111.57	902.96	115.66	958.74	122.01	1008.78	133.65

माइन्स ओपरेटिभ है। इससे हुए विस्थापन या प्रभावितों के बारे कोई ब्यौरा बेवसाइट में उपलब्ध नहीं है। वेबसाइट की खास बात यह है कि किसी भी परियोजना से विस्थापित हुए लोगों के बारे में कोई जानकारी नहीं दी गई है। ईस्टर्न कोलफील्ड लिमिटेड के तहत ललमटिया ओपनकास्ट खनन का कार्य विस्तार हो रहा है। लेकिन इसकी जानकारी वेबसाइट में नहीं है।

महुआगड़ी कोल ब्लॉक जिसे जीतपुर कोल ब्लॉक भी कहा जाता है से 7 गांव विस्थापित हुए हैं। इससे लगभग 7 हजार से अधिक आबादी विस्थापित और प्रभावित है। लेकिन विस्थापितों के बारे में कोई जानकारी वेबसाइट में नहीं दी गई है। इसे जिंदल स्टील पावर प्लांट के द्वारा संचालित किया जा रहा है। इसमें सभी गांव पहाड़िया आदिम जनजाति के गांव थे।

आमड़ापाड़ा के 21 गांवों में पैनम कोल कंपनी ने कोयला खनन के लिए भूमि का अधिग्रहण किया। इसमें से 14 गांवों को विस्थापित कर दिया गया। काठालडील नामक गांव पहाड़िया आदिम जनजाति के गांव को सबसे पहले खाली कराया गया। प्रतिरोध की वजह से सात गांवों को खाली नहीं कराया जा सका। इससे भी विस्थापित और प्रभावित हुए लोगों की अनुमानित संख्या 40 हजार से अधिक बताई जाती है।

बाक्साइट खनन से कितने लोग विस्थापित हुए इसका आंकड़ा सरकारी तौर पर उपलब्ध नहीं है। इससे भी हजारों लोग विस्थापित हो गए और उनकी खोज खबर लेनेवाला कोई नहीं है।

पचुवाड़ा कोल परियोजना

पचुवाड़ा कोल परियोजना झाड़खंड के पाकुड़ जिला में 1996–97 के आस पास शुरू करने के लिए सुगबुगाहट में आई। फा.पी.ए. चाको के अनुसार 1980 के प्रारंभ में ऑल इंडिया रेडिया के एक प्रसारण में कहा गया कि भारत सरकार झाड़खंड के संथालपरगना की पर्वत श्रृंखला राजमहल की पहाड़ियों में कोयले का भंडार मिला है। पचुवाड़ा राजमहल पर्वत श्रृंखला का एक हिस्सा है जो गंगा के किनारे 150 किलोमीटर लम्बा है और साहिबगंज से लेकर दुमका तक फैला हुआ है। पी. ए चाको बताते हैं कि 2002 में पचुवाड़ा गांव के कुछ युवक आमड़ापाड़ा के साप्ताहिक हाट में गए हुए थे। वहां समाचार पत्र में पढ़ा कि पंजाब विद्युत बोर्ड को आमड़ापाड़ा के पचुवाड़ा में कोयला खनन के लिए अनुमति दी गई है। खनन का केंद्र पचुवाड़ा होगा।

भारत सरकार के कोयला व खनन मंत्रालय ने पत्रांक 47011/1/4/200 सी.ए.पी.एम. दिनांक 26 दिसम्बर 2001 के द्वारा यह अनुमति दी गई थी। यह समाचार देखते ही गांव वालों के होश उड़ गए। 1998 में जब इन पंक्तियों की लेखिका ने पचुवाड़ा को दौरा किया तो खनन की जानकारी मिली। दिसुम परगना बिनज हेमरोम के आवास पर ही लेखिका का रहना हुआ। बिनज हेमरोम ने बताया कि गांव वालों को इसकी कोई जानकारी नहीं है। सरकार ने गांववालों से कोई बात नहीं की है। बिनज हेमरोम के आवास पर ही तब वाल्सा जॉन रहा करती थी। वाल्सा जॉन ने भी तब बताया था कि गांवों की बैठकों में लोग अपनी जमीन देने को तैयार नहीं है। 1998 के लगभग से ही गांव में गोलबंदी प्रारंभ हो गई थी।

पचुवाड़ा कोल परियोजना के तहत 25 हजार टन प्रतिदिन कोयले का खनन करने की योजना चल रही है। 1988 में जियोलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया ने 5620 लाख टन कोयले का भंडार होने का अनुमान लगाया था। इसके लिए जबरन 1127.35 एकड़ जमीन अधिग्रहण की जरूरत बताई गई। इसमें 889.70 एकड़ वन भूमि और 704.29 एकड़ रैयती जमीन के अलावा 237.65 एकड़ जी.एम. जमीन है। इससे 9 गांव सिंहदेहरी, तालझारी, कटहलडीह, चीलगो, विष्णुपुर, डांगापाड़ा, आमझारी, लिबेरिया और पचुवाड़ा के लगभग 5000 लोग विस्थापित होने का अनुमान लगाया गया। लगभग 15 गांवों के प्रभावित होने का अनुमान लगाया गया। विस्थापन के खिलाफ 1998 में राजमहल पहाड़ बचाओं आंदोलन का गठन किया गया। सरकार और कंपनी की मिलीभगत से आंदोलनकारियों पर लगभग तीन दर्जन झूठे मुकदमे लादे गए। आंदोलनकारियों ने 2006 में अदालत का दरवाजा खटखटाया। लेकिन पांचवी अनुसूची को भी ताक पर रख अदालत ने सरकार के पक्ष में फैसला दे दिया। आंदोलन को तोड़ने के अनेक कुचक्र रचे गए और 30 नवम्बर 2006 को पैनम कंपनी जिसे पंजाब विद्युत बोर्ड ने सबलीज में खनन का कार्य दियां था और राजमहल पहाड़ बचाओ आंदोलन के बीच एक. ओ.यू. हुआ। यह संभवतः पहला ए.ओ.यू. हुआ जो कंपनी ने सीधे ग्राम सभा और पारम्परिक प्रधान बिनज हेमरोम के साथ किया। जो यह दिखाने के लिए था कि पेसा का पालन किया गया है। मुआवजा और पुनर्वास को लेकर ग्रामीण लगातार शिकायत करते रहे है। जो पुनर्वास स्थल पर आवास बनाकर दिया जा रहा था, ग्रामीणों का कहना है कि सुअरों के रहने लायक

भी नहीं है। केवल 75 हजार रु. घर बनाने के लिए दिए जा रहे थे। इसी कारण 4 गांवों के लोगों ने अपनी जमीन अब तक नहीं छोड़ी है। खनन क्षेत्रों में मानवाधिकार और आदिवासी अधिकार पर काम करनेवाले जेवियर डायस का कहना है कि पैनम कंपनी को खनन के बारे में कोई जानकारी नहीं है। इसने सरकार को 6 करोड़ से भी अधिक का चूना लगाया है। लेकिन सरकार को कोई परवाह नहीं है। 2012 में झाड़खंड विकास मोरचा के सुप्रीमो राज्य के प्रथम मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी ने यहां 22 दिनों का धरना कार्यक्रम आयोजित किया तो विस्थापितों की समस्याओं पर रोशनी पड़ सकी। आर्थिक नाकांबंदी हुई तो पैनम कंपनी को लगभग 125 करोड़ रु. का नुकसान उठाना पड़ा।

ओरंगा जलाशय परियोजना

ओरंगा जलाशय परियोजना सत्तर के दशक में प्रारंभ की गई 1977 से विस्थापन के खिलाफ ग्रामीण आंदोलित हैं। तब परियोजना की लागत 1260.88 करोड़ रु. थी और बांध के कारण मेदिनीनगर और लातेहार के तीन प्रखंडों के कुल 35 गांव के लगभग 15 हजार से भी अधिक लोग विस्थापित होंगे। प्रभावितों की संख्या का कोई सरकारी अनुमान नहीं लगाया। इस बांध की वजह से बेतला पार्क की 800 एकड़ वन भूमि जलप्लावित हो जाएगी। इस बांध के बनने से मेदिनीनगर, लेस्लीगंज, पाटन, विश्रामपुर, पांकी, मनातू, हुसैनाबाद और हरिहरंगज के खेतों को पानी मिलेगा। इसके साथ बिहार के औरंगाबांद के नवीनगर प्रखंड के गांवों के खेतों की सिंचाई होगी। इस इलाके में खरवार, परहिया, चेरों और उरांव आदिवासी समुदाय के लोग रहते हैं। सरकारी दावा के मुताबिक मोदिनीनगर के 2,08.000 एकड़ और औरंगाबाद बिहार की 7,700 एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी। बांध से विस्थापित होनेवालों और प्रभावितों के लिए कोई पुनर्वास योजना सरकार के पास नहीं है। ओरंगा बांध विरोधी संघर्ष समिति का गठन कर लम्बे समय से आंदोलन किया जाता रहा है। बाबा आमटे और सुदंरलाल बहुगुणा ने भी इस आंदोलन में भागीदारी की है। 18 नवम्बर 1984 को बिहार के तत्कालीन सिंचाई मंत्री कृष्णानंद झा ने बांध का शिलान्यास किया और कहा कि इसकी लागत एक अरब 25 करोड़ होगी। सरकार ने तब विस्थापितों का सही सही आंकड़ा नहीं दिया न ही पुनर्वास की कोई नीति की घोषणा की।

जीतपुर कॉल ब्लॉक

जीतपुर कॉल ब्लॉक गोड्डा जिला के सुंदरपहाड़ी प्रखंड के तहत आनेवाले सात गांवों जीतपुर, डहूबेड़ा, डुम्बरपालेम, पाकेड़ी, तेलभिट्ठा, कैराजोरी, जियाजोर के लगभग 537.93 हेक्टेयर में कोयले के लिए खनन किए जाने वाली योजना है। दस्तावेज के मुताबिक माइनिंग लीज एरिया 300 हेक्टेयर का हें इसमें से 141.18 हेक्टेयर में जंगल है। काश्तकारी भूमि 211.27 हेक्टेयर है। सरकारी भूमि 35.94 हेक्टेयर है। गैर वन क्षेत्र 158.82 हेक्टेयर में है। कुल 388.39 हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण किया गया है। खनन कार्यालय की स्थापना कर ली गई है। इस इलाके में औसतन 1340 मिलीमीटर बारिश होती है। जीतपुर कॉल ब्लॉक का आबंटन जिंदल स्टील एंड पावर लिमिटेड को हुआ है। यह जानकारी वेबसाइट में दी गई जानकारी पर आधारित है। वेबसाइट में विस्थापितों के बारे में कोई आंकड़ा नहीं दिया गया है। अल्बत्ता विस्थापितों के लिए पुनर्वास व पुनर्स्थापन नीति के बारे में लम्बे चौड़े विवरण दिए गए हैं। लेकिन विस्थापितों के बारे अनुमानित संख्या भी नहीं दिया गया है।

जबकि समस्याओं के निदान के लिए जनसुनवाई का जो आयोजन किया गया उसमें विस्थापितों को बोलने के लिए नहीं दिया गया।

काठीकुंड थर्मल पावर प्रोजेक्ट

काठीकुंड थर्मल पावन प्रोजेक्ट की लागत 4000 करोड़ बताई जाती है। परियोजना से 1000 मेगावाट विद्युत उत्पादन के लक्ष्य की बात कही गई। इसके लिए 1000 एकड़ जमीन की जरूरत बताई गई। इससे लगभग 6 गांवों (आमगाछी, पोखरिया, सालदोहा, जंगला आदि) के आदिवासी जिनमें संथाली और पहाड़िया है विस्थापित हो जाएंगें। इस परियोजना के खिलाफ आंदोलन कर रहे मुन्नी हांसदा और चरण कुमार ने बताया कि किसी भी तरह की सूचना से जनता को अवगत नहीं कराया गया। सरकार पहले तो पावर प्लांट की बात कर रही थी और 15 सितम्बर, 2005 को सी ई एस सी यानी कोलकाता इलेक्ट्रिक सप्लाई कारपोरेशन लिमिटेड के साथ मेमोरंडम ऑफ अंडरस्टैडिंग किया गया। बाद में पता चला कि पावर प्लांट के लिए तो कोयले की जरूरत होगी और फिर कोयले की खुदाई का काम भी प्रारंभ होगा। इसके खिलाफ जनविद्रोह प्रारंभ हुआ। मुन्नी हांसदा को 7 महीने जेल

की सजा भुगतनी पड़ी। प्रतिरोध का स्वर तीखा था इस कारण से अब तक यह परियोजना प्रारंभ नहीं की जा सकी है। 2008 के 6 दिसम्बर को सरकार ने गोली चलवाकर दो लोगों की हत्या कर दी और 13 लोग घायल हो गए। इसके बाद से परियोजना का काम ठप है। मुन्नी हांसदा का कहना है कि मामला 6 गांव का नहीं था, लगभग 245 गांव कालान्तर में विस्थापित किए जाते। परियोजना एक साथ प्रारंभ नहीं की जा रही थी। चरणबद्ध परियोजना में कभी 9 गांव तो कभी 12 गांव उजड़ते चले जाते। ऐसे में लगभग 3 लाख लोग विस्थापित हो जाते। दरअसल यह ललमटिया ओपन कास्ट माइनिंग की एक विस्तारित योजना का हिस्सा है। जो राजमहल की पर्वत श्रृंखला को भी समाप्त कर देनेवाला है। महुआगड़ी कोल ब्लॉक के तहत जिस तरीके की अंधाधुध खनन कार्य किया जा रहा है उससे भी यह परियोजना जुड़ी हुई है। महुआगड़ी कोल ब्लॉक बहुत बड़ी कोल ब्लॉक परियोजना है।

लातेहार जिला का पाठ अग्रगामी संघ फिलिप कुजूर माइंस मिनरल एंड पीपुल के पूर्व संयोजक के साथ एक साक्षात्कार

पाठ अग्रगामी संघ बीते 32 सालों से लातेहार जिला के महुआडांड प्रखंड के पाठ क्षेत्रों बड़ी संख्या में बाक्साइड की खदानें हैं प्रतिरोध आंदोलन चला रही हैं। विस्थापन के खिलाफ 4 जनवरी 1987 को लगभग पांच हजार से अधिक आदिवासियों ने पाठ क्षेत्र में पाठ अग्रगामी संघ की स्थापना की। बाक्साइट खनन से होने वाले विस्थापन और अन्य प्रभावों के खिलाफ इस सतत संघर्ष की वजह से अब तक उन इलाकों में बाक्साइट की माइनिंग नहीं हो पा रही है। पूर्व में हिंडालको 787 एकड़ में खनन करना चाहता था। तीखे प्रतिरोध की वजह से इसे घटा कर 437 के लगभग कर दिया गया है। इस पूरे इलाके में नगेशिया आदिवासी समुदाय के लोग हैं। पाठ अगग्रामी संघ के नेतागण धरमसाय नगेशिया और नरेंद्र नगेशिया को हिंडालको के दलालों की तरफ से धमकी मिल रही है। यदि खनन नहीं करने दोगे तो अंजाम बुरा होगा। महुआडांड के व्यापारी वर्ग जिनमें कुछ मुस्लिम और यादव है वे दलाली की भूमिका में हैं। यहां खनन हुआ तो 6 राजस्व गांव के लगभग 3000 लोगों को जड़ जमीन से विस्थापित होना पड़ेगा। जबकि उनके पुनर्वास व पुनर्स्थापन के नाम पर कोई भी योजना नहीं है। नगेशिया 2001 की जनगणना के पूर्व आदिम जनजाति की सूची में थी जिसे हटाकर

आदिवासी समुदाय में रख दिया गया है। बकरी बांटने के नाम पर अनेक नगेसिया लोगों से सादे कागज पर सी ओ ने ठेपा लगवा लिया और कहने लगे कि नगेसिया लोगों ने अपनी जमीन बॉक्साइट के लिए हिंडालको कंपनी को दे दी है। 1987 से ही पाठ अग्रगामी संघ ने पलामू के उपायुक्त और दक्षिणी दोटानागपुर प्रमंडल के आयुक्त को ज्ञापन देकर हिंडालको की माइनिंग लीज को रद्द करने की गुहार लगाते रहे है।

चिरोकुकुद बॉक्साइट माइंस के लिए 1175 एकड़ जमीन का अधिग्रहण कर 22 गांवों के लगभग 6000 से भी अधिक नगेसिया व अन्य आदिवासियों को विस्थापित किए जाने की योजना बनाई गई। तीखे संघर्ष की बदौलत आदिवासी चिरोकुकुद बॉक्साइट माइंस के काम को प्रभावित कर रखा है। खबर है कि 28 अप्रैल 2017 को कंपनी ने जबरन खनन प्रारंभ कर दिया है।

हनूप लकड़ा और निकोलस मिंज के नेतृत्व में विस्थापन प्रतिरोध संघर्ष समिति चितरपुर कोल ब्लॉक के खिलाफ 6 गांवों के विस्थापन के मसले पर संघर्ष कर रहे हैं। अभिजीत पावर ग्रुप और आधुनिक ग्रुप वहां खनन के लिए प्रयासरत है। तुबेद कोल ब्लॉक के खिलाफ लातेहार के उत्तर में आदिहक भूमि रक्षा मोर्चा आंदोलनरत है। तुबेद कोल ब्लॉक से तुबेद, मंगरा, डीही, मुरूप इन 4 गांवों के 7000 से 10000 के करीब लोगों के उजड़ने की बात है। इसमें उरांव बहुल संख्या में हैं और मुस्लिमों की आबादी है।

लातेहार के दक्षिण में अल्युमिनियम स्मेटिंग प्लांट की स्थापना से 40 गांवों के लोग विस्थापित होने से बच गए। इस आंदोलन के बारे बहुत लोग नहीं जानते हैं। यह 7800 करोड़ की योजना थी और झाड़खंड गठन के तुरत बाद प्रथम सरकार ने जो एम.ओ.यू. किया था उनमें यह पहला एम.ओ.यू. था। आंदोलन की वजह से यह रद्द हुआ। पानी के लिए ओरंगा बांध में टेलिंग डैम बनने की बात थी। इससे भी 40 गांव विस्थापित होते। इस तरह अब तक 80 गांवों को विस्थापित होने से बचा लिया गया।

चतरा जिला (आदिहक भूमि सुरक्षा मोर्चा)

चतरा जिला के अन्तर्गत ही मगध कोल प्रोजेक्ट है। आदिहक भूमि सुरक्षा मोर्चा प्रोजेक्ट के कारण विस्थापित होनेवाले 8 गांवों की लगभग 7 हजार आबादी के अधिकारों को लेकर संघर्षरत है। श्री सुरेद्र तिर्की के

अनुसार इस इलाके में बड़ी आबादी उरांव और गंझू के अलावा साहू समाज के लोग विस्थापित होगें। इस प्रोजेक्ट के कारण मसीलोंग गांव के लोगों को विस्थापित होना पड़ा है। वे यहां वहां घर बनाकर रह रहे हैं। उन्हें किसी तरह से पुनर्वासित नहीं किया गया है। वहां 250 करोड़ का कोयला यूंही जल का राख हो गया और किसी सी.सी.एल. के अधिकारी का कुछ नहीं बिगड़ा है। देवलगडा गांव के लोग भी विस्थापन के खिलाफ लड़ रहे हैं। देवलगडा गांव के अगल बगल नदी के किनारे खनन किया है। इससे खनन का वेस्ट नदी में जा रहा है। वहां के लोगों, जानवरों को नहाने पीने आदि के लिए भयानक कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। मेटलोंग गांव की खेती वाली जमीन इससे प्रभावित है। पर्यावरण की तो कोई चिंता ही नहीं है। मगध प्रोजेक्ट प्रारंभ होने पर मुआवजा और नौकरी का लाभ लेने के लिए बिहारी लोगों ने अवैध तरीके से स्थानीय लोगों की जमीन की बंदोबस्ती करा ली है। डी.सी. ने कैम्प लगाकर जांच की तो 225 एकड़ जमीन की फर्जी तरीके से की गई बंदोबस्ती को रद्द कर दिया।

नगड़ी बचाओ आंदोलन

राज्य की राजधानी रांची से करीब 17 किलोमीटर दूर अवस्थित नगड़ी गांव में नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी की स्थापना के लिए नगड़ी गांव की जबरन 227 एकड़ भूमि अधिग्रहण के खिलाफ आदिवासियों ने आंदोलन किया। यह रांची जिला के कांके प्रखंड के तहत आता है। यहां उरांव और मुस्लिम आबादी है। 2012 में किए गए आंदोलन में आस पास के लगभग 32 गांवों के लोग शामिल थे। सूचना अधिकार के तहत जानकारी दी गई कि इस भूमि का अधिग्रहण बिरसा कृषि विश्वविद्यालय ने नहीं किया था। बताया जाता है कि 1956 में भी सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण के प्रयास हुए थे। तब स्थानीय लोगों के द्वारा सरकारी गाड़ियों को तोड़ने और विरोध आंदोलन किया था।

प्रतिरोध के बावजूद 61 एकड़ में नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी की स्थाना कर दी गई। 1996 में यहां के मुस्लिम परिवारों की 20 कड़ जमीन पर सरकार ने जबरदस्त कब्जा किया। इसका मुआवजा भी 23 हजार रु. कोषागार में जमा कर दिया गया। लेकिन रैयतों ने यह राशि अब तक नहीं ली है। गैर मजरुआ भूमि 20 एकड़ थी। जनप्रतिरोध की वजह से केवल लगभग 9

एकड़ जमीन पर ही सरकार का कब्जा हो पाया है। जिसका अब तक मुआवजा और पुनर्वास का कोई काम नहीं किया गया है। लगभग 14 एकड़ पर सड़क निर्माण का कार्य किया गया। नगड़ी के इस भूमि अधिग्रहण से लगभग 150 परिवार प्रभावित हुए हैं। जिनके धान वाली खेती की जमीन जाने से अब उनके लिए धान की कमी होगी और उनका खाद्य सुरक्षा प्रभावित होगी।

नगड़ी की अपनी पुरखों की धरती को बचाने के लिए जबरन किए जा रहे निर्माण कार्य को ढहा देने पर अनेक लोगों पर सरकार ने मुकदमे दर्ज कर दिए। अमर टोप्पो के उपर भी केस हे। उसने बताया कि 2011 में अचानक फोर्स को उतार दिया गया तो हमलोग बौखला गए। 27 मई 2012 को सर्वोच्च न्यायालय से केस को खारिज कर दिया गया। तो हमारे सामने कोई चारा ही नहीं था। बिरसा कुजूर ने बताया कि पूरे क्षेत्र के 28 गांवों के लोग नगड़ी बचाने के आंदोलन में शामिल थे। बिट्टू तिर्की ने बताया कि रवि टोप्पो 3 महीना जेल में था। सारे ग्रामीण 4 महीना धरना में थे। इसके कारण 6 महिलाएं मर गई। अभी कुल 12 लोग केस लड़ रहे है। यहां के आदिवासियों ने किसी भी जमीन का मुआवजा नहीं लिया है। उनकी जमीन का 2011 तक का रसीद कटा है। लेकिन इसके बाद रसीद कटना बंद हो गया। अपर्णा मिंज ने बताया कि हमलोग प्रारंभ से संघर्ष कर रहे है। 1956 में अधिग्रहण की बात कही जाती रही। 1956 में जब जमीन की नापी के लिए लोग आए थे तो विरोध हुआ था। लेकिन बिरसा कृषि विश्वविद्यालय ने सूचना के अधिकार के तहत बताया कि जमीन का अधिग्रहण नहीं हुआ है। नगड़ी के आदिवासी रास्ता का मुआवजा बहुत कम देने के सवाल पर कोर्ट गए थे। मामला पहले से कोर्ट में था। मुआवजा बढ़ाने की मांग को लेकर ग्रामीण आंदोलन करने की तैयारी कर रहे थे तब तक सरकार ने 227 एकड़ जमीन का मामला उछाल दिया तो सबलोग उसके खिलाफ कूद पड़े। अभी 75 एकड़ जमीन लॉ विश्वविद्यालय बनाने में गया है। अभी रास्ता बना रहा है और उसका मुआवजा भी नहीं दिया गया है।

एन.टी.पी.सी. पकरी बरवाडीह कोल परियोजना

एन.टी.पी.सी (NTPC) की कर्णपुरा (पकरी-बरवाडीह) कोल परियोजना के तहत जबरन जमीन अधिग्रहण का विरोध कर रहे ग्रामीणों पर पुलिस-प्रशासन द्वारा

किये जा रहे दमन की जांच हेतु घटनास्थल पर गयी एआईपीएफ, विस्थापन विरोधी जन विकास आंदोलन और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं की जाँच-टीम की रिपोर्टः टीम के सदस्यः स्टेन स्वामी, अरविंद अविनाश, प्रशांत राही, अनिल अंशुमन व शिखा राही।

गत 18 जून 2016 को इस टीम ने "पकरी-बरवाडीह कोल परियोजना" का मुख्य इलाका इस राज्य के हजारीबाग जिला के बड़कागांव प्रखंड के विभिन्न गांवों का दौरा किया, पुलिसिया दमन के शिकार ग्रामीणों से मिलकर घटना की विस्तृत जानकारी ली। साथ ही परियोजना के लिए जबरन जमीन अधिग्रहण का विरोध कर रहे किसानों व विस्थापन के खिलाफ संघर्ष कर रहे जिन जन संगठनों के साथियों पर फर्जी मुकदमे दर्ज हुए हैं, उनसे भी स्थिति का ब्योरा लिया गया।

विवरण

जांच टीम को बड़कागांव प्रखंड के सोनबरसा, सिंदुआरी, चुरचू तथा डाड़ीकला के ग्रामीणों तथा संघर्षरत जन संगठनों से जिन तथ्यों की जानकारी मिली वह इस प्रकार है–

एन.टी.पी.सी. (NTPC) प्रबंधन द्वारा लम्बे समय से इस कोल परियोजना के जमीन अधिग्रहण के लिए आजमाए जा रहे तमाम नाजायज तरीकों के खिलाफ क्षेत्र के किसानों ने लगातार विरोध किया है। बावजूद इसके क्षेत्र में कोयला खनन का ठेका 2 निजी कंपनियों को देकर सबसे पहले हाल ही में चिरुडीह तिलैया टांड़ में काम शुरू करा दिया गया। तो आसपास के किसानों (रैयतों) ने भी 31 मार्च 2016 से खननस्थल के समीप शांतिपूर्ण ढंग से अनिश्चितकालीन धरना शुरू कर दिया। 16 मई को जब खनन कंपनियों ने पोकलेन और बुलडोजर लेकर खनन कार्य शुरू किया तो विरोध करनेवाले रैयत-किसानों की संख्या बढ़ने लगी। 17 मई को जब सैकड़ों की तादाद में जुटे किसान धरना में बैठे हुए थे, तभी बड़कागांव थाना प्रभारी राम दयाल मुंडा कुछ पुलिसवालों को लेकर आया और किसानों से कहा– तुमलोग जब शांतिपूर्ण धरना दे रहे हो तो ये लाठियां क्यों रखे हो? सुनकर किसानों ने अपनी लाठियां हटा दीं। इतना ही होना था कि...अचानक से बिना किसी चेतावनी या पूर्व सूचना के सैकड़ों पुलिसवाले आकर गन्दी-गन्दी गालियां देते हुए ताबड़तोड़ लाठियां बरसाना शुरू कर दिए। हर तरफ भगदड़ और चीख-पुकार मच गयी। सैकड़ों की तादाद में घायल होकर लोग गिरते-पड़ते भागने लगे।

गांवों में पुलिसिया कहर

चिरुडीह तिलैया टांड़ में निहत्थे ग्रामीणों पर लाठी-चार्ज के बाद प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार 300 से 400 की संख्या में हथियारबंद पुलिसवालों ने आस-पास के सभी गांवों पर हमला बोल दिया। बच्चा-बूढ़ा-किशोर-महिला जो जहां मिला, बुरी तरह से पीटा गया। घरों के दरवाजे तोड़कर पुरुष नहीं मिलने पर महिलाओं तक को गन्दी-गन्दी गालियां देते हुए पीटा-घसीटा गया। घर के सारे सामान तहस-नहस कर दिये गये। कई लोगों के सर फूटे तो कईयों के हाथ-पांव तोड़ दिए गए, यहां तक कि गर्भवती महिला व नयी बहू को भी को नहीं छोड़ा गया। जांच टीम जहां कहीं गयी हर जगह पुलिस की दरिंदगी के प्रत्यक्ष प्रमाण दिखे।

सोनबरसा गांव के इंटर में पढ़नेवाले छात्र मुकेश कुमार ने कहा—पुलिस ने जैसा अत्याचार किया वैसा तो अंग्रेज ने भी नहीं किया होगा। बासो देवी ने क्षुब्ध स्वर में कहा—कंपनी से मौटा पैसा खाकर पुलिस मारने आया था। 60 वर्षीय भुवनेश्वर साव ने कहा—हमको इतना मारा कि 5 दिन रांची में जाकर भर्ती होना पड़ा। 5वीं में पढ़नेवाले सुदामा कुमार, जो लंगड़ाकर चल रहा था, को इस कदर पीटा गया कि कई दिनों तक बुखार में रहा। 10 साल की मीना, चमेली देवी, दीपक साव, कौलेसर साव, दीपक साव व देव प्रसाद महतो समेत सबने एक स्वर से गहरे दर्द और क्षोभ के साथ पुलिसिया करतूत के बारे में जांच टीम को आपबीती बतायी। इसी गांव की गर्भवती महिला राधा देवी को बुरी तरह पीटा गया।

डाड़ीकला की सुकरी देवी, चाहो खातून, 70 वर्षीय रामेश्वर भुईया समेत वहां जुटे सभी महिला-पुरुषों ने बताया कि किस तरह 17 मई की शाम जब टोले में कोई खाना खा रहा था, कोई बना रहा था, तभी सैकड़ों पुलिसवालों ने हमला बोल दिया। एक महिला ने बताया—मैं वहां गाय चरा रही थी तब वे आकर हमला किये, जानवरों तक को नहीं छोड़ा...बहु को मारकर चूड़ी तक फोड़ दी, उसका हाथ कट गया।

सिंदुआरी गांव की रेशमी महतो, यदुवीर साव व मैट्रिक की छात्रा संगीता और सभी ने पुलिसिया हमले की घटना बतायी। चुरचू गांव के लोगों ने भी यही पीड़ा सुनाते हुए कहा—कई दिनों तक तो डर से हम लोग घर छोड़कर रात में इधर-उधर सोए। क्योंकि जाते-जाते पुलिसवाले धमका गए थे—जल्दी से इलाका खाली करो, नहीं तो फिर आकर ऐसे ही मारेंगे।

इन सभी गांवों के लोगों का एक स्वर में यही कहना था—बाप-दादा की जमीन चली जा रही है...हमारे बाल-बच्चे कहां जाएंगे?...हमलोगों के जीने-खाने का क्या होगा?... हम तो भूखे मारे जाएंगे...सरकार हमारी जमीन लेना चाहती है तो आकर

देखे कि जमीन बंजर है या उपजाऊ...यहां बहुत अच्छी फसल होती है...सब्जियां, धान, मक्का, गन्न, सब कुछ उगाते हैं और यहां का गुड़ तो दूर-दूर तक जाता है.

हमने इन ग्रामीणों के जो साक्षात्कार दर्ज किये उसका प्रमाण यूटयूब पर लघु फिल्मः "भूमि अधिग्रहण के लिए पुलिस जुल्मः बड़कागांव, झारखंड" के रूप में उपलब्ध है, जिसे इस लिंक से देखा जा सकता है–

https://youtu.be/bSoGx475bM

फर्जी मुकदमे

जबरन जमीन अधिग्रहण का विरोध कर रहे ग्रामीण किसानों समेत इनकी आवाज उठा रहे "कर्णपुरा बचाओ संघर्ष समिति" व "जन्मभूमि रक्षा समिति" के कई सामाजिक कार्यकर्त्ताओं पर फर्जी मुकदमे प्रशासन द्वारा थोपे गए हैं। जिसमें संघर्ष समिति के डॉ. मिथिलेश दांगी, बड़कागांव के राजीव रंजन, डाड़ीकलां के मो. अंसारी समेत कुल सात लोग अभी भी हजारीबाग स्थित लोकनायक जयप्रकाश केंद्रीय जेल में हैं। जिनकी कोर्ट पेशी सशरीर न करके वीडियो कांफ्रेंस से कराई जा रही है, मानो वे कोई दुर्दांत अपराधी हों, बड़कागांव प्रखंड के कार्यपालक दण्डाधिकारी की ओर से 31 नामजद लोगों समेत सैकड़ों अज्ञात पर जुलूस निकालकर पथराव करने, पुलिस की रायफल छीनने, सरकारी काम में बाधा डालने, हत्या का प्रयास करने जैसी कई संगीन धाराएं लगाकर गैर-जमानती मुकदमे दर्ज किये गए हैं। अपनी 40 एकड़ बहुफसली जमीन को खनन से बचाने के लिए संघर्ष कर रहे बैजा राणा परिवार के 3 सदस्य भी जेल में हैं, इस प्रकार उपरोक्त पुलिस दमन के शिकार कुल 7 व्यक्तियों पर बड़कागाँव थाने में कुल तीन फर्जी मुकदमे दर्ज हैंः 134/16, 135/16, 136/16, जिन्हें हजारीबाग सत्र न्यायालय के आदेश से बड़कागांव थाना काण्ड संख्याः 135/16 में संयोजित कर एक मुकदमा दर्ज किया गया है।

निष्कर्ष

जांच टीम का निष्कर्ष यह है कि एन.टी.पी.सी द्वारा जबरन.जमीन अधिग्रहण का विरोध कर रहे किसानों व इनके पक्ष में आवाज उठाने वाले जन संगठनों के कार्यकर्ताओं पर पुलिस-प्रशासन द्वारा किया जा रहा दमन व फर्जी मुकदमे लोकतांत्रिक अधिकारों का हनन है। साथ ही किसी भी प्रकार के जमीन अधिग्रहण के लिए संविध ाानिक-कानूनी प्रक्रिया का दृढ़ता से पालन करना अनिवार्य है, जो यहां नहीं दिखा। इसलिए हमारी मांग है कि–

1. 17 मई को चिरुडीह तिलैयाटांड़ में शांतिपूर्ण धरना दे रहे किसानों व गांवों में हमला बोलकर किये गए लाठी-चार्ज व लूट-पाट करने के जिम्मेवार अधिकारियों और पुलिसकर्मियों पर मुकदमा दर्ज कर उनपर दंडात्मक कार्रवाई की जाये।

2. जबरन जमीन अधिग्रहण का विरोध कर रहे किसानों व जन संगठनों पर प्रशासन द्वारा थोपे गए सभी फर्जी मुकदमे वापस लिए जाएं। तात्कालिक तौर पर हजारीबाग जेल में बंद डॉ. मिथिलेश दांगी एवं 6 अन्य ग्रामीण विचाराधीन बंदियों को अविलम्ब रिहा कर दिया जाए।

3. खनन परियोजना के लिए जमीन अधिग्रहण के लिए अनिवार्य वैधानिक प्रक्रियाओं का सख्ती से पालन करते हुए 2013 के भूमि अधिग्रहण कानून के तहत किसानों की आम सहमति लिये बगैर परियोजना-कार्य किए जाने पर रोक लगाई जाए।

4. बहुसंख्यक जनता के द्वारा अपनी बहु-फसल ज़मीन देने से इंकार करने में मद्देनज़र भूमि अधिग्रहण पर जनमत-संग्रह करवाया जाए।

उत्तर कोयल जलाशय परियोजना

उत्तर कोयल जलाशय परियोजना का निर्माण पलामू जिले की मुख्य नदी कोयल पर हो रहा है। परियोजना बड़े बाँधों में से एक है। परियोजना स्थल का चयन, सर्वेक्षण एवं अन्वेषण कार्य 1966 के बाद किया गया था। सन् 1966-67 में जब पूरे बिहार में भयानक अकाल पड़ा था। उस वक्त अकाल एवं सूखे से मुक्ति पाने के लिए इस परियोजना को "योजना आयोग" के सामने स्वीकृति हेतु भेजा गया था। इस वर्ष 1970 में इस परियोजना अनुमानित राशि का 30 करोड़ रुपये खर्च करने की थी, जिसमें से 4 लाख 40 हजार एकड़ कमान क्षेत्र में सिंचाई, पेयजल, औद्योगिक संस्थाओं के लिए जलापूर्ति एवं 25 मेगावाट जल विद्युत उत्पादन करने की बात थी। जबकि योजना आयोग द्वारा परियोजना की स्वीकृति सन् 1989 के सितम्बर में मिली थी लेकिन निर्माण कार्य 1972-73 में ही आरम्भ किया गया था परन्तु वर्ष 1985 में पुनरीक्षित कर प्राक्कलित राशि को 439 करोड़ रुपए कर दिया गया।

इस बाँध की ऊँचाई 222.40 फीट है। इस परियोजना में 405 लाख एकड़ फीट पानी जमा करने का प्रावधान है। इस सिंचित पानी में सिंचाई करने हेतु मोहम्मदगंज में 2689 फीट लम्बा कटाव बनाया गया है। मोहम्मदगंज बराज से जिस मुख्य नहर का निर्माण किया गया है, उसकी लम्बाई 110 कि.मी. है। इस परियोजना के संचित पानी को मोहम्मदगंज बराज में कोयल नदी द्वारा पहुँचाया जाएगा। तथा बराज में मुख्य

नहर के माध्यम से सकल कमान क्षेत्र में पानी वितरित किया जायेगा। जिससे पलामू जिले के 40 हजार एकड़ सकल कमान में सिंचाई की जाएगी। इसके अलावा औरंगाबाद जिला के 3 लाख, 25 हजार एकड़ तथा गया जिला के 75 हजार एकड़ सकल कमान क्षेत्र में सिंचाई करने का भी लक्ष्य रखा गया है।

बाँध तथा बराज की तकनीकी गड़बड़ी (कुटकू डैम)

परियोजना का निर्माण कार्य 1972-73 से 1992 तक में 90 प्रतिशत तो पूरा हो जाता है।निर्माण कार्य कुटकू (मण्डल) तथा बराज मोहम्मदगंज में बनाया जा रहा है। बराज निर्माण कार्य में पुल और फाटक को छोड़कर सभी अन्य कार्य पूरे कर लिए गए हैं। बाँध और बराज का कार्य जल संसाधन विभाग द्वारा ठेकेदारों के माध्यम से कराया जा रहा है जबकि दोनों कार्यों को विभागीय स्तर पर कराने की बात थी। बाँध और बराज निर्माण में बड़े पैमाने पर सरकारी कर्मचारियों, दलालों और ठेकेदारों के मिलीभगत होने के कारण सरकारी रुपए की बंदरबांट की गई है।

उत्तर कोयल बाँध का शिखर स्तर 372 मीटर, नदी तल से बाँध की ऊँचाई 67.86 मीटर तथा दायां मशीनरी डाईक सभी का निर्माण पक्कीकरण किया गया है तथा दायां मिट्टी डाईक 270 मीटर तक किया गया है। इन सभी कार्यों को ठेकेदारों के माध्यम से कराया गया है। अभी तक इन सभी कार्यों में रुपए 408.36 करोड़ खर्च किए जा चुके हैं। बाँध का निर्माण भी अति घटिया किस्म से किया जा रहा है। बाँध निर्माण सामग्री में लोहा, छड़ सीमेंट आदि बहुत ही कम मात्रा में उपयोग किया गया है। जिसके कारण बाँध का काम मजबूती की दृष्टि से बहुत ही कमजोर है। वर्ष 1991 के वर्षा पानी से बाँध से सभी निकास मार्ग जल प्रवाह के कारण क्षतिग्रस्त हो गए, परिणामस्वरूप जल निकास मार्ग में सीमेंट से की गई ढलाई को वर्षा का पानी बहाकर ले गया, जिससे जल निकास मार्ग में जगह-जगह चार-पाँच फीट तक गहरा गढ्ढा बन गया। अब मात्र छड़ दिखाई पड़ रहा है। वहाँ बालू और सीमेंट 1:12 के अनुपात (एक बोरी सीमेंट और 12 बोरी बालू) में पत्थरों की जोड़ाई एवं ढलाई की गई है और बाँध के बीच के भाग में पत्थर के बोल्डर मिट्टी मुक्त ज्यों का त्यों बैठा दिया गया है। बाँध में जल रिसाव भी तेजी से हो रहा है। रिसाव के दाग दीवारों पर स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। मोहम्मदगंज बराज में भी अभी तक दो बार दरार पड़ चुकी हैं जिसकी मरमत विभाग के द्वारा की गई है। अभी मोहम्मदगंज बराज के 12 नम्बर गेट में दराज पड़ी हुई है।

परियोजना से विस्थापित गाँव एवं परिवार

इस परियोजना में गढ़वा जिले के भण्डरिया प्रखण्ड के 16 गाँवों तथा पलामू जिले के बरवाडीह प्रखण्ड के 3 गाँव डूब क्षेत्र में शामिल हैं। इन 19 गाँवों में 749 परिवारों के 6013 प्रखण्ड विस्थापित होंगे जिसमें आदिवासी 5002, हरिजन 330 तथा अन्य जातियों के 681 हैं। उससे 38508.21 एकड़ भूमि जलमग्न होगी जिसमें 30,44.98 एकड़ रैयती भूमि, 12,756.51 एकड़ गैर मजरुआ तथा 22,66,72 एकड़ वन भूमि शामिल है।

अभी चार गाँव कूटकू, भजना, खरा, एवं मेराल पूर्ण रूप से डूब गए हैं एवं बाकी 15 गाँव परियोजना पूर्ण होने के बाद डूब जाएंगे।

मुआवजा

मुआवजा भुगतान हेतु जमीन को दो किस्मों में बाँटा गया है। 1. धान खेत तथा 2. टॉड। दोनों किस्मों की भूमि को पुनः तीन-तीन भागों में बाँटा गया है। ६ ाान खेत-1, धान खेत-2, धान खेत-3 तथा टाँड-1, टाँड-2, टाँड-3 1 इसी आधार पर भू-अर्जन विभाग द्वारा भूमि का मूल्य निर्धारण। कुछ इस प्रकार किया गया है।

तालिका नं. 1.25

धान खेत -1	=	22,509.00	प्रति एकड़
धान खेत -2	=	20,258.10	प्रति एकड़
धान खेत -3	=	15,756.30	प्रति एकड़
टाँड -1	=	18,007.20	प्रति एकड़
टाँड -2	=	13,505.40	प्रति एकड़
टाँड -3	=	9,003.60	प्रति एकड़
बंजर भूमि	=	4,501.80	प्रति एकड़
देव स्थल	=	22,509.00	प्रति एकड़

ग्राम कूटकू, भजना एवं खूरा के कुल 1295.65 एकड़ रैयती जमीन का करीब 2,62,47,407 रुपये में सन् 1984 में भुगतान किया गया था। शेष गाँवों में आज भी मुआवजा भुगतान की प्रक्रिया जारी है। ग्राम मेराल एवं नवरनागो वन भूमि में आते हैं, अतः यहाँ के लोगों को किसी तरह का कोई मुआवजा भी नहीं दिया गया, जबकि वन विभाग को लगभग 8 करोड़ रुपये भुगतान किए गए हैं।

दूसरी ओर सरकारी पदाधिकारियों के भ्रष्टाचार में लिप्त होने के कारण गरीब

रैयतों को धान-खेत की जमीन का भुगतान निर्धारित दर के मुताबिक नहीं हुआ है। प्रायः धान-खेत का भुगतान टाँड-3 की दर से दिया गया। वही यह भी देखने में आया कि प्रभावशाली व्यक्तियों एवं दलालों के टाँड़ प्रायः धान खेत-1 की दर से भुगतान किये गये।

नौकरी

उत्तर कोयल जलाशय परियोजना से 19 गाँव के कुल 746 परिवार प्रभावित हैं। 746 परिवारों में से मात्र 210 व्यक्तियों को नौकरी दी गई। इसमें 201 व्यक्तियों को चतुर्थवर्गीय और 6 लोगों को तृतीय श्रेणी की नौकरी दी गई। 210 लोगों को तृतीय एवं 201 लोगों को चतुर्थ श्रेणी में जो नौकरी दी गई है, वह सरकारी नौकरी पाने की योग्यता के आधार पर है। जबकि डूब क्षेत्र की साक्षरता दर बहुत ही कम है। सन् 1966 के बाद जब योजना स्थल का चयन, सर्वेक्षण एवं अन्वेषण कार्य किया जा रहा था उस समय प्रभावित क्षेत्र के लोगों के शैक्षणिक एवं तकनीकी विकास के लिए ठोस कार्यक्रम लागू नहीं किया गया। अगर उस समय शिक्षा एवं तकनीकी विकास के लिए ठोस कार्यक्रम जाते तो इन 20 वर्षों में विस्थापित परिवारों की सरकारी नौकरी एवं रोजगार की व्यवस्था भी की जा सकती थी। अब हालत यह है कि ठोस कार्यक्रम बनाए जाने के कारण प्रभावित क्षेत्र के परिवारों को रोजगार की खोज में इधर-उधर भटकना पड़ रहा है।

पुनर्वास

उत्तर कोयल बाँध से हुए विस्थापित परिवारों को 1989 में भण्डरिया प्रखण्ड के ग्राम मरदा में 156 परिवारों को पुनर्वास विभाग ने मात्र 0.25 एकड़ जमीन उपलब्ध करायी थी। पर उस क्षेत्र की जमीन, स्कूल, भवन अस्पताल, सड़क संबंधी कोई विकास कार्य नहीं किया। घर बनाने के लिए इन विस्थापितों को मात्र रुपए 6,000 देने थे। इसके अलावा उन्हें पेयजल, विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र, सामुदायिक भवन सड़क की सुविधा पुनर्वास विभाग द्वारा करानी थी। लेकिन विभाग की लापरवाही के कारण मरदा गाँव में मात्र सात परिवारों को 25 डी. जमीन में बसाया गया और अंततः उन्होंने घर भी अपने आप अपने घर बनाये, इसके उन्हें रुपये 6,000 भी नहीं दिये गये। बाकी विस्थापित परिवारों ने उपयुक्त सुविधा नहीं होने के कारण ग्राम मरदा में रहना उचित नहीं समझा। हालत यह है कि आज तक ग्राम मरदा में विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र, सामुदायिक भवन आदि अभी तक नहीं बनाया गया है और विस्थापित परिवार पुनर्वास स्थल पर भी नहीं बसे हैं। इसके कई कारण

एवं समस्याएं हैं। जैसे--

1. विस्थापितों के लिए सबसे पहले पुनर्वास विभाग ने ग्राम टेहड़ी में जमीन चयन की थी। वहाँ पर सरकारी गैर मजरूआ जमीन थी। विस्थापित परिवारों के पुनर्वास के सवाल को लेकर इसके विरोध में, टेहड़ी गाँव के लोग खड़े हो गए। टेहड़ी गाँव के लोगों पर कई मुकदमें भी हुए। लेकिन विस्थापितों को टेहड़ी गाँव में नहीं बसने दिया गया।
2. अब अधिकांश विस्थापित परिवार मध्य प्रदेश के सरगुजा जिले में चले गए हैं और वहीं जमीन खरीदकर घर बनाकर रहने लगे हैं। उनके वहाँ जाने का यह मुख्य कारण यह था कि डूब क्षेत्र के करीब, जो सरगुजा जिला है और वहाँ इन परिवारों की पहले से ही रिश्तेदारी थी और यह डूब क्षेत्र जंगल से भी भरे थे जो विस्थापित आदिवासियों के लिए अनुकूल थे । क्योंकि इनकी जीविका जंगल पर निर्भर होती है। इस कारणवश इन्हें सरगुजा स्थान आर्थिक रूप में अधिक उपयोगी लगा क्योंकि यह जंगल से भी भरा-पूरा था।
3. मरदा गाँव में मात्र 25 डी. जमीन विस्थापितों को अनुदान में दी गई है। इसके अलावा कोई अन्य सुविधा भी उपलब्ध नहीं कराई गई है। पहली बात यह कि गाँव में 25 डी. जमीन की उपयोगिता अत्यधिक कम है इसलिए विस्थापित परिवारों ने इस सरकारी अनुदान में मिली भूमि को अपनी जरूरतों के अनुकूल न पाया क्योंकि 25 डी. जमीन विस्थापितों के लिए बहुत कम है।
4. पुनर्वास स्थल पर न रहने का एक और कारण यह है कि मरदा में काफी जमीन न होने के कारण इन लोगों को खेती कहीं और करनी पड़ती है।

पुनर्वास पदाधिकारी के यह पूछने पर कि, विस्थापित परिवार पुनर्वास स्थल पर क्यों नहीं रहते तो उत्तर मिला कि, सरकार विस्थापितों को एक खूँटें से बाँध कर रखना चाहती है। लेकिन भोजन का इन्तजाम नहीं करती तो किस प्रकार विस्थापितों पुनर्वास स्थल पर कैसे रह सकता है।

उत्तर कोयल परियोजना पूरी होने की स्थिति में है, इसका लाभ पलामू के किसानों को कितना मिलेगा। यह सिंचाई कार्य प्रारम्भ होने पर ही पता चलेगा। ऐसा नहीं लगता कि जितना इस योजना पर खर्च एवं नुकसान हो रहा है, इस अनुपात में पलामू वासियों को सिंचाई का लाभ मिल पायेगा।

मलय जलाशय योजना

मलय जलाशय योजना ग्राम कठौतिया, प्रखण्ड डाल्टनगंज, पलामू में मलय नदी पर जल संसाधन विभाग के द्वारा बनाया गया है। इस योजना को तृतीय पंच-वर्षीय योजना में स्वीकृत किया गया था। इस योजना में 20 लाख रुपए की अनुमानित लागत खर्च करके 8,000 एकड़ भूमि में सिंचाई सुविधा कराने का अनुमान था। इस योजना का निर्माण कार्य 1970 से आरम्भ किया गया था तथा सन् 1985 में पूरा किया गया। निर्माण कार्य के दरम्यान ही योजना को परिवर्तित भी कर दिया।इस योजना को पूरा करने में 16 वर्ष लगे तथा इसमें 38 करोड़ रुपए का खर्चा किया गया।सिंचाई की क्षमता को 8,000 एकड़ से बढ़ाकर 8,000 हेक्टयर कर दिया गया। प्रारम्भिक आंकलन में किसी भी गाँव के डूबने की संभावना नहीं थी ।परन्तु सिंचाई क्षमता बढ़ा-चढ़ा कर 8000 हेक्टयर करने के कारण दो गाँव (ग्राम कठौतिया, डाल्टनगंज प्रखण्ड तथा ग्राम डोडाग, लेस्लीगंज प्रखंड) पूर्ण रूप से डूब क्षेत्र में चले गये।

मलय जलाशय योजना का उद्देश्य

प्रारम्भिक आंकलन में डाल्टनगंज प्रखण्ड के दस गाँव की 8,000 एकड़ भूमि को सिंचाई के लिए उपलब्ध करना था । परन्तु पुनरीक्षित आंकलन में डाल्टनगंज एवं लेस्लीगंज प्रखण्ड के दस-दस गाँवों की सौ हेक्टेयर भूमि में सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराके सूखा एवं अकाल के विरूद्ध कृषि में गुणात्मक विकास करने की योजना थी।

योजना पूर्ण हो जाने के बाद की स्थिति

बांध

बांध निर्माण कार्य के समय में ही सन् 1977 के सितम्बर माह में पानी जमा होने के कारण बाँध में दरार पड़ गई थी। बाँध टूटने के भय से अगल-बगल के गाँव के लोग भागने लगे थे। इसी दौरान अफरा तफरी में दरार को भरवाने का काम भी किया गया। बाँध पर घास लगने, पत्थर बिछाने तथा मिट्टी भरने का काम करना था ताकि जल रिसाव तथा मिट्टी कटाव न हो। परन्तु ये तीनों कार्य नहीं किये गये, जिसके कारण अब बाँध से जल रिसाव तथा पानी द्वारा मिट्टी का कटाव होना शुरू हो गया है। साथ ही बाँध के समय बाँध के अन्दर की मिट्टी को न निकलने और प्रति वर्ष मिट्टी जमा होने, तथा उसके निष्कासन एवं बहिर्गमन द्वारा बनाने के कार्य को अधूरा छोड़ने के कारण जल भण्डारण नहीं हो पाता है।

नहर

मलय जलाशय योजना के द्वारा सकल कमान क्षेत्र में सिंचाई हेतु मुख्य एवं उप नहर का निर्माण किया गया है जो कि अभी अधूरा है। मुख्य नहर से जल रिसाव को रोकने के लिए बाहर से चिकनी मिट्टी लाकर नहर तल में भरना तथा नहर के दोनों किनारों पर पत्थर बिछाने जैसे कार्य को करने की जिम्मेदारी योजना में थी परन्तु उस कार्य को नहीं किया गया बल्कि नहर के मुख्य रास्ते पर, प्रभावशाली व्यक्तियों की जमीन को बचाने के लिए हेर-फेर किया गया। जिसके परिणामस्वरूप नहर के पानी का बहाव जगह-जगह से अवरूद्ध हो गया।

सिंचाई

जल संसाधन विभाग का मानना था कि योजना पूर्ण होने पर कुल 7862 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई सुविधा उपलब्ध होगी। मुख्य अभियन्ता, जल संसाधन विभाग डाल्टनगंज के द्वारा दर्शाया गया कि सन् 1989-90 में 8,000 हेक्टेयर भूमि में खरीफ फसल को सिंचित किया जा सकेगा परन्तु मात्र 6500 हेक्टेयर भूमि में ही खरीफ फसल को सिंचित किया जा सका। सिंचाई की वास्तविक स्थिति यह है कि दुलसुलमा, लहलहे, पोलपोल, झाबर एवं सिन्दुरिया ग्राम की खरीफ एवं रबी की फसल में लगभग 1500 एकड़ भूमि ही सिंचित होती है और नहर के अधूरा होने एवं जल रिसाव के कारण निर्धारित गाँवों तक पानी भी नहीं पहुँच पाता है। जल रिसाव होने के कारण ग्राम बारीदूबा और लहलहे की भूमि दलदल एवं लवणयुक्त हो गई है तथा भूमि की उर्वकर शक्ति दिन-प्रतिदिन, क्षीण होती जा रही है और जल रिसाव के कारण ग्राम बारीदूबा के कई घर तो गिर भी गए हैं तथा बाकी घरों में नमी आ गई है। ये घर भी कब गिर जाएंगे कोई पता नहीं? नहर के निकट अन्य घरों की भी यही स्थिति दिखाई देती है।

विस्थापित परिवारों को "सरकारी सुविधाएँ"

इस योजना से डाल्टनगंज प्रखण्ड का कठौतिया तथा लेस्लीगंज प्रखण्ड का डोड़ांग गाँव पूर्ण रूप से प्रभावित हुआ। दोनों गाँव की कुल 423.11 एकड़ भूमि डूब क्षेत्र में चली गई है तथा इसमें 57 परिवार विस्थापित हुए जिसमें आदिवासी (चेरो) -47, हरिजन -4 तथा पिछड़ी जाति के 6 परिवार शामिल हैं। दोनों गाँव के घर-बारी की कुल 39.05 एकड़ भूमि के 1,65,980.90 रुपये तथा रैयती जमीन की कुल 159.69 एकड़ के 2,74,7000.00 रुपये दिए गए जिसका औसतन 20 प्रतिशत घूस द्वारा वापस ले

लिया गया। 69.37 एकड़ गैर मजरूआ भूमि का तो कोई मुआवजा ही नहीं दिया गया।कुल 57 विस्थापित परिवारों में से मात्र 34 परिवारों के एक-एक व्यक्ति को चतुर्थ श्रेणी की नौकरी 5000 रुपये प्रति व्यक्ति घूस लेकर दी गई।

विस्थापित परिवारों को ग्राम कुसी, करमा, प्रखण्ड डाल्टनगंज, पलामू में मात्र 25 डी. जमीन देकर पुनर्वासित किया गया है। जो लोग अपने खर्चे पर घर बना लेंगे। उन्हें 4,000.00 रुपये देने की बात थी जो आज तक उन्हें नहीं मिले हैं। ग्राम कुसी करमा में विद्यालय, स्वास्थ्य केन्द्र, सड़क, सामुदायिक विकास भवन आदि का काम पूरा नहीं किया गया। पेयजल हेतु भार मात्र 2 कुएँ तथा दो चापाकल हैं।

मलय जलाशय योजना से हुए विस्थापित परिवारों की सामाजिक, आर्थिक स्थितिः

1. विस्थापित परिवारों को कुर्सी करमा गाँव में बसाया गया है। यह गाँव सिंचाई कमान क्षेत्र से बाहर हैं। जहाँ पुनर्वास कराया गया है वह अनुपजाऊ बंजर भूमि है। जीविका का कोई साधन भी इस जगह उपलब्ध नहीं है।
2. विस्थापित आदिवासी परिवार जो विस्थापन के पूर्व किसान श्रेणी में थे, अब मजदूर श्रेणी में शामिल हो गए हैं। इनके हाथ से जमीन भी चली गई है और अब यह दर-दर की ठोकरें खाने पर मजबूर हैं।
3. जहाँ विस्थापितों को पुनर्वास कराया गया है वहाँ बगल के गाँव के लोग इन्हें पराया समझते हैं। जिससे विस्थापियों को अगल-बगल के गाँव वालों के साथ घुल-मिल पाने में कठिनाई हो रही है।
4. यह सब परिवार बगल के गाँव कर्मा के संभ्रात एवं धनी सांमत किसानों द्वारा लगातार सामाजिक प्रताड़ना का शिकार भी होते आ रहे हैं।
5. विस्थापित परिवारों की औरतें लकड़ी बेचकर तथा पत्थर तोड़कर अपनी परिवार की जीविका चलाती हैं। बाकी पुरुष लोग बाहर जाकर मजदूरी करते हैं।
6. अब कुछ विस्थापित परिवार मलय डेम के अगल-बगल झोंपड़ी बनाकर रहने लगे हैं।
7. इसका मुख्य कारण गरीबी है तथा सामाजिक प्रताड़ना के कारण कुर्सी करमा से निकलकर अब यह धीरे-धीरे इधर-उधर बसने लगे हैं। विस्थापितों का कहना है कि सरकार ने मात्र घोंसला बनाने की जगह मुहैया कराई है जहाँ हम अपनी पत्नी और बच्चे को छोड़कर इधर-उधर काम पर जाते हैं और रात्रि होने पर अपने घोंसले में वापस आ जाते हैं। इसके अलावा जीविका का कोई

साधन सरकार उपलब्ध नहीं करा पायी। डोड़ांग में 22 परिवार पुनः जाकर बस गये हैं और सरकारी गैरमजरूआ जमीन में जोड़-तोड़ कर रहे हैं। लेकिन इससे इनके परिवार का पालन पोषण नहीं हो पा रहा है। विस्थापित परिवारों के बच्चे पूरी तरह से शिक्षा से वंचित हो गए हैं।

8. कुर्सी करमा में लगभग 300 एकड़ से ज्यादा गैरमजरूआ जमीन है, इसके बावजूद इन विस्थापित परिवारों की जमीन की बन्दोबस्ती भी नहीं हो पाई है और ना ही कोई लाभकारी विकास योजनाएं चलाई गई हैं और ना ही इसकी वर्तमान में कोई संभावना ही दिखाई पड़ रही है। विस्थापित आदिवासी परिवारों पर जंगल विभाग द्वारा कई मुकदमें जमीन में दखल करने के मामले को लेकर कोर्ट चलाए जा रहे हैं।
9. इस तरह विस्थापित परिवारों में सामाजिक, आर्थिक दोनों स्तरों में बुरा प्रभाव पड़ रहा है।

कमाण्ड क्षेत्र में पानी का प्रभाव

मलय जलाशय योजना का निर्माण दुलसुलमा के पास किया गया है। मुख्य नहर की शुरूआत इसी गाँव के पास से है। मलय की मुख्य नहर दुलसुलमा, हनुमाड़, रबदा सखुआटाड़, भाना-सोती, बारी, दुबा तक है। ग्राम बारीदुबा से नहर दो भागों में बंट गई है। पहला जोरकट, गुड़िया हीदामर, पोखरहा कला होते हुए ग्राम खनवा तक गई है और दूसरी ग्राम बारीदुबा से लहलहे, पोलपोल, सिन्दुरिया, कुड़ेलवा, मड़ेला, रजहारा, गोपालगंज, सीताडीह, पूर्णडीह, कोट, मुरमुणी होते हुए सांगवार ग्राम तक है। एक नहर में पोलपोल, पोखरहा तक नहर का पानी पहुँचता है तथा दूसरे में झाबर तक ही नहर का पानी पहुँचता है।

क्या कारण है कि एक नहर का पानी पोलपोल, पोखरहा गाँव तक तथा दुसरी नहर का पानी ललहे, सिन्दुरिया, झाबर तक पहुँचता है। मलय जलाशय योजना में नहर हो या बाँध, तकनीकी गड़बड़ी तथा अनियमितता काफी की गई है। इसके बावजूद इस नहर के पानी का लाभ एक नहर से पोखरहा, पोलपोल तक पहुँचता है तथा दूसरी नहर से पानी ललहे, सिन्दुनिया, झाबर तक ही पहुँच पाता है। लोक चेतना के अध्ययन के दरम्यान, साफ पता चला है कि इन सभी गाँवों में उच्च जाति के संभ्रान्त एवं सांमत किसान रहते हैं जिनकी राजनीतिक पकड़ भी जिले के स्तर पर काफी अच्छी है। यह पानी को राजनीतिक पैरबी, तथा ताकत के बल पर अपने खेत तक ले जाते हैं और नहर का पानी आगे नहीं जाने देते हैं। जिससे सिंचाई कार्य

में बाधा पहुँचती है। इन गाँव में 100 एकड़ से भी ज्यादा जमीन रखने वाले किसान हैं। इन उच्च वर्गों के लोगों का अगल-बगल के गांव में सामाजिक दबदबा भी है। जिसके कारण इनके डर से आम लोग विरोध नहीं कर पाते हैं। झाबर गाँव से कई वर्षों से पानी रोका जाता रहा है और लेस्लीगंज प्रखंड के किसानों को पानी नहीं मिल पाता है। इसकी सूचना जिला, प्रशासन को भी है लेकिन अभी तक जल बंटवारे का सही निदान जिला प्रशासन ढूंढने में असफल रही है।

मलय कमाण्ड क्षेत्र में सामाजिक आर्थिक बदलाव

मलय जलाशय का जल विवरण कार्य 1985-86 से किया जा रहा है। मलय के पानी से खरीफ रबी फसल के लिए सिंचाई दुलसुलमा, हनुमाड़, रब्दा, सखुआराड़, मनासोती, बारीदुबा, करमा, चमा, ललहे, सिन्दुरिया, झाबर तथा पोलपोल, पोखरहा, केवटवार गांव में की जाती है।

गांव में अध्ययन करने से पता लगा है कि, मलय का पानी 25 जुलाई के बाद से ही जल वितरण के कार्य हेतु जारी होता है।

इस दौरान वर्षा हो रही होती है इसलिए बांध से सिचाई की आवश्यकता नहीं होती है। बांध से पानी छोड़ने का यह कारण है, कि बाँध के फाटक की खराबी। इस खराबी के कारण फाटक को ठीक तरह से ऊपर-नीचे नहीं किया जा सकता। इसके कारण खेती के लिए पानी की जरूरत न होते हुए और भी नहर में पानी छोड़ दिया जाता है, जरूरत के समय प्रयाप्त मात्रा में जल उपलब्ध नहीं हो पाता है।

इसका दूसरा कारण यह भी है कि बाँध के रिजर्ववायर को मछली पकड़ने के लिए ठेके पर भी दिया जाता है और ठेकेदार नवम्बर-दिसम्बर के महीने में मछली पकड़ने के लिए इसका सारा पानी बहा दिया करते हैं जिससे रबी की फसल को पानी नहीं मिल पाता हे।

इस बाँध से मात्र 14-15 गाँव को ही सिंचाई का लाभ मिल रहा है और वह भी सिर्फ खरीफ फसल से ही। जल रिसाव के कारण खेत में पानी भरा रहता है। जिससे कमाण्ड क्षेत्र में रबी फसल नहीं हो पाती है। इस कारण से यहाँ 14-15 गाँव में सौ से अधिक घर सिपेज (नमी) के कारण गिर गए हैं। सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र के बड़े किसानों को एक तरफ इस नहर का लाभ मिल रहा है और दूसरी तरफ हरिजन, आदिवासी, खेतिहर मजदूर को सामाजिक-आर्थिक रूप में विशेष कोई बदलाव नहीं हुआ है।

सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र के मजदूरों की मजदूरी-दर से वृद्धि नहीं हुई है। इस क्षेत्र के अधिकांश हरिजन परिवार जमीन्दारों के खेत में काम करते हैं तथा इनके घर की

औरतें लकड़ी बेचकर अपनी जीविका किसी तरह चला पा रही हैं। यह लकड़ी से प्रति-दिन बिक्री करके 5-6 रुपये की आमदनी प्राप्त कर लेते हैं। कर्मा गाँव में अध्ययन के दरम्यान पता चला कि यहाँ के मजदूरों को 2 किलो धान तथा 250 ग्राम नास्ता मिलता है। इस गाँव में 12-13 घर राजपूत जाति के हैं और ये सभी जमींदार एवं सामंत हैं। बाकी हरिजन और पिछड़ी जाति के लोग हैं। राजपूतों के पास अधिक जमीन है जो मलय नहर से खरीफ और रबी फसल में लाभ उठा रहे हैं। बाकी सारे हरजिन पिछड़े वर्ग के लोग, भूमिहीन ही हैं।

सरकार द्वारा 9 हरिजन परिवारों को ही गैर-मजरूआ जमीन मिली है जो मलय सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र से बाहर की बंजर जमीन है। इस जमीन में कोई खेती नहीं हो पाती है। 9 परिवारों को लगभग 8 एकड़ जमीन सरकार द्वारा मिली है और बाकी 21 घर के हरिजन अभी तक करमा गाँव में भूमिहीन ही हैं। न्यूनतम मजदूरी गाँव में नहीं मिलने के कारण कुछ गाँव से बाहर काम की खोज में चले जाते हैं। इस गाँव में जब सामाजिक कार्यकर्ता जाते हैं तो राजपूत परिवार के लोग ही उनसे बातें किया करते हैं। हरिजनों को बात नहीं करने दिया जाता है।

इस तरह यह दिखाई देता है कि सामाजिक व आर्थिक समस्याएं ज्यादा जटिल होती जा रही हैं। क्षेत्र के 14-15 गाँव में हरिजनों, आदिवासियों पर अमानवीय प्रताड़ना उच्च वर्गों द्वारा आज भी जारी है। इसके अलावा डाल्टनगंज और लेस्लीगंज प्रखण्ड के बड़े हिस्से की जमीन में भी सिंचाई नहीं हो पा रही है। क्योंकि वहाँ पानी नहीं जा रहा है इसलिए वहाँ पर सामाजिक व आर्थिक बदलाव की बात ही नहीं उठती है।

सिंचाई कमाण्ड क्षेत्रा में भू–हदबन्दी

मलय सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र में सिंचाई की व्यवस्था होने पर भी इस क्षेत्र के जमींदारों पर भू-हदबन्दी कानून नहीं लगाया गया है अगर। भू-हदबन्दी कानून को सुचारू रूप में लागू किया जाता तो विस्थापित भूमिहीन किसानों को जमीन मिल जाती है। भूमिहीन तथा विस्थापित परिवारों की सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र में भू-हदबन्दी कानून लगाकर इन लोगों के बीच वितरण, सरकार को करना चाहिए था। ताकि भूमिहीन विस्थापित परिवारों के जीविका का साधन उपलब्ध हो पाता।

सरकार का यह कर्तव्य बनता है कि विस्थापितों को कमाण्ड क्षेत्र में भूमि उपलब्ध कराई जाए क्योंकि अगर उनकी भूमि डूब क्षेत्र में शामिल हो जाती है। तो उसकी मदद से कमाण्ड क्षेत्र में सिंचाई हो पाती है।

गाँव के लोगों का कहना है कि "पानी मिलता भी है तो समय पर नहीं मिलता"। दूसरे "फसल को जितने पानी की आवश्यकता है उसकी पूर्ण पूर्ती नहीं हो पाती जिसके कारण फलस पर बुरा असर पड़ता है।"

समूचे सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र में अलग-अलग फसलों के लिए पानी-कर निध ारित कर दिया गया है। जिसकी दर इस प्रकार है—खरीफ 36 रुपये प्रति एकड़ रबी 45 रुपये प्रति एकड़, गर्भाधान 30 रुपये प्रति एकड़। वहीं यह देखने में आया है कि अभी तक पानी-कर कहीं भी नहीं जमा कराये गये हैं।

लिफ्ट कुआँ तथा लघु सिंचाई योजनाएँ

देखा जाये तो पलामू में छोटी-छोटी सिंचाई योजनाएँ ही सफल हो सकती हैं। हमने उत्तर कोयल जलाशय परियोजना, जो कि अभी पूरी नहीं हुई है और मलय परियोजना का बुरा असर देख लिया है। इनको सामने रखते हुए तो ऐसा लगता है कि सिंचाई की परम्परागत या लघु योजनाएँ ही इस इलाके में सफलता के साथ काम कर सकती हैं बशर्ते सरकारी व्यवस्था ठीक हो तथा तकनीकी गड़बड़ी न हो।

बूटन डूबा जलाशय योजना (लघु सिंचाई योजना)

ग्राम चाँदो, प्रखण्ड चैनपुर, जिला पलामू के बूटन डूवा नदी पर जल संसाधन विभाग, बिहार के द्वारा बनाया गया है। इसका निर्माण कार्य 1979 में पूरा किया गया था। इस जलाशय योजना से ग्राम पंचायत चाँदो के ग्राम खेरा, चान्दा बैगाडीह, अवसोन आदि गाँव की भूमि में सिंचाई व्यवस्था उपलब्ध कराने की बात थी। इसलिए सिंचाई हेतु नहर का भी निर्माण किया गया है। जब से इस योजना का कार्य पूरा हुआ है, तब से आज तक खरीफ या रबी फसल में सिंचाई आरम्भ नहीं की गई है। इस क्षेत्र के लोगों को अभी भी मानसून पर निर्भर रहना पड़ रहा है। इस जलाशय योजना का फाटक खराब पड़ा हुआ है तथा नहर के कई पुल भी खराब हैं।

इस जलाशय योजना एवं नहर निर्माण कार्य में काफी अनियमितता बरती गई। प्रभावशाली व्यक्तियों के प्रभाव में आकर एवं घूस लेकर नहर के रास्ते में भी परिवर्तन कर दिया गया हे। इन तमाम कारणों से आज तक एक एकड़ जमीन भी सिंचित नहीं हो सकी है।

पलामू जिले के लेस्लीगंज में उद्‌बह सिंचाई योजना की सूची

तालिका नं. 1.26

गाँव का नाम	किसी नदी पर	योजना निर्माण	योजना पर	योजना की सिंचाई
मुर्नारिया	मलय नदी	80-81	1.92	225
दारूडीह	नाला पर	86-87	4.99	120
सांगवार	अमानत नदी	86-87	4.98	250
इरहे	अमानत नदी	86-87	4.99	250
हरतुआ	अमानत नदी	86-87	4.96	200
पूर्णाडीह	मलय नदी	86-87	4.96	200
राम सागर	अमानत नदी	86-87	4.96	225
			31.76	1360 एकड़

उपरोक्त सभी उद्‌बह योजना निर्माण कार्य से ही बन्द पड़े हैं। सभी उद्‌बह सिंचाई योजना विद्युत द्वारा संचालित होते हैं। परन्तु अभी तक विद्युत आपूर्ति नहीं हो पाई है। हालत यह है कि योजना से बिजली के तार चोरी हो गये हैं। सभी के यंत्र, पाइप खराब पड़े हैं। मशीन आपरेटर भी साइट पर नहीं रहता है। और इस योजना से किसानों को भी कोई लाभ नहीं मिल पा रहा है। 31 लाख 76 हजार रुपये की सरकारी सम्पति बर्बाद हो रही है। जबकि इन सभी योजनाओं से 1360 एकड़ जमीन सिंचित हो सकती है, परन्तु उचित प्रबंध नहीं रहने के कारण एक एकड़ जमीन की सिंचाई नहीं हो पा रही है। जबकि इस योजना से रबी और खरीफ फसल दोनों का उत्पादन हो सकता था।

झाड़खंड में मेगा निवेश के लिए हुए एम ओ यू की सूची

तालिका नं. 1.27

क्र. संख्या	कंपनी का नाम	उत्पादन	छमता	क्षेत्र	योजना करोड़ में
1.	मोनेट इस्पात लिमिटेड नई दिल्ली	1. स्पंज, आयरन 2. स्टील 3. पावर	0.8 Mt PA 7 LTPA 250 MW	हजारीबाग	1400.00
2.	बल्लभ स्टील लिमिटेड लुधियाना	1. स्पंज, आयरन 2. पिग आयरन, 3. स्टील 4. पावर	3 LTPA 1.5 Mt/A 2. LTPA 40. MW	गम्हरिया	288.00
3.	आधुनिक एलोय पावर लिमिटेड जमशेदपुर	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर 4. पीलिटेसन	1.98 Mt/A 2.6 Mt/yr 145 MW 2.0 Mt/yr	कान्ड्रा	5517.00
4.	नीलांचल आयरन एंड पावर लिमिटेड कोलकता	1. स्पंज आयरन 2. पावर 3. स्टील	5 LTPA 25 MW 2.0 LT/A	चांडिल	250.00
5.	पवनजय स्टील पावर लिमिटेड	1. स्पंज आयरम 2. स्टील 3. पावर	2 LTPA 4 LTPA 16 MW	लोहरदगा	200.00
6.	छत्तीसगढ़ इलेक्टिसिटी कंपनी लिमिटेड रायपुर	1. स्पंज आयरन 2. स्टीज 3. पावर	4.5 LTPA 4 LTPA 100 MW	चाईबासा	1000.00
7.	नर्भय राम गैसपोइंट प्राइवेट लिमिटेड	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	1.35 LTPA 0.45 LTPA 8 MW	जमशेदपुर	100.00
8.	झाड़खंड इस्पात प्राइवेट लिमिटेड	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	10.8 LTPA 2.0 LTPA 45 MW	रामगढ़	400.00

9.	बालाजी मेटल एंड स्पंज लिमिटेड कलकता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील	1.8 LTPA 1.0 LTPA	चाईबासा	160.00
10.	अभिजीत इन्फ्रास्ट्रक्चर प्राइवेट लिमिटेड नागपुर	1. स्पंज आयरन 2. स्टील	2.5 LTPA 1.1 LTPA	हजारीबाग	300.00
11.	आर.जी., स्टील प्राइवेट लिमिटेड कोलकाता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	0.9 LTPA 0.6 LTPA 8 MW	पतरातू	200.00
12.	कारपोरेट इस्पात एलोय लिमिटेड कोलकता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	2.5 LTPA 1.1 LTPA	हजारीबाग	300.00
13.	प्रसादग्रुप रिसोर्स प्राईवेट लिमिटेड कोलकता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	1.05 LTPA 2-2 LTPA 12 MW	पतरातू	400.00
14.	होरीजोन एक्सीप लिमिटेड बिलासपुर	1. स्पंज आयरन	4 LTPA	चाईबासा	74.15
15.	प्रकाश इस्पात नई दिल्ली	1. पिग आयरन	2 LTPA	चाईबासा	71.40
16.	स्पेक्ट्रम मरसेन्टाइल	1. स्पंज आयरन	4 LTPA	चाईबासा	74.15
17.	ए एम एल स्टील एंड पावर लिमिटेड चेन्नई	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	15.4 LTPA 2.0 LTPA 312 MW	सरायकेला	1944
18.	चाईबासा स्टील प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली	1. स्पंज आयरन	4 LTPA	पश्चिम सिंहभूम	74.15

19.	अन्नपूर्णा ग्लोबल लिमिटेड कोलकाता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	2.01 LTPA 1 LTPA	पश्चिम सिंहभूम	500.00
20.	इलेक्ट्रो स्टील इंटीग्रेटेड लिमिटेड कोलकाता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	2.0 Mt/A 3.0 Mt/A 210 MW	चन्दनक्यारी बोकारो	8157.00
21.	बालाजी इंडस्ट्रियल प्रोडक्टस लिमिटेड जयपुर	1. स्पंज आयरन	1.20 LTPA	चाईबासा	61.00
22.	रूंगटा माइंस लिमिटेड रूंगाटा हाउस	1. स्पंज आयरन 2. पावर	5.1 LTPA 34 MW	गयसुती पश्चिम सिंहभूम	517.00
23.	राज रिफैक्टरीज प्राइवेट लिमिटेड रांची	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	0.6 LTPA 0.60 LTPA 12 MW	बुन्डू	68.50
24.	सनफलैग आयरन एंड स्टील कंपनी लिमिटेड 401 चिरंजीव टावर नई दिल्ली	1: स्पंज आयरन 2. स्टील	6 LTPA 4.9 LTPA	सरायकेला	937.61
25.	एस्सार स्टील झाड़खंड लिमिटेड	1. पेलेट प्लांट 2: स्पंज आयरन 3. स्टील 4. पावर	8.0 MtPA 7.5 MtPA 6 MtPA 2×500MW	पश्चिम सिंहभूम	9900.00
26.	अनिन्दिता ट्रेडस रांची	1. स्पंज आयरन 2. पावर	3.34 LTPA 12 MW	रामगढ़	300.00
27.	बीएम डबल्यू इंडस्ट्रीज लिमिटेड कोलकाता	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पीग आयरन	2.1 LT/A 0.5 MtPA 0.5 MtPA	चांडिल	591.00

28.	गोयल स्पंज प्राइवेट लिमिटेड	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	1.15 LTPA 600 MW	पश्चिम सिंहभूम	67.00
29.	हिंडालको इंडस्ट्रीज लिमिटेड	1. अल्यूमीनियम प्लांट 2. कैप्टीभ पावर	3.25Lt/Yr 600 MW	लातेहार	7800.00
30.	टेकअल कारपोरेशन यू एस ए	1. अल्युमीनियम प्लांट			6,500.00
31.	जिंदल स्टील एंड पावर लिमिटेड नई दिल्ली	1. पेलेट प्लांट 2. स्पंज आयरन 3. स्टील 4. पावर	6.0 MtPA 5.0 MtPA 5.0 Mt/PA 1000MW	घाटशिला	11500.00
32.	कोन्टी स्टील लिमिटेड नई दिल्ली	1. स्पंज आयरन 2. स्टील	1.2 MtPA 1.14 MtPA	चांडिल	1560.00
33.	कोहिनूर स्टील प्राइवेट लिमिटेड कोलकाता	1. स्पंज आयरन 2. पिग आयरन 3. काल वाशरी 4. पावर प्लांट	2.25 LtPA 1.2 LtPA 1.1 MtPA 46 MW	चांडिल	410.00
34.	भूषण पावर स्टील लिमिटेड	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	1.5 MtPA 3.0 MtPA 900 MW	जमशेदपुर	10500.00
35.	कल्याणी स्टील लिमिटेड पूणे	1. स्पंज आयरन 2. स्टील 3. पावर	2.30 LtPA 10 LtPA 80 MW	सिल्ली राँची	1843.30
36.	टाटा स्टील लिमिटेड, ग्रीन	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	12 Mt/Year	मनोहरपुर चांडिल	42000.00

37.	टाटा स्टील लिमिटेड एक्सपैनसन	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	5 Mt/Year	जमशेदपुर	11000
38.	वी.एस. डेम्पो एंड कंपनी	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	0.5 Mt/year	मनोहरपुर	1016
39.	आर्सेलर मित्तल	1. इंटीग्रेटेड स्टील स्टील प्लांट	12 Mt/Year		40000
40.	जे एस डब्ल्यू स्टील लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	10 Mt/Year	हेसलोंग नीमडीह	35000
41.	रांची इंटीग्रेटेड स्टील लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	1.5 Mt/Year	सिल्ली, मुरी	5452
42.	बर्नपुर सीमेंट लिमिटेड	1. सीमेंट	1 Mt/Year	पतरातू हजारीबाग	500
43.	जुपिटर सीमेंट	1. सीमेंट	600 TPD	सरायकेला खरसांवा	90
44.	वी एस टी टिलर ट्रैक्टर	1. पावर प्लांट	8000 Nos/y	पतरातू हजारीबाग	64
45.	एस्सेल माइनिंग इंडस्ट्रीज लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	1.75 Mt/Yr	सरायकेला खरसावां	1900
46.	सेसा गोआ लिमिटेड पणजी	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	0.5 Mt/Yr	सरायकेला खरसावां	1242
47.	मुकुन्द स्टील मुम्बई	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	2.0 Mt/Yr	बरलंगा हजारीबाग	4335
48.	सीमेंट मैनूफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड कोलकाता	1. सीमेंट प्लांट	1.0 Mt/Yr	पतरातू रामगढ़	450

49.	फीग्रेड एंड कंपनी बड़बिल ओड़िसा	1. इंटीग्रेटेड मिनी स्टील प्लांट	0.3 Mt/Yr	गुड़ा, रंगामारी पश्चिम सिंहभूम	688.8
50.	बोनाई इंडस्ट्रियल कंपनी बड़बिल ओड़िसा	1. इंटीग्रेटेड मिनी स्टील प्लांट	0.25 Mt/Yr	पश्चिम सिंहभूम	819
51.	रूंगटा माइंस लिमिटेड चाईबासा	1. स्टील 2. पावर प्लांट	Additional 4.5 Mt/A 600 MW	पश्चिम सिंहभूम	11320.00
52.	रूंगटा माइंस लिमिटेड चाईबासा	1. सीमेंट प्लांट	2.5 Mt/Yr	पश्चिम सिंहभूम	1312.6
53.	विनी आयरन एंड स्टील उद्योग लिमिटेड कोलकाता	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	0.6 Mt/Yr	सरायकेला खरसावां	880.64
54.	नरसिंह इस्पात लिमिटेड हावड़ा	1. मिनी स्टील प्लांट	0.25 Mt/Yr	खूंटी सरायकेला खरसावां	610
55.	कोर स्टील एंड पावर लिमिटेड	1. मिनी स्टील प्लांट	1.00 Mt/Yr	पश्चिम सिंहभूम	3300
56.	इस्पात इंडस्ट्री लिमिटेड, मुम्बई	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	2.8 Mt/Yr	पश्चिम सिंहभूम	6750
57.	मां चण्डी दूर्गा इस्पात लिमिटेड कोलकाता	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	1.1 Mt/Yr 50 MW	जामताड़ा	1500

58.	जगदम्बा फिस्कल सर्विस लिमिटेड कोलकाता	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	1.1 Mt/Yr 50 MW	दुमका	1500.00
59.	ब्राह्मी इम्पेक्स लिमिटेड कोलकाता	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	1.1 Mt/Yr 50 MW	जामताड़ा	1500
60.	आधुनिक कारपोरेशन लिमिटेड, कोलकाता	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	1.1 Mt/Yr 50 MW	दुमका	1500
61.	ट्रेंगल टेडिंग प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली	1. स्टील प्लांट 2. पावर	0.24 Mt/Yr 41 MW	सरायकेला खंरसावा	300
62.	प्रीमियर फेरो एलोयस सेंचुरी लिमिटेड	1. स्टील प्लांट	1.00 Mt/Yr	रांची	1830
63.	पुष्प स्टील एंड माइनिंग लिमिटेड दिल्ली	1. स्टील प्लांट	0.25 Mt/Yr	चांडिल	361
64.	सार्थक इंडस्ट्री लिमिटेड मुम्बई	1. स्टील प्लांट	2.2 Mt/Yr	राज खरसावां	6300
65.	जिंदल स्टील पावर लिमिटेड	1. स्टील प्लांट	6.0 Mt/Yr	पतरातू	18560
66.	स्वाति उद्योग प्राइवेट लिमिटेड	1. किलकराइजेशन सीमेंट गाइडिंग	1000 TPD	पूर्वी सिंहभूम	94.5
67.	भूषण स्टील लिमिटेड इंटरनेशनल ट्रेडटावर नेहरू प्लेस नई दिल्ली	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	3.1 Mt/Yr 60 MW	गालूडीह पूर्वी सिंहभूम	7000

68.	मां छिन्नमस्तिका स्पंज आयरन लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	1 Mt/Yr 60 MW	बिनझर रामगढ़	1840
69.	मां छिन्नमस्तिका एंड प्राइवेट लिमिटेड जतराटांड कोकर	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट 2. पावर	0.128 Mt/Yr 10 MW	रामगढ़	353.53
70.	भी. एम. सलगावकर एंड ब्रदर्स प्राइवेट लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड मीन स्टील प्लांट 2. पावर	0.5 Mt/Yr 100 MW	घाटशिला	847.00
71.	रामगढ़ स्पंज आयरन लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	0.5 Mt/Yr	रामगढ़	785.00
72.	एस.के.एस. इस्पात एंड पावर लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	1.1 Mt/Yr	कांची रांची	3174.00
73.	जूपिटर आयरन इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड	1. इंटीग्रेटेड स्टील प्लांट	0.25 Mt/Yr	रामगढ़	665.00
74.	जिंदल स्टील एंड पावर लिमिटेड जिंदल सेंटर, 12 भीकाजी कामाप्लेस नई दिल्ली-66	अल्यूमीना रिफाइनरी प्लांट	1.4 Mt/Yr	मैकलुस्कीगंज	3350.00
				Total	293360.33

तालिका नं. 1.28

मेगा उद्योगों की स्थापना हेतु जिडको को प्राप्त भ-अर्जन के प्रस्ताव के संबंध में विभिन्न जिलों में लंबित अधियाचना की अद्यतन स्थिति

क्र.	कम्पनी का नाम	आवंटन हेतु निधारित भूमि (एकड़ में)	जिला एवं प्रखण्ड	रैयति	सरकारी	वन	उपायुक्त द्वारा 80% राषि की मांग की गई है?	अभ्युक्ति
1.	सर्वश्री टाटा स्टील लि. (ग्रीन फिल्ड प्रोजेक्ट)	24500	सरायकेला खरसांवा, गम्हरिया	6888.20	229.80	....	हाँ	1. विभागीय पत्रांक 228 दिनांक 08.02.2007 के द्वारा 6888.2(एकड़ रैयती भूमि हेतु अधियाचना उपायुक्त, सरायकेला-खरसांव को भेजी गयी है। उपायुक्त, सरायकेला-खरसांवा के द्वारा 425.76 एकड़ रैयती भूमि हेतु 80 प्रतिशत की राषि 3. 12,23 करोड़ की मांग की गई है।
			पं. सिंहभूम मनोहरपुर	4576.00	....	....	नहीं	
								2. विभागीय पत्रांक 229 दिनांक 08.02.2007 के द्वारा 229.8(एकड़ सरकारी भूमि के हस्तांतरण हेतु अधियाचना भेजी गयी है।
2.	सर्वश्री कोहिनूर स्टील प्रा. लि.	160	सरायकेला-खरसांवा, चाण्डिल	70.00	0.73	....	हाँ	54.49 एकड़ रैयती भूमि अधिग्रहण हेतु 80 प्रतिशत राशि रु. 43,37,507.00 जमा किया गया है।
3.	सर्वश्री जे.एस. डब्ल्यू. स्टील लिमिटेड	9000	सरायकेला-खरसांवा, नीमडीह/ ईचागढ़ प्रखण्ड	7481.01	1263.23	93.47	हाँ	उपायुक्त, सरायकेला-खरसांवा द्वारा 3386.10 एक रैयती भूमि वे अर्जन हेतु 80 प्रतिशत की राशि रु. 62.22 करोड़ की मांग क गई है।
4.	सर्वश्री आधुनिक एल्वॉयज एण्ड पावन लिमिटेड	1584	सरायकेला-खरसांवा, गम्हरिया अंचल	258.99	188.83	....	हाँ	80 प्रतिशत राशि लगभग 11.00 करोड़ रु. कंपनी के द्वारा जम किया जाना है। प्रथम चरण का उत्पादन प्रारम्भ किया गया है।

5.	सर्वश्री भूषण पवार स्टील लिमिटेड	3450	पूर्वी सिंहभूम, पोटका प्रखण्ड	2404,02	483.52	....	हाँ	450 एकड़ सरकारी भूमि हस्तांतरण हेतु 80 प्रतिशत की राशि लगभग 176 लाख जमा किया गया है।
6.	सर्वश्री जिन्दल स्टील एण्ड पावर लिमिटेड	5750	पू. सिंहभूम, पोटका, घाटशिला	3360.17	....	....	नहीं	इस कंपनी के द्वारा पतरातु स्थित प्रोजेक्ट की स्थापना की जा रही है।
7.	सर्वश्री कौंटी स्टील लिमिटेड	1400	पूर्वी सिंहभूम, घाटशिला	783.51	150 259.14	66.217 33.92	हाँ	1. 74.59 एकड़ भूमि के अर्जन हेतु 80 प्रतिशत की राशि 49,27,680.00 जमा किया गया है। 2. 66.217 एकड़ एवं 33.92 एकड़ वन भूमि के अपयोजन हेतु कार्यकारी निदेशक बंजर भूमि विकास बोर्ड डोरण्डा को प्रस्ताव भेजी गयी है।
8.	सर्वश्री रूंगटा माइन्स लिमिटेड	139.05	सरायकेला-खरसांवा, चलियामा, राजनगर प्रखण्ड	99.82	33.27	....	हाँ	विभागीय पत्रांक 3026 दिनांक 11.12.06 के द्वारा उपायुक्त, सरायकेला-खरसांवा को अधियाचना भेजी गयी है। उपायुक्त, सरायकेला-खरसांवा द्वारा 106.95 एकड़ रैयती भूमि के अर्जन हेतु 80 प्रतिशत की राशि 2.46 करोड़ की मांग की गई है।
9.	सर्वश्री अनंदिता ट्रेडर्स एण्ड इनभेस्टमेंट लि.	140	हजारीबाग, चुरमु एवं माण्डु	30	100	....	नहीं	विभागीय पत्रांक 3155 दिनांक 20.12.06 तथा 3156 दिनांक 20.12.06 द्वारा 130 एकड़ भूमि के आवंटन हेतु अधियाचना उपायुक्त, हजारीबाग को भेजी गयी है।
10.	सर्वश्री हिण्डालको इण्ड. लिमिटेड (ग्रीन फिल्ड प्रोजेक्ट)	5900	लातेहार एवं चन्दवा ब्लॉक तुम्बागढ़ा	4121.53	774.43	425.89	हाँ	48,21,61,514.00 रु. कंपनी के द्वारा भूमि की 80 प्रतिशत राशि जमा किया जाना है।

11.	सर्वश्री कोर स्टील एण्ड पावर लिमिटेड	1000	पूर्वी सिंहभूम, घाटशिला	....	661.04	....	नहीं	विभागीय पत्रांक 818 दिनांक 19.04.2007 के द्वारा 661.04 एकड़ सरकारी भूमि के हस्तांतरण हेतु अधियाचना भेजी गयी है।
12.	सर्वश्री इलेक्ट्रो स्टील कास्टिंग लिमिटेड़	2000	बोकारो, चंदनक्यारी	872.25	639.99	....	हाँ	कंपनी के द्वारा 872.25 एकड़ रैयती भूमि के 80 प्रतिशत की राशि रु. 17.83,10,445.00 जमा किया जाना है।
13.	सर्वश्री सी.ई.एस.सी. लिमिटेड, कोलकाता	1000	दुमका	327.90	....	....	हाँ	विभागीय पत्रांक 1854 दिनांक 18.09.2007 के द्वारा 327.90 एकड़ रैयती भूमि के अधिग्रहण हेतु अधियाचना भेज गयी है।
14.	सर्वश्री एसेल माईनिंग एण्ड इण्ड. लि.,	500	जगन्नाथपुर, प. सिंहभूम	290.45	184.56	....	नहीं	विभागीय पत्रांक 1809 दिनांक 13.09.2007 के द्वारा 290.45 एकड़ रैयती भूमि तथा पत्रांक 1810 दिनांक 13.09.2007 के द्वारा 184.56 एकड़ सरकारी भूमि के हस्तांतरण/अधिग्रहण हेतु अधियाचना भेजी गयी है।
15.	सर्वश्री एस्सार स्टील झारखण्ड लि.	3000	चाईबासा, प. सिंहभूम	1220.65	....	....	नहीं	विभागीय पत्रांक 2056 दिनांक 09.10.2007 के द्वारा 2120.65 एकड़ रैयती भूमि के अधिग्रहण हेतु अधियाचना भेजी गयी है।
16.	सर्वश्री मॉनेट इस्पात एण्ड इनर्जी लि.	500	कटकमसांडी, हजारीबाग	461.06	42.31	....	नहीं	विभागीय पत्रांक 2540 दिनांक 10.12.2007 के द्वारा 461.06 एकड़ रैयती भूमि तथा पत्रांक 2541 दिनांक 10.12.2007 के द्वारा 42.31 एकड़ सरकारी भूमि के हस्तांतरण/अधिग्रहण हेतु अधियाचना उपायुक्त, हजारीबाग को भेजी गयी है।
17.	सर्वश्री बोनाई इण्ड. कंपनी लि.	250	केन्दुबेड़ा, प. सिंहभूम	256.57	....	....	नहीं	विभागीय पत्रांक 2544 दिनांक 10.12.2007 के द्वारा 256.57 एकड़ रैयती भूमि के अधिग्रहण हेतु अधियाचना उपायुक्त, प. सिंहभूम को भेजी गयी है।

भारत सरकार की महत्वाकांक्षी जलविद्युत कोइलकारो परियोजना

भारत सरकार द्वारा प्रस्तावित कोइलकारो जल विद्युत परियोजना दरअसल कोइल और कारो दो नदियों को लेकर पनबिजली बनाने के लिए तैयार की गई थी. इस परियोजना से तीन जिला रांची, गुमला और पश्चिम सिंहभूम के आदिवासी गांव प्रभावित होगें. रांची जिला के तोरपा और रनिया प्रखंड और गुमला जिला के गुमला, बसिया, पालकोट, कामडारा, सिसई, और पश्चिम जिला के सोनुवा प्रखंड प्रभावित क्षेत्र के तहत आते हैं. ये सभी प्रखंड राज्य के आदिवासी बहुल क्षेत्र हैं. सर्वेक्षण से कोइलकारो जनसंगठन को प्राप्त जानकारी के मुताबिक इस क्षेत्र में मुण्डा, उरांव, खड़िया, लोहरा, महली, चीक बड़ाईक, खेरवार और हो जनजातियां निवास करता है. इन सभी जनजातियों की भाषा संस्कृति रीति रिवाज सामाजिक परम्पराएं अलग अलग है. यहां की स्थानीय भाषा सादरी या नागपुरी है. मुण्डा लोग मुण्डारी में बात करते हैं उरांव लोग कुडूख में बात करते हैं. मुण्डा गांवों में मुण्डारी परम्परा व्यवस्था के तहत पड़हा राजा गांव की प्रशासनिक, सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था चलाते हैं. खड़िया समूह के लोग गुमला जिला में हैं. उनकी परम्परा और भाषा रीति रिवाज भी भिन्न है.

चीक बड़ाईक समूह का परम्परागत पेशा कपड़ा बनाना है. लोहार लोहे का औजार बनाने का काम करते हैं.

परम्परागत तौर पड़हा शासन के तहत ही गांवों में रहनेवाले तमाम जातियों को पड़हा के तहत ही रहना होता है. पूरे इलाके में पारम्पारिक तरीके से सिंगबोंगा, इकिर बोंगा और बुरूबोंगा की पूजा होती है,

रांची मुख्यालय से लगभग 76 किलोमीटर की दूरी पर इस परियोजना को बनाए जाने की योजना है। ऐतिहासिक रूप से यह बिरसा विद्रोह का

इलाका है। यह मुख्यतः मुण्डा बहुल क्षेत्र है साथ ही अन्य आबादी के लोग भी यहां निवास करते हैं। जंगल से मिलनेवाली जड़ी बूटियां, साल, बेर, चिरौंजी, कुसुम डोरी आदि से वे गुजारा करते हैं।

कोइलकारो जनसंगठन के कार्यकर्त्ताओं ने सर्वेक्षण कर बताया कि 256 गांव इससे डूब जाएंगे और आस पास के गांव प्रभावित होगें। परन्तु सरकार 122 गांवों के डूबने की बात कहती है. सरकार ने सर्वे में टोलों को छोड़ दिया है।

कोइल कारो जल विद्युत परियोजना भू अर्जन एवं पुनर्वास निदेशालय रांची के द्वारा एक पुनर्वास पैकेज जारी किया गया था। इसमें हमारा संकल्प बताते हुए सरकार ने जो घोषणा की थी उसमें विस्थापितों का पूर्ण पुनर्वास आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पुनर्वास के वायदे, बढ़े दर से पूरा मुआवजा, प्रशिक्षण व नियोजन, सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का अक्षरशः पालन और महत्वपूर्ण निर्णयों में प्रभावितों विस्थापित व्यक्तियों से विमर्श करने का आश्वासन दिया गया है। निदेशालय ने चार पृष्ठों वाले पन्ने में पुनर्वास पैकेज की सूचना जारी करते हुए लिखा है कि विस्थापितों और प्रभावितों के लिए मुआवजा, पुनर्वास तथा अन्य सुविधाओं की सूचना कोइलकारो जल विद्युत परियोजना बिहार राज्य के छोटानागपुर क्षेत्र के रांची, गुमला, तथा पश्चिम सिंहभूम जिलों में अन्तर्निहित होगी तथा प्रथम चरण में 710 मेगावाट व द्वितीय चरण में 32 मेगावाट विद्युत का उत्पादन करेगी. परियोजना का निर्माण नेशनल हाइड्रोइलेक्ट्रिक पावर कारपोरेशन के द्वारा अपने आठ वर्षों में वर्ष 1999 तक 1338 करोड़ रू. की लागत से पूर्ण करने का प्रस्ताव केंद्रीय सरकार के द्वारा स्वीकृत किया जा चुका है। विद्युत शक्ति की अपार कमी से त्रस्त इस क्षेत्र बिहार राज्य और पूर्वी विद्युत ग्रिड हेतु यह परियोजना एक वरदान सिद्ध होगी। बिहार के विद्युत उत्पादन में जल (हाइड्रो) विद्युत का प्रतिशत मात्र 8 है जो आदर्श स्थिति में 40 होना चाहिएं। जल विद्युत परियोजना जहां जल विद्युत उत्पादन में स्थायित्व प्रदान करते हैं वहां इससे उत्पन्न प्रदूषण लगभग नगण्य होता है।

कोइलकारो परियोजना से विस्थापित और प्रभावित होने वाले परिवारों को मुआवजा देने तथा उनका पुनर्वास करने के लिए सरकार के द्वारा एक योजना तैयार की गई है। सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा वर्ष 1989 में इस संबंध में महत्वूपर्ण निर्णय भी दिए गए हैं। परियोजना के विस्थापितों के आर्थिक,

सामाजिक, सांस्कृतिक व धार्मिक पुनर्वास हेतु हम कृत संकल्प हैं। अर्जित भूमि का मुआवजा बढ़ी दर से देने का प्रस्ताव भी बिहार सरकार ने स्वीकार किया है। पुनर्वास से संबंधित सभी महत्वपूर्ण निर्णयों में प्रभावितों विस्थापित व्यक्तियों से लगातार विमर्श किया जाएगा। ऐसी बातें सरकार ने अपने संकल्प पर्चा के जरिए ग्रामीणों को पहुंचाने का काम किया था।

परियोजना के लगभग 55 हजार एकड़ भूमि अर्जित करनी होगी जिसमें लगभग 35 से 40 हजार एकड़ भूमि रैयती होगी। भू –अर्जन कानून के अन्तर्गत जमीन का मूल्य उसी किस्म की जमीन की फसल के 15 सालों की उपज के मूल्य के आधार पर निर्धारित किया जाता है। बढ़ी दर के पश्चात् जमीन के मूल्य का अनुपात का विवरण दिया गया और बताया गया कि दोन और टांड वाली जमीन की कीमत बढ़ाई गई है।

पूर्व में दोन 2 और दोन 3 तथा टांड़ 2 और 3 की कीमत में बढ़ोतरी की गई है। इसे हम दूसरे शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि पूर्व में दोन 1 का मूल्य 20 होने पर दोन 2 एवं 3 का मूल्य क्रमशः16 एवं 10 होता जबकि वर्त्तमान में यदि दोन 1 का मूल्य 20 होगा तो दोन 2 एवं 3 का मूल्य क्रमश 18 व 14 होगा। इसी प्रकार पूर्व में टांड़ 1 का मूल्य 8 होने पर टांड 2 एवं 3 का मूल्य क्रमशः 4 एवं 1 होता पर वर्त्तमान में टांड़ 1 का मूल्य 8 होने पर टांड़ 2 का मूल्य 6 और टांड 3 का मूल्य 4 होगा। 1978 में प्रति एकड़ लगभग 6, 250.00 रू. दोन 1 की कीमत तय की गई इसे 1990 में संशोधित कर 28. 505.00 रू बढ़ाई गई। दोन 2 की कीमत 1978 में 5000 रू. थी जो 1990 में 25,654 रू. बढ़ाई गई।

दोन 3 की कीमत 1978 में 3125 रू थी जो 1990 में संशोधन के बाद 19,953 की गई। टांड 1 की कीमत 1978 में प्रति एकड़ 2500 रू थी जो कि 1990 में संशोधन कर 22,804 रू. बढ़ाई गई। टांड 2 की कीमत 1978 में 1200 रू. थी जो कि 1990 में बढ़ाकर 17,103 में कर दी गई। टांड 3 की कीमत 1978 में 212 रू. थी जो कि 1990 में बढ़ाकर 11402 रू. कर दी गई।

इस प्रचार पत्र में सबसे पहले सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक पुनर्वास की बात कही गई है।

सामाजिक सांस्कृतिक धार्मिक पुनर्वास

1.2 में कहा गया कि परियोजना के लिए भू अर्जन एवं पुनर्स्थापन के कारण यदि पूजा स्थल मंदिर मस्जिद चर्च आदि से दूर अन्यत्र विस्थापित

लोगों को बसाया जाएगा जो भू अर्जन अधिनियम के अनुसार उनका मूल्यांकन कर नए पुनर्वास स्थल पर अथवा वर्त्तमान स्थल पर ही यदि पूजा स्थल का अतिक्रमण किया जा रहा है समान मूल्य के पूजा स्थल के निर्माण के लिए सरकार खर्च देगी। इसका निर्माण ग्राम समिति के पर्यवेक्षण में किया जाएगा। इसी प्रकार श्मशान घाट एवं कब्रगाह के लिए भी स्थानों की व्यवस्था की जाएगी।

1.3 नए स्थल पर सरना तथा शतबोहरी या हड़गड़ी परम्परागत तरीके से बैठाया जाएगा एवं सरकार इसका खर्च वहन करेगी। सरना का ऐतिहासिक महत्व है तथा उसकी मर्यादा सुरक्षित रहे। अतः अर्जित किए गए सरना का मुआवजा के रूप में जुर्माना दिया जाएगा।

1.4 सभी पुनर्वास स्थलों पर आवश्यकतानुसार पेयजल कुआं, प्राथमिक विद्यालय, चिकित्सा केंद्र आदि नागरिक सुविधाओं का प्रबंध किया जाएगा।

1.5 विस्थापित होनेवाले गांवों में अखाड़ा, धुमकुड़िया, एवं सामुदायिक भवन, प्लेटफार्म वगैरह की व्यवस्था की जाएगी।

1.6 जलमग्न होनेवाले क्षेत्रों में बसे परिवारों को गांवों, खूंट एवं किलि के मुताबिक निकटवर्त्ती जगहों में बसाया जाएगा. ताकि उनका सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप बना रहे।

1.7 परियोजना से प्रभावित परिवारों के पुनर्वास स्थल को उनके पुराने गांव का नाम दिया जाएगा।

1.8 पहनाई, मुण्डारी तथा महतो जमीन अर्जित होने पर पुनर्वास स्थल पर उनके लिए कुछ जमीन देकर उनके परम्परागत अधिकारों को बरकरार रखा जाएगा।

1.9 भुईंहरी तथा खूंटकट्टी के परम्परागत विशेषाधिकार प्राप्त परिवारों को समतुल्य विशेषाधिकार नए पुनर्वास स्थल पर दिए जाएंगे। इसके लिए छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम 1908 में यथोचित संशोधित किया जाएगा।

1. आर्थिक पुनर्वास

2.1 परियोजना से प्रभावित लोगों को अर्जित भूमि का मुआवजा 15 वर्षों के पूंजीकृत मूल्य के आधार पर निर्धारित किया जाएगा।

2.2 पुनर्वास स्थल पर हरेक विस्थापित परिवार को 25 डिसमिल जमीन बसने के लिए निःशुल्क दी जाएगी। जो विस्थापित परिवार आवास

के लिए जमीन नहीं लेना चाहेंगें, उन्हें इतनी जमीन का मुआवजा दिया जाएगा। यह उल्लेखनीय है कि पुनर्वास के पूर्व किसी भी व्यक्ति को विस्थापित नहीं किया जाएगा।

2.3 परियोजना के लिए आवश्यक संपूर्ण भूमि के अर्जन की प्रक्रिया और मुआवजा का भुगतान तीन वर्षों में पूरा किया जाएगा, किन्तु हर हालत में मुआवजा का भुगतान वास्तविक विस्थापन या जमीन दखल लेने के पूर्व किया जाएगा।

2.4 विस्थापित होनेवाले परिवारों के मकानों, वृक्षों, कुओं एवं तालाबों के लिए मुआवजा का भी भुगतान तीन वर्षों में कर दिया जाएगा।

2.5 मुआवजा का भुगतान रैयतों को चेक द्वारा किया जाएगा जिसकी 90 प्रतिशत सावधि जमा में रखी जाएगी तथा दस प्रतिशत उनके बचत खाते में रखा जाएगा। सावधि जमा में एवं बचत खाते से रकम निकासी उपायुक्त अथवा उनके द्वारा प्राधिकृत पदाधिकारी की पूर्वानुमति से ही की जा सकेगी। परन्तु आपात स्थिति में बैंक उनके लेखे की राशि के विरूद्ध ऋण की व्यवस्था करेगा। रिजर्व बैंक के वर्त्तमान निर्णय के अनुसार अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति की सावधि जमा में रखी राशि के अवधि निक्षेप निकासी पर सूद की कटौती नहीं की जाएगी। सावधि जमा से राशि की निकासी कृषि भूमि अथवा अन्य उत्पादक तथा आर्थिक उद्यमों के लिए ही की जा सकेगी।

2.6 कोइलकारो परियोजना में राष्ट्रीय जल विद्युत निगम द्वारा श्रेणी 4 के पदों पर 100 प्रतिशत भर्त्ती तथा श्रेणी 3 के पदों पर 75 प्रतिशत भर्त्ती विस्थापित परिवारों के योग्य व्यक्तियों में से की जाएगी। इस प्रकार की नियुक्ति केंद्रीय सरकार द्वारा समय समय पर निर्गत अनुदेशों बंधेजों एवं शर्त्तों के अधीन की जाएगी।

2.7 प्रत्येक विस्थापित परिवार के एक सदस्य को योग्य पाने पर श्रेणी 4 या लिपिक वर्ग में नौकरी दी जाएगी। यह शर्त्त इस तरह के पद की उपलब्धता पर ही आधारित होगी। नौकंरी देने का दायित्व 25 प्रतिशत राष्ट्रीय जल विद्युत निगम का रहेगा तथा 75 प्रतिशत नियोजन बिहार सरकार अपने विभिन्न विभागों एवं संस्थाओं में करेगी।

2.8 इसके साथ श्रेणी –2 के पदों पर एन. एच. पी. सी. द्वारा प्रभावित विस्थापित लोगों की नियुक्ति प्राथमिकता के आधार पर करने की अनुशंसा केंद्रीय सरकार को भेजी जाएगी।

2.9 कंडिका 2.6 का प्रावधान कोइलकारो परियोजना के भू–अर्जन एवं पुनर्वास निदेशालय के द्वारा की जाने वाली नियुक्तियों पर भी लागू होगा, परन्तु ये नियुक्तियां आरक्षण संबंधी राज्य सरकार की नीतियों के अनुसार की जाएंगी। यदि विस्थापित व्यक्तियों में से अपेक्षित योग्यता वाले उम्मीदवार नहीं मिले तो नियुक्ति उन्हीं प्रभावित परिवारों के सदस्यों से की जा सकेगी। जिनकी जमीन अर्जन के बाद 3 एकड़ से कम बच गई हो।

2.10 परियोजना से विस्थापित व्यक्तियों को चतुर्थ एवं तृतीय श्रेणी की नौकरियों में नियुक्ति के लिए सम्पूर्ण छोटानागपुर के अन्य विभागों में उच्चतम प्राथमिकता देते हुए प्रत्येक परिवार के एक एक व्यक्ति को नौकरी दी जाएगी।

साधारणतः इस वर्ग की नियुक्तियों में शैक्षणिक योग्यता / खेल कूद की योग्यता उम्र पर कुछ अंक निर्धारित किए जाते हैं। विस्थापित परिवार के सदस्यों को दस बोनस अंक दिए जाएंगे।

2.11 ऐसे विस्थापित परिवार जिनके एक सदस्य को भी तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के पद पर नियुक्ति नहीं हो सकेगी वैसे परिवारों के एक सदस्य को अकुशल कार्य में लगाया जाएगा।

2. उद्योग – धंधों में पुनर्वास

3.1 परियोजना से प्रभावित ग्रामों के इर्द गिर्द कुटीर उद्योग तथा लघु उद्योग बैठाने तथा विद्युतिकरण में उच्च प्राथमिकता दी जाएगी। विस्थापित लोगों द्वारा छोटे छोटे उद्योग धंधों को संचालित करने के लिए उर्जा एवं आवश्यक सरकारी सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएगी। परियोजना क्षेत्र में एक प्रौद्योगिक प्रांगण खोला जाएगा। उस क्षेत्र में परिवहन का अनुज्ञा पत्र विस्थापित प्रभावित व्यक्तियों के लिए रखा जाएगा।

3.2 परियोजना के अन्तर्गत मिट्‌टी एवं पत्थर काटने का कार्य एवं दस लाख रू. का ठीका विस्थापित एवं प्रभावित लोगों को आपसी प्रतियोगिता तथा यदि नियमानुसार आवश्यक हुआ तो विचार विमर्श के आधार पर दिया जाएगा एवं ऐसे कार्यों के लिए उनसे अग्रधन नहीं लिया जाएगा। परन्तु उनके कार्य के प्रगति के आधार पर जो भुगतान होगा। उसी से अग्रधन एवं प्रतिभूमि जमा क्रमशः काटा जाएगा।

3.3 परियोजना में ठीकेदारी की नियुक्ति की शर्त रहेगी कि वे स्थानीय परिवारों के सदस्यों को कार्यो पर लगावें।

3.4 परियोजना के निर्माण स्थल एवं कालोनी में अस्सी प्रतिशत दुकानें विस्थापित प्रभावितों लोगों के लिए तथा बीस प्रतिशत प्रभावित लोगों के लिए आरक्षित रखी जाएगी।

3.5 जलाशय के इर्द गिर्द कुआं के पानी का स्तर उंचा होने के कारण विद्युतिकरण के बाद बची हुई जमीन में कृषि का उत्पादन बढ़ाया जा सकेगा। लघु सिंचाई विभाग द्वारा बड़े व्यास का कूप या अन्य सिंचाई की सुविधाओं का निर्माण कराया जाएगा। ट्रांसवेसिन चैनल से सिंच्राई की संभावनाओं को ध्यान में रखा जाएगा।

3.6 प्रभावित क्षेत्रों से विशेष गव्य विकास एवं अन्य पशुपालन संबंधी योजनाएं ली जाएंगी।

3.7 ऐसे परिवार को जमीन अधिग्रहण के बाद भूमिहीन सीमांत एवं लघु कृषक की श्रेणी तथा केंद्र सरकार द्वारा परिभाषित गरीबी रेखा से नीचे आते हैं उन्हें समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम अथवा इन श्रेणियों के लिए उपलब्ध अन्य सरकारी योजना का लाभ अभी से दिया जाएगा।

3. प्रशिक्षण एवं नियोजन

4.1 जिन विस्थापित परिवारों को नौकरी नहीं मिल सकेगी उन्हें पुनर्वास स्थल पर सरकार के सामान्य विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत छोटे छोटे उद्योग धंधों को शुरू करने के लिए प्रशिक्षण एवं तकनीकी सहायता दी जाएगी। इसके लिए सामान्य विकास कार्यक्रम एवं पुनर्वास कार्यक्रम में समन्वय किया जाएगा. इसके लिए एक कालबद्ध योजना तैयार कर शीघ्रातिशीघ्र प्रारंभ की जाएगी।

4.2 परियोजना से प्रभावित लोगों को विभिन्न शिल्पों में प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की जाएगी। इसके लिए कोनबीर में पूर्व में ही एक औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान खोला गया है। कोनबीर के अतिरिक्त रांची आई. टी. आई. में विस्थापित प्रभावित व्यक्तियों के लिए कुछ सीटें सुरक्षित रखी जाएंगी।

4.3 एन. एच. पी. सी. अपने वर्कशॉप एवं मशीन में औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान के प्रशिक्षार्थियों को व्यावहारिक प्रशिक्षण देगा। जब तक एन. एच. पी. सी. अपने कार्यालय में व्यावहारिक प्रशिक्षण की व्यवस्थ नहीं करता है। तब तक उनके प्रशिक्षण की व्यवस्था आई. टी. आई. रांची तथा अन्य उद्योगों में की जाएगी।

4.4 परियोजना से प्रभावित लोगों को नौकरी में सुविधा पाने हेतु परियोजना मुख्यालय तोरपा में अलग से एक नियोजनालय स्थापित किया गया है।

4.5 प्रभावित विस्थापित होनेवाले विद्यार्थियों को विद्यालय स्तर पर चयन करके उद्योग धंधों अथवा नियोजन को प्रशिक्षण एवं सहायता दी जाएगी।

4. अन्य सुविधाएं

5.1 विस्थापित होनेवाले परिवारों को परिवहन व्यय के लिए 750 रू. का अनुदान दिया जाएगा.परिवहन की सुविधा एन. एच. पी. सी. निःशुल्क उपलब्ध कराएगी।

5.2 भू – अर्जन के लिए देय मुआवजे की राशि के अलावे निम्नलिखित दर पर अनुदान दिया जाएगा।

क – 500 रू. का मुआवजा पाने वाले परिवार को 500 रू. का अनुदान

ख – 500 रू. से अधिक 2000 रू. तक 500 रू. तथा 500 रू. से उपर के मुआवजे की शेष राशि का एक तिहाई।

ग – 2000 रू. से अधिक 1000 रू. मात्र

5.3 ऐसे विस्थापित होनेवाले परिवार जो पूर्णतः कृषि पर निर्भर रहते हैं उस परिवार के किसी सदस्य को नौकरी अन्यथा उद्योग धंघों में नियोजन नहीं दिया जा सकेगा, उनको जमीन के मूल्य भुगतान के आधार पर भूमि क्रय विक्रय करने में सहायता सरकार करेगी.ऐसी जमीन में सिंचाई की व्यवस्था की जाएगी।

यदि पुनर्वास होनेवाले ग्राम या उसके इर्द गिर्द भू – हदबंदी अधिनियम के अन्तर्गत अधिशेष भूमि मिलती है तो उक्त अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार विस्थापित व्यक्तियों को बंदोबस्त की जा सकेगी। रांची तथा गुमला जिला में विस्थापित होनेवाले परिवारों के साथ सरकार की नीति के अनुसार कृषि कार्य के लिए बंदोबस्त की जाएगी।

5.4 राजस्व विभाग के परिपत्र 3125 दिनांक 26.08.85 के अनुसार कोड़कर भूमि का मुआवजा दिया जाएगा।

5.5 कोइलकारो परियोजना से प्रभावित परिवारों को सर्वेक्षण अविलम्ब कर हर प्रभावित परिवार को एक निःशुल्क पहचान पत्र दिया जाएगा, जिसमें परिवार के सदस्यों का विवरण, अधिग्रहित भूमि / जमीन आदि का ब्यौरा देते

हुए पुनर्वास/अन्य देय सुविधाओं का उल्लेख किया रहेगा। नौकरी की सुविधा या उद्योग धंधों की सुविधा या अन्य प्रकार की सुविधाओं के लिए परिचय पत्र को उपयोग में लाया जाएगा।

6.1 पुनर्वास की सुविधाओं के लिए एक विशेष पुनर्वास अधिनियम बनाया जाएगा।

यह पुनर्वास पैकेज 16 दिसम्बर 1991 को रांची में जारी किया गया। डा. देवेन्द्र कुमार तिवारी, भा. प्र. से कोइलकारो जल विद्युत परियोजना रांची के तत्कालीन भू अर्जन सह पुनर्वास निदेशक थे।

इस पुनर्वास पैकेज को तब घोषित किया गया जब 1989 में सर्वोच्च न्यायालय ने बिना पुनर्वास के विस्थापन करने पर रोक लगा दी थी। लेकिन इस पैकेज को सरकार जनता तक नहीं ले जा सकी और इस संदर्भ में कोई प्रचार प्रसार नहीं हो सका। नतीजा यह निकला की परियोजना के विरोध की आवाज बुलंद से बुलंद होती चली गई और जनगोलबंदी की वजह से सरकार को अपने पांव पीछे की ओर ले जाना पड़ा।

कोइलकारो परियोजना के तहत तोरपा प्रखण्ड के विभिन्न गांवों से अधिग्रहण की जानेवाली जमीन का विवरण इस प्रकार है।

तोरपा प्रखंड के लोहाजिमी गांव का 53 प्रतिशत यानी 664 एकड़, डेरांग गांव का 35 प्रतिशत यानी 430 एकड़ जमीन, कोचा गांव का 84 प्रतिशत यानी कि 1189 एकड़, गुटूहातू गांव का 87 प्रतिशत यानी कि 1069 एकड़, कालेट गांव का 36 प्रतिशत यानी कि 300 एकड़ जमीन,चम्पाबाहा गांव का 21 प्रतिशत यानी कि 125 एकड़, रोनहे गांव का 1 प्रतिशत यानी 16.93 एकड़, तपकारा गांव का 28 प्रतिशत यानी कि 13 एकड़, कोइनारा गांव का 4 प्रतिशत यानी कि 45.50 एकड़ जमीन अधिग्रहित की जाएगी। रनिया प्रखंड के बालाकेल गांव की 17 प्रतिशत, चिडूल गांव की 76 प्रतिशत, बन्दापारी गांव की 79 प्रतिशत, तालदा गांव की 83 प्रतिशत, जयपुर गांव की 89 प्रतिशत, बिरहोर चुआं की 1 प्रतिशत, अरेंगटोली गांव की 99 प्रतिशत, जापुत गांव की 100 प्रतिशत, केला गांव की 84 प्रतिशत, गरधातु गांव की 56 प्रतिशत, कोड़ाकेल गांव की 20 प्रतिशत, बानाई गांव की 98 प्रतिशत, सिदाम गांव की 5 प्रतिशत, इटाम गांव की 99 प्रतिशत, डोयेनगर गांव की 9 प्रतिशत, गोदरा गांव की 5 प्रतिशत जाराकेल गांव की 7 प्रतिशत जाराकेल गांव की 43 प्रतिशत भूमि अधिग्रहित की जाएगी।

बसिया जलाशय के तहत अधिग्रहित की जानेवाले बसिया प्रखंड के गांवों में तेतरा गांव की जमीन का 92 प्रतिशत, सोंलेंगबिरा गांव की 9 प्रतिशत, साईटोली की 57 प्रतिशत, सिरींबिरा गांव की 1 प्रतिशत, साएदा गांव की 66 प्रतिशत, ओरेंग गांव की 31 प्रतिशत, राईकेरा गांव की 36 प्रतिशत, मातुरडेगा की 17 प्रतिशत, माझकेरा की 78 प्रतिशत, लोआकेरा 43 प्रतिशत, निनाई गांव की 96 प्रतिशत, सुरजपुर की 11 प्रतिशत, कुलुसेरा की 98 प्रतिशत, तालेसेरा गांव की 44 प्रतिशत, मुकाई गांव की 7 प्रतिशत, जोलो गांव की 70 प्रतिशत, बनतरिया गांव की 51 प्रतिशत, किरिंगलोआ की 40 प्रतिशत, पोकता गांव की 48 प्रतिशत, नारेकेला की 17 प्रतिशत, बोंगालोया की 95 प्रतिशत, टेंगरा गांव की 68 प्रतिशत, मामरला गांव की 17 प्रतिशत, लालपुर गांव 2 प्रतिशत, अकबा गांव की 7 प्रतिशत जमीन, केदली गांव की 2 प्रतिशत, लुंगटू गांव की 57 प्रतिशत जमीन, ओलमुण्डा गांव की 61 प्रतिशत, चौली गांव की 10 प्रतिशत, कुलाबिरा की 9 प्रतिशत, चरका टांगर की 11 प्रतिशत, कोलाम्बी की 13 प्रतिशत, पातिया की 6 प्रतिशत, कोयेनजारा गांव की 22 प्रतिशत, केलुगा गांव की 55 प्रतिशत, कुटाशी गांव की 73 प्रतिशत, बेला गांव की 16 प्रतिशत, समसेरा गांव की 0.6 प्रतिशत, मुरकुन्दा गांव की 8 प्रतिशत, रेकमा गांव की 47 प्रतिशत, कुतुआ गांव की 82 प्रतिशत, आमकुली गांव की 19 प्रतिशत, पोरहा गांव की 11 प्रतिशत, आशरो गांव की 24 प्रतिशत, कोरेकेरा गांव की 1 प्रतिशत, शामल गांव की 1 प्रतिशत, बांगरू की 4 प्रतिशत, पोजेंगा गांव की 0.2 प्रतिशत, रेवरा गांव की 3 प्रतिशत, देवगांव की 17 प्रतिशत, जेना गांव की 67 प्रतिशत जमीन, सातखरी गांव की 54 प्रतिशत, रेनागोला गांव की 17 प्रतिशत,पेटरीरा की 4 प्रतिशत, नाशपुर गांव की 25 प्रतिशत, मारदा गांव की 36 प्रतिशत, आलांगकेरा गांव का 19 प्रतिशत, कोएम्बा गांव का 27 प्रतिशत, चैनपुर गांव का 68 प्रतिशत, टेंगारिया गांव का 100 प्रतिशत, बागेसेरा गांव का 100 प्रतिशत, मालाई गांव का 56 प्रतिशत और तिररा गांव का 2 प्रतिशत भूमि अधिग्रहित किए जाने की योजना बनाई गई थी।

भू अर्जन अधिकारी के द्वारा कोइलकारो परियोजना के लिए बसिया कॉलोनी के लिए कोनबीर में 34.85 एकड़ जमीन 4 मार्च 1982 को हस्तान्तरित की गई। तोरपा कॉलोनी के लिए दियांकेल में 30.08 एकड़ जमीन 5 मार्च 1982 को अर्जित की गई।

बसिया कॉलोनी के लिए भागीडेरा में 1.49 एकड़ भूमि अक्टूबर 1982 में भूमि अर्जित की गई।

पाकरा रेलवे स्टेशन तक ले जानेवाला रास्ता के लिए कोडेकेरा के 7.27 एकड़ 19 नवम्बर 1982 और रास्ता के लिए ही बुरूहातू में 12.63 एकड़ भूमि 26 नवम्बर 1982 को अर्जित की गई। पाकरा कॉलोनी एवं स्टोर यार्ड पाकरा गांव के 56.96 एकड़ जमीन और बुरूहातू गांव का 45.44 एकड़ भूमि 26 नवम्बर 1982 को हस्तान्तरित की गई।

पाकरा रेलवे स्टेशन तक ले जानेवाला रास्ता के लिए कुडा के 3.26 एकड़ जमीन और तोरपा कॉलोनी के लिए दियांकेल के 47.47 एकड़ जमीन 19 नवम्बर 1982 को अर्जित कर हस्तान्तरित की गई।

आजीविका और अस्मिता का संघर्ष

कोइलकारो परियोजना विरोधी आंदोलन दरअसल आजीविका के बचाव और अस्मिता की रक्षा के लिए बड़ा संघर्ष है। बड़ी परियोजनाएं विस्थापन विनाश विपन्नता ही लाती है और बड़े पैमाने पर सभ्यता और संस्कृति को नेस्तनाबूद करती है।

नतीजा यह निकला की परियोजना के विरोध की आवाज बुलंद से बुलंद होती चली गई और जनगोलबंदी की वजह से सरकार को अपने पांव पीछे की ओर ले जाना पड़ा।

कोइलकारो परियोजना के तहत तोरपा प्रखण्ड के विभिन्न गांवों से अधिग्रहण की जानेवाली जमीन का विवरण इस प्रकार है।

तोरपा प्रखंड के लोहाजिमी गांव का 53 प्रतिशत यानी 664 एकड़, डेरांग गांव का 35 प्रतिशत यानी 430 एकड़ जमीन, कोचा गांव का 84 प्रतिशत यानी कि 1189 एकड़, गुटूहातू गांव का 87 प्रतिशत यानी कि 1069 एकड़, कालेट गांव का 36 प्रतिशत यानी कि 300 एकड़ जमीन, चम्पाबाहा गांव का 21 प्रतिशत यानी कि 125 एकड़, रोनहे गांव का 1 प्रतिशत यानी 16.93 एकड़ तपकारा गांव का 28 प्रतिशत यानी कि 13 एकड़, कोइनारा गांव का 4 प्रतिशत यानी कि 45.50 एकड़ जमीन अधिग्रहित की जाएगी। रनिया प्रखंड के बालाकेल गांव की 17 प्रतिशत, चिड़ूल गांव की 76 प्रतिशत, बन्दापारी गांव की 79 प्रतिशत, तालदा गांव की 83 प्रतिशत, जयपुर गांव की 89 प्रतिशत, बिरहोर चुआं की 1 प्रतिशत, अरेंगटोली गांव की 99 प्रतिशत, जापुत गांव की 100 प्रतिशत, केला गांव की 84 प्रतिशत, गरधातु गांव की 56 प्रतिशत, कोराकेल गांव की 20 प्रतिशत, बानाई गांव की 98 प्रतिशत, सिदाम गांव की 5 प्रतिशत, इटाम गांव की 99 प्रतिशत, डोयेनगर गांव की

9 प्रतिशत, गोदरा गांव की 5 प्रतिशत जाराकेल गांव की 7 प्रतिशत जाराकेल गांव की 43 प्रतिशत भूमि अधिग्रहित की जाएगी।

बसिया जलाशय के तहत अधिग्रहित की जानेवाले बसिया प्रखंड के गांवों में तेतरा गांव की जमीन का 92 प्रतिशत, सोंलेंगबिरा गांव की 9 प्रतिशत, साईटोली की 57 प्रतिशत सिरीबिरा गांव की 1 प्रतिशत, साएदा गांव की 66 प्रतिशत, ओरेंग गांव की 31 प्रतिशत, राईकेरा गांव की 36 प्रतिशत, मातुरडेगा की 17 प्रतिशत, माझकेरा की 78 प्रतिशत, लोआकेरा 43 प्रतिशत, निनाई गांव की 96 प्रतिशत, सुरजपुर की 11 प्रतिशत, कुलुसेरा की 98 प्रतिशत, तालेसेरा गांव की 44 प्रतिशत, मुकाई गांव की 7 प्रतिशत, जोलो गांव की 70 प्रतिशत, बनतरिया गांव की 51 प्रतिशत, किरिंगलोआ की 40 प्रतिशत, पोकता गांव की 48 प्रतिशत, नारेकेला की 17 प्रतिशत, बोंगालोया की 95 प्रतिशत, टेंगरा गांव की 68 प्रतिशत, मामरला गांव की 17 प्रतिशत, लालपुर गांव 2 प्रतिशत, अकबा गांव की 7 प्रतिशत जमीन, केदली गांव की 2 प्रतिशत, लुंगटू गांव की 57 प्रतिशत जमीन, ओलमुण्डा गांव की 61 प्रतिशत, चौली गांव की 10 प्रतिशत, कुलाबिरा की 9 प्रतिशत, चरका टांगर की 11 प्रतिशत , कोलाम्बी की 13 प्रतिशत, पातिया की 6 प्रतिशत, कोयेनजारा गांव की 22 प्रतिशत, केलुगा गांव की 55 प्रतिशत, कुटाशी गांव की 73 प्रतिशत, बेला गांव की 16 प्रतिशत, समसेरा गांव की 0.6 प्रतिशत, मुरकुन्दा गांव की 8 प्रतिशत, रेकमा गांव की 47 प्रतिशत, कुतुआ गांव की 82 प्रतिशत, आमकुली गांव की 19 प्रतिशत, पोरहा गांव की 11 प्रतिशत, आशरो गांव की 24 प्रतिशत, कोरेकेरा गांव की 1 प्रतिशत, शामल गांव की 1 प्रतिशत, बांगरू की 4 प्रतिशत, पोजेंगा गांव की 0.2 प्रतिशत, रेवरा गांव की 3 प्रतिशत, देवगांव की 17 प्रतिशत, जेना गांव की 67 प्रतिशत जमीन, सातखरी गांव की 54 प्रतिशत, रेनागोला गांव की 17 प्रतिशत, पेटरीरा की 4 प्रतिशत, नाशपुर गांव की 25 प्रतिशत, मारदा गांव की 36 प्रतिशत, आलांगकेरा गांव का 19 प्रतिशत, कोएम्बा गांव का 27 प्रतिशत, चैनपुर गांव का 68 प्रतिशत, टेंगारिया गांव का 100 प्रतिशत, बागेसेरा गांव का 100 प्रतिशत, मालाई गांव का 56 प्रतिशत और तिररा गांव का 2 प्रतिशत भूमि अधिग्रहित किए जाने की योजना बनाई गई थी।

भू अर्जन अधिकारी के द्वारा कोइलकारो परियोजना के लिए बसिया कॉलोनी के लिए कोनबीर में 34.85 एकड़ जमीन 4 मार्च 1982 को हस्तान्तरित

की गई। तोरपा कॉलोनी के लिए दियांकेल में 30.08 एकड़ जमीन 5 मार्च 1982 को अर्जित की गई।

बसिया कॉलोनी के लिए भागीडेरा में 1.49 एकड़ भूमि अक्टूबर 1982 में भूमि अर्जित की गई।

पाकरा रेलवे स्टेशन तक ले जानेवाला रास्ता के लिए कोडेकेरा के 7.27 एकड़ 19 नवम्बर 1982 और रास्ता के लिए ही बुरूहातू में 12.63 एकड़ भूमि 26 नवम्बर 1982 को अर्जित की गई। पाकरा कॉलोनी एवं स्टोर यार्ड पाकरा गांव के 56.96 एकड़ जमीन और बुरूहातू गांव का 45.44 एकड़ भूमि 26 नवम्बर 1982 को हस्तान्तरित की गई।

पाकरा रेलवे स्टेशन तक ले जानेवाला रास्ता के लिए कुडा के 3.26 एकड़ जमीन और तोरपा कॉलोनी के लिए दियांकेल के 47.47 एकड़ जमीन 19 नवम्बर 1982 को अर्जित कर हस्तान्तरित की गई।

आजीविका और अस्मिता का संघर्ष

कोइलकारो परियोजना विरोधी आंदोलन दरअसल आजीविका के बचाव और अस्मिता की रक्षा के लिए बड़ा संघर्ष है। बड़ी परियोजनाएं विस्थापन विनाश विपन्नता ही लाती है और बड़े पैमाने पर सभ्यता और संस्कृति को नेस्तनाबूद करती है।

कोइलकारो परियोजना एवं उसका उद्देश्य

तत्कालीन बिहार राज्य की विभिन्न सरकारें कोइलकारो परियोजना का निर्माण जरूरी बताते हुए उसके उद्देश्यों पर प्रकाश डालते रहे हैं। सरकार का यह दस्तावेज सन् 2000 ई का है। कोइलकारो परियोजना के परिचय में सरकार का कहना है कि किसी भी देश का आर्थिक विकास औद्योगिक विकास पर निर्भर करता है। बिना बिजली के औद्योगिक विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है। चाहे कल कारखाने चलाने की बात.हो या फिर नए उद्योग धंधे स्थापित करने की बात हो। उर्जा के बिना यह संभव ही नहीं है। आज देश में लगभग 10 हजार मेगावाट से भी अधिक पिकिंग विद्युत उर्जा की कमी है। तब पूर्वी क्षेत्र में खासकर बिहार में बिजली की स्थिति और भी बदतर थी। भारत सरकार ने देश एवं राज्यों में बिजली की इस आवश्यक कमी को दूर करने के उद्देश्य से कई छोटी एवं बड़ी परियोजनाओं को मंजूरी दी थी। इसी कड़ी में पूर्वी क्षेत्र खासकर बिहार में

बिजली की कमी को देर करने के लिए भारत सरकार द्वारा कोइलकारो जलविद्युत परियोजना को मंजूरी दी गई।

परिचय में बताया गया है कि कोइलकारो परियोजना क्या है! कोइलकारो परियोजना दक्षिणी छोटानागपुर की एक महत्वाकांक्षी जल विद्युत परियोजना है। यह परियोजना वर्त्तमान के झाड़खंड राज्य की राजधानी रांची से लगभग 80 किलोमीटर दूर दक्षिण पश्चिम में अवस्थित है। जो रांची गुमला एवं पश्चिम सिंहभूम के 134 गांवों में फैली हुई है। रांची जिला के सीमाना के गावों जो गुमला और पश्चिम सिंहभूम जिला में अवस्थित हैं वे परियोजना के अन्तर्गत आते हैं। इस परियोजना की संस्थापित क्षमता 710 मेगावाट है और यह प्रतिवर्ष 1000मिलयिन यूनिट बिजली का निर्माण करने की योजना थी। यह परियोजना मूलतः पिकिंग बिजली की कमी को पूरा करने के लक्ष्य से प्रस्तावित की गई है। यह परियोजना पूर्वी क्षेत्र खासकर बिहार में बिजली की कमी को पूरा करने के मकसद से तैयार की गई थी. यह कहा जाता है कि जल विद्युत परियोजना प्रदूषण रहित बिजली पैदा करता है और ताप बिजली इसकी जगह नहीं ले सकता है। केंद्रीय विद्युत प्राधिकरण की रिर्पोट के अनुसार आगामी वर्षों में पूर्वी क्षेत्र में 1362 मंगावाट से लेकर 1665 मेगावाट तक की बिजली की कमी होने की आशंका है। बिहार में संस्थापित जल विद्युत क्षमता मात्र 170 मेगावाट है। कोइलकारो परियोजना के निर्माण के बाद इस क्षेत्र में बिजली की कमी को पूरा किया जाना था।

ताप एवं जल विद्युत के समन्वय को इस परियोजना के द्वारा पूरा किया जाना था। तब की रिर्पोट के मुताबिक ताप और जल विद्युत के समन्वय का अनुपात घटकर 22:78 हो गया था। जबकि यह 40:60 को होना चाहिए था। इस परियोजना के बाद ताप व जल विद्युत का समन्वय अच्छा होने की संभावना बताई जा रही थी इससे पिकिंग बिजली की क्षमता में इजाफा होता और जिससे ताप बिजली के लोड फैक्टर भी वर्त्तमान 50 – 60 प्रतिशत से बढ़कर 70 से 80 प्रतिशत हो जाएगा। इससे ताप बिजली में भी करीब करीब 25 से 30 प्रतिशत बढ़ोतरी होने की संभावना जताई जा रही थी।

कोइलकारो परियोजना के अन्तर्गत बनाए जानेवाले जलाशयों में मिट्टी के बहाव और कटाव को रोकने के लिए एक कैचमेंट एरिया ट्रीट्मेंट प्लान बनाया गया था। इस प्लान के तहत पानी के बहाव को नियंत्रित करने के लिए छोटे छोटे बांध बनाए जाने की योजना थी। जल बहाव क्षेत्र में

वृक्षारोपण किए जाने का प्लान किया गया था। जबह जबह टैरेसिंग कर जमीन को उपज के जायक बनाने की योजना थी। परियोजना के निर्माण में जितने पेड़ लगाए जाएंगें उसके दस गुना पेड़ लगाया जाएगा जिससे जंगल का और विकास होने का दावा किया गया था। जंगलो के विकास से अधिक वर्षा होने का अनुमान लगाया गया था। इससे कृषकों को पानी की कमी नहीं होगी.जलाशयों के इर्द गिर्द पेड़ लगाने से यह इलाका पर्यटन के लिए भी विकसित किया जा सकेगा।

जलाशयों के निर्माण में पूरे इलाके के जल स्तर में वृद्धि होने का दावा किया गया था। ताकि पानी की कमी इस इलाके में नहीं हो।

परियोजना से अन्य लाभ बताया गया और कहा गया कि तकनीकी तौर पर इसे आसान बताया गया। इसके निर्माण में 2400 करोड़ रू. की लागत होने का अनुमान बताया गया था।

इस परियोजना में मुख्यतः मिट्टी के कई छोटे छोटे बांध एवं 34 किलोमीटर लम्बी नहर का निर्माण शामिल किया गया था। जिसके निर्माण में बहुत आदमियों के जरूरत की बात कही गई थी। इस परियोजना के बनने से इस क्षेत्र में औद्योगिक क्रांति आने की बात कही जाती रही थी। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तौर पर काफी लोगों को रोजगार मिलेगा। एक अनुमान के मुताबिक लगभग 40 हजार लोगों को काम के अवसर प्राप्त होने की बात कही गई थी। 10 लाख रू तक के गैर तकनीकी ठेका परियोजना से विस्थापित लोगों को ही दिए जाने का वादा किया गया था।

एक अनुमान के मुताबिक इस परियोजना के निर्माण की 30 से 40 प्रतिशत की राशि प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर इसी क्षेत्र में खर्च होने की बात कही गई थी। इससे अनेक लोगों को लाभ मिलने की बात कही गई थी। लोगों का जीवन स्तर उपर होगा और आदिवासी युवक युवतियों को राज्य से बाहर पलायन करने की जरूरत नहीं होगी और जीविकोपार्जन के लिए बाहर जाने की आवश्यकता में निश्चिंत तौर पर कमी आएगी। ऐसा दावा किया गया।

कोइलकारो जलविद्युत परियोजना के अन्तर्गत मुआवजा एवं पुनर्वास के बारे में संक्षिप्त जानकारी देते हुए कहा गया कि जमीन का मुआवजा 15 साल की उपज के आधार पर मिलेगा। घर, पेड़ और दूसरी सम्पतियों का मुआवजा अलग से मिलेगा। मुआवजा का राशि सीधे बैंक से मिलेगा। घर

निर्माण के लिए विस्थापितों को 25 डिसमिल 1210 वर्ग गज जमीन पास में मुफ्त मिलेगा। घर सरकार की योजना इंदिरा आवास योजना से बनेगें. सड़क, बिजली, विद्यालय, अस्पताल एवं धार्मिक स्थलों की जगह की व्यवस्था मुफत में की जाएंगी। प्रत्येक विस्थापित प. ्रार को चूल्हा प्रति व्यक्ति सर्वेक्षण के आधार पर बिहार सरकार द्वारा नौक ी दी जाएगी। सभी धर्मो का पूरा सम्मान किया जाएगा। सरना ससनदिरी, ्थलगड़ी इत्यादि की पुनः स्थापना पहानों द्वारा विधि विधान से होगी। आदिव सी संस्कृति तथा रीति रिवाजों की मजबूती से सुरक्षा होगी। खूंटकट्टी अधिकारों का संरक्षण किया जाएगा। मुआवजे की दर सन् 2000 में इस प्रकार तय की गई थी। जमीन का प्रकार और प्रति एकड़ मुआवजे की दर रू में निर्धारित की गई थी।

इस परियोजना के बेहतर संचालन के लिए एक क्षेत्रीय कमेटी का गठन सरकार ने किया था। इस क्षेत्रीय कमेटी में दक्षिण छोटानागपुर प्रमंडल के आयुक्त को अध्यक्ष, उपायुक्त रांची को सचिव उपायुक्त गुमला को सदस्य, रांची रेंज के डी. आई. जी., अतिरिक्त निदेशक भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास, रांची और गुमला के डी.डी.सी., नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन के प्रोजेक्ट के प्रमुख, खूंटी और गुमला के सदर अनुमंडलाधिकारी, प्रोजेक्ट क्षेत्र के सांसद, प्रोजेक्ट क्षेत्र के विधायक, तोरपा, रनिया, कामडारा, पालकोट, बसिया, और गुमला के प्रमुखों, आयुक्त के द्वारा एक प्रतिनिधि, जनजातीय शोध संस्थान के उपनिदेशक एस. पी. सिन्हा इस कमेटी में रखे गए। इसके अलावा एक सलाहकार बोर्ड को गठन करने का प्रस्ताव दिया गया। इस सलाहकार बोर्ड में दक्षिण छोटानागपुर प्रमंडल के आयुक्त को अध्यक्ष, अतिरिक्त निदेशक भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास, रांची और गुमला के उपायुक्तों, नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन के प्रोजेक्ट के प्रमुख, रांची क्षेत्रीय विकास प्राधिकार के प्रबंध निदेशक, मछली पालन के संयुक्त निदेशक को बोर्ड में शामिल किया गया। इसके अलावा श्री एन. ई. होरो तत्कालीन लोकप्रिय नेता झाड़खंड पार्टी, को स्थायी सलाहकार, श्री मोजेज गुड़िया को स्थायी सलाहकार, बी. आई. टी. मेंसरा के निदेशक को तकनीकी सलाहकार, डा. एम. भी.डी. बोगार्ट को संत जेवियर समाज सेवा संस्थान की तरफ से एजेंसी प्रतिनिधि, रांची विश्वविद्यालय के कुलपति रहे डा. राम दयाल मुण्डा को आदिवासी जीवन और संस्कृति पर सलाहकार नियुक्त किया गया।

इस क्षेत्रीय कमेटी के तहत पांच कोषांग बनाए गए थे। एक औद्योगिक

विकास कोषांग, दूसरा विकास कोषांग, तीसरा पशुपालन कोषांग चौथा भूमि और कृषि विकास कोषांग और पांचवां रोजगार और प्रशिक्षण कोषांग का गठन किया गया था। गांव स्तर की भी कमेटी भी बनाई गई थी।

औद्योगिक विकास कोषांग में औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकार के प्रबंध निदेशक को अध्यक्ष बनाया गया। भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास विभाग के संयुक्त निदेशक को कोषांग का सचिव और पूर्णकालिक अधिकारी बनाया गया। नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन के वरीय प्रबंधक, जिला उद्योग केंद्र रांची के महाप्रबंधक, बिहार औद्योगिक और प्रशिक्षण कोरपोरेशन के प्रतिनिधि, बिहार राज्य वित कोरपोरेशन के प्रतिनिधि, बैंक ऑफ इंडिया के प्रतिनिधि को सदस्य बनाया गया था। इस कोषांग को सुचारू रूप से चलाने के लिए एक सचिवालय सचिवालय सहयोग, एक स्टेनो, एक आदेशपाल दिया गया।

विकास कोषांग में परियोजना पदाधिकारी को सचिव बनाया गया था। इसके अलावा भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास अधिकारी के उप निदेशक, बैंक ऑफ इंडिया के प्रतिनिधि, बिहार ग्रामीण विकास से एक प्रतिनिधि, जेवियर समाज सेवा संस्थान से एक प्रतिनिधि और तोरपा, बसिया, पालकोट, प्रखंड के सभी प्रमुखों को सदस्य बनाया गया था। इनकी सहायता के लिए एक स्टेनो, दो सहायक, दो आदेशपाल और दो टाइपिस्ट उपलब्ध कराया गया।

पशुपालन कोषांग में धनबाद के पशुपालन अधिकारी डा. पाठक इस कोषांग के प्रभारी बनाए गए। रांची जिला के डेयरी डेवलपमेंट अधिकारी, रांची और गुमला जिला के पशुपालन अधिकारी और तोरपा और बसिया के प्रमुखों को शामिल किया गया और उनकी सहायता के लिए एक स्टेनो, एक सहायक, और एक आदेशपाल का प्रावधान किया गया।

चौथा कोषांग भूमि और कृषि विकास कोषांग बनाया गया। रांची और गुमला के एडीशनल कलेक्टर को कोषांग का अध्यक्ष, कृषि के उपनिदेशक, खूंटी और गुमला के सदर अनुमंडलाधिकारी, नेशनल हाइड्रो पावर कोरपोरेशन के वरीय प्रबंधक, तोरपा, बसिया, रनिया, और पालकोट प्रंखंडों के प्रमुखों, तोरपा और बसिया के विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी और विस्थापितों के प्रतिनिधि को शामिल किया गया।

पांचवें कोषांग का गठन रोजगार और प्रशिक्षण के लिए बनाया गया। वरीय आई. ए. एस. अधिकारी एस. के चांद को इस कोषांग का प्रमुख बनाया गया। रोंजगार और वोकेशनल ट्रेनिंग के उपनिदेशक, नेशनल हाइड्रो पावर

कोरपोरेशन के प्रतिनिधि, बसिया और रांची आई. टी. आई. के प्राचार्य, बी. आई. टी. मेसरा के प्रतिनिधि, ग्रामीण प्रोजेक्ट के कनसलटेंट के प्रतिनिधि, बसिया के प्रमुख इसके सदस्य बनाए गए। इनके कार्यालय को एक स्टेनो, एक सहायक, और एक आदेशपाल दिया गया। इसके अलावा जन शिकायतों के निवारण के लिए भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास के उपनिदेशक को प्रभार दिया गया।

गांव स्तर की कमेटी के अध्यक्ष सदर अनुमंडलाधिकारी बनाए गए थे। विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी, नेशनल हाइड्रो पावार कोरपोरेशन के प्रतिनिधि, प्रखंड के प्रतिनिधि, गांवों के मुखिया, प्रखंडों के अंचलाधिकारी, पुनर्वास स्थल के मुखिया, उपायुक्त के द्वारा एक मनोनीत प्रतिनिधि, स्वयंसेवी संस्था के एक प्रतिनिधि को मिलाकर ग्राम स्तरीय कमेटी का गठन किया। इस कमेटी के संचालन के लिए विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी को पूरी सहायता उपलब्ध कराने को कहा गया था।

जमीन का प्रकार प्रति एकड़ मुआवजे की दर रू. में

	वर्ष 1999 तक के लिए निर्धारित दर	वर्ष 2000 से निर्धारित दर
दोन – 1	66789.00	70756.00
दोन 2	60110.00	63680.00
दोन 3	46752.00	49529.00
टांड़ 1	53431.00	56605.00
टांड़ 2	40073.00	42454.00
टांड़ 3	26716.00	28302.00
परती	13358.00	14151.00
सरना	66789.00	70756.00

मुआवजा के इस पैकेज के साथ टिप्पणी दी गई कि माननीय उच्चतम न्यायालय के आदेश से मुआवजा पुनर्वास आदि पर स्वीकृति की पक्की मुहर लग चुकी है।

कोइलकारो परियोजना के लिए कुल कितनी भूमि की जरूरत होगी और कितनी वन भूमि की जरूरत होगी इसका विवरण भी दिया गया और रिर्पोट में कहा गया है कि यह परियोजना का अहम् हिस्सा होगा। परियोजना के जो प्रमुख आधार बताए गए थे उनमें रिजर्ववायर के साथ डैम यानी बांध और डायके को अति आवश्यक बताया गया। दो डैम और डायके

बनाने की बात थी। इसके साथ ट्रांसबेसिन चैनल बनाने पावर हाउस और कॉलोनी के लिए जमीन की जरूरत बताई गई।

इस तरह से कुल 18958.61 एकड़ जमीन इन कार्यो के लिए बताई गई। जंगल भूमि की जरूरत 865 एकड़ बताई गई थी।

इसका विस्तार से विवरण देते हुए कहा गया कि बसिया में रिजर्ववायर जिसके साथ बांध और डायके बनेगा। इसके लिए 13466.20 एकड़ जमीन की जरूरत होगी। इसके अलावा 632 एकड़ वन भूमि भी बांध में डूब जाएगी।

दूसरा लोहाजिमी में रिजर्ववायर होगा इसके साथ बांध यानी डैम और डायके भी होगा। इसमें 4730.23 एकड़ जमीन की जरूरत होगी। यहां 83 एकड़ वन भूमि डूब क्षेत्र में जाएगी। ट्रांसबेसिन चैनल के लिए 521.68 एकड़ जमीन डूबेगी औा 50 एकड़ वन भूमि भी डूब क्षेत्र में आएगी। पावर हाउस काम्पलेक्स के लिए 75.56 एकड़ जमीन ली जाएगी और इसके लिए 60 एकड़ वन भूमि जाएगी।

संरचना के विकास के लिए कॉलोनी और सड़क आदि के लिए 165 एकड़ जमीन और 40 एकड़ वन भूमि की जरूरत होगी।

कोईलकारो परियोजना के लिए सरकार ने प्रारंभिक तैयारी आजादी के तुरत बाद ही प्रारंभ किया था। इसके लिए 1955 से ही सर्वे कार्य प्रारंभ किया गया। 1959 तक यह सर्वे कार्य जारी रहा और 1972– 73 यानी कि कुल 18 सालों में परियोजना की रूप रेखा तैयार कर ली गई। इसके बाद भूमि अधिग्रहण की कार्रवाई प्रारंभ की गई। सबसे पहले नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन के स्थानीय कार्यालय खोलने के लिए जमीन का अधिग्रहण किया गया। तोरपा में नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन का कार्यालय खोलकर अधिकारियों ने काम काज करना प्रारंभ किया। इस कार्यालय में स्थानीय लोगों की भी बहाली ही गई जिनकी जमीन का अधिग्रहण किया जा रहा था।

बिहार सरकार के उर्जा विभाग के एक संकल्प संख्या 120/30 सं. /85–451/ 23 जनवरी 1986 में कहा गया कि राज्य में बिजली की कमी को पूरा करने और राज्य के विकास के लिए परियोजना लाभदायी है। परियोजना की अधिस्थापित क्षमता 710 मेगावाट होगी जो राज्य की वर्त्तमान कुल विद्युत उत्पादन क्षमता की आधी से भी अधिक होगी। वर्ष 1980

के मूल्य स्तर पर कोइलकारो परियोजना की प्राक्कलित राशि लगभग 400 करोड़ आंकी गई थी। परियोजना के कार्यान्वयन में होनेवाले विलम्ब के कारण बढ़े हुए मूल्यों पर इस खर्च को 600 करोड़ रू. आंका गया।

इस परियोजना के निर्माण से कुल 112 गांव के प्रभाावित विस्थापित होने की बात कही गई। इनमें करीब 20 गांव ही ऐसे होगें जहां 80 प्रतिशत से अधिक लोग प्रभावित विस्थापित होगें। 20 गांवों से उजाड़े लोगों को समीप में ही पुनर्वासित किया जाएगा। इसके अलावा 21 गांव ऐसे होगें जिनमें आंशिक रूप से विस्थापन होगा। इन गांवों के विस्थापित परिवारों को उसी गांव की जमीन में बसाने की व्यवस्था की जाएगी। परियोजना के लिए लगभग 50,000 एकड़ भूमि की आवश्यकता होगी। इनमें से करीब 35,000 एकड़ भूमि आम जनता की है। इस 35,000 एकड़ भूमि में से करीब 25,000 एकड़ भूमि ऐसी है जिसमें किसी तरह की खेती होती है अथवा कृषि योग्य है।

कोइलकारो परियोजना का महत्ती उद्देश्य समूचे पूर्वी भारत में बिजली की कमी को पूरा करना और उद्योगों को विस्तार देना था। इस परियोजना को राष्ट्र के लिए बहुमूल्य योजना बताया गया था। इस महत्वाकांक्षी परियोजना से भारत के बहुमुखी विकास की बात भी कही गई थी। इसके साथ ही इलाके का सम्पूर्ण विकास का होना बताया जाता रहा है। परियोजना के आने से खुशहाली, समृद्धि और प्रगति आने की बात कही गई। बिहार का यह दक्षिणी पठार का इलाका वैसे भी विकास की रोशनी से वंचित रहा था। शासन प्रशासन राजनीति सब पटना से ही संचालित होती रही है। अतएव आदिवासी क्षेत्रों के पिछड़ापन को दूर करने सड़क बिजली और पानी के साथ अस्पताल और रोजगार की व्यवस्था होने की बात बार बार कही गई। परियोजना का उद्देश्य के तौर पर सबका चहुंमुखी विकास होने और अंधेरा दूर होने का वादा किया गया था। परियोजना के लागू होने पर आदिवासी गांवों में बिजली आएगी और हर घर रोशनवान होगा। प्रत्येक परिवार के लोगों को नौकरी मिलेगी और उनके सामाजिक सांस्कृतिक जीवन मूल्यों की रक्षा के लिए सभी तरह की व्यवस्था की जाएगी। बताया जाता रहा कि परियोजना क्षेत्र में तुलनात्मक तौर पर खेती कम होती है। परियोंजना के पूरा होने पर खेती के प्रबंध और नए तौर तरीकों पर जोर दिया जाएगा।

परियोजना से विस्थापितों का जीवन स्तर उपर करने के लिए हर संभव

उपाय किए जाएंगे। उनका आर्थिक पुनर्वास किया जाएगा और उनके धार्मिक स्थलों की रक्षा की जाएगी। गांवों में सड़कों का निर्माण होगा और पूरा इलाका जगमगा उठेगा। विद्युत शक्ति की अपार कमी से त्रस्त इस क्षेत्र बिहार राज्य और पूर्वी विद्युत ग्रिड हेतु यह परियोजना एक वरदान सिद्ध होगी। बिहार के विद्युत उत्पादन में जल (हाइड्रो) विद्युत का प्रतिशत मात्र 8 है जो आदर्श स्थिति में 40 होना चाहिए। इस परियोजना से सरकार का मकसद समूचे पूर्वी भारत में बिजली की कमी को पूरा करना था। इससे उद्योगों को पर्याप्त मात्रा में बिजली मुहैया कराई जा सकेगी। उद्योगों का विस्तार होगा और रोजगार के अवसर सृजित होगें। परियोजना के माध्यम से सरकार समूचे आदिवासी इलाके के विकास के लिए नए अवसर खोलना चाहती थी। सरकार का उद्देश्य यह था कि आदिवासियों को तथाकथित मुख्यधारा में लाया जाए।

आदिवासी और मूलवासी अब भी उपेक्षित और पिछड़ा जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनके जीवन की गरीबी और बदहाली का समाप्त करने के लिए परियोजना लाभकारी होगी। सरकार का मानना था कि परियोजना के बनने से विकास के हर द्वार खुल जाएंगे और हर किसी को आगे बढ़ने का अवसर प्रदान होगा। पक्की सड़के, जगमगाती रोशनी सरकार के लिए विकास के बड़े पैमाने थे। परियोजना से प्रभावितों के विकास की बात शायद सरकार की योजना में नहीं रही होगी। वैसे दावा तो यह था कि लोगों को कृषि विकास के भी अवसर मिलेगें और नौकरी का लक्ष्य भी उनको हासिल होगा।

पूंजीकृत मूल्य के आधार पर मुआवजा दिया जाएगा ताकि उन्हें कोई घाटा नहीं हो। यह आर्थिक लाभ देने का उनका उद्देश्य था। इस परियोजना के माध्यम से बिहार और केंद्र सरकार आदिवासी इलाके के विकास का एक ऐसा मॉडल खड़ा करना चाहती थी जिससे विकास की हर तकदीर लिखी जा सके और ऐसी तस्वीर पेश हो जिससे आदिवासी खुशहाल हों। उनके पारम्पारिक जीवन मूल्यों के आधार पर विकास की नई रेखा खींची जा सके। परियोजना का बड़ा मकसद बिजली से जरिए जीवन के हर क्षेत्र में क्रांति लाने और चौतरफा विकास का ढांचा तैयार करना था। परियोजना को पूरा करने के लिए लोगों को कुर्बानी देनी होगी तभी राष्ट्र के विकास की नैया पार लग पाएगी। सरकार का दावा था कि स्थानीय लोगों का जीवन स्तर उपर उठता और शिक्षा का प्रचार प्रसार होता। स्थानीय

ग्रामवासी और विस्थापित परिवार के लोगों को तकनीकी प्रशिक्षण हासिल होता और वे कौशल विकास होने से कहीं भी नौकरी हासिल कर सकते थे। सरकार का मकसद गांवों का विकास कर उसे नगरीय सभ्यता की ओर ले जाना जिससे विकास के मार्ग खुलते हैं। गांवों को नई शहरी बसाहट में होने से गांवों में सड़क, बिजली और पानी की सुविधा के साथ अस्पताल और स्कूल भी होगें। नौकरी की सुविधा होने से लोगों को पलायन नहीं करना पड़ेगा और घर परिवार के साथ रहकर वे अपना विकास कर सकेगें. समुदायों का आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक विकास का दावा पेश किया गया था।

कोइलकारो परियोजना और विस्थापन विरोधी आंदोलन एवं उसका राजनीतिकरण

विस्थापन सम्पूर्ण झाड़खंड के लिए एक त्रासदी के तौर पर स्थापित हुआ है। देश की आजादी और आजादी के पूर्व के विकास घटनाक्रम ने झाड़खंड का एक ही सौगात दिया वह है आदिवासियों और मूलवासियों का बड़े पैमाने पर विस्थापन। 1908 में छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम का उल्लंघन कर जमशेदजी नेशरवान टाटा को स्टील कंपनी की स्थापना के लिए जमीन दी गई। इससे आदिवासियों को विस्थापन का शिकार होना पड़ा। इसी तरह बोकारो स्टील फैक्टरी लगाकर बड़े पैमाने पर आदिवासियों को विस्थापित करने का काम किया गया। बोकारो स्टील फैक्टरी को स्थापित करने के लिए 1956 में 35 हजार ग्रामीणों को गांव छोड़ने के लिए नोटिस मिली। 1962 ई. में 84 गांवों को उजाड़ा गया और 34 हजार एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया। 1968 ई. से उत्पादन प्रारंभ किया गया। धीरे धीरे 44 हजार एकड़ भूमि पर कब्जा कर लिया गया. सभी विस्थापितों को नौकरी भी नहीं मिली।

कोइल कारो परियोजना उसी कड़ी की विकास परियोजना की श्रृंखला में लाई गई और विकास को सब्जबाग दिखाए गए। कोइलकारो परियोजना से विकास के स्वर्गद्वार खुलने का हसीन सपना दिखाया गया और आदिवासियों को धीरे धीरे उनकी जमीन से बेदखल करने का सिलसिला प्रारंभ किया गया। पूर्व के अनुभवों के आधार पर ग्रामीण परियोजना को लेकर सशंकित रहे. उन्हें अपने जमीन जंगल और गांव छोड़ने का भय सताने लगा।

ग्रामीणों की आशंका निर्मूल नहीं थी। कोइलकारो परियोजना को लेकर एक बार फिर से विस्थापन की तलवार ग्रामीणें पर लटकने लगी। ऐसा

इसलिए कि सरकारी आंकड़े और ग्रामीणों के द्वारा बनाए गए आंकड़ों में बहुत फर्क था। 1973 की डिटेल प्रोजेक्ट रिर्पोट में 125 गांवों को उजाड़ने की बात कही गई थी। 1986 में रांची के तत्कालीन उपायुक्त बी. के. सिन्हा ने अपने पुनर्वास रिर्पोट में कहा था कि कुल 7,063 घरों को उजाड़ा जाएगा। और कुल 112 गांव बांध में डूब जाएंगें। कोइलकारो परियोजना निदेशक के मुताबिक परियोजना से 42 गांवा डूबेगें आर 4,700 परिवार प्रभावित होगें।

इससे अलग हटकर कोइलकारो जन संगठन का आकलन बिलकुल ही अलग था। कोइलकारो परियोजना से 256 गांवों के उजड़ने का खतरा था। कोइलकारो जन संगठन ने यह आंकड़ा गांव गांव सर्वे कर निकाला था। कोइलकारो जन संगठन का कहना था कि 256 गांवों में कुल आबादी 1,50,000 की है। इसमें से 95 प्रतिशत आबादी आदिवासियों की है। कोइलकारो जन संगठन का कहना था कि 256 गांवों में 135 गांव पूरी तरह से डूबेगें। अगर वास्तव में परियोजना लागू की गई तो 1,50,000 लोग विस्थापित होकर अपने परम्परागत बसाहटों से उजड़ जाएंगें। कोइलकारो जन संगठन का आकलन यह था कि 66 हजार एकड़ जमीन बांध में डूब जाएंगी। इसमें से 33,000 एकड़ खेती वाली जमीन है और बाकी वन भूमि है। इतना ही नहीं सर्वे के आंकड़ों के मुताबिक 152 सरना स्थल और 300 हजारों साल पुरानी ससनदिरी भी इस परियोजना में विलीन हो जाएगी।

सरकार के विभिन्न दस्तावेजों का अवलोकन करने और कोइलकारो जन संगठन के ब्यौरे को विश्लेषण करने से प्रतीत होता है कि जानबूझकर विस्थापितों को सही बातों की जानकारी नहीं दी गई और उन्हें धोखे में रखकर विस्थापित गांवों की संख्या के बारे गलत जानकारी दी गई। ऐसा विरोध के स्वर बुलंद न हो इस डर से सरकार और प्रशासन के लोगों ने किया। ऐसा सुनियोजित ढंग से किया गया ताकि बांध के मिर्माण में किसी तरह की बाधा न पैदा हो। ऐसा कर ग्रामीणों को गुमराह करने का काम किया गया। कोइलकारो जन संगठन के अध्यक्ष सोमा मुण्डा का कहना है कि ग्रामीणों को मूर्ख और गंवार समझकर सरकार हमें उल्लू बनाने का सोचती रही। लेकिन उनको यह समझना चाहिए था कि कोइलकारो परियोजना के विरोध में हमेशा से ग्रामीणों का विरोध रहा है। विरोध के स्वर कभी मद्धिम रहे और कभी तीखे स्वर रहे जिससे सरकार को इस इलाके में घुसने की हिम्मत ही नहीं हुई। सरकार के चालाकी भरे रवैये को देखकर कोइलकारो

जनसंगठन ने भी अपने आंकड़े इकट्ठा किए और सरकार और मीडिया में प्रचारित किया कि 256 गांवों से लगभग दो लाख लोग विस्थापित हो जाएंगें। सरकार आंकड़ों को छुपाने का काम कर रही है और धोखे से आदिवासियों की जमीन को हड़प लेना चाहती है। कोइलकारो जन संगठन के लोगों ने तब मीडिया और गांवों गांवों में इस बात का प्रचार शुरू किया तो सरकार के होश उड़ गए और सरकार अपने आंकड़ों के जाल में फंसकर रह गई। कोइलकारो जन संगठन का कहना था कि कभी भी पूरी सूचना को जनता को बताने का काम नहीं किया गया और जनता से हर चीज छुपाने का प्रयास किया जाता रहा है।

पुनर्वास और भूमि अधिग्रहण निदेशालय और उर्जा विभाग कोइल नदी पर बांध बनने से गुमला जिला के 26 गांवों के 3286 परिवार के उजड़ने की बात कह रही थी। कारो नदी पर बांध बनने से रांची जिला के 16 गांवों के उजड़ने की बात कही जा रही थी।

परियोजना के कारण संभावित विस्थापन के खतरे की आंशंका को देखते हुए ग्रामीण आंदोलनरत थे। कोइलकारो जन संगठन का कहना था कि जमीन और जंगल से बेदखल होने के बाद आदिवासियों का कोई अस्तित्व ही नहीं बचता। पूरे इलाके के लोग कृषि और जंगल पर ही निर्भर हैं। जमीन और जंगल न केवल उनके जीविका के स्त्रोत हैं बल्कि उनके उनके सामाजिक सांस्कृतिक आध्यात्मिक आधार भी हैं।

विस्थापन से होने वाले प्रभाव का आकलन जब कोइलकारो जन संगठन के लोगों ने किया तो उनके रोंगटे खड़े हो गए। लोगों को उजाड़ने उनके पुरखों की जमीन से बेदखल करने के बाद उनके परिवेश खेती बारी और प्राकृतिक तौर पर उन्हें मिली सम्पदाओं पेड़ों आदि के बारे में मुआवजा की कोई बात नंहीं कही गई थी।

यह मूलतः मुण्डा बहुल इलाका है और मुण्डाओं के गांव बसाने के अपने रीति रिवाज हैं। जंगलों को काटकर उनके पुरखों ने खेत बनाया और उसी के एक हिस्से में रहने की जगह बनाई और अपने अपने किलि यानी गोत्र के आधार पर गांवों का निर्माण किया। हर गांव का मुखिया उस किलि यानी गोत्र का प्रमुख खूंट बसाने वाला होता है। मुण्डाओं को इस बात का डर था कि उनके गोत्र आधारित गांवों को उजाड़ कर फिर से गांव कहां पर बसाया जा सकेगा. यह क्या संभव है। आदिवासियों में रिश्तेदारों नातेदारों का अपना अलग महत्व

है। गांव में गोतिया नाता के साथ लोग बसे होते हैं और भूमि संबंधी अपने अपने पारिवारिक खानदानी व्यवस्था होती है। यह सारा का सारा छिन्न भिन्न हो जाएगा और फिर वे अपनी पुरानी बसाहटों के सामाजिक सांस्कृतिक आबोहवा कभी नहीं पा सकेगें। यह उनके साथ घनघोर अन्याय है। अपने लोगों के बीच अपने गांव गिरांव के परिजनों के बीच जीना उनका मानवीय अधिकार है और वे विस्थापन होने से इससे वंचित हो जाते।

सामाजिक तौर पर सुबह शाम मिलना बैठना आपस के दुख सुख साझा करना पारम्पारिक गांवों की संस्कृति और सांस्कृतिक मानवीय संबंध हैं। यह गांव का रचा बसा ताना बाना तो विस्थापन की आंधी में उड़ जाएगा। सारे रिश्ते नाते धूल धूसरित हो जाएंगे। समूह में बैठना बातें करना सामूहिक तौर पर एक दूसरे के घरों के काम करना, खेती के मौसम में एक दूसरे के खेतों में काम करना और मदइत की प्रथा क्या विस्थापन होने के बाद बची रहती। यह सामाजिक सांस्कृतिक निजता धूल की भांति कहीं उड़ जाती और आदिवासियों मूलवासियों को जीवन संसार खतम हो जाता। विस्थापन के संभावित खतरे ने आदिवासियों मूलवासियों को इस बात से भी भयभीत कर दिया कि संस्कृति के तमाम अध्याय उनके समुदाय से विलोपित हो जाते। समूह में नृत्य करना समूह में गान करना और समूह में उपवास और बोंगा पूजा की परम्परा उनके जीवन से समाप्त हो जाती। करमा और सरहुल जैसे त्योहार इसके अलावा गांव गांव में लगनेवाले मेले और अपने अपने कुल गांव देवी देवता की पूजा सब कुछ खतम हो जाता. लगभग 152 सरना स्थल जहां आदिवासी पूजा करते हैं और प्रकृति से आर्शीवाद लेते हैं उन सभी सरनास्थल के बांध में डूब जाने से उनकी संस्कृति पूरी तरह डूब जाती और वे ऐसी सभ्यता के वाहक हो जाते जहां न कोई परम्परा रहती और न ही कोई पूजा पद्धति ही। ऐसे समुदाय के लोग असभ्य मानव और सांस्कृतिक तौर पर विकृति के शिकार हो जाते। उनका अन्य जातियों और धर्मों में विलय होने से उनका पहचान पूरी तरह से गायब हो जाती। विस्थापन से उनके जीवन में अंधेरा छा जाता और वे किसी तरह गुमनाम जीवन व्यतीत करने को विवश हो जाते। सांस्कृतिक तौर पर कमजोर होने पर समुदाय की पहचान की समाप्त हो जाती है।

300 के लगभग ससनदिरी के बांध में डूबने से आदिवासी अपने हजारों साल की आध्यात्मिक परम्परा को खो देते। इससे उनको सांस्कृतिक सदमा

लगता और वे अपने पुरखों के लिए भटकते रहे जाते। ससनदिरी में उनकी मान्यता यह होती है कि पुरखे उनके साथ ही जीते हैं और उनको मार्गनिर्देशन करते रहते हैं। ससनदिरी की वे साल मे एक बार पूजा अर्चना करते हैं और अपने पुरखों की याद करते हैं कि किस तरह पुरखों ने उन्हें पाला पोसा और उनको जीने का आधार प्रदान किया। ससनदिरी हर मुण्डा खूंट की अपनी अपनी पारम्पारिक विरासत और खानदान की पहचान होती है। इससे हर खूंट का मुण्डा अपने अपने खानदान का रिकार्ड और विवरण अपने आनेवाली पीढ़ी को बताता है। इससे हर किलि के लोग अपने अपने पुरखों के योगदान से परिचित होते हैं। विस्थापन की आंधी उनके जीवन के इन सांस्कृतिक गहराइयों को हमेशा के लिए समाप्त कर देते और उनका नामोनिशान ही मिट जाता।

अनिष्ट की आशंका से कोइलकारो जन संगठन के बैनर तले आदिवासी मूलवासी गोलबंद हो गए और आंदोलन का बिगुल फूंक दिया। यों तो 1973 से ही स्थानीय आदिवासी नेताओं के द्वारा परियोजना को विकास नहीं महाविनाशकारी बताकर प्रतिरोध दर्ज किया जाता रहा है। समय समय पर ज्ञापन देकर परियोजना को लागू किए जाने में बरती जा रही अनियमितता के खिलाफ स्वर बुलंद होते रहे हैं। प्रारंभ में ग्रामीणों का कहना था कि परियोजना बनने से हमारा लाभ होगा तो हम परियोजना को लागू करने देगें। लेकिन हमारी जमीन की नापी और मुआवजा भुगतान में कोई किस्म की लापरवाही नहीं की जानी चाहिए और कोई बेईमानी नहीं होनी चाहिए। कोइलकारो जनसंगठन के अध्यक्ष सोमा मुण्डा बताते हैं कि मुआवजा भुगतान में भारी गड़बड़ी की शिकायतें आने लगी। यही नहीं जमीन की नापी में भी हेरा फेरी की जाने लगी। इससे ग्रामीणों का आक्रोश भड़क उठा और परियोजना के विरोध में लोग गोलबंद हो गए।

परियोजना विरोधी रैलियां और सभाओं का तांता लग गया। कोइलकारो जनसंगठन के बैनर तले लोग संघर्ष करने लगे। 1973 से लेकर 1980 और उसके बाद भी आंदोलन का सिलसिला चलता रहा। 1989 में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश आने के बाद परियोजना ठंढा पड़ गया और सरकार ने लगभग परियोजना को लागू करने से अपना हाथ पीछे खींच लिया। हालांकि इसके लिए सरकार ने कोई घोषणा नहीं की। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का पालन नहीं कर पाने की स्थिति में वे जनता को जबाव देने की

हालत में नहीं रह गए। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने आदेश में कहा कि बिना पुनर्वास किए विस्थापन नहीं किया जाए। इससे कोइलकारो जनसंगठन के लोगों का आत्मविश्वास बढ़ा और वे इसे अपनी जीत मानकर आंदोलन को सशक्त करने में लग गए। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने आदेश में सरकार को कम से कम दो गांवों को आदर्श पुनर्वासित गांव बसाकर दिखाने का कहा था। लेकिन सरकार जनता को विश्वास नहीं जीत सकी और दो गांवों को आदर्श गांव बनाकर नहीं दिखाया जा सका। सरकार की यह विफलता ने आंदोलन में आग में घी का काम किया और आंदोलन भड़क उठा। यही कारण है कि 1995 के 5 जुलाई को तत्कालीन प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिंहराव के तोरपा आने और कोइलकारो जलविद्युत परियोजना का नए सिरे से शिलान्यास करने की घोषणा ने जनज्वार उमड़ पड़ा और गांव गांव में लोग लामबंद होकर कहने लगे कि बच्चा बच्चा बिरसा मुण्डा बन जाएगा और खून खून की नदी बहेगी। 5 जुलाई 1995 को तोरपा के दियांकेल मैदान में आम सभा और रैली का आयोजन किया गया और लोगों ने एक स्वर से ऐलान किया कि किसी कीमत पर प्रधानमंत्री का हेलीकाप्टर उतरने नहीं दिया जाएगा। अगर प्रधानमंत्री का हेलाकॉप्टर उतरता है तो उसे तीरों से निशाना बनाएंगें। अखबारों में भी इस आंदोलन को काफी प्रचारित प्रसारित किया गया और जनता के सवालों को उठाया गया। कोइलकारो जन संगठन के द्वारा उठाए गए सवालों का जबाब सरकार देने में असमर्थ रही। कोइलकारो जन सगठन ने 5 जुलाई को संकल्प दिवस के रूप में मनाया और ऐलान किया कि किसी कीमत में महाविनाशकारी परियोजना लागू करने नहीं दी जाएगी। यह आंदोलन का ताजा और नया चरण था। जो 1995 से फिर से प्रारंभ हुआ। तब तक देश के विभिन्न हिस्सों में विस्थापन विरोधी आंदोलन ने तेज पकड़ा और विस्थापन का सवाल एक अहम सवाल बनकर उभरा था। कोइलकारो जन संगठन के इस नए आंदोलन को देश के तमाम विस्थापन विरोधी आंदोलनकारियों ने समर्थन दिया और तपकरा लोहाजिमी का दौरा किया। लोहाजिमी तो मानो आंदोलनकारियों के लिए तीर्थस्थल बन गया हो।

तत्कालीन बिहार सरकार में माननीय लालू प्रसाद मुख्यमंत्री थे। उन्होंने भी परियोजना को शुरू करने का ऐलान किया और पत्र भेजा। मुख्यमंत्री सह उर्जा मंत्री बिहार के कार्यालय पत्र संख्या 461/0273 मु. मं. सं. पटना 25 जुलाई 1995 को भारत सरकार के विद्युत मंत्री श्री एन. के. पी. साल्वे को

पत्र लिखकर श्री लालू प्रसाद यादव ने कहा कि "राज्य सरकार कोइलकारो परियोजना के कार्यान्वयन के लिए इच्छुक है। परियोजना से उत्पादित विद्युत की खपत उस समय के निर्धारित दर पर राज्य सरकार पूर्णतः करने को तैयार है। मेरा अनुरोध है कि इस प्रोजेक्ट पर तत्परतापूर्वक कार्रवाई हो और आवश्यक राशि की व्यवस्था की जाए इससे इस प्रोजेक्ट को शीघ्र पूरा किया जा सके और विलम्ब के चलते उत्पादित विद्युत की दर में अधिक वृद्धि नहीं हो। मैं आपको पूर्णतः आश्वस्त करना चाहता हूं कि राज्य सरकार इस प्रोजेक्ट को पूरा करने के लिए कटिबद्ध है। और नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन को निर्माण कार्य करने के लिए स्थानीय प्रशासन द्वारा पूर्ण संरक्षण और सहयोग दिया जाएगा। यह प्रोजेक्ट छोटानागपुर की स्थानीय जनता के हित में है और स्वार्थी तत्वों के द्वारा विरोध किया जा रहा है। प्रेस में जो समाचार आ रहे हैं वे बढ़ा चढ़ा कर दिए गए हैं। विस्थापित व्यक्तियो के नियोजन में राज्य सरकार चाहेगी कि सर्वोच्च न्यायालय के फैसला के अनुसार नेशनल हाइड्रो पावर कारपोरेशन में 25 प्रतिशत व्यक्तियों को नियोजित करे। फिर भी आपके कथनानुसार उनकी लाचारी को देखते हुए राज्य सरकार सम्पूर्ण विस्थापितों व प्रत्येक परिवार से एक योग्य व्यक्ति को नियोजन के लिए व्यवस्था करेगी। दिल्ली में आपसे इस प्रोजेक्ट के विषय पर बात होने के बाद राज्य सरकार द्वारा भारतीय प्रशासनिक सेवा के एक वरीय पदाधिकारी को निदेशक प्रोजेक्ट के पद पर पदस्थापित किया गया है और सभी कार्रवाई सुनिश्चित करने हेतु उन्हें निर्देश दिया गया है। कृप्या 10 करोड़ रू. की राशि भू – अर्जनादि के लिए विमुक्त करने की कृपा की जाए। शुभकामनाओं सहित. इस पत्र की खबर पूरे इलाके में आग की तरह फैल गई। बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री लालू यादव के आने का सर्वत्र विरोध किया जाने लगा। जनता के बीच यह बात फैल गई कि राज्य में चारा घोटाले की वजह से उनकी नकारात्मक छवि बन गई थी, और जनता सोचने लगी कि परियोजना के नाम पर यहां भी घपला घोटाला होगा और आदिवासियों को कुछ भी हासिल नहीं होगा।

कोइलकारो जन संगठन ने शंखनाद किया कि किसी कीमत में बिहार के मुख्यमंत्री को इलाके में घुसने नहीं देगें। इसके लिए चारों तरफ हर गांव में जनता कर्फ्यू लागू कर दिया गया। किसी भी बाहरी व्यक्ति के गांव प्रवेश पर रोक लगा दी गई। यहां तक कि सामाजिक कार्यकत्ताओं को भी पास

जारी कर जाने दिया जाने लगा। गैर मुण्डा भाषी लोगों को गांव में घूमते पाए जाने पर उनसे कड़ी पूछताछ की जाती और उन्हें चेतावनी देकर छोड़ दिया जाता था। कोइलकारो जनसंगठन ने तय कर लिया कि जब तक परियोजना के रद् होने की घोषणा नहीं हो जाती तब तक परियोजना विरोधी आंदोलन अहिंसक तरीके से चलता रहेगा। पूरे इलाके में तब तक जनता कर्फयू लागू रहेगा। जनता कर्फयू के तहत गांव गांव के प्रवेश मार्ग डेरांग कालेट और लोहाजिमी जाने के रास्ते में जनता ने दो खूंटे गाड़कर एक लकडी के बोटे से घेरा डाल दिया। गांव जाने से पहले कोइलकारो जन संगठन के लोगों को सूचित करना होता कि किस मकसद से जा रहे हैं और किससे मिलना है और क्या काम है।

यह जनता कर्फ्यू हमेशा के लिए मानो प्रतिरोध फलस्वरूप लगाकर ग्रामीणों ने अपने आंदोलन को जारी रखने का प्रतीक बना दिया। भारी प्रतिरोध की वजह से प्रधानमंत्री और बिहार के मुख्यमंत्री नहीं आए तो आंदोलनकारियों का मन बहुत बढ़ गया और उनलोगों को लगा कि जीत की दिशा में एक कदम वे आगे बढ़ गए हैं।

इसके बाद पूरे इलाके में एक अजीब सी खामोशी पसर गई। गांव गांव में बैठकों का सिलसिला थमने का नाम ही नहीं लेता और तब देखो तब रैलियों पर रैलियों का आयोजन किया जाता। तब ऐसा लगने लगा कि अब परियोजना नहीं बन पाएगी।

तब झाड़खंड अलग राज्य आंदोलन भी तीव्र गति से अपने परवान पर था। राज्य गठन के अलग राज्य आंदोलन में कोइलकारो जन संगठन के लोगों ने बढ़ चढ़ कर हिस्सेदारी की और 15 नवम्बर 2000 को झाड़खंड अलग राज्य का गठन हो गया। इसके बाद वातावरण में ऐसी गूंज सुनाई देने लगी कि कोइलकारो परियोजना राज्य के निर्माण के लिए जरूरी है और इसे झाड़खंड की नई सरकार बनाकर दी दम लेगी। कोइलकारो जन संगठन के नेताओं ने विचार विमर्श किया और झाड़खंड की सरकार से वार्त्ता करने का निर्णय लिया। इसके लिए तैयारी की जाने लगी। 2001 के 5 फरवरी को झाड़खंड की बाबूलाल मरांडी सरकार ने कोइलकारो जन संगठन से वार्त्ता के लिए जनसंगठन के नेताओं को न्यौता दिया। कोइलकारो जनसंगठन के नेतागण वार्त्ता के लिए तैयारी में जुट गए और मांग पत्र आदि बनाने लगे। अनेक मांगों में एक मांग थी कि कोइलकारो जलविद्युत परियोजना को हर

हाल में रद्द किया जाए। यह परियोजना महाविनाशकारी है और बड़े पैमाने पर विस्थापन कर आदिवासियों का सर्वनाश करनेवाली है।

इसी बीच 1 फरवरी 2001 को अचानक से कोइलकारो परियोजना इलाके में लोहाजिमी जाने के रास्ते में दो थानों की पुलिस फ़ोर्स जबरन प्रवेश कर गई और कुछ लोगों के साथ पिटाई की वारदात को अंजाम दिया। इससे पूरे इलाके के लोग चौंक गए और यह घटना जंगल के आग की तरह फैल गई। कोइलकारो जन संगठन के लोगों ने अफरा तफरी में वार्त्ता के न होने की आशंका जाहिर की। इस घटना के विरोध में पूरे इलाके में रातोंरात गोलबंदी हो गई और सुबह होते होते ही 2 फरवरी 2001 को तपकरा आउट पोस्ट थाना को ग्रामीणों ने चारों तरफ से घेर लिया। ग्रामीण तोरपा और रनिया थाना के थानेदारों को हटाने की मांग कर रहे थे। उनलोगों ने जनता कर्फ्यू का उल्लंघन करके गांव में प्रवेश किया और गांव वालों की पिटाई की।

भीड़ सुबह आठ बजे से डटी हुई थी। लगभग ढाई बजे के आसपास पुलिस ने अचानक से भीड़ पर फायरिंग कर दी। पुलिस फायरिंग से 8 लोग मारे गए और 36 लोग घायल हो गए। प्रारंभ में 5 लोगों के मरने की खबर आई और बाद में 3 लोगों ने अस्पताल में दम तोड़ दिया। यह युवक सुरसेन गुड़िया तो गोली लगने पर घर पर ही रखा गया था। दूसरे दिन अस्पताल ले जाने के क्रम में उसकी मौत हो गई।

अब इस पुलिस फायरिंग के बाद तो सरकार से वार्त्ता करने का कोई तुक ही नहीं था। कोइलकारो जन संगठन के लोगों ने सरकार से निर्धारित वार्त्ता की तारीख 5 फरवरी को वार्त्ता में जाने से मना कर दिया और कहा सरकार के खिलाफ आंदोलन तेज किया जाएगा।

इस पुलिस फायरिंग ने 1995 से चल रहे परियोजना विरोधी आंदोलन को गति दे दी और गांव से लेकर दिल्ली तक लोग परियोजना के विरोध में गोलबंद हो गए। 1 और 2 फरवरी 2001 की हुई वारदात ने यह संदेश दे दिया कि अब किसी भी हाल में यह परियोजना नहीं बनेगी। ग्रामीणों की मांग थी कि पुलिस पिटाई से घायल हुए लोग अमृत गुड़िया और लौरेंस गुड़िया को मुआवजा दिया जाए। कोइलकारो जन संगठन का मानना था कि पुलिस गांव में एक साजिश के तहत घुसी.उनका सवाल था कि पुलिस किसके आदेश पर गांव में लगे बैरिकेट को तोड़ दिया और बंदूक के कुन्दे से लोगों

को पीटा गया। घटना का विवरण देते हुए अमृत गुड़िया और विजय गुड़िया ने बताया कि 1 फरवरी 2001 को तपकरा पुलिस आउटपोस्ट के प्रभारी आर. एन. सिंह और रनिया थाना प्रभारी अक्षय कुमार दो पुलिस वाहनों में 20–25 सशस्त्र पुलिस कर्मियों के साथ गश्त पर निकले. शाम पांच बजे पुलिस फोर्स लोहाजिमी की तरफ गई। जाते समय उनलोगों ने डेरांग गांव में लगे जनता कर्फ्यू के तहत लगी बैरिकेटिंग को नहीं हटाया। लेकिन जब वे वापस लौटाने लगे तो डेरांग गांव में लगे बैरिकेटिंग को तोड़ डाला। तोड़े हुए बैरिकेंटिग को वे अपनी गाड़र में लाद कर ले गए। उस समय फौज से रिटायर फौजी अमृत गुडिया उधर से गुजर रहे थे। उन्होंने पुलिस वालों को पूछा किसको खोजने को गए थे। गांव वालों से आप लोगों को बात करना था। इतना कहने की देर थी पुलिस वालों से आव देवा न ताव बंदूक के कुन्दे से अमृत गुड़िया को पिटाई शुरू कर दी। अमृत गुड़िया को बचाने आए लौरेंस गुड़िया को भी पुलिस ने नहीं बख्शा। गांव वालों का गुस्सा इस बात को लेकर था कि बैरिकेट को तोड़ कर बिना गांव वालों से बात किए पुलिस ने निहत्थे जनता पर वार क्यों किया। इसके प्रतिरोध में 2 फरवरी 2001 को ग्रामीण उग्र हो थाना का घेराव कर दिया। विजय गुड़िया का कहना था कि सुबह 9 बजे से घेराव बहुत ही शांतिपूर्ण तरीके से चल रहा था। कोलइलकारो जन संगठन के बैनर तले लगभग 5000 की भीड़ जमा थी। जनता निहत्थी और शांतिपूर्ण थी। अहिंसक तरीके से चल रहे घेराव प्रदर्शन में आंदोलनकारी पुलिस प्रशासन मुर्दाबाद और कोइलकारो जन संगठन जिंदाबाद के नारे लगा रही थी। ग्रामीण दोनों थाने के थानेदारों को निलंबित करने की मांग पर अड़े थे। डेरांग गांव में गेट लगाने और अमृत गुड़िया को 50 हजार रू. का मुआवजा देने की मांग कर रहे थे। दोपहर लगभग 12 बजे तपकरा आउट पोस्ट पर पुलिस अधिकारी जमा होने लगे थे। इसमें पुलिस उपाधीक्षक खूंटी, खूंटी के सदर अनुमंडलाधिकारी श्री अनूप शरण, कार्यकारी मजिस्ट्रेट श्री सुरेश प्रसाद यादव, तोरपा थाना प्रभांरी अक्षय कुमार राम, रनिया थाना प्रभारी और तपकरा टी ओ पी के प्रभारी आर. एन. सिंह पहुंच चके थे. पुलिस चौकी पर 1/3 डी. ए. पी. रनिया, 1/4 जे. ए. पी. की कमांड फोर्स हजारीबाग कंपनी , 1/6 डी. ए. पी. रांची सेंटर, लाठी पार्टी और 1/5 आंसू गैस पार्टी सहित लगभग 40 पुलिसकर्मी मौजूद थे।

लगभग 12.30 बजे कोइलकारो जन संगठन के महासचिव विजय

गुड़िया, क्षेत्रीय अध्यक्ष सोमा मुण्डा, क्षेत्रीय सचिव सदर कंडुलना, और अन्य की अगुवाई में एक प्रतिनिधिमंडल ने कोइलकारो जन संगठन की तरफ से तपकरा पुलिस चौकी पर मौजूद अधिकारियों को ज्ञापन सौंपा। वहां मौजूद पुलिस अधिकारियों ने कहा कि उनकी मांगों पर विचार करने के लिए डी. एस. पी. को वायरलेस के जरिए सम्पर्क किया जा रहा है और जब तक डी. एस. पी. नहीं आते उनकी मांगों पर थाना के प्रभारी विचार नहीं कर सकते थे। क्योंकि मांगें उन्हीं के खिलाफ थी। लगभग दो बजे डी. एस. पी. आए तब आंदोलनकारी डी. एस. पी. को अपनी मांग पत्र देकर वार्ता करने लगे। डी. एस पी ने मांग पत्र पढ़कर और उनकी बातों को सुनकर कहा कि थाना प्रभारियों को निलंबित करने का उनका अधिकार नहीं है। वे इस बारे में एस. एस पी. ग्रामीण को लिखेंगें। उसी समय तोरपा के विधायक कोचे मुंडा आए और उन्होंने वस्तुस्थिति से अवगत होने के बाद डी. एस. पी. से कहा कि जिस पुलिसकर्मी ने अमृत गुड़िया की पिटाई की वह इस क्षेत्र में रहने लायक ही नहीं है। उन्हें तत्काल निलंबित किया जाना चाहिए। पुलिस का यह व्यवहार तानाशाह की तरह है। यह आदिवासी इलाके में नहीं चलेगा। पुलिसकर्मियों को निलंबित करना होगा अन्यथा आंदोलन तेज होगा। इसके बाद जैसे ही विधायक निकले वैसे ही रनिया थाना प्रभारी अक्षय कुमार राम ने निहत्थी जनता पर अंधाधुंध फायरिंग करना प्रारंभ कर दिया। फायरिंग के बाद पथराव होने लगा। भीड़ शांतिपूर्ण तरीके से सुबह से थी। लगभग पांच छह घंटे तक प्रदर्शन कर रही भीड़ की बातों को सुनने के बजाए उन्हें कुचलने की प्रयास किया गया। गोलीचालन के बाद से पूरे इलाके में अफरा तफरी फैल गई. लोग बदहवास अपनी जान बचाने के लिए इधर उधर भागने लगे। चारों तरफ चीख पुकार मच गई और देखते ही देखते लाशों का ढेर लग गया। पुलिस फायरिंग में वहीं घटनास्थल पर ही पांच लोग मारे गए। बाकी लोगों को गोली लगने पर पुलिस के भय से उनके परिजन अपने अपने घर ले गए। गुस्साए लोगों की भीड़ ने पुलिस की गांड़ी को आग के हवाले कर दिया। अक्षय कुमार राम और दारोगा आर. एन. सिंह ने लोगों को दौड़ा दौड़ा कर गोली मारी। ग्रामीणों का कहना था कि दारोगा आर एन सिंह कह रहे थे कि पूरा इलाका साफ कर देंगें। परियोजना कैसे नहीं बनती है देखते है। तपकरा बाजार के ग्रामीणों का कहना है गाड़ियों को जलाने, तोड़ फोड़ करने और पत्थरों से गाड़ियों को कूचने का काम पुलिसवालों ने बड़े इत्मीनान से

किया। गोलीकांड के बाद ग्रामीणों की पकड़ धकड़ शुरू हो गई। गांव में घुस घुसकर मुर्गा बकरी पुलिसवाले उठा ले गए। गोलीकांड के बाद तपकरा के नरेश साहू को पुलिस मारते पीटते ले गई। जबकि वे अपाहिज हैं। सुदर्शन केसरी के घर छह बजे पुलिसकर्मी आए और बोला कि मार कर सबका गर्दा उड़ा देगें। उनके घर का पीछे का दरवाजा लात मार पुलिस वालों ने तोड़ दिया और दो लोगों को जबरन उठाकर ले गए। तपकरा बाजार के आस पास के घरों में घुस घुस कर पुलिस वालों ने बहुत ज्यादती की और जिसे मन किया उसे उठा कर ले गई। बाजार के पास सुनील शर्मा और विजय शर्मा दोनों भाइयों को पुलिस उठा कर ले गई। रामचलित महतो के घर का दरवाजा तोड़कर खस्सी उठाकर पुलिसवाले ले गए। लोगों में काफी दिनों तक पुलिसिया दहशत कायम रहा।

पांच लाशों को उठाकर पुलिसवालों ने तपकरा आउट पोस्ट के बाहर गेट के पास लाइन से सुला कर रख दिया। वहीं पर थाना के भीतर डी. सी. और एस. पी. मौजूद थे। जिला प्रशासन के अधिकारी इस बात के लिए परेशान थे कि आखिर लाशों की पहचान कैसे की जाए। गोलीकांड के बाद सारे लोग इधर उधर भाग कर छिप गए थे। घटना के दो घंटे बाद वहां कोई नहीं था। वारदात के बाद पत्रकारों की टोली लगभग शाम साढ़े सात बजे पहुंची तो घनघोर अंधेरा पसरा हुआ था। थाना में एस. पी. और डी.सी. से पत्रकारो ने जानना चाहा तो वे कोइलकारो के बारे कुछ भी नहीं बता सके। उन्हें इतना भी नहीं पता था कि गैर मुण्डा भाषी लोगों का उस इलाके में प्रवेश वर्जित था। डी. सी. और एस. पी. ने परियोजना के बारे में भी कुछ न बता सके। उनका कहना था कि आदिवासी मनमानी और ज्यादती करते हैं। पत्रकारों ने पूछा कि अगर वे ज्यादती करते हैं तो पुलिस वाले क्यों नहीं मारे गए। केवल ग्रामीण ही क्यों मारे गए. एस. पी. ने कहा कि एक पुलिसवाला भी मारा गया है और उसकी जली लाश मिली है। पत्रकारों ने जानकारी हासिल की और पाया एक पुलिसकर्मी समेत 9 लोग मारे गए हैं। एक पुलिसकर्मी को आंदोलनकारी उठाकर पीछे की तरफ ले गए और उसे मार डाला। आंदोलनकारी अपने मारे गए 8 साथियों के एवज में इतना ही कर सके। एस. पी. और डी. सी. का कहना था कि पहले गांव वाले उग्र हो गए और पुलिसवालों पर पत्थर चलाया। इसके बाद ही गोली चली है। पुलिस के वरीय अधिकारियों के पास इस बात का जबाव नहीं था कि आखिर

आंदोलनकारी सुबह से ही थाना का घेराव कर रहे थे और निहत्थे थे। उनलोगों ने पुलिस पर हमला क्यों नहीं किया। फायरिंग के पहले आंसू गैस के गोले छोड़े जाते हैं। लेकिन आंसू गैस पार्टी रहते हुए भी इसका प्रयोग नहीं किया गया। इसका मतलब यह था कि पुलिस ने ग्रामीणों को मार डालने का निश्चय कर ही लिया था। आखिर दो बजे के बाद पुलिस वाले जब कोइलकारो जन संगठन के साथ वार्त्ता हो रही थी तब पुलिसवाले फायरिंग क्यों प्रारंभ की। जिला प्रशासन के पास इस बात का जबाव नहीं था कि आखिर शांतिपूर्ण और निहत्थी भीड़ पर गोली चलाने की जरूरत क्यों पड़ी। भीड़ की मांग पूरी की जा सकती थी। लेकिन इस बातों से जिला व पुलिस प्रशासन का कोई लेना देना नहीं था। उनके पास दरअसल इस बात का कोई जबाब ही नहीं था।

गोलीकांड के बाद गिरी लाशों ने सरकार और प्रशासन को कटघरे में खड़ा कर दिया। लाशों को पहचानने के लिए जिला पशासन को पत्रकारों की मदद लेनी पड़ी। आंदोलनकारियों ने पत्रकारों को खबर किया कि लाशों को लावारिस न घोषित किया जाए। उनके परिजन लाशों की पहचान करने जाएंगे। तीन फरवरी को जिला प्रषासन ने सुबह–सुबह लाशों को तोरपा स्थित चर्च की संस्था के पीछे तरफ गाड़ियों में रख दिया। वहीं से लाशों की पहचान कर परिजन अपने अपने घर ले गए और फिर उन्हें सामूहिक संस्कार की तैयारी के लिए वापस तपकरा लाया गया। पुलिस फायरिंग में मारे गए लोगों की शिनाख्त 3 फरवरी को जमाल खान उम्र 60 साल तपकरा बाजार, बोडा पाहन उम्र 60 साल चम्पाडीह, तोरपा, लुकास गुड़िया उम्र 30 साल गोंडरा रनिया, सोमा जोसेफ गुडिया उम्र 45 गोंडरा रनिया, प्रभु सहाय कंडुलना उम्र 32 साल जराकेल, सुन्दर कन्दुलना उम्र 17 साल रनिया, समित डहांगा उम्र 14 साल जयपुर रनिया, सुरसेन गुड़िया उम्र 13 साल चम्पाडीह तोरपा के रूप में की गई। जमाल खान को छोड़कर सभी आदिवासी थे। जमाल खान अल्पसंख्यक मुस्लिम समुदाय से थे। गोलीकांड में जो लोग घायल हुए उनकी पहचान कुमलेन गुड़िया, इलियास गुड़िया, पौलुस गुड़िया, फ्रांसिस गुड़िया, मसीहदास गुड़िया, अरविंद गुड़िया, मार्टिन कन्डुलना, जोन कन्डुलना, मसीहदास कन्डुलना, सैमुअल टोपनो, मान टोपनो, सलमान भेंगरा, जयपाल के रूप में की गई। इनके अलावे भी लगभग 30 लोग घायल हुए जिन्हें तपकरा के स्थानीय निजी डाक्टर के क्लीनिक में इलाज करके छोड़ दिया गया।

ग्रामीणों के आंखों के आंसू अभी थमे ही नहीं थे कि पुलिस ने आनन फानन में प्राथमिकी दर्ज कर ली। पुलिस ने 2 फरवरी 2001 को प्राथमिकी दर्ज कर विवरण दिया कि सूचित किया जाता है कि आज दिनांक 02.02. 2001 को प्रातः 10 बजे डी. एस. पी. खूंटी अपने साथ 1/4 की टुकड़ी लेकर तपकरा पुलिस चौकी पर स्थानीय लोगों द्वारा एम सी सी उग्रवादियों के विरूद्ध कार्यवाही के प्रश्न पर सुरेश प्रसाद यादव, प्रभारी तोरपा 1/8 डी. ए. पी. की टुकड़ी के साथ की गई हाथापाई के संदर्भ में किए जानेवाले प्रस्तावित शांतिपूर्ण प्रदर्शन से निपटने के लिए गए थे। घटनास्थल पर भारी भीड़ की वजह से तोरपा थाना की जीप बी. आर–14 पी– 2017 और डी. एस. पी. की जिप्सी बी. आर – 14 पी– 2226 को तपकरा पुलिस चौकी के पश्चिम में बरगद के पेड़ के नीचे खड़ा कर दिया गया था। तपकरा पुलिस चौकी पर पहले से अक्षय कुमार राम रनिया थाना प्रभारी, 1/3 डी ए पी टुकड़ी और 104 जे. ए. पी. हजारीबाग कंपनी की कमान टुकड़ी के साथ रवींन्द्र नाथ सिंह, तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी 1/6 डी ए पी टुकड़ी, रांची से 20 लाठी बल और 1/5 गैस टुकड़ी के साथ तैनात थे। 11.30 बजे कानून व्यवस्था को बनाए रखने के लिए कार्यपालक दंडाधिकारी श्री अनूप शरण खूंटी, सब डिवीजनल अधिकारी खूंटी, जीप नम्बर बी आर 14 पी 13/1 में आए और भारी भीड़ की वजह से उन्होंने अपना वाहन वहीं खड़ा कर दिया जहां अन्य वाहन खड़े थे। पुलिस चौकी के बाहर लगभग 3–4 हजार लोग एकत्रित थे जो तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी और रनिया के थाना प्रभारी को बर्खास्त करने की मांग कर रहे थे। इस प्रदर्शन का नेतृत्व विजय गुड़िया गांव गुटूहातू थाना तोरपा तथा अन्य के हाथ में था। लगभग 12.30 बजे के लगभग विजय गुड़िया के नेतृत्व में एक प्रतिनिधिमंडल ने डी. एस. पी. खूंटी और मजिस्ट्रेट को एक ज्ञापन दिया। इस ज्ञापन में मुख्यतः तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी और रनिया के थाना प्रभारी को बर्खास्त करने की मांग की गई थी। डी एस पी खूंटी ने प्रतिनिधिमंडल को जानकारी दी कि वह इस ज्ञापन को अपनी सिफारिशों के साथ वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों के पास भेज देंगे और बर्खास्तगी का निर्णय केवल जांच के बाद ही लिया जा सकता है। विजय गुड़िया और प्रतिनिधिमंडल के सदस्यों ने इस पर अपनी सहमति व्यक्त की और उन्होंने डी एस पी महोदय से आग्रह किया कि वह भीड को संबोधित करें और अपने दृष्टिकोण से अवगत कराएं। इस पर डी एस पी और

उपस्थित मजिस्ट्रेट लोगों के पास गए परन्तु उनकी बात पर कुछ लोग भड़क उठे और कहने लगे कि यह कोई फैसला नहीं है और हम इसे नहीं मानेगें। इसके बाद कुछ लोग वहां भड़काउ भाषण देने लगे। चौकीदार तथा अन्य स्थानीय व्यक्तियों से पूछताछ करने पर पता चला कि भीड़ को भड़काने में मो. निसाद खान, प्रदीप कुमार गुप्ता, मो. खान, जाकिर खान, तैयब अंसारी, प्रकाश चौधरी और अन्य का हाथ था। लगभग 15.00 बजे तोरपा विधायक कोचे मुण्डा आए और उन्होंने डी. एस. पी और मजिस्ट्रेट से लोगों के मांगों के बारे बात की। इसके अलावा उन्होंने उल्लिखित दोनों अधिकारियों की तत्काल बर्खास्तगी का भी आग्रह किया। जब डी. एस. पी. ने उन्हें बताया कि उनके पास बर्खास्तगी का कोई अधिकार ही नहीं है। तो तय किया गया कि लोगों की मांगों को पूरा करने के लिए ग्रमीण एस. पी. को बुलाया जाए। फलस्वरूपप वायरलेस के जरिए उनहें संदेश भिजवा दिया गया। श्री कोचे मुण्डा ने कहा कि एस. पी. के आने पर वे दोबारा बात करेगें। इसके बाद जनसमूह को स्थानीय भाषा में संबोधित करने के बाद वे तपकरा बाजार की तरफ चले गए। उनके जाने के बाद मो. निसाद खान, प्रदीप कुमार गुप्ता, मो. खान, जाकिर खान, तैयब अंसारी, ओम प्रकाश चौधरी तथा अन्य यह कहते हुए लोगों को भड़काने लगे कि यदि लोगों को पुलिस आतंक से बचना है तो आज पीछे हटने से काम नहीं चलेगा और पुलिस चौकी को तबाह कर देना है। उनके भाषणों को सुनकर भीड़ भड़क उठी। यह सब लोग पुलिस के खिलाफ नारे लगा रहे थे। मो. निसाद खान, प्रदीप कुमार गुप्ता, मो. खान, जाकिर खान, तैयब अंसारी, ओम प्रकाश चौधरी तथा अन्य पुलिस को गालियां दे रहे थे और पुलिस पर हमला करने के लिए उकसाने लगे। उनके भड़काउ भाषणों के बाद उकसावे में आकर लोगों ने पुलिस पर पत्थर फेंकने शुरू कर दिए।

मौके पर मौजूद मजिस्ट्रेट और सभी पुलिस अधिकारी आगे बढ़कर लोगों को पत्थरबाजी रोकने के लिएं कहने लगे परन्तु उनकी बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ा और तीनों तरफ से पथराव चलता रहा। इस पर मजिस्ट्रेट ने उंची आवाज में भीड़ को गैरकानूनी सभा घोषित कर दिया और आदेश दिया कि सभी लोग वहां से हट जाएं। परन्तु उनकी बात सुनने पर भीड़ उग्र हो गई और पत्थरबाजी के साथ साथ मारो मारो की आवाज आने लगी। भीड़ की तरफ से हमलावर तेवरों को देखते हुए मजिस्ट्रेट ने लाठी बल के

प्रभारी को आदेश दिया कि वह प्रदर्शनकारियों पर हमला करके उन्हें तितर बितर कर दें। परन्तु लाठी चार्ज के बाद भी भीड़ तितर बितर नहीं हुई और पहले से भी ज्यादा उग्र हो उठी। पथराव की वजह से लाठीबल के लोगों को चोंटें भी आई. स्थिति को नियंत्रित करने के लिए मजिस्ट्रेट ने आंसू गैस छोड़ने के आदेश दिए। आंसू गैस छोड़ने पर प्रदर्शनकारी पुलिस चौकी से थोड़ी दूर हट गए। परन्तु फौरन ही गुस्से में आकर पत्थर और रोड़े फेंकते हुए पुलिस चौकी की तरफ बढ़ने लगे। उस समय डी एस पी महोदय लगातार चिल्लाते हुए भीड़ को पत्थरबाजी रोकने और पीछे हटने के लिए कहते जा रहे थे क्योंकि अन्यथा उन्हें गोली चलाने का आदेश देना पड़ेगा। इस पर प्रदर्शनकारी और भी गुस्सा हो गएऔर पहले से भी अधिक तेजी से पतथर फेंकने लगे। इस पत्थरबाजी के कारण डी एस पी खूंटी और तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी को सिर में गंभीर चोटें आईं और दूसरे पुलिसकर्मी घायल हो गए। हवा में बहाव की दिशा और रफतार ठीक न होने के कारण आंसू गैस का भीड़ पर कोई अपेक्षित प्रभाव नहीं पड़ रहा था। एक बार मजिस्ट्रेट ने उंची आवाज में तथा अपनी बात को दोहराते हुए भीड़ से आहवान किया कि वह पत्थरबाजी बंद करके दूर हट जाएं परन्तु इसका भी प्रदर्शनकारियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

उसी समय आंसू गैस प्रभारी ने जानकारी दी कि आंसू गैस के सभी 16 गोले फेंके जा चुके हैं और उनके पास कोई गोला नहीं बचा है। ठीक उसी समय प्रदर्शनकारियों ने रनिया थाना की जीप बी आर 14 पी 2007 को आग के हवाले कर दिया जो कि तपकरा पुलिस चौकी के सामने खड़ी थी। इसी समय पुलिस चौकी की पश्चिम दिशा की तरफ से गोलियों की आवाज सुनी जा सकती थी। जिससे यह स्पष्ट हो गया प्रदर्शनकारी बाकायदा हथियारों से लैस होकर आए हैं। उस समय तक प्रदर्शनकारी बेहद ही आक्रामक हो गए थे और तपकरा पुलिस चौकी की चहारदीवारी में दाखिल होने लगे थे और बड़े बड़े पत्थर फेंक रंहे थे। वे चिल्ला रहे थे कि अब जीप जल चुकी है अब वर्दीधारी पुलिस को भी जला डालो। उनके हथियार छीन लो। मजिस्ट्रेट और हम सब पुलिसकर्मियों ने पत्थर और रोड़ो से बचने के लिए पुलिस चौकी की इमारत में शरण ली। सरकारी सम्पत्ति और जान पर खतरे को देखते हुए तथा आत्मरक्षा में मजिस्ट्रेट ने डी एस पी खूंटी को भीड़ पर चार राउंड गोली चलाने का आदेश दिया। आदेशानुसार

डी. एस. पी. खूंटी ने तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी और रनिया थाना प्रभारी को आदेश दिए। इस पर प्रदर्शनकारी पहले से भी उग्र हो उठे और पुलिस चौकी के उपर बड़े बड़े पत्थर फेंकने लगे। हालात को बिगड़ता देख मजिस्ट्रेट ने एक बार फिर आदेश दिया कि प्रदर्शनकारियों पर तीन दिशाओं से 5–5 राउंड फायर किए जाएं। ओदशानुसार डी. एस. पी. खूंटी के कहने पर तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी और डी एस पी खूंटी तथा तोरपा थानाा प्रभारी ने तीन दिशाओं से 5–5 राउंड फायर के आदेश दिए। परन्तु इस पर भी प्रदर्शकनारियों ने पत्थरबाजी बंद नहीं की बल्कि उन्होंने तेजी से पत्थर फेंकने शुरू कर दिए। ठीक इसी समय पश्चिमी दिशा में बरगद के पेड़ के पास आग की उंची उंची लपटें और धुआं निकलता दिखाई दिया जिससे पता चलता था कि पेड़ के नीचे खड़ी दोनों जीपों को आग लगा दी गई। इनमें से एक जीप मजिस्ट्रेट महोदय की थी और दूसरी खूंटी डी. एस. पी. की जिप्सी थी। प्रदर्शनकारियों के मूड और गुस्से को देखकर मजिस्ट्रेट ने एक बार फिर आदेश दिया कि वह पूर्व, पश्चिमऔर आगे की तरफ से 10–10 राउंड फायर करे। आदेश का पालन करते हुए रनिया थाना प्रभारी जेएसी/0/7 तथाा हजारीबाग से आई टुकड़ी ने तीनों दिशाओं में 10–10 राउंड फायर किए। जेएपी की तरफ से प्रदर्शनकारियों पर की जा रहीफायरिंग के बावजूद उनकी आक्रामकता में कोई कमी नहीं आई। और वह पहले से भी अधिक भीषण पत्थरबाजी करने लगे। उनमें से कुछ पुलिस चौकी के बगल में स्थित पंचायत भवन की सीढ़ियों और दीवारों पर जा चढ़े और वहां से पथराव करने लगे। इस पथराव के कारण पुलिस चौकी के एस्बेसटॉस, ईंट और पत्थर गिरने लगे। इसकी वजह से भी कुछ पुलिसकर्मियों को चोटें आई। उनके शरीर से खून बहने लगा। सभी पुलिस अधिकारी, मजिस्ट्रेट और पुलिस बल पुलिस चौकी के भीतर घिर गए और कुछ प्रदर्शनकारी " मारो मारो" पुलिस चौकी को जला दी उन सबको जला दो चीखने लगे। वे पत्थर फेंकते हुए लगातार यही बात चिल्ला रहे थे। पुलिस चौकी के भीतर फंसे हमलोग लाचार थे। हमार जीवन खतरे में था ऐसा लगता था कि भीड़ पुलिस चौकी में घुस जाएगी और हमलोगों को बेरहमी से मार डालेगी। पश्चिमी दिशा से फायरिंग की आवाज अभी सुनाई दे रही थी। स्थिति इतनी भयानक हो चकी थी कि न तो अंदर रहना सुरक्षित था न बाहर जाना खतरे से खाली था। फलस्वरूप डी. एस. पी. खूंटी को फिर आदेश दिया गया कि वह तीनों दिशाओं में फिर

से 10 से 12 राउंड गोलियां चलाए। इस आदेश का पालन करते हुए जेएपी के जवानों ने तीनों दिशाओं से प्रदर्शनकारियों पर 10 से 12 राउंड गोलिया चलाई। इस बार प्रदर्शनकारियों ने पथराव रोक दिया और वह तितर बितर हो गए। इतना ही नहीं पश्चिम से आ रही गोलियों की आवाज भी बंद हो गई।

इसके बाद मजिस्ट्रेट और बाकी पुलिसकर्मी पुलिस चौकी से बाहर आए। पुलिस चौकी की बाहरी चौहद्दी में दो घायल पड़े थे। पुलिस चौकी के चबूतरे के पश्चिम में एक मृत व्यक्ति पड़ा था। इसके बाद चारदीवारी के बाहर मुख्य दरवाजे के पश्चिम में एक और व्यक्ति मृत पाया गया। मुख्य दरवाजे के पूर्व में एक और व्यक्ति घायलावस्था में पड़ा था। पुलिस चौकी के सामने जहां रनिया थाना की जीप जल रही थी वहां दो व्यक्ति मृत पाए गए। पुलिस चौकी की बाड़ के पास एक और व्यक्ति मरा पड़ा था। उसके बगल में एक अन्य व्यक्ति घायल अवस्था में था। पुलिस चौकी के पश्चिम में बरगद के पेड़ के पास डी. एस. पी. खूंटी की जिप्सी, मजिस्ट्रेट की जीप और तोरपा थाना की जीप जल रही थी। वहां एक घायल व्यक्ति पड़ा था। सभी घायल व्यक्तियों को उठाकर पुलिस चौकी लाया गया। पुलिस चौकी से लगभग 50 गज की दूरी पर 12 बोर के खाली कारतूस पड़े मिले। घायलों में इलियास गुड़िया तोरपा, जोसेफ गुड़िया तोरपा, सुलेमान टोपना गोंडरा रनिया, फ्रांसिस गुड़िया गोंडरा रनिया, बोदा पाहन चम्पाबाहा तोरपा शामिल थे।

प्रदर्शनकारियों के पथराव के कारण श्री पी. के. एन. कुजूर डी एस. पी खूंटी रवीन्द्रनाथ सिंह, तपकरा पुलिस चौकी प्रभारी, गोविन्द राम पुलिस 4/6, शिवचरएर कालिंदी पुलिस 1807 शेषवन पुलिस 40 सत्येंद्र नारायण राय को गहरी चोटें आई। अक्षय कुमार राम, पभारी रनिया थाना, पुलिस रामकुमार सिंह, पुलिस यशोधरन चौधरी पुलिस अजय कुमार सिंह, पुलिस मिटूराम, पुलिस लालू बैठा, पुलिस इंद्र प्रसाद, पुलिस शंभु सिंह, पुलिस आजाद प्रकार पांडे, पुलिस महेन्द प्रसाद साहू, पुलिस सुधीर कुमार पुलिस ठाकुर महेन्द्र यादव, पुलिस अजय बागे, पुलिस सुरेंद्र सिंह, पुलिस राजेंद्र झा, पुलिस 1797, राजेश मुमार पुलिस शमीम खान, को अलग अलग सर पर चोटें आई। हम सभी के शरीर पर जगह जगह घाव बन गए। तोरपा रेफरल अस्पताल के चिकित्सा प्रभारी को तोरपा पुलिस स्टेशन से घायलों के इलाज के लिए सूचना दी गई। इसके बाद जितनी दूर तक गोलियां जा सकती थी उतने दूर तक के क्षेत्र का मुआयना किया गया। इनके अलावा और कोई

घायल या मृत व्यक्ति नहीं मिला। डी एस पी खूंटी को गहरी चोट आई थी। वे बेहोश थे। हथियार और गोला बारूद की जांच करने पर पता चला कि रामानुज ने 2 राउंड, राजेश कुमार 5 राउंड, तपकरा पुलिस चौकी सशस्त्र गार्ड 8 राउंड, सुधीर कुमार ठाकुर 2 राउंड, महेंद्र यादव 5 राउंड, इफितारखान 15 राउंड, कन्हैया यादव 10 राउंड, अजय कुमार सिंह 15 राउंड, आंसू गैस टुकड़ी हवलदार संतोष कुमार 8 राउंड, लालू बट्टा 8 राउंड गोली चालन किया गया। जिप्सी ड्राइवर एडविन हांसदा आया तो देखा कि उसके कपड़े बुरी तरह से फटे हुए थे। मेरा दावा है कि मो. निजाम खान, मो. खान, प्रदीप कुमार गुप्ता, ओमप्रकाश चौधरी, तैयब अंसारी, जहीर खान और जो घायल हुए थे सभी लोगों ने 3 से 4 हजार अज्ञात गांव वालों ने गैरकानूनी सभा करके हमें जान से मारने का प्रयास किया। उनका इरादा पुलिस चौकी को नष्ट करने, डयूटी पर तैनात पुलिसकर्मियों पर हमला, सरकारी वाहनों को जलाने, पुलिस की चौकी के भवन और अन्य सम्पत्ति को नष्ट करने का था।

इसलिए निवेदन है कि उपरोक्त नामित व्यक्तियों के खिलाफ यह एफ आई आर दर्ज की जाए। यह प्राथमिकी यमुना राम पुलिस इंसपेक्टर डिवीजन तोरपा, जिला रांची, कैंप तपकरा पुलिस चौकी द्वारा लिखित दी गई।

दूसरी तरफ सैमुअल टोपनो ने भी पुलिसवालों के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की. उन्होंने आदिवासी हरिजन थाना में दर्ज प्राथमिकी में कहा है कि मैं समुअल टोपनो पुत्र स्वर्गीय सुलेमान टोपनो गांव गोंडरा थाना रनिया जिला रांची का एक गरीब आदिवासी हूं। मैं यह लिखित शिकायत राजेंद्र मेडिकल कॉलेज अस्पताल से भेज रहा हूं। ज्ञातव्य है कि 1 फरवरी 2001 को थाना प्रभारी रनिया थाना श्री अक्षय कुमार राम और तपकरा पुलिस प्रभारी आर एन सिंह ने कुछ पुलिसकर्मियों के साथ मिलकर श्री अमृत गुड़िया और लौरेंस गुड़िया की पिटाई की। उनकी पिटाई तब की गई जब वह पुलिस को बैरिकेड हटाने से रोक रहे थे। जिसे गांव डेरांग में कोइलकारो क्षेत्र में पुलिस के अत्याचार के खिलाफ खड़ा किया गया था। मैं शांतिपूर्ण प्रदर्शन में 2 फरवरी 2001 को लगभग शाम 3.30 बजे तपकरा पुलिस चौकी पहुंचा था। मेरे साथ फिलिप गुड़िया और धर्मदास गुड़िया दो व्यक्ति थे। वहां पहुंचने पर मैं कैंप ऑफिस के निकट तपकरा पुलिस चौकी के पश्चिम में शांति से खड़ा था। उसी समय पुलिस चौकी में मौजूद पुलिसकर्मियों ने अचानक गोली चलाना शुरू कर दिया। मैं फौरन पीछे हट गया लेकिन तब तक मेरी

बाई एंड़ी के उपर एक गोली लग चुकी थी। पैर में लगी गोली की वजह से मैं चल नहीं पा रहा था तो मेरे दोस्तों फिलिप और धर्मदास ने उठाकर थाने के उत्तर में स्थित एक घर में पहुंचाया। इसके बाद तीन लड़के मुझे उठाकर ले जाने लगे तो चार पुलिसवालों ने पीछा किया तो वे लड़के मुझे छोड़कर चले गए। चारों पुलिसवालों ने मुझे एक बोरा में डाला और थाना की दीवार के पास लाकर डाल दिया। चारों पुलिसवाले मुझे मारने की बात करने लगे। इन पुलिसवालों के पास राइफल था। एक पुलिसवाले ने कहा कि पीछे से फायर का आदेश आया है। दूसरे ने कहा कि फायर का कोई आदेश नहीं आया है। इसलिए उनलोगों ने मेरे उपर गोली नहीं चलाई। उनलोगों ने बाड़ से एक बांस खींचकर मेरी गर्दन में टिकाकर मुझे मारने की कोशिश करने लगे। मेरे गर्दन में भयानक दर्द होने लगा। मैं बेहोश हो गया तो वे मुझे मरा समझकर छोड़ दिया। 5 मिनट बाद एक पुलिसवाला आया और देखने लगा कि मैं मरा हूं या नहीं। जब उसने देखा कि मैं जिंदा हूं तो अपने जूते से मेरी गर्दन में रखकर दबाना शुरू किया। मेरी आंखे बंद हो गई और मैं बेहोश हो गया. जब मुझे होश आया तो एक पुलिसवाला आया और मेरा नाम लिखकर ले गया। इसके बाद एक नर्स ने मेरे घाव पर पट्टी बांधी और इंजेक्शन लगाया। इसके बाद चौकीदार और एक अन्य व्यक्ति ने मुझे उठाया और पुलिस चौकी के बाहर जहां 5 मृतकों का शव रखा हुआ था वहां मुझे छोड़ दिया। मुझे 5 मृतकों के साथ एक छोटे वाहन में डालकर हमें आर एम सी एच. रांची लाया गया। घायलों में एक लुकास गुड़िया ने रास्ते में ही दम तोड़ दिया। सोमा जोसेफ गुड़िया और दूसरे लोग तो फायरिंग के दरम्यान घटनास्थल पर दम तोड़ चुके थे। सोमा जोसेफ गुड़िया को हाथ और पेट में गोलियां लगी थी। उसके अलावा 10 और लोगों को भी गहरी चोंटे लगी थी। जिसका इलाज आर एम सी. एच में चल रहा था। मरनेवाले और घायल सभी आदिवासी थे। पुलिस ने जो फायरिंग की उससे 8 लोग मारे गए और 36 लोग घायल हो गए। अनेक लोंगों को इलाज के बाद छुटटी दे दी गई थी। मेरा इलाज अस्पताल में चल रहा है और मेरी शिकायत पुलिसवालों ने दर्ज नहीं की। आपसे प्रार्थना है कि दोषी व्यक्तियों के खिलाफ उचित कूननी कार्रवाई करें। ताकि मुझ गरीब आदिवासी को न्याय मिल सके।

1 फरवरी 2001 को पुलिस पिटाई से घायल हुए अमृत गृड़िया ने भी 1 फरवरी को प्राथमिकी दर्ज की।

इस तरह लगभग तीस सालों से भी अधिक समय से चले आ रहे परियोजना विरोधी आंदोलन को कुचलने का आखिरी प्रयास पुलिस प्रशासन के द्वारा किया गया। इसके बाद तो पूरे इलाके में कोइलकारो परियोजना विरोधी आंदोलन का भयानक राजनतिकरण हुआ। 4 फरवरी को झाड़खंड बंद का आहवान विभिन्न राजनीतिक दलों के द्वारा आहूत किया गया। कांग्रेस पार्टी ने झाड़खंड बंद में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लिया और मृतकों को दो दो लाख रू. मुआवजा की मांग की। गोलीकांड के खिलाफ वैसे तो सम्पूर्ण विपक्ष एकजुट हो गया और विभिन्न राजनीतिक दलों ने इसका व्यापक विरोध किया। वैसे तो सत्तर के दशक से ही माटी की पार्टी झाड़खंड पार्टी प्रारंभ से ही परियोजना का विरोध करती रही है और इसे महाविनाशकारी परियोजना बताती रही है। बाद में भाकपा, माकपा, राजद, कांग्रेस और झाड़खंड मुक्ति मोर्चा आदि ने भी इस परियोजना की जबरदस्त मुखालफत की और इस परियोजना को हर हाल में न बनने देने के लिए विरोध का संकल्प लिया। हर साल 5 जुलाई को तपकरा में शहीदों को श्रद्धांजलि दी जाती है और कोइलकारो परियोजना न बनने देने का संकल्प लिया जाता है। पुलिस फायरिंग की वारदात के बाद तो सरकार ने भी परियोजना बनाने के सवाल पर चुप्पी साध ली और विधान सभा में घोषणा कर दिया कि अगर गांव वाले परियोजना नहीं चाहते हैं तो परियोजना नहीं बनेगी। पुलिस फायरिंग के बाद झाड़खंड विधान सभा में तत्कालीन भाकपा माले के विधायक महेंद्र सिंह ने पुलिस फायरिंग पर विधान सभा में सवाल उठाए और पुलिसकर्मियों को निलंबित कर दिया।

भारतीय जनता पार्टी की सरकार होने से गोली कांड का ठीकरा उनके सिर पर ही विपक्ष फोड़ने लगा। इस पर भाजपा के नेताओं ने कहा कि सरकार को बदनाम करने की साजिश रची जा रही है। कांग्रेस नेताओं का एक प्रतिनिधिमंडल ने भी तपकरा गोलीकांड इलाके का दौरा किया। राजद विधायक दल ने तपकरा गोलीकांड की जांच के लिए इलाके का दौरा किया। भाजपा के एक प्रतिनिधिमंडल भी इलाके का दौरा कर तिल को ताड़ बनाने वाली बात कही। भाजपा के तत्कालीन मुख्यमंत्री ने कहा कि गोलीकांड कानून व्यवस्था का मामला है न कि परियोजना से जुड़ा कोई मामला है। गोलीकांड के विरोध में झाड़खंड पार्टी, ऑल झाड़खंड स्टूडेन्टस यूनियन, झाड़खंड विकास पार्टी, आदिवासी झाड़खंड जनाधिकार मंच, झाड़खंड प्रदेश

समता पार्टी, फारवार्ड ब्लॉक, आदिवासी छात्र मोरचा और झारखंड युवा मोरचा ने तत्कालीन मुख्यमंत्री का पुतला दहन किया गया। झामुमो के सुप्रीमो ने विधान का घेराव करने का आहवान किया और तपकरा में आयोजित शोक सभा में विभिन्न राजनीतिक दलों का तांता ही लग गया।

तपकरा गोलीकांड के बाद इसका तीखा प्रतिवाद और परियोजना के विरोध को देखते हुए तमाम राजनीतिक दल परियोजना को ही रद्द करने की मांग पर आंदोलन प्रारंभ कर दिया। इस तरह इस परियोजना का जबरदस्त राजनीतिकरण हुआ. अन्ततः यह परियोजना ठंढे बस्ते में चली गई।

कोइलकारो परियोजना में विस्थापन से जुड़ी समस्याएं एवं चुनौतियां

आजाद भारत की मेगा परियोजनाओं में से एक थी कोइलकारो जल विद्युत परियोजना। देश की आजादी के बाद राष्ट्र नायकों ने राष्ट्र निर्माण का जो सपना देखा था उनमें हीराकुंड डैम, भाखड़ा नांगल, भारी अभियंत्रण निगम, राउरकेला स्टील प्लांट, बोकारो स्टील प्लांट आदि की स्थापना और राष्ट्र को प्रगति के पथ पर अग्रसर करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम था। इसी कड़ी में कोइलकारो जलविद्युत परियोजना का निर्माण पूरा किया जाना चाहिए था। पूर्व के अनुभवों और बड़ी परियोजनाओं को लागू करने में उत्पन्न कठिनाइयों के मद्देनजर कोइलकारो परियोजना को लागू करने में सरकार को परेशानी ही परेशानी नजर आ रही थी।

कोइलकारो परियोजना से जुड़ी अनेक समस्याओं में सबसे बड़ी और जटिल समस्या थी विस्थापन की। सरकार को अन्य संबधित विभागों को परियोजना के लागू करने के दरम्यान और भी भिन्न भिन्न समस्याओं से जूझना पड़ रहा था। एक तो यह परियोजना अपने आकार में वृहत् या मेगा परियोजना थी और इसके कई पहलू थे। दूसरा इस परियोजना को ऐसे इलाके में लागू करना था जो कि आदिवासी बहुल इलाका था और साधनहीन स्थितियों में इसे शुरू किया जाना था। इसका एक नकारात्मक और महत्वपूर्ण पहलू तो यह भी था कि परियोजना को लागू कराने के लिए सरकारी अधिकारियों और कर्मचारियों की जो फौज थी वह बाहरी थी। सरकार को सबसे अधिक परेशानी इस बात की थी कि आदिवासियों के गांवों को खाली कैसे कराया जाए और उनका पुनर्वास कैसे किया जाए। प्रारंभिक कोशिशों में ग्रामीण विकास के नाम पर बलि देने को तैयार भी थे। उनका सवाल था कि गांव वालों को क्या मिलेगा। प्रारंभ में जो थोड़े लोग अपनी

जमीन देने को तैयार थे उन्हें मुआवजा देने की तैयारी की गई तो बहुत सी गड़बड़ियां सामने आई। ग्रामीण इस बात के लिए आंदोलन करने लगे कि जमीन की मापी सही तरीके से नहीं की जा रही है और मुआवजा के भुगतान में भी अनावश्यक विलम्ब किया जा रहा है। यह बात बढ़ती चली गई और व्यापक आंदोलन का स्वरूप ग्रहण कर लिया।

विस्थापन के मसले से परियोजना के अधिकारी भी भली भांति परिचित नहीं थे और सरकार ने परियोजना से उजाड़े जाने पर पुनर्स्थापन और पुनर्वास के लिए व्यापक कार्य योजना की घोषणा की थी। इसके तहत विस्थापितों को पूर्ण पुनर्वास किया जाना था। इसके लिए विभिन्न विभागों में गहरे समन्वय की आवश्यकता थी, जो कि प्रारंभ से नहीं की जा सकी। गांव वालों को उजाड़ना और उन्हें उनकी मांगो के अनुरूप में बसाए जाने का सवाल यक्ष प्रश्न के तौर पर सरकार के सामने था।

कोइलकारो परियोजना के कारण उत्पन्न विस्थापन और उससे जुड़ी समस्याएं के मूलतः तीन कारण रहे हैं। यह परियोजना आजाद भारत के बाद बनाई जानेवाली मेगा परियोजना में से एक थी। जिसे पचास के दशक में ही प्रारंभ कर दिया गया था। ठीक इसी समय रांची में भारी अभियंत्रण निगम एच ई सी की स्थापना के लिए योजना तैयार की जा रही थी जिसे साठ के दशक में 1960 से ही भूमि अधिग्रहण कर प्रारंभ कर दिया गया था। चूंकि रांची झाड़खंड और तत्कालीन बिहार का आर्थिक और राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र था, अतएव यहां भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू का आगमन और शिलान्यास आसान साबित हुआ। लेकिन कोइल और कारो नदी सुदूर मुण्डा इलाके में पड़ने की वजह से इस परियोजना को जल्दी पूरा करने में व्यावहारिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा। आदिवासियों के तीव्र प्रतिरोध की आशंका के कारण कोइलकारो परियोजना सरकार के आलमारियों में धूल फांकती रही है। बुनियादी तौर पर इस परियोजना के कारण उत्पन्न होनेवाली समस्याओं का कारण इसका दूरस्थ होना रहा है. जिसके कारण प्रशासनिक और अन्य कार्रवाईयों के लिए निर्णय लेने में विलम्ब होता रहा है।

कोइलकारो परियोजना को लागू करने के दरम्यान रांची में स्थापित भारी अभियंत्रण निगम की स्थापना और इसके कारण उजाड़े गए 32 गांवों की कहानी से कोइलकारो परियोजना क्षेत्र के आदिवासी रूबरू हो चुके थे। उन्हें इस बात की जानकारी हो चली थी कि भारी अभियंत्रण निगम की

स्थापना में उजाडे गए 12 हजार परिवारों में सबों को नौकरी और सबों को मुआवजा नहीं मिल सका है। केवल 10 डिसमिल जमीन देकर लोगों को छोटी सी जमीन में ही समूचे परिवार को समेट दिया गया है। आज लगभग 56 सालों के बाद 10 डिसमिल जमीन पर एक परिवार का गुजारा नहीं हो पा रहा है। एक परिवार में तीन भाइयों के होने और उनके परिवार के होने की स्थिति में 10 डिसमिल भूमि पर परिवार का रहना मुश्किल हो रहा है।

कोइलकारो जलविद्युत परियोजना के विरोध में आंदोलन की अगुवाई कर रहे सोमा मुण्डा का कहना है कि एच. ई. सी. की स्थापना के दरम्यान आदिवासियों की जरूरत से ज्यादा जमीन ले ली गई। कारखाना की स्थापना के बाद जो अतिरिक्त जमीन बची उसे रैयतों को वापस भी नहीं किया गया। उन भूमि पर गैरकानूनी कब्जा बरकरार है। इन बातों के मद्देनजर कोइलकारो परियोजना के लोगों के साथ न्याय ही होगा यह कहा नहीं जा सकता है। पूर्व के अनुभवों के आधार पर सबसे अहम् सवाल था आदिवासियों का विश्वास जीतना। आदिवासी विकास के नाम पर विनाश की महालीला देख चुके थे।

विस्थापन से जुड़ी समस्याओं पर गहन दृष्टि डालते हुए यह बात उजागर होती है कि मेगा परियोजना बनाते हुए कभी भी जनभागीदारी की बात नहीं की जाती है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में जो जनता का जनता के लिए और जनता के द्वारा शासन है वहां जनता के विकास के लिए खासकर आदिवासी समुदाय के विकास के नाम पर लाई जा रही परियोजना पर न तो उनकी राय ली जाती है और न ही उनकी कोई सहमति ली जाती है। महात्मा गांधी ने कहा कि विकास के पायदान पर की आखिरी सीढ़ी में खड़ा व्यक्ति को ध्यान में रखकर ही विकास की योजनाएं बनाई जानी चाहिए। लेकिन हुआ ठीक इसके विपरीत और समाज के अंतिम आदमी को ही खतम करने की साजिश विकास के नाम पर की जाती रही। चूंकि कोइलकारो परियोजना ऐसे दौर में लाई जा रही थी जब देश में एक चरण का विकास समाप्त हो गया था और उसके परिणाम सामने आ गए थे। विकास को बदहाली मिटेगी और खुशहाली लाने, गरीबी मिटाने, भूखमरी समाप्त करने, अशिक्षा समाप्त होने और रोजगार के अवसर पैदा करनेवाला बताया गया था। लेकिन आजाद भारत में हुआ ठीक इसके विपरीत। न तो गरीबी मिटी और न ही

भुखमरी ही समाप्त हुई और न ही बदहाली मिटी। खुशहाल जीवन और बदहाल हो गया और समृद्धि की जगह गरीबी और बढ़ गई। अशिक्षा का स्तर और भी बढ़ गया। केवल इतना ही नहीं महिलाओं और बच्चों पर दूरगामी व्यापक असर पड़ा। इसके अलावे सामाजिक सांस्कृतिक तौर पर आदिवासी मूलवासी की पहचान ही नष्ट हो गई। उनकी भाषा, परम्परा और उनके जीने के तरीके में आमूलचूल परिवर्त्तन आया। उनके जीवन की सामूहिकता नष्ट हो गई। विस्थापितों के जीवन में आए बदलाव का सही तौर पर सामाजिक मूल्यांकन नहीं किया जा सका। इन बातों से कोइलकारो परियोजना के लोग अवगत हो चुके थे। अतएव उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि वे यदि अपनी जमीन जंगल खेती छोड़ देगें तो उसके बदल में उन्हें वैसा ही जीवन मिलेगा।

यह एक बड़ी समस्या थी जिससे सरकार को निपटना था। इसके लिए सरकार को कोइलकारो जनसंगठन ने अवसर भी दिया। सरकार को कहा गया कि कम से कम दो गांवों को आदर्श पुनर्वासित गांव स्थापित कर दिखाया जाए। ऐसा करने पर जनता का विश्वास कायम होगा कि पुनर्वास का कार्य वास्तव में सरजमीं पर उतरेगा। इस बाबत सर्वोच्च न्यायालय ने भी आदेश दिया था कि बिना पुनर्वास के किसी को भी उजाड़ा नहीं जाए। कम से कम दो गांवों को आदर्श गांव स्थापित करके दिखाया जाए। यह एक समस्या का अन्यन्य पहलू हैं कि सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के बावजूद आदर्श गांव के पुनर्वास का कार्य नहीं हो सका। इससे आदिवासी समुदाय की आशंका सत्य हुई।

विस्थापन की समस्या महज विस्थापन यानी कि एक स्थान से उठाकर दूसरे स्थान में बसने भर का मामला नहीं है। विस्थापन की सही परिभाषा अब तक सही मायने में गढ़ी नहीं जा सकी है। देश भर में ही नहीं पूरे ग्लोब के विभिन्न हिस्सों में जहां कहीं भी आदिवासी बसते हैं उनका बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ है।

विस्थापन का मतलब है अपने पुरखों के पारम्पारिक बसाहट जहां उनकी सामाजिक सांस्कृतिक स्थल परिवेश और उससे जुड़ी पारम्पारिक व्यवस्था, गांव, खेतों और जंगलों के पारम्पारिक बसाहट व पर्यावरणीय परिवेश डाड़ी चुआं कुआं आहर पोखर आदि की पारम्पारिक व्यवस्था के साथ पारम्पारिक तरीके के आवाजाही के सुगम रास्ते और रिश्तेदारों नातेदारों के

साथ खेती जमीन के लेन देन के सामूहिक रिश्तों के साथ बसे गांवों जहां सरना, ससनदिरी, हड़गड़ी और मसनास्थल पारम्पारिक रूप से पुरखों के जरूरत के हिसाब से बसे हों उनको पूरी तरह छिन्न भिन्न करना और उजाड़ना और गांव की समूची पहचान को विलीन कर समाप्त कर देना ही विस्थापन है। कोइलकारो परियोजना से न केवल लोग उजड़ जाते बल्कि उनकी पारम्पारिक मानवमूल्य आधारित पूरी ग्राम व्यवस्था ही नष्ट हो जाती। चूंकि परियोजना मुण्डा बहुल आदिवासी इलाके में स्थापित की जानी थी इसलिए सामाजिक सांस्कृतिक सवाल सबसे अधिक महत्वपूर्ण तरीके से उठाया गया। आदिवासी समाज की साामाजिकता सामूहिक जीवन पद्धति सहचर्या पूर्ण जीवन का ताना बाना और सांस्कृतिक तौर पर उनकी भाषा, पहचान, नातेदारी रिश्तेदारी सब एक साथ नेस्तनाबूद हो जाए तो क्या समुदाय इस मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक सदमे को बर्दाश्त कर पाएगा। ऐसा सदमे की भरपाई भी क्या संभव है। विस्थापन और पुनर्वास की पूरी प्रक्रिया में एक बात जो हमेशा गौण किया जाता रहा है कि एक जगह से उठकर दूसरी जगह जाना और सामूहिक तौर पर उसी पारम्पारिक परिवेश में बस जाना क्या व्यवहारिक है और ऐसा पारम्पारिक पर्यावरणीय वातावरण क्या कभी उन्हें उपलब्ध हो पाया हैं। ऐसा कोई इतिहास नहीं है कि पुनर्वास के आदर्श कार्य किए गए होगें।

कोइलकारो परियोजना के कारण विस्थापन से जुड़ी जो समस्याएं उभरती उनमें सामाजिक सांस्कृतिक सवाल के साथ आध्यात्मिक और भावनात्मक सवाल भी जुड़ा रहा है। मनोवैज्ञानिक तौर पर सदमे के शिकार संभावित विस्थापन की आशंका से वे विद्रोह पर उतारू हो गए और परियोजना को विनाशकारी बताया।

विस्थापन से जुड़ी समस्याओं में गांव की पारम्पारिक बसाहट से उजड़ने का मतलब यह है कि अपने पुरखों की हजारों सालों की पारम्पारिक विरासत को छोड़ देना और उससे अपना नाता तोड़ लेना। मुण्डा आदिवासी समुदाय एक ऐसा पारम्पारिक कबिलाई समाज रहा है जो अपने पारम्पारिक तौर पर बनाए गए गोत्र आधारित गांवों में अपने निज लोगों के बीच में रहना और जीने में सुकून महसूस करता है। उनकी बसाहट बिना जंगलों के और जंगली परिवेश के पूरी नहीं हो सकती है।

मुण्डाओं की अपनी पारम्पारिक संस्कृति नाच गान, आखड़ा में जुटने

की परम्परा प्राचीन है। सेन गी सुसन काजी गी दुरड. यानी कि जहां चलना ही नृत्य और बोलना ही गीत की परम्परा है ऐसी संस्कृति वाले देश में विकास की अलग ही परिभाषा गढ़ने की जरूरत है। जहां उ॰ क। अपनी परम्परागत जीवन शैली के साथ विकास हो। उनकी परम्परा व विरास॰ अपना सांस्कृतिक परिवेश भी सुरक्षित रहे और सही मायने में उनका चौर ़फा विकास हो। आदिवासी इलाके के विकास के लिए भारत के प्रथम प्रधा॰ मंत्री ने पंचशील का सिद्धान्त दिया था। पंचशील के सिद्धान्त के बारे में मानवशास्त्री वेरियर एल्विन ने उन्हें बताया था। इसके तहत आदिवासी इलाके का शासन प्रशासन आदिवासियों की परम्परा, उनकी जीवन शैली के अनुरूप होना चाहिए। कोइलकारो परियोजना में इन बातों का कोई ख्याल नहीं रखा गया। यह परियोजना से जुड़ी विस्थापन की समस्याओं में से एक समस्या रही है।

पंचशील के सिद्धान्त के मुताबिक कोई भी बड़ी परियोजना आदिवासी इलाके में थोपी नहीं चाहिए। परियोजना के बाबत प्रभावितों से अवश्य राय लेनी चाहिए और उन्हें पूरे निर्णय प्रक्रिया में भागीदार बनाना चाहिए। लेकिन ऐसा किसी भी परियोजना में नहीं किया गया। कोइलकारो परियोजना के बारे सम्पूर्ण जानकारी तक ग्रामीणों को नहीं दी जा रही थी। इससे भी आदिवासी समुदाय के लोग सशंकित थे। कोइलकारो परियोजना को लागू करनेवाली एजेंसी पूरी तरह से आदिवासी जन जीवन से वाकिफ नहीं रही है और तमाम बाहरी लोगों के होने से परियोजना को लागू करने की कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा था। भाषा संबंधी समस्या एक अलग किस्म की बड़ी समस्याओं में से एक थी। मुण्डा आदिवासी समुदाय मुण्डा भाषा में संवाद करते है। उनके अपने लोगों से बात करने के अलावा अन्य दूसरे समुदाय के लोगों से वे सादरी नागपुरी में बात करते हैं। उन्हें अपने भाषा से बहुत प्रेम होता है और वे उसके बिना जीवित ही नहीं रह सकते हैं। लेकिन इन बातों को ध्यान में रखे बिना ही कोइलकारो परियोजना को लागू करने की जबरन तैयारी कर ली गई थी।

पंचशील के अन्य सिद्धान्तों में आदिवासी इलाके के विकास के लिए अधिकारियों की ऐसी फौज खड़ी की जानी थी जो आदिवासी समाज की परम्परा रूढ़ियों और रीति रिवाजों से परिचित हों, लेकिन कोइलकारो परियोजना को लागू करने के संदर्भ में इन बातों का सर्वथा अभाव रहा है।

पंचशील के सिद्धान्तों के मुताबिक आदिवासियों के जमीन और जंगल

संबंधी अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए। आदिवासी समुदाय जमीन और जंगल पर ही जीता है। लेकिन किसी भी परियोजना को बनाने में इन भावनाओं की कोई कद्र नहीं की जाती है।

पंचशील के सिद्धान्तों के मुताबिक किसी भी बड़ी परियोजना का मूल्यांकन इस बात के पैमाने पर नहीं होना चाहिए कि परियोजना में कितनी लागत राशि व्यय की गई है बल्कि इस बात के आधार पर होना चाहिए कि परियोजना के लागू होने के बाद समुदाय का कितना नैतिक और आध्यात्मिक विकास हुआ।

दुर्भाग्य से इन बातों का ख्याल इस परियोजना में भी नहीं रखा गया न ही इन बातों का परियोजना के लागू करने के दरम्यान ही कोई मतलब था।

विस्थापन से जुड़ी अन्य समस्याओं में संवैधानिक सवाल भी बहुत ही महत्वूपर्ण था। चूंकि आदिवासी इलाका होने की वजह से यह संविधान के दायरे में आता है। संविधान के अन्तर्गत पांचवीं अनुसूची के तहत झाड़खंड के आदिवासी इलाके आते हैं उनमें रांची भी पांचवीं अनुसूची के तहत है जो परियोजना क्षेत्र में आता है। हालांकि पांचवीं अनुसूची के क्षेत्र में राज्यपाल को इस बात का अधिकार है कि आदिवासी इलाके के शासन और प्रशासन के संदर्भ में आवश्यक कदम उठा सकते हैं। लेकिन परियोजना को लेकर राज्यपाल से कोई विचार विमर्श या पांचवीं अनुसूची के आलोक में जनजातीय परामर्शदातृ समिति की बैठक में भी इस बात की चर्चा नहीं की जा सकी कि परियोजना आदिवासियों के लिए कितनी लाभदायी है।

कोइलकारो परियोजना और विस्थापन से जुड़ी समस्याओं में इन समस्याओं पर कभी गौर करने का काम नहीं किया गया।

बुनियादी समस्याओं में एक बात यह रही है कि सरकार इस तरह की मेगा परियोजना बनाने में इस बात का ख्याल नहीं रखती है कि बड़े पैमाने पर जिस समुदाय का विस्थापन होना है उनसे परामर्श और परियोजना रिर्पोट की तैयांरी में उनकी बराबर की सहभागिता की प्रकिया तय हों।

कोइलकारो परियोजना के लागू होने से संभावित विस्थापन की बहुत बड़ी समस्या खड़ी हो जाती जिसकी आशंका भर से ग्रामीण सिहर जाते हैं। इसके विरोध में ही आदिवासियों ने कोइलकारो जनसंगठन का गठन किया और परियोजना को रद्द करने की मांग को लेकर व्यापक आंदोलन खड़ा किया।

कोइलकारो परियोजना का प्रारंभिक इतिहास

कोइलकारो परियोजना जैसा कि नाम से ही प्रतीत होता है यह किसी आदिवासी गांव या नदी के नाम पर बननेवाली परियोजना है। कोइल और कारो दो नदियों के नाम हैं जो कि मुण्डा बहुल इलाके से गुजरते हैं। यह कहा जा सकता है कि मुण्डाओं की सभ्यता इन्हीं नदियों से है और नदियां भी इन्हीं मुण्डा आदिवासियों में रचा बसा हुआ है। वैसे तो यह दुर्गम इलाका है और बहुत आसानी से इस इलाके में पहुंचा नहीं जा सकता है। झाड़खंड अलग राज्य के गठन के बाद ही इस इलाके के गांवों में सड़कों का निर्माण हुआ है।

इस इलाके की सामाजिक सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक, राजनीतिक परिस्थितियां भिन्न हैं। आदिवासी भारत की सांस्कृतिक विविधता कहीं दृष्टिगोचर होती है तो उनमें से यह मुण्डा आदिवासी इलाका भी एक है। एकीकृत बिहार के तीन जिलों रांची, गुमला और पूर्वी सिंहभूम के गांवों को उजाड़ कर परियोजना बनाने और बिजली पैदा करने की योजना थी। यह सभी जिला आदिवासी बहुल जिला है। इन जिलों में उरांव, मुण्डा, खड़िया, हो, लोहरा, महली, खेरवार, और चीक बड़ाईक आदिवासी जातियां निवास करती हैं। इन सभी आदिवासी जातियों की संस्कृति और परम्परा अलग अलग है और इनकी भाषाएं भी अलग हैं। सादरी व नागपुरी भाषा सभी इलाकों में समान रूप से बोली जाती है। इसके जरिए ही आदिवासी आपस में अन्य सदान जातियों के साथ बात किया करते हैं।

यह मूलतः मुण्डा आदिवासी इलाके की विकास के नाम पर विनाश लानेवाली कहानी है। झाड़खंड अलग राज्य के लिए आंदोलन करनेवाली झाड़खंड पार्टी के अध्यक्ष एन. ई. होरो इसे महाविनाशकारी परियोजना घोषित किया था और इसके खिलाफ व्यापक आंदोलन चलाया था। इस

इलाके की कोइल और कारो नदी दो नदियों को लेकर जलविद्युत परियोजना को लागू करने की योजना दूसरी पंचवर्षीय योजना का हिस्सा थी। बिहार जैसे पिछड़े और गरीब राज्य और खासकर दक्षिण बिहार यानी की आदिवासी बिहार के विकास के लिए बड़ी योजनाओं की रूपरेखा तैयार की गई थी। बिजली के संकट को दूर करने के मकसद से ऐसी योजना बनी थी। लेकिन आजादी के बाद पूर्व के अनुभवों के मद्देनजर इस योजना को लेकर आदिवासियों के द्वारा तीव्र प्रतिवाद किया जाता रहा और बार बार पुनर्वास व मुआवजा की बात कही जाती रही। लेकिन सरकार ने बिना बसाए लोगों को उजाड़ने की योजना बना लिया। इस परियोजना के तहत तीन जिलों रांची, गुमला और पश्चिम सिंहभूम के 256 से अधिक गांवों के प्रभावित होने का खतरा रहा है। लेकिन सरकार कहती है कि केवल 12 गांव ही पूर्ण रूप से विस्थापित होगें। लगभग 55 हजार हेक्टेयर वन भूमि प्रभावित होगी। इस परियोजना को जिस दशक में तैयार किया गया था। तब कोइल और कारो नदी में पानी हुआ करता था। विकास की मेगा परियोजना तब आदिवासी इलाके में ही लागू करने के मकसद से बनाई जाती रही है। जहां आदिवासी हैं वहीं जल है जंगल और जमीन है। लेकिन आदिवासियों से बिना सहमति लिए ही इन परियोजनाओं को मूर्त्त रूप देने का काम किया जाता रहा है। यह मुण्डा बहुल इलाका है और दूसरी कृषि और वन पर निर्भर जातियां भी इसी इलाके में निवास करती हैं।

कोईलकारो परियोजना 1955 से आजादी के तुरत बाद ही प्रारंभ किया गया। इसके लिए 1955 से ही सर्वे कार्य प्रारंभ किया गया। 1959 तक यह सर्वे कार्य जारी रहा और 1972– 73 यानी कि कुल 18 सालों में परियोजना की रूप रेखा तैयार कर ली गई। इसके बाद भूमि अधिग्रहण की कार्रवाई प्रारंभ की गई।

कोइलकारो जल विद्युत परियोजना विरोधी आंदोलन की पृष्ठभूमि भी काफी लम्बी है। आंदोलन को समय समय पर अलग अलग नेतृत्व मिला। लेकिन इसका सही तरीके से दस्तावेजीकरण नहीं किया जा सका है। यह परियोजना तब चर्चा में आया जब स्व. मोजेज गुड़िया के नेतृत्व में 1974–75 से ही सरकार के विरूद्ध गोलबंदी प्रारंभ हो गई। लोगों ने प्रतिरोध के लिए कारो क्षेत्र में जन संयोजन समिति व कोइल क्षेत्र में जन संघर्ष समिति का गठन किया गया।

सन् 1976 में प्रतिरोध को मजबूती प्रदान करते हुए जन संयोजन समिति और जन संघर्ष समिति का एकीकरण कर कोइलकारो जन संगठन का गठन किया गया। इसके बाद कोइलकारो जनसंगठन ने सरकार को स्मार पत्र सौंपते हुए इसे जन परियोजना का स्वरूप देने का अनुरोध किया। लेकिन सरकार ने जन संगठन के अनुरोध को ठुकरा दिया। तब ग्रामीण भड़क उठे और 1977–78 से लेकर 1979 तक काम रोको अभियान चलाया गया और भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया को रोक दिया गया। लगभग इसी दौर में 1977 अगस्त में सेना की नौकरी से रिटायरमेंट लेकर सोमा मुण्डा आंदोलन में कूद पड़े और जन संगठन की अगुवाई करने लगे। तब मोजेज गुड़िया के नेतृत्व में आंदोलन चल रहा था। सोमा मुण्डा और मोजेज गुड़िया दोनों के नेतृत्व में आंदोलन ने गति पकड़ी और इसे विस्तार मिला। 1977–78 में कमडरा में कोइलकारो जन संगठन का पुनर्गठन व पदधारियों का चुनाव हुआ। इसमें मोजेज गुड़िया सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुने गए। 5 जनवरी 1979 को बिहार विद्युत बोर्ड ने कोइलकारो जन संगठन को वार्त्ता के लिए आमंत्रित किया। 16 सूत्री मांगपत्र के साथ जनसंगठन के प्रतिनिधिगण वार्त्ता के लिए पहुंचे। बिहार सरकार में त्तकालीन सिंचाई मंत्री सुशीला केरकेट्टा जो बाद में खूंटी से सांसद हुई ने वार्त्ता कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। तत्कालीन वन मंत्री टी. मुचिराय मुण्डा ने परियोजना के पक्ष में सरकार का साथ दिया। इस विशाल परियोजना को पूरा करने के लिए 1980 में कोइलकारो जलविद्युत परियोजना को बिहार राज्य विद्युत बोर्ड से हटाकर राष्ट्रीय जल विद्युत निगम एन. एच. पी. सी. को सौंप दिया गया। 1980 के बाद का पूरा दशक ही उग्र आंदोलन का रहा है। ग्रामीणों ने वहां तरह तरह के आंदोलन किए। महिलाओं ने गांव प्रवेश करनेवाले अधिकारियों की झाडू से पिटाई की वहीं भू अर्जन अधिकारियों की जीप को क्षतिग्रस्त कर दिया गया। जुलाई 1983 से मई 1984 के बीच फिर से जनसंगठन और सरकार के बीच वार्त्ता का सिलसिला चला। जुलाई 1984 में सरकार ने दमन और बल प्रयोग के जरिए परियोजना को आगे बढ़ाने की घोषणा की। सशस्त्र बल को परियोजना क्षेत्र के तहत आनेवाले गांवों में भेजा। 1985 से पूरे इलाके में सेना की तैनाती की गई और 1984 से लगातार पूरे गांव गांव में प्रतिरोध बैठकों को सिलसिला चल पड़ा। डूबा जाति डूबा धर्म और डूबा क्षेत्र का नारा लगा।

अगस्त 1984 में संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत सुप्रीम कोर्ट में मानवाधिकार और आदिवासियों को उजाड़े जाने के बाबत एक रिट याचिका दायर की गई। श्री बी. पी. लकड़ा ने यह याचिका दायर की जेवियर समाज सेवा संस्थान ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

1989 में सुप्रीम कोर्ट का आदेश आया। 1995 के पांच जुलाई को केंद्र में कांग्रेस की सरकार के प्रधानमंत्री नरसिंहराव ने शिलान्यास करने हेतु कोइलकारो आने की बात कही। पांच जुलाई 1995 को कोइलकारो जनसंगठन ने दियांकेल मैदान में संकल्प दिवस मनाया और आहवान किया कि किसी भी कीमत में कोइलकारो परियोजना नहीं बनने दिया जाएगा। बच्चा बच्चा बिरसा मुण्डा बन जाएगा। इस संकल्प में कोइलकारो जनसंगठन की जीत हुई। प्रधानमंत्री शिलान्यास करने नहीं आए और बिहार के मुख्यमंत्री भी तब दहाड़ रहे थे कि शिलान्यास करेगें। लेकिन उनकी भी तीखे प्रतिरोध की वजह से बोलती बंद हो गई। अब हर साल कोइलकारो जनसंगठन के लोग 5 जुलाई को संकल्प दिवस मनाते हैं और कोइलकारो परियोजना न बनने देने का संकल्प दोहराते हैं।

1 फरवरी 2001 को जनता कर्फ्यू व बैरिकेट तोड़ने से तपकरा ओ. पी. के प्रभारी आर. एन. सिंह. और रनिया थाना प्रभारी पुलिस बल के साथ आंदोलनकारी अमृत गुड़िया व ग्रामीणों की झड़प हुई। इस झड़प में पुलिस वालों ने बंदूक के बट से मार कर अमृत गुड़िया को घायल कर दिया। दो अन्य लोग भी घायल हो गए। 2 फरवरी 2001 को तपकरा ओ पी. का घेराव कर रहे ग्रामीणों पर लगभग ढाई बजे पुलिस फायरिंग हुई और 8 लोग शहीद हो गए। इसमें 7 आदिवासी और एक मुस्लिम थे। एक पुलिसकर्मी की भी मौत हो गई।

इस पुलिस गोलीकांड के बाद प्रति वर्ष तपकरा शहीद स्थल पर श्रद्धांजलि और अंतिम संघर्ष के लिए तैयार होने का संकल्प लेने को ग्रामीण सत्याग्रह दिवस मनाते हैं। इस वारदात के बाद ग्रामींणों और आंदोलनकारियों के खिलाफ सरकार ने मुकदमेबाजी प्रारंभ कर दी और कोइलकारो जनसंगठन के सभी नेताओं के उपर पुलिसकर्मी की हत्या और सरकारी काम में बाधा का केस दर्ज किया गया। कोइलकारो जनसंगठन के आंदोलनकारियों ने कहा कि वे हमें जेल भेज दें लेकिन हम बेल नहीं लेगें। सरकार को जो भी कार्रवाई करना हो करे। 21 अगस्त 2001 को कोइलकारो जनसंगठन के

अध्यक्ष और पड़हा राजा पौलूस गुड़िया का निधन हो गया। 22 जुलाई 2002 को कोइलकारो जनसंगठन का पुनर्गठन किया गया। इसमें पूर्व मुखिया, पूर्व सैनिक और विस्थापन विरोधी नेता सोमा मुण्डा सर्वसम्मति से जनसंगठन के अध्यक्ष चुने गए। इसके बाद 5 जुलाई 2004 को तोरपा स्थित एन. एच. पी. सी. कार्यालय के सामने महाधरना का आयोजन किया गया। इसमें आंदोलन को तेज करने का तीव्र जनप्रतिवाद जारी रखने का निर्णय लिया गया। कोइलकारो परियोजना विरोधी आंदोलन भारी जन विरोध की वजह से ही नहीं बन पाया है। 1972–1973 में भू अर्जन के दौरान मुआवजा भुगतान में भारी गड़बड़ी, बेईमानी और लूट के खिलाफ आंदोलनकारियों ने अधिकारियों के खिलाफ मोरचा खोला था। नौकरी और मुआवजा के सवाल पर गांव में भारी तनाव कायम हुआ और अधिक जमीन की नापी और मुआवजा भुगतान में बेईमानी के खिलाफ ग्रामीणों ने एकजुट होकर विरोध किया। तब संगठन ने आकार लेना प्रारंभ किया और मोजेज गुड़िया ने कमान संभाली राजा पौलूस गुड़िया का कहना है कि गांवों में लोगों की शिकायत पहुंचने लगी कि मुआवजा भुगतान में देरी की जा रही है और अनेक ग्रामीणों को उनका देय नहीं मिल पा रहा है। ऐसे में लोग भड़क उठे। बाद में चारों तरफ से ऐसी शिकायतें मिलने लगी तब कारो और कोइल क्षेत्र में संगठन के लिए जनपहल की जाने लगी। 1974–75 में कारो क्षेत्र में जन संयोजन समिति और कोइल क्षेत्र में जन संघर्ष समिति का गठन किया गया। दोनों नदियों के किनारे बसे आदिवासियों और ग्रामीणों ने अलग अलग मोरचा संभाला आगे चलकर आंदोलन की एकजुटता के लिए दोनों नदियों का संघर्ष संगम बना कोइलकारो जन संगठन। कोइलकारो जन संगठन ने जब लोगों की बैठकों का आयोजन किया तो एक बात सभी क्षेत्रों से निकल कर आई कि 1955 से परियोजना के बाबत सर्वे चल रहा था और जलविद्युत पैदा करने की योजना बन रही थी। परन्तु क्षेत्र के लोगों को कभी भी सम्पूर्ण और सही जानकारी नहीं दी गई।

सूचना का सर्वथा अभाव–

बुजुर्ग और जानकारी लोग बताते हैं कि चुपचाप सर्वे का काम किया जाता था। ग्रामीणों के द्वारा पूछने पर गुमराह किया जाता था। वे कहते थे कि खेतों को पानी मिलेगा। सिंचाई की सुविधा होगी। सर्वे के दरम्यान झूठ बोलकर नापी की जाती थी। किसी को भी यह स्पष्ट तौर पर बताया नहीं

जाता था कि यहां बड़ी परियोजना बननेवाली है. बड़ी संख्या में लोग डूब जाएंगे। तब सर्वे अधिकारी डूबने की बात का खंडन करते थे। पड़हा राजा पौलूस गुड़िया कहते थे कि सरना ससन डूब जाएगा। तब सर्वे वाले कर्मचारी और अधिकारी कहते थे कि कुछ नहीं डूबेगा। सिंचाई होगा। सर्वे करने के दरम्यान वे फसलों को नष्ट कर देतें थे। सर्वे का कार्य भी बाहर के लोगों को लाकर किया जा रहा था। तब कारो क्षेत्र के जन संयोजन समिति ने कहा कि गांव के लोगों को काम देना होगा। सर्वे कार्य बाहर के लोगों को लाकर नहीं किया जाए। लेकिन जन संयोजन समिति के अनुरोध को नहीं माना गया। बाहर से ही श्रमिकों को लाकर काम कराया जाता रहा। ऐसा होने पर जन संयोजन समिति की अगुवाई में गांव के युवकों ने काम रोको अभियान प्रारंभ किया। इस तरह गांवों में जनगोलबंदी बढ़ने लगी और जनसंघर्ष बढ़ने लगा। गांववालों को सम्पूर्ण जानकारी नहीं देने पर गांव वाले शंका में डूब गए और व्यापक जनसंघर्ष की रूपरेखा तैयार हो गई।

जनांदोलन को दबाने के लिए सेना की तैनाती

स्व. मोजेज गुड़िया के नेतृत्व में जैसे जैसे आंदोलन विस्तार पाने लगा लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने लगे। परियोजना के बारे अधिकाधिक जानकारी और सही सूचना के लिए लोग सरकार पर दबाव बनाने लगे और 1985 को बिंगूल फूंका। जनता के मूड को भांपते हुए सरकार ने कोइलकारो परियोजना क्षेत्र लोहाजिमी और डेरांग में सेना की तैनाती कर दी। कोइलकारो जनसंगठन के अध्यक्ष सोमा मुण्डा बताते हैं कि उन्हें याद है कि 12 गाड़ी सेना और उनका सामान यहां आया था। पानी के टैंकर भी लाए गए थे। इसमें से दो टैंकर अभी भी यहीं है। गांववाले विवाह के समय इसे इस्तेमाल करते हैं। सेना की तैनाती को देखते हुए कोइलकारो जन संगठन ने अपनी रणनीति बदल दी। स्व. मोजेज गुड़िया, भाई हालेन कुजूर, पड़हा राजा पौलूस गुड़िया, सुलेमान तिर्की, कल्याण गुड़िया, लुइस बारला ने बैठक कर तय किया कि सेना का सामाजिक बहिष्कार किया जाए। इस सामाजिक बष्किार के तहत सेना को पानी लेने नहीं दिया जाता था। न ही उन्हें शौच करने का स्थान ही दिया गया। जलावन के लिए लकड़ियां भी उन्हें नहीं लेने नहीं दी जाती थी। जिस रास्ते से सेना वाले गाड़ी लेकर गांव घुसते थे उस रास्ते में मडुवा, उड़द, गोड़ा धान लगा देते थे। इससे उन्हें

परेशानी होती थी। क्योंकि पानी नहीं देने पर सेना के जवान तोरपा से पानी मंगाना शुरू किया। रास्ता में फसल लगाने से वे रौंद कर पार होने में डरते थे। गांव वालों ने उन्हें कह दिया था कि फसल बर्बाद होने पर वे मुकदमा करेगें। वहीं दूसरी तरफ मच्छरों का भी भारी हमला उनके उपर हुआ।

महिलाओं ने की सेना की घेराबंदी

अहिंसक तरीके से सेना को घेरने और रोजमर्रा के काम में विघ्न बाधा पहुंचाकर औरतों ने सेना के नाक में दम कर दिया। औरतों के सामने सेना की एक न चली और 15 दिनों के भीतर उन्हें मैदान यानी गांव छोड़कर भागना पड़ा। यह एक ऐसा युद्ध था जहां संगीन संगीन या तीर धनुष से नहीं टकराती थी। वरन् औरतों ने सेना के जवानों को उनके मानवीय जरूरत और नागरिक सुविधाओं से वंचित रखती थीं। जहां कहीं भी वे शौच के लिए जाते थे स्त्रियां झुंड के झुंड तैनात हो जाती थी और उन्हें शौच के लिए कोई स्थान ही नहीं मिल पाता था। औरतें उन्हें कहती थी कि मेरी धरती में तम्बू गाड़े हो जाओं तम्बू में ही पखाना और पेशाब करो। वहीं सोओ। यह युद्ध की विभीषिका से ज्यादा कष्टकर साबित हुआ। जंगलों को काटकर वे तम्बू विस्तार करते तो औरतें उन्हें जंगल काटने ही नहीं देती थी। औरतों ने सेना का खबरदार किया कि जंगलों की कटाई नहीं होगी। श्री सोमा मुण्डा ने बताया कि सेना के जवान शराब पीकर घर घर जाकर औरतों से बदमाशी करने की कोशिश करते तो औरतों ने उनको चारों तरफ से घेरकर उनके तम्बूओं में जाकर थूकने का काम करने लगी। इससे वे खासे परेशान हो गए। सोमा मुण्डा की पत्नी वारसेलयानी कोनगाड़ी ने सेना को दौड़ाने और उनके तम्बूओं में जाकर विरोध दर्ज करने का काम किया। तब सेना के साथ आवासीय दंडाधिकारी मनोहरलाल थे। वे अत्यंत डरे हुए थे। वे सेना के साथ गांव आने जाने रहने की डयूटी नहीं निभाना चाहते थे। उन्होंने चुपचाप से सोमा मुण्डा जी को अपनी राय बता दी और कहा कि सेना को भगाने के जितने उपाय कर सकते हैं करें वे मुण्डाओं के समर्थन में रहेगें और चुप रहेगें। उन्होंने बताया कि सेना को उन्होंने समझाया कि कुआं से पानी न लें। मुण्डा लोग खतरनाक होते हैं। पूरे कुएं में ही जहर डाल देगें तो सब लोग मर जाएंगे। दंडाधिकारी पूरी तरह से आंदोलनकारियों और उनकी अगुवाई कर रहे सोमा मुण्डा जी के साथ थे।

महाविनाशकारी परियोजना विरोधी अहिसंक आंदोलन

इतिहास के पन्नों में मुण्डाओं के हथियारविहीन संघर्ष के उदाहरण नहीं मिलते हैं। बिरसा उलगुलान के महानायक बिरसा मुण्डा ने अंग्रेजों से जब डोम्बारी बुरू में मुकाबला किया था। तब तीर धनुष से लैस मुण्डाओं ने पहाड़ पर भारी रक्तपात किया। मुण्डाओं की कोई सभा बैठक ऐसी नहीं है जिसमें वे परम्परागत हथियारों से लैस होकर नहीं जाते हों। कोइलकारो परियोजना विरोधी जनांदोलन में मुण्डाओं का अहिंसक संघर्ष इस मायने में महत्वपूर्ण है। उनलोगों ने अपनी मांगे मनवाने के लिए प्राकृतिक न्याय और लोकतांत्रिक तरीके अपनाए। मुण्डाओं के इस सांस्कृतिक बदलाव को रेखांकित किया जाना चाहिए। 1976 से लगातार 1994 तक और नए सिरे से 1995 में प्रारंभ आंदोलन अहिंसक और लोकतांत्रिक तरीके से किया जाता रहा है। गांवों गांवों में बैठकों का सिलसिला जारी रहता और 5 जुलाई को जनसभा कर लोग संकल्प दिवस मनाते हैं। इस आंदोलन को कभी भी सुचिंतित तरीके से हिंसक बनाने की रणनीति नहीं बनी।

झाड़खंड राज्य बनने और 2001 के 2 फरवरी को पुलिस फायरिंग की भयानक वारदात के बाद भी आंदोलनकारियों ने वैसी कोई हिंसा नहीं दिखाई जो अवश्यम्भावी थी। लोगों ने अपने प्राण न्योछावर किए और विकास की बलि बेदी पर बलिदान दिया। सबसे पीड़ादायक बात यह थी कि झाड़खंड अलग राज्य के लिए आदिवासियों ने खून बहाया, कुर्बानी दी और शहीद हुए। परन्तु अलग राज्य बनने के बाद भी आदिवासियों के खून से यह धरती रंग गई। इस वारदात के बाद भी कोइलकारो संगठन ने अहिंसक तरीके से सरकार का मुकाबला करने की घोषणा की। जनसंगठन ने ऐलान किया कि महाविनाशकारी परियोजना नहीं बनने दी जाएगी और सरकार ने गोलियां चलाई तो उसके लिए 8 क्या हजारों लोग सीने पर गोली खाने को तैयार होगें।

कोइलकारो जलविद्युत परियोजना और सरकार का रूख–

सरकारी दस्तावेजों के मुताबिक एन. एच. पी. सी. के तहत भारत देश में बननेवाले 5 बड़ी परियोजना में से एक कोइलकारो जलविद्युत परियोजना है।

कोइल और कारो नदी पर लोहाजिमी और लुपुंगकेल में बननेवाली इस परियोजना 732 मेगावाट बिजली उत्पादन करने की योजना है। सरकार महज

113 गांवों के उजड़ने की बात कहती है। विस्थापितों और प्रभावितों के मुआवजे के सवाल पर सरकार ने कभी स्पष्ट उद्घोषणा नहीं की। सरकार के दस्तावेजों में अलग अलग तथ्य और आंकड़ो से विरोधभासी जानकारी मिलती है। सूचनाओं के मामलों में सरकार हमेशा गोपनीयता बरतती रही है। बिहार सरकार और एन. एच. पी. सी. के दस्तावेज में फर्क दिखाई देता है। पूर्व के दस्तावेजों को छोड़ दे तो 1991 के भू अर्जन निदेशालय द्वारा जारी पुनर्वास पैकेज के मुताबिक विस्थापितों और प्रभावितों को भूमि मूल्य देने की बात है। विस्थापितों की संख्या का उसमें जिक्र नहीं है। जबकि एक दस्तावेज में 20 गांवों के सम्पूर्ण डूबने व 22 गांव के आधा जलमग्न होने की बात है। सभी दस्तावेजों में 710 मेगावाट बिजली उम्पादन की बात कही गई है। 1991 के दस्तावेज पुनर्वास पैकेज के मुताबिक प्रथम चरण में 710 मेगावाट और द्वितीय चरण में 22 मेगावाट विद्युत उत्पादन की बात कही गई है। 1991 के दस्तावेज के मुताबिक परियोजना के लिए 55 हजार एकड़ भूमि अर्जन करने की बात है। इसमें लगभग 35 हजार से 40 हजार एकड़ भूमि रैयती है। इसमें सामाजिक सांस्कृतिक, धार्मिक पुनर्वास, आर्थिक पुनर्वास उद्योग धंधों में पुनर्वास, प्रशिक्षण व नियोजन और अन्य सुविधाएं देने का प्रस्ताव है। यह दस्तावेज डा. डी. के तिवारी के निदेशक कार्यकाल में जारी हुई थी। श्री तिवारी भू – अर्जन सह पुनर्वास के निदेशक थे तथा कोइलकारो जलविद्युतपरियोजना के तहत खुला कार्यालय के प्रभारी थे।

एन. एच. पी. सी. के एक सरकारी पुनर्वास प्रारूप में कोइलकारो जलविद्युत परियोजना को निमार्णाधीन परियोजना की सूची में रखा गया है। जिसे 2004–2005 में पूरा करने की बात है। एन. एच. पी. सी. के एक अन्य दस्तावेज में विस्थापितों की संख्या 4700 बताई गई है।

सरकार ने इस पर कभी बात नहीं की कि 1984 में आंदोलनकारियों ने सरकार से महज दो गांवों कोचा और तेतरा गांव का पुनर्वास क्रमशः कमड़ा और भागीडेरा में करने का प्रस्ताव दिया जिसे सरकार ने कभी आदर्श गांव के तौर पर विकसित कर स्थापित नहीं किया। श्री सोमा मुण्डा का कहना है कि जब सरकार ने दो गांवों को मॉडल गांव के तौर पर पूरा नहीं किया तो वह सैकड़ों गांवों को उजाड़ने के बाद पुनर्वासित करने का काम किस तरह से करेगी। उनका कहना है कि सरकार से पूरी तरह से भरोसा उठ गया है। इतना विश्वासघात आदिवासियों के साथ कभी नहीं हुआ है। उन्होनें कहा कि सरकार

ने मात्र दो गांवों को पुनर्वासित नहीं किया तो वह सैकड़ों गांवों को पुनर्वासित कैसे कर सकती है। इसके बाद ही सरकार के प्रति आंदोलनकारियों ने कड़ा रूख अख्तियार कर लिया। इसके तत्काल बाद परियोजना रद्द करने के लिए नारे लगने लगें कोइलकारो परियोजना रद्द करो। कोइलकारो परियोजना होकाएपे होकाएपे, बिजली बत्ती काबुआ डिबरी बत्ती आबुआ के नारों से पूरा इलाका गुजांयमान हो उठा और सरकार के लिए खासी परेशानी होने लगी।

सरकार ने परियोजना को लेकर कभी साफगोई नहीं बरती। संभावित विस्थापितों को कभी सम्पूर्ण जानकारी नहीं दी गई। बल्कि चालाकी से आंदोलन को तोड़ने के लिए तमाम हथकंडे अपनाती रही। रांची के कई उपायुक्तों ने परियोजना क्षेत्र के लोगों को मुआवजा व नौकरी देने का लोभ – लाभ का प्रस्ताव देकर एक दूसरे से लड़ाने का काम किया। लेकिन आई. ए. एस. अफसरों की चालाकी के आगे मुण्डाओं की चालाकी भारी पड़ी। मुण्डा आदिवासी नौकरी और मुआवजा तो चाहते थे। परन्तु वे जमीन छोड़ने व डूबने को तैयार नहीं थे। स्व. मोजेज गुड़िया के नेतृत्व में आंदोलन चलने और सीमेंट के गोदाम से सीमेंट न उठने देने और उसे ध्वस्त करने की शिकायत 78'–79 में रांची के उपायुक्त बी. पी. सिन्हा के पास पहुंची तो वे स्व. मोजेज गुड़िया के घर आए। उन्होंने आग्रह किया कि डैमरेज चार्ज देना पड़ेगा। सीमेंट अनलोड करने दें। जनता की ताकत पहचानने के बाद डी. सी. ने कहा कि अगर आप एक इंच जमीन नहीं देगें तो कोई काम नहीं करेगा। इसके बाद ही डी. सी. सिन्हा बदल दिए गए। श्री सोमा मुण्डा का कहना है कि वे हमारे पक्ष में बोले तो सरकार ने उन्हें बदल दिया। उसके बाद उपायुक्त डी.सी. मुखोपाध्याय आए। तब भी बहुत ड्रामा हुआ। एक आयुक्त श्रीवास्तव आए। वे भी परियोजना की बात करने लगे। लोगों ने कहा कि हमारा सरना ससनदिरी बना सकोगे। यह हमारी परम्परा है। तब वे घबराकर बोले कि आपकी अनुमति के बिना कोई काम नहीं करूंगा। साथ ही मेज थपथपाकर कर कहा कि दिल्ली में आपके लिए वकालत करूंगा। वह भी हमारे पक्ष में बोला तो उसकी भी बदली हो गई। श्री सजल चक्रवर्त्ती रांची के डी. सी. होकर आए। वे कभी हमारी बात नहीं किए हमारे पास भी नहीं आए. डी. सी. अनूप मुखर्जी आए। वार्त्ता में गरमागरम बहस होने लगी। उन्होंने भी दिलचस्पी नहीं ली। 1984–85 में श्री प्रभाकरण आयुक्त होकर आए. वे हमारे पास आए। हमारी बातों को सुना। अनेक बैठकें की। परन्तु

गांव में फोर्स भेज दिए और जंगल के झुरमुट में सरना बनाने की बात कही। मदन मोहन झा भी डी. सी. होकर आए और चतुराई से काम करने की कोशिश करने लगे। वे संगठन को भी तोड़ने में लग गए। हमारे लोग डूबना नहीं चाहते थे। नौकरी चाहते थे। लेकिन इसे वे भी पूरा करने में असमर्थ थे।

परियोजना के प्रति सरकार की कटिबद्धता और कोइल कारो जनसंगठन का सहयोग – कोइलकारो जनसंगठन के आंदोलनकारी एक स्वर से यह कहते हैं कि हम विकास विरोधी नहीं हैं। सरकार को प्रारंभ में जितना सहयोग दिया गया उससे उनकी प्रतिबद्धता का पता चलता है। प्रारंभ में जब परियोजना बिहार सरकार के अधीन थी। भूमि अधिग्रहण का कार्य किया गया। तब सर्वे के दरम्यान तमाम तरह के मदद उनको दिए गए। जब भी सरकार से वार्त्ता करने का प्रस्ताव मिला वे वार्त्ता के लिए गए। जनसंगठन के अध्यक्ष श्री सोमा बताते हैं कि मैंने बिहार सरकार और बिहार सरकार के पुनर्वास मंत्री ने वार्त्ता के लिए बुलाया। तब जनसंगठन ने फसलों के मुआवजे और सामाजिक सांस्कृतिक व आर्थिक सर्वे करने पेड़ों की गिनती और रैयती जमीन के सर्वे की बात कही। परन्तु वे इन बातों पर राजी नही हुए। सर्वे में बेईमानी की जाने लगी। जमीन की नापी में गड़बड़ी की जाने लगी। सबसे बड़ा धक्का तो दो गांवों को पुनर्वास गांव का मॉडल न बनाने से लगा। हमलोगों ने 1985 तक 16 सूत्री मांग पत्र लेकर सरकार से गुहार लगाते रहे। परन्तु एक के प्रति भी सरकार ने वचनबद्धता नहीं दिखाई। जनसंगठन का विश्वास इससे डोल गया। उन्हें लगा कि इतनी बड़ी संख्या में लोग उजड़ेगें तो वे जाएंगें कहां। मिट्टी की जांच कार्य में भी हमने मदद किया। पर वे हमें विकास विरोधी बताते रहे। परन्तु दो गांवों का पुनर्वास 1984 में नहीं कर सके तो 256 गांवों को पुनर्वास किस तरह संभव हो पाता। यह यक्ष प्रश्न हमारे सामने खड़ा हो गया। झाड़खंड राज्य बनने के बाद सरकार के साथ वार्त्ता के लिए 5 फरवरी 2001 की तारीख तय की गई। 5 फरवरी को सरकार से वार्त्ता के लिए तैयारी की जा रही थी। वहीं 1 फरवरी को पुलिसिया तांडव प्रारंभ हो गया। 2 फरवरी 2001 को 8 आंदोलनकारियों को गोलियों से भून दिया गया। इससे सरकार की मंशा जाहिर होती है। साथ ही यह पता चलता है कि विकास विरोधी कौन है सरकार या आदिवासी। वार्त्ता करने का प्रस्ताव भेजी जनता पर गोलियां चलवाकर सरकार बंदूक के नाल से विकास करने का इरादा जता चुकी है।

राजनीतिक दलों की भूमिका

झाड़खंड अलग राज्य आंदोलन करनेवाली ऐतिहासिक पार्टी झाड़खंड पार्टी प्रारंभ से इस परियोजना को महाविनाशकारी परियोजना बताकर आंदोलन करती रही है। पूर्व विधायक व राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार श्री एन. ई. होरो ने परियोजना के विरोध में लगातार सभाएं व जनप्रदर्शन का कार्यक्रम किया। यह अब भी जारी है। झाड़खंड पार्टी का इस इलाके में जनाधार है और भारी मतों से लोग उन्हें वोट डालते हैं। झाड़खंड मुक्ति मोर्चा का यह मजबूत गढ़ नहीं है। इसलिए वहां से इसे वोट ज्यादा नहीं मिलता है। झामुमो ने पार्टी संविधान में कोदलकारो परियोजना को रद्द करने की बात कही है। कांग्रेस ने भी कभी कोईलकारो परियोजना के संदर्भ में अपनी स्पष्ट राय कभी व्यक्त नहीं किया। अलबत्ता कुछ कांग्रेसी विधायक नियल तिर्की, देवकुमार धान, थियोडोर किड़ो आदि परियोजना के विरोध में खुलकर बोलते रहे हैं। साथ ही 5 जुलाई के कार्यक्रम में वे भागीदारी भी निभाते आए हैं।

भारतीय जनता पार्टी भाजपा इस परियोजना को बनाने की तीव्र इच्छा रखती है। अलग राज्य बनने के बाद परियोजना के लिए कवायद प्रारंभ किया, हालांकि उसे मुंह की खानी पड़ी।

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन राजग के घटक दल राजद युनाइटेड में इस मुद्दे पर दो फांक की स्थिति बनी रही थी। जद यू के विधायक लालचंद महतो झाड़खंड सरकार में उर्जा मंत्री थे। अभी मंत्रिमंडल का आकार घटाने के सुप्रीम कोर्ट के आदेश के बाद जद यू के मंत्री सरकार से बाहर हो गए। श्री लालचंद महतो परियोजना बनाने की बात लगातार ही बोलते रहे हैं। इंदर सिंह नामधारी विधान सभा के सभापति थे। उन्होंने एक सेमिनार में लगातार तीन बार कहा कि परियोजना बनना चाहिए बनना चाहिए बनना चाहिए। कोइलकारो की जनता राजद के अध्यक्ष श्री लालू प्रसाद यादव को भाजपा से बेहतर इसलिए मानती है क्योंकि लालू यादव ने शिलान्यास की बात कहने के बावजूद तोरपा नहीं आए और न ही निहत्थी जनता पर गोलियां चलवाईं। परन्तु राजग की सरकार ने निहत्थे लोगों पर गोलियां चलवाई।

वाम नेताओं भाकपा माले के विधायक महेन्द्र सिंह और मार्क्सवादी समन्वय समिति मासस के विधायक अरूप चटर्जी ने आंदोलनकारियों को अपना खुला समर्थन दिया।

प्रचार माध्यमों में परियोजना के विरोध और समर्थन के स्वर –

आम तौर पर स्थानीय,राज्य और राष्ट्रीय अखबारों की भूमिका आंदोलनकारियों को कवर करने में ज्यादा रही है। हि दी और अंग्रेजी के अखबारों ने बराबर और नियमित रूप से इस परियोजना वि रोधी आंदोलन को जगह दिया है। स्थानीय व राज्यस्तरीय अखबारों में प्रभात खबर, हिन्दुस्तान टाइम्स, हिन्दुस्तान, टेलीग्राफ ने आंदोलन की खबरों को प्रमुख स्थान दिया है। दिल्ली और कोलकाता से प्रकाशित होनेवाला जनसत्ता राष्ट्रीय दैनिक ने कोइलकारो की अनेक खबरों को काफी स्थान दिया। प्रमुख सर्वोदयी नेता सिद्धराज दडढा ने जनसत्ता में छपी खबर को काट कर प्रधानमंत्री कार्यालय में भेजा। इसके बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री ने परियोजना का शिलान्यास करने आने के संदर्भ में अपना विचार बदला खबर का शीर्षक था परियोजना का शिलान्यास हुआ तो खून की नदियां बहेंगी। बच्चा बच्चा बिरसा मुण्डा बन जाएगा। इंडियन एक्सप्रेस ने तर्क की कसौटी पर परियोजना को गैरजरूरी बताया। टाइम्स ऑफ इंडिया ने आंदोलन को काफी जगह दी। इलेक्ट्रोनिक मीडिया की भूमिका भी काफी पोजिटिव रही।

भाजपा के पूर्व राज्यसभा सदस्य अजय मारू के अखबार रांची एक्सप्रेस ने परियोजना के समर्थन में अभियान चलाया। विशिष्ट परिशिष्ट निकाले। तोरपा स्थित प्रभात खबर, हिन्दुस्तान, रांची एक्सप्रेस के संवाददाता परियोजना के समर्थन में खबरें प्रकाशित करने में ज्यादा रूचि लेते रहे हैं। नवभारत टाइम्स के ब्यूरो चीफ फैसल अनुराग ने तब इस आंदोलन को अपनी लेखनी से भारी समर्थन दिया। इस पुस्तक की लेखिका ने तब जनसत्ता के सवांददाता के तौर पर इस आंदोलन को कवर किया था। ग्रामीण पत्रकारिता के लिए काउंटर मीडिया पुरस्कार प्राप्त दयामनी बारला ने आंदोलन के बारे रिर्पोट लिखा। कई बार तो फैसल अनुराग, लेखिका वासवी और दयामनी बारला ने कार्यकर्त्ता की तरह पूरे आंदोलन में समाचार कवर करने के दरम्यान शिरकत की।

नागरिक समाज की भूमिका –

अनेक स्वयंसेवी समूह जोहार, जेवियर समाज सेवा संस्थान और दिल्ली स्थित संस्थाओं ने आंदोलन को मजबूती प्रदान करने के लिए प्रमुख भूमिका निभाई। जोहार ने आंदोलन को सामाजिक सांस्कृतिक और आर्थिक

मदद पहुंचाई। पड़हा राजा पौलूस गुड़िया की बीमारी में उनका इलाज भी कराया।

जेवियर समाज सेवा संस्थान के सहयोग से श्री बी. पी. लकड़ा ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर किया। 2001 के 2 फरवरी के गोलीकांड के बाद पी. यू. सी. एल. इंसाफ जैसे संगठनों ने मदद की। जनसुनवाई का आयोजन कर रिर्पोट जारी करने में इन संगठनों ने भूमिका निभाई। जनसुनवाई के लिए राजेंद्र सच्चर, चितरंजन सिंह आए। नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज व अन्य आंदोलनकारियों ने इस आंदोलन में शिरकत कर एकजुटता दिखाई अखड़ा और कृतिका ने वृतचित्र का निर्माण कर सहयोग दिया।

कोइलकारो जनसंगठन की रूपरेखा –

1977–78 में गुमला कामडारा में कारो व कोइल क्षेत्र के जनसंघर्ष समिति को मिलाकर कोइलकारो जनसंगठन की नींव डाली गई। सर्वसम्मति से मोजेस गुड़िया को अध्यक्ष और भाई हालेन कुजूर को महामंत्री बनाया गया। कारो क्षेत्र के उपाध्यक्ष पड़हा राजा पौलूस गुड़िया हुए और कोइल क्षेत्र के उपाध्यक्ष सुलेमान तिर्की और आलम नाथ सिंह को खंजाची बनाया गया। केंद्रीय समिति में सोमा मुण्डा लोहाजिमी से कल्याण गुड़िया गुटूहातू से प्रेमचंद गुड़िया डेरांग से रोयलेन गुड़िया लोहाजिमी से जो मोजेस गुड़िया के भतीजा थे। सामुएल कन्डुलना जयपुर कारो क्षेत्र से कामिल मिंज लुंगटू कोइल क्षेत्र से बीरसू सिंह पालकोट प्रखंड प्रमुख कोइल क्षेत्र से लुइस बारला कामडारा प्रमुख कोइल क्षेत्र से जुरा मुण्डा जयपुर कारो से, मदन सिंह कोइल क्षेत्र से बनाए गए। 12 नवम्बर 1987 को मोजेस गुड़िया के निधन के बाद अध्यक्ष पद के लिए खींचातानी हुई। हालेन कुजूर अध्यक्ष बनना चाहते थे। लेकिन पारस डैम में बदनाम होने की वजह से उन्हें अध्यक्ष नहीं बनाया गया।

1988 में भंडार टोली में अध्यक्ष के चुनाव के लिए बैठक हुई और तीन दिन बाद कामडारा में बैठक हुई। नरेश कन्डुलना अध्यक्ष बनना चाहते थे। परन्तु ज्यादातर लोग सोमा मुण्डा को अध्यक्ष बनाना चाहते थे। इसके लिए मतदान हुआ तो सोमा मुण्डा को 92 मत और नरेश कन्डुलना को 13 मत पड़े। तपकरा बाजार टांड में 21 नवम्बर 1991 को पड़हा राजा पौलूस गुड़िया को कार्यकारी अध्यक्ष, सोमा मुण्डा को कारो क्षेत्र का क्षेत्रीय अध्यक्ष और पी. सी. बड़ाईक को कोइल क्षेत्र का क्षेत्रीय अध्यक्ष बनाया गया। तब से यही व्यवस्था

चल रही थी। कोइलकारो क्षेत्र की इमानी गुड़िया और नरमी गुड़िया ने महिलाओं को संगठित करने और आंदोलन में अगुवाई की भूमिका निभाती रही हैं। राजा पौलूस गुड़िया के नेतृत्व में 1995 से कोइलकारो जलविद्युत परियोजना विरोधी आंदोलन सत्याग्रह पूर्वक चलता रहा है। 31 अगस्त 2001 को राजा पौलूस गुड़िया का निधन हो गया। इसके बाद 22 जुलाई 2002 को कोइलकारो जनसंगठन का नया चुनाव सम्पन्न हुआ। श्री सोमा मुण्डा संगठन के अध्यक्ष, श्री रेजन गुड़िया महासचिव, माइकल कन्डुलना क्षेत्रीय अध्यक्ष, जीवन हेमरोम क्षेत्रीय सचिव, श्री जेम्स गुड़िया को कोषाध्यक्ष चुना गया। मुक्ता कन्डुलना को अध्यक्ष और अंजलिना गुड़िया सचिव बनाई गई है। श्री सोमा मुण्डा और रेजन गुड़िया का कहना है कि महिलाओं को पूर्व में संगठन के पद में नहीं रखा जा सका। सह हमलोगों की कमजोरी रही है। जबकि महिलाएं बढ़ चढ़ कर आंदोलन में हिस्सेदारी लेती रही हैं। महिलाएं सभी धरना, जुलूस, प्रदर्शन, और सभाओं में भागीदारी करती रही हैं।

जनसंगठन के नेताओं की पृष्ठभूमि और भूमिका –

श्री सोमा मुण्डा जनसंगठन के अध्यक्ष हैं और अत्यंत की प्रखर और दूर दृष्टिवाले हैं। उनकी विशिष्टता यह है कि वे खुले दिमाग और व्यापक दृष्टिकोण रखते हैं। 1977 के अगस्त माह में वे फौज से रिटायर होकर अपने गांव लोहाजिमी वापस आए। उन्होंने भारत बांग्लादेश विभाजन के समय 1971 के भारत पाक युद्ध 1965, भारत चीन युद्ध 1962 और 1961 में गोवा युद्ध में भाग लिया। वे सिगनल कोर में ड्राइवर थे। साथ ही एफ ई एस इलेक्ट्रिकल फिटर सिगनल का काम संभालते थे। गांवों में खेती बारी है। जिसे वे संभालते हैं। 21 साल फौज में रहे और 39 वे बरस में रिटायर हो गए। कुवैत में इलेक्ट्रिसिटी का काम किया। वे जम्मू काश्मीर में भी सेना में होते हुए दौरा किया और सेना में रहकर राष्ट्र की सेवा करते हुए पूर देश का भ्रमण किया। वे कहते हैं कि एच. ई. सी., राउरकेला स्टील प्लांट, भाखड़ा डैम आदि का आंखो देखा हाल उनके पास है। उन्होंने नजदीक से विस्थापितों की पीड़ा देखी है। उत्तरांचल में एक जगह से उजाड़े गए लोगों को अन्य जगहों में बसाने व फिर उजाड़ने की घटना उन्होंने अपने आंखों से देखी है। उन्होंने झाड़खंड में छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम के उल्लंघन व आदिवासियों के भूमि लूट की अनेक घटनाएं देखी। इससे उनका खौफजदा

मन कोइलकारो परियोजना से भयभीत हो गया। उनका कहना है कि वे इस तरह की विकास योजनाओं से अत्यंत ही डरे हुए हैं। इसका कारण हमारी संस्कृति का विनष्ट होना है। विस्थापन की त्रासदी से लोग त्राहि त्राहि कर रहे हैं। औपचारिक शिक्षा में सातवीं कक्षा तक पढ़े सोमा मुण्डा ने गांधी और बिरसा को पढ़ा है। वे कहते हैं आदिवासियों के हालात ने उनको प्रेरित किया है तभी वे बगावत का परचम थाम रखा है।

आंदोलन की विशिष्ट बातें –

कोइलकारो आंदोलन की दीर्घजीविता व संघर्ष का माद्दा जानने के लिए सम्पूर्ण आंदोलन के तौर तरीकों और रणनीति का विश्लेषण आवश्यक है। यह आंदोलन मूलतः गैर दलीय राजनीतिक आंदोलन रहा है। कोइलकारो जनसंगठन को छोड़कर जनता ने कभी किसी बैनर तले अपनी एकजुटता नहीं दिखाई न ही किसी तरह की कोई नेटवर्क संजाल की मदद ही ली गई। अनेक स्वयंसेवी संस्थाओं ने बाहर से विविध तरह के सहयोग दिए। जनसंगठन ने कभी किसी संस्था को सहयोग से मना नहीं किया। परन्तु अपनी स्वायत्ता बरकरार रखी। आंदोलन की सबसे बड़ी ताकत आंदोलनकारियों की एकजुटता रही है। दूसरा गोपनीय तरीके से भी आंदोलन को जारी रखने की इनकी अघोषित नीति रही है। बहुत कम लोग जानते है संभावित विस्थापितों में अनेक लोग जिनकी संख्या 100 के भीतर रही होगी एन. एच. पी. सी. के कार्यालय में विविध तरह के कार्य करते है। इससे इन्हें अंदरूनी सूचना प्राप्त हो जाती थी। वे कहते हैं कि सरकार हमसे चाल चलती है हम भी उसे पात पात चलकर जबाब देगें। हम जानते हैं कि परियोजना नहीं बनेगी लेकिन जब तक परियोजना कार्यालय चलाकर लोग सरकार का पैसा हजम कर रहे हैं तो हमें भी उसका लाभ लेना चाहिए। आखिर हमारी धरती पर ही परियोजना बनाने के नाम पर कार्यालय खोला गया है। हमें भी वेतन व अन्य लाभ मिलना ही चाहिए।

1995 से पूरे इलाके में जनता कर्फ्यू लागू किया गया। किसी भी गैर मुण्डा भाषी को उस इलाके में नहीं जाने दिया जाता था। कोई बाहरी लोगों का तो सवाल ही नहीं है। सरकार के लोगों को समझ में ही नहीं आ रहा था कि जनता कर्फ्यू क्या है! कोइलकारो जनसंगठन ने एक पास जारी किया था जिसे लेकर ही उस इलाके में घूमा जा सकता था।

आंदोलन के विशिष्ट नारे थे

जैसे आलेया हातू रे
आलेया राज।
सरना साके जगह आलेया
एटाआ जगह कालेया।
बिजली बत्ती काबुआ
ढिबरी बत्ती आबुआ।
सिरमा डाः आबुआ
डैम डाः काबुआ

विस्थापन से प्रभावित औरतें और बच्चे

विस्थापन से जुड़ी समस्याओं में सबसे बड़ी समस्या औरतों और बच्चों के मौलिक और बुनियादी नागरिक अधिकारों की रक्षा का था। आदिवासी लोक गीतों में औरतों की पीड़ा इस तरह उकेरी गई है।

बांड. दो धनी गे धनी बुरू सेंगल लोकन
बांड. दो धनी गे धनी दिशुम लोकन
अयां जीवी लो धनी ओकोय सड़ितना

संथाली गीत के ये मर्मभेदी शब्द औरतों के हालात को बयान करने के लिए बहुत है। झाड़खंड की विस्थापित और प्रभावित औरतों की पीड़ा कुछ ऐसी ही है। विस्थापन आज राष्ट्रव्यापी मुद्दा है तब भी अपने पारम्परिक परिवेश और सांस्कृतिक जीवन संरचना से उजाड़ दी गई औरतों के हालात पर रोशनी नहीं पड़ सकी है। इस गीत में औरतें गाती हैं कि जब पहाड़ पर आग लगता है तो पूरी दुनिया देखती है। परन्तु जब मेरा मन हदय जलता है तो उसे देखनेवाला कोई नहीं है। भारत में विस्थापन का लम्बा इतिहास है। इससे ही जुड़ा अध्याय झाड़खंड का है।

1775 में रानीगंज से कोयला यानी काला हीरा के खनन के इतिहास के साथ विस्थापन के कहे अनकहे अव्यक्त व्यथा झाड़खंड की माटी में दफन है। जीवन के दास्तान में औरतों के हिस्से न तो आधी जमीन आया है और न ही आधा आसमान।

आदिवासी विद्रोहों के इतिहास में आदिवासी औरतों के बलिदान की गाथाएं अब भी इतिहास की वस्तु नहीं बन पाई और उनके सवाल, उनके

मुद्दे हाशिए पर धकेले जाते रहे हैं। विकास, विस्थापन और औरत एक ऐसा ही ज्वलंत और बुनियादी सवाल है। बात 1766 के पहाड़िया विद्रोह की करें या 1854 के संथाल हूल की। बिरसा हुलगुलान की या कोल विद्रोह, सरदारी लड़ाई या फिर जतरा टाना भगत के सत्याग्रह आंदोलन की। औरतों ने पारम्परिक हथियारों से लैस हो अंग्रेजों के होश ठिकाने लगाए और अपने को न्यौछावर किया। लैंगिक पूर्वाग्रहों से लिखे इतिहास ने इन बातों को बिसारने का काम किया। नतीजा यह हुआ कि औरतों के गरिमापूर्ण संघर्ष की गाथा कहीं दर्ज नहीं हो सकी। फूलो झानो, मकी, देवमनी इतिहास में जगह नहीं पा सकी। यह नाइंसाफी स्त्रियों के लिए खतरनाक सिद्ध हुई और उनके हिस्से का सवाल अनुतरित रह गया।

विस्थापन की समस्या औरतों और बच्चों के लिए जीवन की एक ऐसी अंधेरी सुरंग साबित हुई है जिससे उबरने के रास्ते उसके पास नहीं है। पूरे समाज को इसका हल ढूंढना होगा। बड़े डैम, कल कारखानों और वृहत् मध्यम व छोटी सिंचाई परियोजनाओं की बात हो देश में विकास की कीमत चुकानेवाले लगभग तीन करोड़ लोगों में आधी आबादी स्त्रियों की है। झाड़खंड में यह संख्या 50 लाख में आधी है। देश को समृद्धि के पथ पर अग्रसर करने की गर्जना करनेवाले राष्ट्रनिर्माताओं ने विकास के नाम पर खुशहाली, सम्पन्नता और अमीरी का वायदा किया। लेकिन इन 70 सालों में विकास ने बदहाली, विपन्नता और गरीबी ही पैदा किया। भूख बढ़ाई और जीने के अधिकार को ही छीन लिया। इसका सर्वाधिक प्रभाव औरतों पर ही पड़ा।

सामाजिक – सांस्कृतिक हैसियत में गिरावट

समाज में पहले से दोयम दर्जे के नागरिक के तौर पर जी रही औरतों की पीड़ा गहरी हुई। उनकी पहचान मिटती गई। बेबसी ही बढ़ती गई। खेत जब खदान बने तो फगुनी मांझी ईंट भट्ठों में काम करने को बाध्य हुई। खेत मालकिन से रेजा बन गई तो उसकी बलात्कार के बाद हत्या कर दी गई। पता चला कोइलयरी इलाकों में यह आम घटना है। अनेक फगुनी मांझी बलात्कार की शिकार हुई और मार दी गई। पर विकास की बात करनेवालों की चांदी ही कटती गई। जंगल कोयले के ढेर में तब्दील हुआ तो औरतों का जीवन सामाजिक सांस्कृतिक खालीपन से भर गया। वे सांस्कृतिक सदमे में

हैं और उनके मान सम्मान और सुरक्षा की गांरटी खतम हो गई। जो औरतें बेवा और लाचार हैं, अकेली और विधवा हैं उन्हें मुआवजा क़ा हकदार नहीं माना गया। कोल इंडिया लिमिटेड के पास बहुत सहज जबाव है कि उनके नाम पर जमीन का पट्टा ही नहीं है और वे जमीन की मालिक नहीं है। सी. आई. एल. के कई अनुषंगी इकाईयों में 18 वर्ष तक की उम्र के युवक युवतियों को एक इकाई मानकर मुआवजा या जमीन के बदले जमीन देने की बात हुई।

लेकिन औरतों को इस श्रेणी में भी नहीं रखा गया। कई उदाहरण ऐसे हैं जिसमें विधवा स्त्री को नौकरी देने के बजाए उसके देवर को नौकरी दी गई। विधवा स्त्री उस कमाई की किसी रूप में हिस्सेदार नहीं रही।

मुआवजे के दृष्टिकोण से महिलाएं विस्थापित ही नहीं मानी गई। जिनके नाम पर जमीन का पट्टा होता है, मुआवजा या नौकरी के लिए उनका ही नाम दर्ज होता है। सामान्यतया पुरूष ही पट्टे में मालिक होते हैं। गुजरात के सरदार सरोवर बांध से विस्थापितों को मुआवजा देने के दरम्यान 5 एकड़ जमीन केवल 18 साल से उपर के युवकों और पुरूषों को मिली। औरतें इस लाभ से वंचित रही। जमीन के बदले जमीन के प्रावधान में भी औरतों के हिस्से कुछ नहीं आता। रोजगार का सवाल हो तो प्राथमिकता पुरूषों को दी जाती हैं। योग्य और सक्षम स्त्रियां दर दर की ठोकरें खाने और पलायन करने को विवश होती हैं। कई बार अपनी आजीविका के लिए देह व्यापार के धंधे में भी वे मजबूरन चली जाती हैं।

औरतों और बच्चों पर प्रभाव

विस्थापन से सबसे बुरी हालत गर्भवती और नवजात शिशु की माताओं की होती है। उनके लिए कोई भी कोयला कंपनी इस स्तर तक संवेदनशील होकर सोचने को तैयार नहीं होता है। विस्थापन की सामाजिक परिघटना मानसिक और आध्यात्मिक झटका लेकर आती है। एक बार आदिवासी उजाड़े गए तो वे फिर वे पारम्परिक व नैसर्गिक सामाजिक परिवेश के साथ पर्यावरणीय वातावरण में बस नहीं सके। इससे उसके आहार और जीवन पद्धति पर गहरा असर पड़ता है। पौष्टिक और अपनी रूचि के भोजन के अभाव में स्त्रियां बीमार, कुपोषित और तरह तरह की बीमारियों की शिकार होती हैं। टी.बी., मलेरिया, डायरिया, एनीमिया और कई जानलेवा बीमारियां

जीवन भर उनका पीछा नहीं छोड़ती है। भूमिहीनता से उनके जीवन की दिनचर्या में आमूलचूल बदलाव आता है और वे सामान्य जीवन से वंचित होती हैं। बच्चों की स्थिति ज्यादा दयनीय होती है। उनके व्यक्तित्व विकास की गति, विकास की आंधी में छितरा जाते हैं। शिक्षा की जगह अशिक्षा, भूख और कुपोषण उनके जीवन का अंग बन जाता है। जबरिया विस्थापन से उनकी भूख भी जाती रहती है और भर पेट खाना वे नहीं खा पाते। जीवन के असुरक्षा की गांरटी छाया की तरह उनके साथ होती हैं। पारम्परिक भोजन के अभाव में उनका शारीरिक और मानसिक ह्रास होता है। भूख और कुपोषण बच्चों के स्वास्थ्य पर दीर्घकालीन असर डालते है। भूमिहीन होने से अन्न की कमी हमेशा बनी रहती है। एक अध्ययन में पाया गया कि विश्व बैंक की परियोजनाओं में कई कॉलोनियों में औसत भोजन की कमी से हर उम्र के बच्चे कुपोषित हैं। बच्ची और बच्चे दोनों का वजन उम्र के हिसाब से कम है। पेय जल और हवादार कमरों की कमी से शारीरिक रूग्नता उनके हिस्से रहता है।

मनोरंजन की कमी और नए परिवेश से उनके स्वाभाविक विकास पर रोक लग जाती है। खेल मैदान, जंगल और खुले स्थान की कमी उनके लिए घुटन पैदा करती है। बच्चों की पढ़ाई पर इससे ज्यादा असर पड़ता है। बच्चे ज्ञान से वंचित होते और असामाजिक गतिविधियों के साथ गलत कामों में शरीक होते हैं। या फिर पेट भरने के लिए वे होटलों में और मजदूर के रूप काम करने चले जाते हैं।

जमीन से बेदखली और कानूनी अधिकार नहीं अर्थात् आवासविहीनता

विस्थापन एक ऐसी त्रासदी है जो औरतों और बच्चों के जीवन में घना अंधेरा लाती है। वे घरविहीन हो जाती हैं। आश्चर्य तो यह है कि भूमि अधिग्रहण के समय उन्हें पता नहीं होता है कि परियोजना के लिए उनकी जमीन ली जाएगी अथवा नहीं। गांव वालों को इसकी खबर तक नहीं दी जाती है। वे सूचना के बुनियादी अधिकार से भी वंचित है। अशोका पिपरवार प्रोजेक्ट से उजड़े बेंती और हड़गड़ी गांव की बात करें तो अपने घर से उजाड़े जाने और अस्थायी तौर पर कहीं बसे होने से वे असुरक्षित और सदमे में जीवन व्यतीत करती हैं। जहां उन्हें बसाया गया उस स्थान में रहने के लिए अस्थायी बैरक और एक एक कमरे का मकान ही दिया गया। यहां से भी उनके उजाड़े जाने की बात है। फिर वे कहां जाएंगे किसी को मालूम नहीं

है। जैसे पूर्वी परेज के विस्थापित पिंडरा नामक स्थान पर हैं। उन्हें वहां से भी हट जाना है। अस्थायी तौर पर भी उन्हें स्कूल, अस्पताल, खेल के मैदान और अन्य खुली जगह उन्हें मयस्सर नहीं होती है। अशोका और पिपरवार प्रोजेक्ट से खदेड़ी गई औरतों का कहना है कि उन्हें पता नहीं कि उनकी कितनी जमीन परियोजना में ली गई है और बदले में कितनी भूमि उन्हें मिली है। क्योंकि जमीन पर दखल का कोई कागज पुनर्वास के समय उन्हें दिया नहीं गया। वे कहती हैं कि जमीन पर कानूनी अधिकार उन्हें नहीं मिल पाता है। यह सबसे बड़ी बिडम्बना है। कहीं 2 एकड़ सिंचित जमीन तो कहीं 3 एकड़ असिंचित जमीन या दो एकड़ असिंचित जमीन मैट्रिक पास की शर्त्त पर मुआवजा या नौकरी दी जाती है। पूर्वी परेज में प्रारंभिक चरण में कम भूमि वालों को भी सी. सी. एल ने नौकरी दी। लेकिन एक एकड़ से कम भूमि वालों को बाद में छोड़ दिया गया। जिसके पास अधिक भूमि है तो उस परिवार के दो सदस्यों को भी नौकरी प्रदान की जाती थी। लेकिन इसमें भी परिवार के पुरूष सदस्य का ही चयन किया गया। उजाड़े जाने के बाद नई जगह पर वे अपने पारम्परिक घर के परिवेश को स्थापित नहीं कर पाती हैं। उन्हें ढेकी घर, गोहाल घर, आंगन, लकड़ी रखने के स्थान की कमी उनके जीवन को गहरे प्रभावित करती है।

पानी का भयावह संकट

विस्थापन के पूर्व गांवों में पानी के कई स्त्रोत् होते हैं। कुंआ, तालाब, दाड़ी, झरना, नदी, हैंडपंप, पाइप या अन्य स्त्रोतों से पानी उन्हें मिलता है। इसके लिए उन्हें परेशान नहीं होना पड़ता है। लेकिन विस्थापित या प्रभावित होने के बाद यह सारी चीजें खतम हो जाती हैं, झरना, दाड़ी सब सूख जाते हैं और पानी के लिए त्राहि त्राहि मच जाती है। पीने का पानी लाने के लिए औरतों को पांच से दस किलोमीटर की दूर जाना पड़ता है।

घरविहीनता से पानी और शौच से वे वंचित हो जाती हैं। बेंती गांव की औरतों का कहना है कि वे तीन चार किलोमीटर और गर्मी के दिनों में उससे भी ज्यादा दूर जाकर पानी लाती है। नहाने के अलावा पीने के पानी की कमी उनके लिए बीमारी का कारण बनती है। शौच आदि के लिए भी उन्हें पानी के बंदोबस्त करने के लिए जूझना पड़ता है। कोई घर आ जाए तो एक गिलास पानी के लिए पूछना भारी लगता है।

स्वास्थ्य पर प्रभाव

विस्थापन औरतों और बच्चों के मानसिक और शारीरिक अस्वस्थता की नींव डालती है। पुरखों की जमीन, जंगल और पेड़ पौधों के पारम्परिक परिवेश से जबरन बेदखल किए जाने का मानसिक आघात उन्हें सहना पड़ता है। सब कुछ तितर बितर हो जाता है। पारम्परिक पूजा स्थल के लुप्त होने से उनकी असहय पीड़ा को समझा जा सकता है। पीने के स्वच्छ पानी के अभाव में वे कई तरह की छोटी बड़ी बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। टी. बी., मलेरिया, डायरिया उनका पीछा नहीं छोड़ती है। नहाने के लिए पानी की कमी से वे कई कई दिनों, 15 दिन नहीं स्नान करने पर चर्म रोग उन्हें जकड़ जाता है। शौच के लिए स्थान की कमी उनकी बीमारी को बढ़ाती है। जंगल के होने से उन्हें पानी और शौच के स्थान के लिए कोई दिक्कत नहीं होती थी।

जंगल के नहीं रहने से उनकी सांस्कृतिक गतिविधियां भी प्रभावित हो जाती हैं। विस्थापन के पूर्व गांवों के नजदीक जंगल होने से उन्हें अपने स्वास्थ्य की चिंता भी नहीं होती थी। जंगल से जड़ी बूटी आदि लाकर वे अपना इलाज करते और उनके आजीविका का यह बड़ा आधार भी था। एक अध्ययन में बात आई है कि जंगल के नजदीकवाली आबादी में गंभीर बीमारी कैंसर, टी.बी. रोग नहीं होते है। लेकिन जंगल से दूर रहनेवालों को इन गंभीर बीमारियों के अलावा श्वसन संक्रमण और उच्च रक्तचाप की बीमारी होती है।

कार्यकलाप में परिवर्त्तन और जीवन शून्यता

विस्थापित क्षेत्रों में देखा गया है कि औरतों के जंगल और कृषि संबंधी गतिविधियां बदल जाती हैं और वे हड़िया दारू बनाने के काम या फिर किसी के घर में घरेलू काम करने को बाध्य होती हैं। पूर्वजों की भूमि पर वे खेती के साथ बारी का काम भी निपटाती और अपने घर के खर्च भी निकाल लेती हैं। बारी में टमाटर, आलू, बैंगन, मिर्च, लहसुन आदि की खेती कर वे परिवार को चलाने में सहायक होती हैं। लेकिन उजाड़े जाने के बाद यह खेती बारी का जीवन नष्ट हो गया तो वे खालीपन की शिकार हो गई। सामाजिक झगड़े इससे बढ़े और परिवार में अशांति फैल गई। वे कोयला चोरी करने, कोयला चुनने और दैनिक मजदूर के रूप में बदल गई। जहां उन्हें न्यूनतम मजदूरी भी नहीं मिलती और यौन शोषण का भी शिकार होना पड़ता। एक अध्ययन

में यह बात आई कि 90 प्रतिशत औरतें खेती और जंगल संबंधी गतिविधियों से जुड़ी होती हैं। जंगल जाना उनका नित्य कर्म होता है। महुआ, डोरी, करील, बेल, केंद, पियार, जामुन, आम, चिरैंता, भेलवा, झाड़ू, दातून, बांस, सरला साग, कोयनार साग, खुखड़ी, पुटु आदि वे जंगल से पाती हैं। लेकिन विस्थापन के बाद यह सब उनके लिए दुलर्भ है।

खाद्य असुरक्षा

उजाड़े जाने के बाद जलावन और आर्थिक आमदनी में कमी से उनके भोजन की गांरटी भी समाप्त हो जाती है। अपने घर में झुरी पतुर चुनकर वे खाना बनाती और खाती। लेकिन पुनर्वास स्थल पर खाने के लाले पड़ जाते हैं. बच्चे भूख से बिलबिलाते हैं और औरतें किसी तरह खाने का जुगाड़ कर पाती हैं।

पौष्टिक साग और पुराना धान से बना चावल उनके शरीर को मजबूत बनाता है। लेकिन इसके अभाव में वे भरपेट और दिन में तीन बार खाने से वंचित होती हैं। विस्थापित औरतें खाने में दाल कम बनाती हैं। महीने में मुश्किल से वे चार पांच दिन ही दाल खा पाती हैं। अलग राज्य के औद्योगिक विकास की होड़ मची है। राजग के राजनीतिज्ञ जिंदल, मित्तल, बिड़ला का पूंजी निवेश करने के लिए बेताब हैं और राजग के बुद्धिजीवी विकास के मानक गढ़ने में मशगूल हैं। यह सब कुछ झाड़खंड के सामाजिक – सांस्कृतिक और आर्थिक परिवेश, भूगोल और इतिहास की जानकारी के बगैर ही करने की कवायद हो रही है। यहीं सबसे दुर्भाग्यपूर्ण है। भारी सांस्कृतिक संघर्ष यहां दिखाई पड़ता है। इस आपाधापी में यह बात याद रखनी चाहिए कि आदिवासी और झाड़खंडी समाज को अब अनुदानजीवी और मुआवजा प्रदान कर उन्हें गुलाम नहीं बनाया जा सकता है। बल्कि जमीन के बदले उन्हें अधबटाई की परम्परा के मुताबिक आधी मालिकी देनी होगी। इसके बगैर झाड़खंडी अब एक इंच जमीन देने को तैयार नहीं हैं। झाड़खंडी अब पुनर्वास और मुआवजा की राजनीति चलने नहीं देगें. इस पूरे परिदृश्य में औरतों के हालात पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है.अन्यथा विकास महाविनाश ही साबित होता रहेगा। मुट्ठी भर लोगों को जीवन की हर सुविधा हासिल होगी और अपनी जमीन जंगल गंवाने वाले कीड़ा मकोड़ा की तरह मरते रहेगें।

पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज से प्रभावित लोगों की विस्थापन–व्यथा

1. फील्ड फायरिंग की शुरूआत

तालिका नं. 1.29

	प्रखंड	जिला	अधिसूचित वर्ष 1991	गांवों की संख्या वर्ष 1992	कुल
1.	महुआडांड़	पलामू	23	29	52
2.	विशुनपुर	गुमला	38	32	70
3.	चैनपुर	गुमला	24	22	46
4.	डुमरी	गुमला	00	30	30
5.	घाघरा	गुमला	04	38	42
6.	गुमला	गुमला	00	05	05
	कुल गांव		**89**	**156**	**245**

दिनांक 7–5–94 को गुमला के उपायुक्त श्री लियान कुंगा की अध्यक्षता में कुछ गिने–चुने लोगों और सेना के बीच एक बैठक हुई। सेना की तरफ से कर्नल परमजीत सिंह शाही तथा मेजर बी.जी. पाठक शरीक हुए। इस बैठक में बताया गया कि वर्ष 1956 की अधिसूचना के द्वारा सरकार ने manoeuvers, Field Firing and artillery practice Act, 1938 की धारा 9 के अन्तर्गत 24 गुना 17 कि. मी. अर्थात् 308 वर्ग कि.मी. भूभाग को अधिसूचित क्षेत्र घोषित किया एवं 10 गुना 14 कि.मी. 140 वर्ग कि.मी. को संघात क्षेत्र निर्धारित किया था और उक्त क्षेत्र में सेना के अनुसार वर्ष 1964 से लेकर वर्ष 1994 तक प्राय: हर साल सेना तोप चलान

अभ्यास करती गयी। यह अवधि वर्ष 1994 में खत्म होने वाली है।

1991 और 1992 की अधिसूचनाएं बिहार गजट असाधारण अंक, दिनांक 25 नवंबर 1991, एस.ओ. 761 तथा दिनांक 28 मार्च 1992, एस.ओ. 84 जारी की गयी जो 13 मई 1992 से लेकर 11 मई 2002 तक प्रभावी रहेगी। इन अधिसूचनाओं के तहत 1471 वर्ग कि.मी. अधिसूचित क्षेत्र होगा जिसके अन्तर्गत 188 वर्ग कि.मी. और आदर के 9 वर्ग कि.मी. क्षेत्रों में सैनिक शिविर बनेंगे। इन सूचनाओं के अनुसार कुल 206 वर्ग कि.मी. की भूमि का अर्जन किया जाना है एवं इसके फलस्वरूप 27,853 लोग विस्थापित होंगे जिसमें 90 से 95 प्रतिशत आदिवासी होंगे।

2. वर्त्तमान स्थिति : योजना का विस्तार

अधिसूचित फायरिंग रेंज के अलावा फौजी शिविर और संघात-क्षेत्र बनाने के प्रथम चरण के लिए सेना का निम्नलिखित प्रस्ताव सरकार के पास लम्बित है :

(क) छावनी – क्षेत्र (Camping Area) :

1. अंदर (10 गांव) – 9386.71 एकड़ भूमि
2. नेतरहाट (7 गांव) – 7502.42 एकड़ भूमि

(ख) संघात-क्षेत्र (Impact Area) : विशुनपुर और चैनपुर प्रखंडों के अंतर्गत पर्वतीय क्षेत्रों के 28 गांव- 58,193.94 एकड़ भूमि

(ग) The Hindustan Times, Patna, 14.1.94 के एक रिपोर्ट के पांचवें पाराग्राफ के मुताबिक सेना के मांग पर बिहार सरकार ने एक विशाल क्षेत्र गया जिला के देवरी-डुमरी प्रखंड के पास निर्धारित किया। लेकिन कथित रूप से वहां की घनी आबादी तथा एतिहासिक अवशेष का हवाला देते हुए राज्य सरकार की अनुशंसा पर सेना ने एक लाख वर्ग कि.मी. के क्षेत्र को चुना ज़ो नेतरहाट के निकट पलामू और गुमला जिलों में पड़ता है। सेना ने यह मांग की कि उनके फायरिंग रेंज के लिए कम-से-काम 19,856 वर्ग कि.मी. का संघात क्षेत्र चाहिए। प्रोजेक्ट के विस्तार को ध्यान में रखकर सेना ने पांच गुना अर्थात् एक लाख वर्ग कि.मी. भूभाग को अधिसूचित कराने की पेशकश की है।

फील्ड फायरिंग और युद्ध अभ्यास के लिए इतने बड़े भूभाग पलामू व्याघ्र परियोजना को छोड़कर चूंकि पलामू-गुमला जिलों में समा नहीं सकता है, अत: इसका कुछ हिस्सा मध्य प्रदेश में भी पड़ने की आशंका है। स्थानीय लोगों के अनुसार सुरगुजा जिलों के कुसमी प्रखंड में भी सैनिकों के द्वारा सर्वेक्षण किए गए जाने की खबर है। लेकिन सरकारी तौर पर इसकी सूचना अथवा अधिसूचना

जनसंघर्ष समिति के पास उपलब्ध नहीं है। जब-जब इस कानून के तहत किसी क्षेत्र को अभ्यास के लिए अधिसूचित किया जाता है, तब-तब वहां के लोगों को अपने क्षेत्र से फील्ड फायरिंग के समय अस्थायी रूप से हटना पड़ता है। इसके लिए उचित मुआवजे की भी व्यवस्था नहीं है।

3. प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्ट : भूअर्जन एवं स्थायी विस्थापन

जहाँ तक प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज की वास्तविकता का प्रश्न है, इस संबंध में भूअर्जन-प्रक्रिया के प्रमाण स्वरूप प्रशासन के विभागीय पत्राचार निम्नलिखि हैं :

(क) कर्नल एस.एन.ओझा, दानापुर का पत्रांक 1290/Netarhat/**G.S.** (Trg), 5.7.1993,

(ख) अपर जिला दण्डाधिकारी, विधि व्यवस्था, पलामू का ज्ञापांक 639/सा., दिनांक 15.7.93

(ग) अपर समाहर्ता, गुमला का पत्रांक 419, दिनांक 8.11.93

(घ) आर्मी हेडक्वार्टर का पत्रांक F/L-1003/91849/G, दिनांक 26.5.93

(ङ) एन. एस.गुरूंग, कर्नल Officiating Commander, 23 Artillery Brigade, A.P.O., का पत्रांक 204/03/1/110/G.S. (Trg), 12.7.1993

(च) गृह विभाग का पत्रांक 1466, दिनांक 14.9.92

(छ) विभागीय पत्रांक 1537, दिनांक 20.9.93

इन पत्रों से साफ जाहिर है कि उपरोक्त पायलट प्रोजेक्ट के प्रथम चरण में भूअर्जन की प्रक्रिया भी शुरू की जा चुकी है। अत: यह सोचना और प्रचार करना मूर्खतापूर्ण होगा कि पायलट प्रोजेक्ट के लिए भूअर्जन नहीं किया जा रहा है।

4. कानून क्या कहता है : असलियत क्या है

सरकार ने (Manoeuvers, Field Firing & Artillery Practice act, 1938, के तहत सेना के लिए भूमि अधिग्रहण करने की योजना बनायी है। इस अधिनियम की धारा 9 को हमें गौर से समझना चाहिए, जिसका अनौपचारिक अनुवाद नीचे दिया गया है।

(क) राज्य सरकार स्थानीय सरकारी गजट में अधिसूचना करके संपूर्ण अधिसूचित क्षेत्र अथवा उसके किसी निश्चित हिस्से में, संबद्ध अधिसूचना में निर्धारित

किसी एक समय अथवा अलग–अलग समय पर फील्ड फायरिंग और तोप–चालन के अभ्यास का अधिकार दे सकती है।

(धारा 9:1)

(ख) राज्य सरकार स्थानीय गजट में अधिसूचना प्रकाशित करके संपूर्ण अधिसूचित क्षेत्र अथवा उसके किसी निश्चित हिस्से में, संबद्ध अधिसूचना किसी एक समय अथवा अलग–अलग समय पर, फील्ड फायरिंग और तोप–चालन के अभ्यास का अधिकार दे सकती है।

(धारा 9:2)

(ग) उपधारा (2) के तहत कोई अधिसूचना जारी करने के पहले राज्य सरकार ऐसी अधिसूचना जल्दी देगी और उक्त सूचना को स्थानीय सरकारी गजट (जिला गजट) में प्रकाशित करने की तिथि से लेकर दो महीने तक तत्संबंधी कोई अधिसूचना प्रकाशित नहीं की जाएगी।

(धारा 9:3)

(घ) उपधारा (3) में जरूरी करार दी गयी सूचना का प्रकाशन स्थानीय सरकारी गजट (जिला गजट) में किया जाएगा तथा साथ ही इस आशय की सूचना का प्रकाशन संपूर्ण अधिसूचित क्षेत्र में कम–से–कम दो अखबारों में किया जाएगा और सभी सरकारी कार्यालयों एवं प्रमुख सार्वजनिक स्थानों पर उक्त सूचना की प्रतिलिपियां स्थानीय भाषा में चिपकायी जाएंगी तथा धारा 13 के तहत बने नियमों के द्वारा निर्दिष्ट किसी अन्य तरीके से उसका प्रकाशन होगा। उक्त सूचना की पुनरावृत्ति उपर्युक्त तरीके से अधिसूचना में निर्धारित अवधि की शुरूआत से कम–से–कम एक सप्ताह पहले की जाएगा।

(धारा 9:4)

धारा 9 (3) के साथ यह शर्त्त है कि डुगडुगी बजाने तथा सूचा को चिपकाने को लिखित सत्यापन एक स्थानीय मुखिया और दो अन्य साक्षर निवासियों के द्वारा किया जाएगा। दूसरी शर्त है कि डुगडुगी बजाकर सूचना देने की प्रक्रिया उक्त फील्ड फायरिंग और तोप चालन–अभ्यास के अवधि की शुरूआत से कम से सात दिन और दो दिन पहले की जाएगी।

यह भी उल्लेखनीय है कि कानूनन सेना किसी एक स्थान पर तीन में सिर्फ एक बार, अधिकतम तीन महीनों की अवधि तक युद्धाभ्यास कर सकती है।

The Hindustan Times दिनांक 10–12–1993 के संस्करण में सेना ने

188 वर्ग कि.मी. के अधिग्रहण के प्रस्ताव की बात स्वीकार की है, किन्तु बिहार सरकार ने "उदारतावश" उक्त मांग से छः गुना अधिक भूमि अर्थात् 1200 वर्ग कि.मी. सेना को देने की पेशकश की है। फलस्वरूप फील्ड फायरिंग और तोप-चालन अभ्यास के लिए 245 गांवों की अधिसूचना जारी की गयी तथा प्रथम चरण में 34 से लेकर 43 गांवों के अधिग्रहण का प्रस्ताव भी हो चुका है।

सेना के ही वक्तव्य के मुताबिक उक्त फायरिंग रेंज को गया के समीप डुमरिया प्रखंड में स्थापित किया जाना था। किन्तु पक्षपातपूर्ण नीति के तहत आदिवासियों की मौन-प्रवृत्ति का लाभ उठाते हुए उसे नेतरहाट और उसके समीपवर्त्ती क्षेत्रों में लाने की योजना बनी। लेफ्टिनेंट कर्नल अनिल भट्ट के अनुसार नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज "नए हथियारों" के अभ्यास एवं रखरखाव के लिए उपयुक्त है। (The Hindustan Times), दिनांक 14-1-1994 के एक रिपोर्ट के अनुसार नए हथियारों में "155 कि.मी. गन और रॉकेट" शामिल हैं. ऐसे रिपोर्ट फायरिंग रेंज के वृहताकार होने का संकेत देते हैं।

5. संगठन संघर्ष : जनांदोलन

सैनिक एवं असैनिक अधिकारियों के द्वारा 1993 में जब प्रस्तावित इलाके का गहन सर्वेक्षण शुरू किया गया तो हम अत्यंत निराश एवं भयभीत हो गए, अंत में हमने देखा कि संगठित होकर संघर्ष करने के अलावा हमारे पास और कोई विकल्प नहीं था।

अभी हम

(1) ग्राम स्तर

(2) क्षेत्रीय स्तर

(3) प्रखंड स्तर पर

(4) पायलट प्रोजेक्ट से प्रभावित जिला स्तर पर संगठित हैं। ग्राम समिति, क्षेत्रीय समिति, प्रखंड समिति एवं केन्द्रीय समिति एक दूसरे से ताल-मेल कर काम करती हैं। नीति-निर्धारण समिति के स्तर पर किया जाता है। इसका कार्यान्वयन प्रखंड समिति, क्षेत्रीय समिति एवं ग्राम समिति के माध्यम से कारगर तरीके से किया जाता है। अब हमारा संघर्ष सही माने में एक जन-आंदोलन है। हमारे आंदोलन के लिए हमने सत्याग्रह के तरीके को चुना है। यहां हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं है।

हमारे संघर्ष के कार्यक्रम के तहत हमने प्रखंड, जिला एवं प्रमंडलीय स्तर पर प्रदर्शन एवं रैली का आयोजन किया तथा राज्य और केन्द्र सरकार को ज्ञापन दिया। परिवार के स्तर पर प्रत्येक शनिवार को दरवाजे पर हरे पत्ते रखे जाते हैं।

ग्राम स्तर पर अपने आप को संघर्ष के लिए तैयार एवं जागरूक रखने के लिए हर संध्या समय एक खास ताल में नगाड़े बजाए जाता हैं। प्रत्येक रविवार की शाम मशाल जुलूस निकाले जाते हैं या मशाल के साथ नगाड़े बजाए जाते हैं।

6. जोकीपोखर में सत्याग्रह

पुराने नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज पर 1963 से ही सेना फील्ड फायरिंग का अभ्यास किया जाता रहा है। वहां के लोगों को फील्ड फायरिंग के कारण अपने गांव-घरों से अस्थायी रूप से हटना पड़ता है। अभ्यास दिन या रात किसी समय भी किया जाता है। घर छोड़कर जंगलों में खुले आसमान के नीचे जो रात या दिन काटता है, उसकी पीड़ा वहीं महसूस कर सकता है। बीमार व्यक्तियों, यहां तक कि गर्भवती महिलाओं को पनाह खोजनी पड़ती है। किन्तु मुआवजा के नाम पर आज भी प्रति वयस्क 1.50 रू. एवं प्रति बच्चा .075 रू. कभी-कभी भुगतान किए जाते हैं। फसल की बर्बादी एवं माल-मवेशियों की हानि का मुआवजा कभी नहीं मिलता है। ग्रामीण अगर कोई शिकायत लेकर थाना जाते हैं तो उनकी सुनवाई नहीं होती है।

राष्ट्र की सुरक्षा के नाम पर स्थानीय आदिवासियों के साथ पशुतुल्य व्यवहार किया जा रहा है। अभ्यारण्यों में वन्य प्राणियों के लिए भी भोजन, पानी एवं आराम की व्यवस्था होती है. किन्तु यहां के इंसानों के लिए ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है।

फील्ड फायरिंग रेंज से प्रभावित लोगों का दु:ख-दर्द एवं उनके साथ अमानुषिक व्यंवहार, प्रशासन एवं सैनिक अधिकारियों के असंवेदनशीलता की कहानियों से हमारी भावनाओं को गहरा आघात पहुंचा। अत: केन्द्रीय समिति पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज संघर्ष समिति को जब सूचना मिली कि सेना द्वारा मार्च 23 एवं 24 को फील्ड फायरिंग के कार्यक्रम की नोटिस दी गयी है तो उसने हठात् दु:खी मन से ऐसी कार्यवाहियों का विरोध करने का निर्णय लिया। सरकार का ध्यान प्रोजेक्ट फील्ड फायरिंग रेंज का रद्द करने की हमारी मांग की ओर आकर्षित करने एवं नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज को बंद करने की मांग को लेकर मार्च 23 एवं 24 को निर्धारित फील्ड फायरिंग को शांतिपूर्ण सत्याग्रह द्वारा रोकने का ऐतिहासिक निर्णय लिया गया। प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्ट फील्ड फायरिंग रेंज से प्रभावित लोगों ने इस निर्णय का जोरदार समर्थन किया। अधिसूचित क्षेत्र की प्रभावित जनता जाति, धर्म एवं राजनैतिक दलों से ऊपर उठकर शांतिपूर्ण सत्याग्रह के तरीके से आंदोलन छेड़ने के लिए तैयार हो गयी। उसके संकल्प जान देंगे, पूर्वजों की जमीन कभी नहीं देंगे के नारे के साथ जोकिपोखर-टुटुवापानी (नेतरहाट) के जंगलों में गूंज उठा। लोगों ने लाखों की संख्या में (70-80 किलोमीटर की दूरी

तय कर) अनेक कठिनाईयों को झेलते हुए सत्याग्रह स्थल पर आकर लगातार सात दिनों (19 से 25 मार्च) तक अभूतपूर्व अनुशासन एवं धैर्य का परिचय देते हुए शांतिपूर्ण सत्याग्रह करके जनशक्ति का प्रदर्शन किया। इस जनशक्ति के सामने सेना को झुकना पड़ा। अभ्यास स्थगित करना पड़ा। जनता के लिए यह पहली विजय थी।

7. जोकीपोखर में पुन: सत्याग्रह

12 अप्रैल 94 को प्रशासन के द्वारा जन संघर्ष के प्रतिनिधियों को फायरिंग अभ्यास के स्थगन के आश्वासन के बावजूद जब सेना एवं जिला प्रशासन पलामू ने अप्रैल 25 से 3 मई तक पुन: फायरिंग अभ्यास की सूना दी, तो पुन: जनता में हचलच मच गयी। प्रभावित क्षेत्र की तमाम जनता ने अपने शांतिपूर्ण सत्याग्रह से जन आंदोलन का पुन: प्रमाण दिया। लाखों की संख्या में लोग 22 से 27 अप्रैल 94 सत्याग्रह स्थल पर आ डटे। यद्यपि कुछ विघटनकारी तत्त्वों ने सत्याग्रह को विफल के लिए कोई कसर नहीं छोड़ी, जनता ने अटूट एकता और अदम्य साहस का परिचय देते हुए सत्याग्रह के लिए कूट किया। तय किया गया अभ्यास फिल से टला।

8. अन्य लोगों का सहयोग

प्रभावित क्षेत्र के लोगों के अतिरिक्त अन्यत्र बस आदिवासियों और समाज सेवी दलों ने आंदोलन में दिल खोलकर सहयोग दिया है। पटना में रहने वाले छोटानागपुर और संताल परगना मूल के आदिवासी सामाजिक एवं सांस्कृतिक संघ, पटना ने डाक बंगला चौक पर दिन भर का धरना आयोजित कर आंदोलन की मजबूती दी। राष्ट्रपति के लिए ज्ञापन भी दिया गया।

दिल्ली की हमारी सहयोगी संस्था आदिवासी युवा संघ ने 9 अप्रैल को जंतर मंतर से फिरोजशाह कोटला मैदान तक जुलूस की एवं रैली आयोजित किया। इसमें लगभग बाहर हजार लोगों ने भाग लिया। उन्होंने राष्ट्रपति एवं प्रधान मंत्री को ज्ञापन दिया एवं संवाददाता सम्मेलन आयोजित किया। जब जोकिपोखर में दूसरा सत्याग्रह चला तो आदिवासी युवा संघ ने जंतर मंतर में पुन: धरना एवं मोटर साइकिल रैली का आयोजन किया।

प्रधानमंत्री राष्ट्रपति एवं अन्य संबंधित मंत्रियों के नाम ज्ञापन, पोस्टकार्ड एवं तार भेजकर जनता उक्त प्रोजेक्ट का विरोध कर रही है।

9. विस्थापन का विस्तार

दिल्ली की एक संस्था "लोकायन" के अनुसार आजादी के बाद विकास की

योजनाओं के कुल 3 करोड़ लोग विस्थापित हो चुके हैं। उसी संस्था ने यह भी आकलित किया है कि "देश में आदिवासियों की संख्या 7 करोड़ है। इसका 20 प्रतिशत 1.40 करोड़ होता है। यह कुल विस्थापित लोगों का 50 प्रतिशत है। भारत सरकार भी इस बात को स्वीकार करती है कि विकास के कार विस्थापित लोगों में 40 प्रतिशत आदिवासी हैं। (भारत सरकार 1985, पृ. 18-.9) 8वीं पंचवर्षीय योजना 1990-95 की अवधि में आदिवासी विकास एवं कल्याण पर कार्य-समूह ने भी विस्थापित आदिवासियों के पुनर्वास पर एक रिपोर्ट में कहा है कि 110 परियोजनाओं से विस्थापित 16.94 लाख लोगों में 8.14 लाख आदिवासी हैं।"

छोटानागपुर में यह आंकड़ा कहीं अधिक है। यहां खनिज उद्योग, कारखानों, बांधों, रक्षा प्रतिष्ठानों एवं अभ्यारण्यों के कारण लाखों लोगों का विस्थापन हुआ है। विस्थापन का सही सिलसिला रहा तो एक दिन छोटानागपुर की स्थानीय जनता तितर-बितर होकर विलुप्त, हो जाएगी एवं इनकी जगह पर अन्य लोग रहेंगे।

10. पुनर्वास

पुनर्वास की राष्ट्रीय नीति नहीं है। सिर्फ दो राज्यों, महाराष्ट्र एवं मध्यप्रदेश में पुनर्वास से संबंधित कानून बने हैं। महाराष्ट्र "Maharashtra Displaced Person Act/1976" एवं मध्य प्रदेश परियोजना के कारण विस्थापित व्यक्ति. (पुनर्स्थापन) अधिनियम 1987 है। नतीजा यह होता है कि हर परियोजना में अलग पुनर्वास नीति लागू की जाती है।

सबसे अधिक चौंकाने वाली बात है कि विस्थापित लोगों का कहीं भी समय पर यथोचित पुनर्वास नहीं किया गया है। दिल्ली की एक संस्था के अनुसार, एक तिहाई विस्थापित लोगों का ही किसी प्रकार का पुनर्वास हुआ है।

आदिवासियों का जीवन जमीन एवं जंगल पर आधारित है। उनसे जमीन एवं जंगल छीन जाने के बाद समुचित पुनर्वास के अभाव में जीविका के लिए उन्हें दैनिक श्रम पर आधारित होना पड़ता है जो उन्हें आर्थिक रूप से धीरे-धीरे सबल समूह की गुलामी करने के लिए बाध्य करता है। उन्हें भौतिक तथा मानसिक कठिनाईयां झेलनी पड़ती हैं। इसमें से कुछ निम्नलिखित हैं :

(1) पुनर्समाजीकरण

(2) अनजान जगह पर अनजान लोगों के साथ समन्वय

(3) पारंपरिक सामाजिक संबंध एवं सामुदायिक संगठन का टूटना

(4) शारीरिक रूग्णता एवं मानसिकता दबाव

(5) नई जगह पर नई आबादी का विरोध एवं अपमान

(6) अनाड़ी जगह पर अनाड़ी पर्यावरण के साथ समन्वय

(7) आर्थिक तबाही

11. मार्ग निर्देशन

जबकि विस्थापन के मामले में 'राष्ट्रीय हित' 'राष्ट्रीय एकात्मकता' ही मार्ग निर्देशक रहता आया है, किन्तु समुदाय को व्यापक रूप से विपरीत प्रभाव डालने वाले विस्थापन जैसे मुद्दे पर विचार करने हेतु अन्य मार्ग निर्देशक भी उपलब्ध है। जैसे-

(1) संविधान के अनुच्छेद 21 जिसके तहत भारत के सभी नागरिकों को 'इज्जत के साथ जीने और जीविकोपार्जन' का मौलिक अधिकार है।

(2) संयुक्त-राष्ट्रसंघ में घोषित मानवाधिकार जमीन एवं जंगल पर अफने जीवन के लिए आश्रित लोगों का विस्थापन करना संयुक्त-राष्ट्रसंघ में घोषित मानवाधिकार के सिद्धान्तों के विरूद्ध है। इस तथ्य को मान्यता प्राप्त हो रही है कि 'जीवन से वंचित करने का अर्थ सिर्फ मृत्यु' की चरम सीमा के संदर्भ में ही नहीं लिया जाना चाहिए। आदिवासी समूह को अपनी जीविका के साधन से वंचित करने को भी 'जीवन से वंचित' करने का अर्थ लगाया जाएगा।

(3) 'सामाजिक न्याय' का बहुचर्चित एवं सर्वमान्य सिद्धांत अपनी जीविका के लिए भूमि और जंगल पर आधारित आदिवासी समुदाय का बड़ी संख्या में विस्थापन सामाजिक न्याय के सर्वमान्य सिद्धान्तों के विरूद्ध है।

(4) मूल निवासियों के अधिकारियों (संशोधित) की घोषणा करते हुए संयुक्त राष्ट्र के मानवाधिकार आयोग ने जोर देकर मूल निवासी (आदिवासी) जमीन और भू-भाग से असैनिकीकरण प्रक्रिया पर बल दिया है। इससे राष्ट्रों और मूलनिवासियों का यह सामुदायिक और सांस्कृतिक विनाश और संहार से सुरक्षा मिले- साथ ही उनके निवारण और न्यायिक जांच की सुविधा मिले- विशेषकर इन क्षेत्रों में:-

(क) कोई भी कार्य जिनका उद्देश्य या प्रभाव मूल निवासियों के जातिगत एवं सांस्कृतिक अखंडता एवं विशेषताओं को तोड़ता हो।

(ख) जमीन, भू-भाग या संसाधनों से बेदखली।

(ग) मूल निवासियों को अपनी जमीन, भू–भाग एवं जीविकोपार्जन संबंधित संसाधनों से सैनिक कार्यवाही के नाम बेदखल नहीं किया जा सकता।

(घ) राज्य उचित धार्मिक स्थलों की देख–भाल, सुरक्षा एवं निगरानी सुनिश्चित करे।

(ङ) अपने संपूर्ण पर्यावरण, जमीन, हवा, पानी, समुद्र–हिम, प्रकृति एवं छटा और अन्य संसाधन जिनपर उनका परंपरागत अधिकार, कब्जा एवं व्यवहार है– के पहचान का मूल निवासियों को अधिकार है।

(छ) मूल निवासी इलाके में उनके पूर्व समझौते और स्वतंत्र सहमति के बगैर सैन्य कार्यवाही, अनापेक्षित और हानिकारक पदार्थों का रख–रखाव या बिखराव नहीं किया जा सकता।

अत: सरकार किसी भी मामले में समुदाय के ऊपर वर्णित अधिकारों एवं सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों की तराजू पर न्यायोचित निर्णय करे।

12. राष्ट्रीय हित

सरकार की सभी योजनाएं ''राष्ट्रीय हित'' के नाम पर बनायी जाती हैं। भले ही बाद में राष्ट्रहित हो या न हो। उदाहरण के लिए सरकारी क्षेत्र के अनेक कारखाने बंद गौरव समझा जाता था आज बदनाम हो चुका है। राष्ट्रीय हित एवं राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय गौवर का उद्देश्य तो प्राप्त नहीं किया जा सका। हम विकास की राष्ट्रीय मुख्यधारा में हैं। हम प्रभावित लोग राष्ट्रीय गौवर एवं राष्ट्रीय एकात्मकता के पक्ष में हैं। हम भारतीय सेना का भी आदर करते हैं। भारत के किसी भी नागरिक की तरह हमारी भी कामना है कि भारत एक शक्तिशाली देश बने। किन्तु हम 'राष्ट्रीय हित' को संकीर्ण अर्थों में लेने के विरूद्ध हैं। राष्ट्रीय हित के साथ–साथ 'सामुदायिक हित' का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। 'समुदाय के हित' का ध्यान नहीं देने से ''राष्ट्रीय हित'' सिर्फ शासक वर्ग एवं प्रभुत्वशाली समूह के हित में परिवर्तित हो जाता है। राष्ट्रीय हित में ही सामुदायिक हित है एवं सामुदायिक हित में 'राष्ट्रीय हित'। किसी समुदाय के विरूद्ध हित को एक राजनीति के रूप में उपयोग किया जाता है तो निश्चय ही वह राष्ट्र के हित के विरूद्ध होगा। राष्ट्रीय हित की संकीर्णता के कारण ही सरकार ''सामुदायिक हित'' एवं ''सामाजिक न्याय'' के प्रति प्रतिबद्ध नहीं हो पाती है।

13. पर्यावरण

नेतरहाट पठार के इर्द–गिर्द दूर–दूर तक फैले समृद्ध साल वृक्ष के जंगल हैं। इसमें असंख्य जीव–प्राणी रहते हैं। इनसे कितने ही जीवन प्राणी वहां के बासिन्दों के भोजन, दवा एवं जीविका के स्रोत के रूप में उपयोग में लाए जाते हैं।

बड़े एवं छोटे तोपों से गोला बारी करने से उस क्षेत्र के जीव प्राणियों के जीवित रहने की परिस्थिति पर प्रभाव पड़ेगा एवं लाखों प्राणी नष्ट होकर विलुप्त हो जाएंगे।

14. जन चेतना

पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज के लिए उपयुक्त जगह सिर्फ पलामू एवं गुमला जिलों के आदिवासी बहुल क्षेत्र ही नहीं है। अंतर इतना है कि यहां शक्तिविहीन एवं आवाज रहित लोग रहते हैं। ''सामाजिक न्याय'' एवं ''ग्राम्य स्वराज्य'' क्रमश: सिर्फ शासक वर्ग के भाषणों एवं पुस्तकों की शोभा बढ़ाने के लिए हैं। परियोजना को अवस्थित करने के संबंध में निर्णय एकतरफा होता है। गांव वालों की कौन परवाह करता है। जहां गरीब और निर्बल लोग रहते हैं वह जगह परियोजना को अवस्थित करने के लिए सबसे उपयुक्त एवं सुविधाजनक क्षेत्र माना जाता है।

परियोजना के लिए कौन कीमत चुकाता है और कौन लाभ उठाता है। सरकार के असंवेदनशील एवं क्रूर रवैये से क्षुब्ध एवं आहत जनता के पास संगठित होकर परियोजना के विरूद्ध आन्दोलन का रास्ता अख्तियार करने के अलावा दूसरा कोई विकल्प नहीं है। ''पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज'' परियोजना के अंतर्गत वहां बसनेवाले लोग बड़ी संख्या में विस्थापित होंगे। अत: वहां के जागरूक लोग समय रहते संगठित होकर प्रोजेक्ट का विरोध कर रहे हैं।

15. हमारी मांगें

(क) प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज की योजना, दो सैनिक शिविरों की स्थापना सहित प्रभावित लोगों के विस्थापन की योजना वापस ली जाए।

(ख) नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज में फील्ड फायरिंग अभ्यास के कारण वहां के बासिन्दों को भौतिक एवं मानसिक क्षति का भरपाई होना बाकी है। अत: नेतरहाट रेंज की रूटीन फायरिंग को भी स्थाई तौर पर बंद किया जाए।

(ग) ग्राम स्वायत्तता के सिद्धांतों के अंतर्गत इस मामले में ग्रामीणों के द्वारा निर्णय लेने के अधिकार को मान्यता दी जाए।

(घ) संविधान के अनुच्छेद 21 के प्रावधानों के अनुसार ''इज्जत के साथ जीने एवं जीवकोपार्जन'' के अधिकार का पालन किया जाए।

(ङ) विस्थापितों के जीविकोपार्जन के साधन को छीनना उनके जीवन का अन्त करना है। यह मानवाधिकार का हनन है अत: मानवाधिकार का हनन बंद किया जाए।

आइए, हम एक होकर संघर्ष करें

'जान देंगे जमीन कभी नहीं'

दिनांक : 18-5-1994

निवेदक : **केन्द्रीय जनसंघर्ष समिति पायलट**

प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज (पलामू-गुमला)

दिल्ली के आदिवासियों से अपील
संदर्भ : नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज

आदिवासी पुनर्विस्थापन का अगला दौर :– 23 ''आर्टिलरी ब्रिगेड'' के प्रस्ताव के तहत छोटानागपुर के सम्पूर्ण छेछाड़ी घाट और पलामू जिला के दक्षिणी प्रदेश की घाटियाँ, बाहर बरवे, भीतर बरवे क्षेत्र तथा गुमला जिला के कई ब्लॉक को ''फील्ड फायरिंग'' तथा तोपाभ्यास के लिए उपयुक्त मानकर भूमि–अधिग्रहण प्रस्तावित किया गया है, जो 21 सितम्बर, 1993 से ही समाचार पत्रों द्वारा हमारे बीच दहशत फैलाए हुए हैं। सदियों से यह क्षेत्र आदिवासियों का रहा है जिसमें मुख्यत: उरांव जाति की अधिकता है तथा आदिम जनजाति, जैसे बिरजिया, मुंडा, बिरहोर, असुर, कोरवा, किसान, नगेसिया साथ–साथ निवास करते हैं जिनका जीवन आस–पास के जंगलों और जमीन पर आधारित है।

नेतरहाट प्रभावित क्षेत्र के बीच में स्थित है। 1956 से ही कई वर्षों तक नेतरहाट, चोरमण्डा, हुसम्बू पकरीपाठ, डुम्बरपाठ, नैना, अराहंस, नवाटोली, हरमुण्डाटोली आदि क्षेत्रों में, सेना मैदानी तोपाभ्यासी करती आ रही है। 1981–1982 से सेना ने इन क्षेत्रों को हथियाने का प्रयास किया लेकिन वहां की जनता के कड़े विरोध तथा स्थानीय राजनैतिक नेताओं के उस संघर्ष में शरीक होने के कारण भूमि–अधिग्रहण की योजना को रोक दिया गया था।

प्रथम भूमि–अधिग्रहण का प्रयास असफल होने पर सेना और केन्द्र तथा राज्य सरकारों ने 1938 के एम.एफ.एफ. और ए.पी.ए. (मैन्युवर्स फील्ड फायरिंग और आर्टिलरी एक्ट) अधिनियम 5 के तहत भूमि–अधिग्रहण कानून का सहारा लिया। उन क्षेत्रों का हवाई तथा जमीनी सर्वेक्षण के बाद 1991–92 से सेना ने केन्द्र सरकार के पास राज्य सरकार द्वारा भूमि–अधिग्रहण करने का प्रस्ताव रखा। दरअसल तथ्य तो यह है कि सर्वप्रथम गया मिलिट्री छावनी के निकट देओरी–डुमरी क्षेत्र को नजर में

रखकर यह भूमि–अधिग्रहण प्रस्ताव रखा गया था। लेकिन वहां की आबादी तथा ऐतिहासिक स्मारकों को बचाने के मकसद से वहां के भूमि–अधिग्रहण को रद्द कर दिया गया। (आई.जे. कुमार 23 डिविजन, हिन्दुस्तान टाइम्स 10 दिस.1993) लेकिन वास्तविकता तो यह है कि वहां की जनता के कड़े विरोध के कारण परियोजना को रद्द करना पड़ा। उपर्युक्त परियोजना के अन्तर्गत 12 मई 1992 से 11 मई 2002 तक क्रमशः विस्थापन तथा निष्कासन की प्रक्रिया द्वारा गुमला जिले के 193 गांव और महुआडांड़ तथा गारू ब्लॉक के 52 गांव कुल मिलाकर 245 गांव प्रभावित होंगे। 188 वर्ग किलोमीटर विस्तृत क्षेत्र में फैले उक्त प्रोजेक्ट के अन्तर्गत सरकारी तौर पर मात्र 27, 853 लोग प्रभावित होंगे। जबकि छावनी विस्थापन संघर्ष समिति पलामू के अनुसार प्रभावित लोगों की संख्या करीब 2,23,940 है जिसमें 1,75,952 आदिवासी हैं। (78.21). लेफ्टिनेंट कर्नल अनिल भट्ट पी.आर.ओ., रक्षा मंत्रालय के अनुसार प्रस्तावित छावनी तथा फायरिंग रेंज से प्रभावित क्षेत्र के लिए 1471 वर्ग किलोमीटर भूभाग का प्रस्ताव है। यह अभी के अधिसूचित क्षेत्र से सात गुणा बड़ा है। अर्थात और भी भूमि अधिग्रहण की संभावना है। बुनियादी तौर पर आदिवासियों के विस्थापन का षड्यंत्र रचा जा रहा है। विस्थापन और उससे जुड़े विनाश की प्रक्रिया के काल में आदिवासी ढकेल दिए जा रहे हैं।

इन आंकड़ों से स्पष्ट है कि जिन जोत–जमीन, जल–जंगल जन्म स्थान पर सदियों से हमारे मौलिक अधिकार रहे हैं वे सुनियोजित शोषण एवं दमन नीतियों के तहत हमसे बेरहम लूटे जा रहे हैं। वे सुनियोजित शोषण एवं दमन नीतियों के तहत हमसे बेरहम लूटे जा रहे हैं। जिससे हमारा अस्तित्व ही गम्भीर खतरे में पड़ गया है। आदिवासी समाज का बच्चा–बच्चा ने केवल इस बात को जानता है लेकिन इसको महूसस करता है कि पुरखों की जमीन हमारे लिए सिर्फ रोजी–रोटी का साधन नहीं बल्कि यह हमारे जीवन का स्रोत है। यहीं हमें जीवन मिला, यहीं हम पले–बढ़े और इसी में हमारी संस्कृति की जड़ जमी हुई है। क्यों हर बार देश के विकास और देश की रक्षा के नाम पर आदिवासी समाज को ही बलि का बकरा बनाया जाता है? कैसा विरोधाभास है यह जहां एक ओर आदिवासी विकास की बातें कही जा रही है, और दूसरी ओर हम आदिवासियों के जबरदस्ती मौत के कुएं में ढकेला जा रहा है?

– फलस्वरूप रानीगंज, टाटा, राऊकेला, हटिया, बोकारो आदि खदार–कारखानों के कारण लाखों लोगों का विस्थापन हो गया और वे अपने घर–जमीन से बेदखल हो गए।

– आज "नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज" के कारण, नेतरहाट, छेछाड़ी, बरवे–

बाहर, बरवे, गुमला आदि जगहों में फिर से 245 गांवों के 2 लाख से भी अधिक लोगों के बेघर हो जाने की स्थिति आ गई।

- इसी सिलसिले में आने वाले कल में आलू पहाड़ (बीरू), चाईबासा, जशपुर, सुरगुजा सुन्दरगढ़ क्षेत्र भी नई योजनाओं के कारण विस्थापन की चपेट में आ सकते हैं।

यह सवाल किसी के मन में उठ सकता है कि ''नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज'' के बन जाने पर मेरा क्या बिगड़ जाएगा। मैं तो दिल्ली में बसा, जन्मा, पला, बढ़ा, पढ़ा और नौकरीरत हूँ। पुरखों की जमीन से कब का नाता टूट चुका है और शायद मुझे वहां जाना भी नहीं है। वैसे भी मेरा घर नेतरहाट, बरवे या छेछाड़ी में नहीं है। क्योंकि ऐसे विस्थापन का ऐतिहासिक सिलसिला तो चल ही रहा है। चिंता करें वे जिनका उजड़ रहा है। लेकिन इसका क्या अंजाम होगा उस पर गौर करना भी जरूरी है।

जी हां, हो सकता है कि आप दिल्ली में बस गए हों, यहीं बढ़े, पले, और नौकरी में आ गए है, सुख सुविधाएं हैं। लेकिन यहां दिल्ली तक पहुंच पाने के लिए भी एक-एक मां-बाप को अपनी निजी जमीन और गांव का ही आश्रय लेना पड़ा था। पुरखों की इसी जमीन ने जिसे उन्होंने खून-पसीने की कमाई से सींचा था, उनको सहारा दिया। याद रहे पुरखों ने व्यक्तिगत तौर पर नहीं सामाजिक तौर पर जमीन को सजाया और संवारा था। इसी जमीन के अस्तित्व का सवाल है।

- आदिवासी सेवा एवं न्याय समिति, दिल्ली

भूमि-अधिग्रहण और विस्थापन के गंभीर परिणाम

1. आर्थिक परिणाम

- पुरखों से प्राप्त सदियों पुरानी जमीन-जल-जंगल-जजबात से लोग बेदखल हो जाएंगे।
- दिल्ली में अध्ययन और नौकरी के लिए आरक्षण की सुविधा इसीलिए दी जाती है क्योंकि हमारे मां-बाप, बिहार, मध्यप्रदेश, बंगाल, उड़ीसा से आए आदिवासी हैं। वही हमारा वास्तविक स्थायी निवास स्थान है। यही कारण है कि हमारे लिए हमारा आदि गांव और जमीन हमारे लिए इतना

महत्वपूर्ण है। यदि वे पुरखों की जमीन से बेदखल कर दिए गए तो दिल्ली के आदिवासी किस आधार पर आरक्षण की सुविधा पाएंगे? क्योंकि अभी तक हमारा स्थायी पता तो गांव में है।

2. सेवा निवृत के बाद

- विभिन्न नौकरियों में कार्यरत रहकर हम आपने भाइयों से तो अलग-अलग हैं ही. सेवा निवृति के बाद क्या हमारा अस्तित्व बना रहेगा?
- सेवा-निवृत होने के बाद यदि हमारी जमीन, गांव-घर ही न रहे तो हम कहां जाएंगे?
- सेवा-निवृत होने के बाद दिल्ली में क्या हम मात्र शरणार्थी नहीं बन जाएंगे?
- हर आदिवासी की अंदरूनी ख्वाहिश रहती है कि अपने पुरखों की जमीन में दफनाया जाए। इसलिए सेवा निवृत होने के बाद में वो उसी ओर अपना रास्ता मोड़ता है कि उसे पुरखों की जमीन ही न रहे तो मेरा क्या हो? हमारे पुरखों का कब्रस्थान और ससनदिरी क्या होगा?

3. सामाजिक-सांस्कृतिक परिणाम

- किसी भी पहचान पुरखों की भूमि से जुड़ी रहती है जैसे बंगाली, मद्रासी, गुजराती, पंजाबी आदि. अगर हम आदिवासी हैं तो निश्चित रूप से अपने पुरखों की जमीन के कारण ही. उसी जमीन से बेदखल हो जाएंगे तो हमारी पहचान कहां?
- हर सामाजिक और सांस्कृतिक पहचान के लिए भाषा का होना अत्यन्त आवश्यक है। भाषा, संस्कृति, नाच-गान, रीति-रिवाज आदि जमीन से जुड़े हैं। आज वही जमीन हड़पी जा रही है, तो जमीन के बगैर आदिवासी पहचान कहां?
- हमारे जमीन, जल-जंगल के लूट जाने से अखड़ा स्कूल, कॉलेज, अस्पताल आदि भी नष्ट हो जाएंगे, यह संभावना निश्चित है।
- जन्म, शादी-ब्याह, मृत्यु और पर्व-त्योहार के अवसरों पर हम निज आया करते थे, यदि गांव न रहे तो कहां जाएंगे?

4. धार्मिक

- सरना, ससनदिरी, कब्रस्थान, गिरजा, मंदिर, मस्जिद आदि नष्ट किए जाएंगे. इससे श्रद्धालुओं की धार्मिक भावनाओं को गंभीर ठेस पहुंचेगी।

5. नैतिक परिणाम

- अगर 10 फरवरी, 1993 को दिल्ली आ रही मूरी एक्सप्रेस में (छः) आदिवासी युवातियों के साथ 7 फौजी जवानों ने बलात्कार किया, तो जब फौजी छावनी हमारे आदिवासी क्षेत्र में होगी उस समय हमारी मां, बेटी, बहु-बहनों की इज्जत के साथ और क्या-क्या नहीं होगा? कल्पना मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

6. देश सेवा

- जिस भूमि ने परमवीर अलबर्ट एक्का जैसे देश के महान योद्धे को पैदा किया, वही जमीन उनके बूढ़े मां-बाप, विधवा और बच्चे एवं रिश्तेदारों के साथ से लूटी जा रही है. उनकी राष्ट्र के लिए महान कुर्बानी का क्या यही बदला है।
- आज हमारे हजारों आदिवासी पुत्र फौज में भर्ती होकर देश की सुरक्षा में लगे हैं और उधर उनके गांव उनके घर उजाड़े जा रहे हैं। इनके परिवार बेघर हो जाएंगे, यदि उन जवानों को यह मालूम होगा तो उनके दिल में क्या गुजरेगा. क्या राष्ट्र का उनके प्रति यही न्याय है?

कौन उठाएगा हमारे अस्तित्व के रक्षा की, यदि आप नहीं? इसलिए आदिवासियों को तुरंत कमर कसने और अपने मानवीय अधिकारों के खातिर संघर्ष करने का वक्त आ गया है। क्योंकि विनाश के खतरे की घंटी बज चुकी है। इस जुलूस में कामयाब होने के लिए आत्म-बलिदान की जरूरत है। अत: देश के सभी आदिवासियों और उनके शुभचिंतकों से अपील है कि वे इस संगीत संघर्ष में दिलोजान से सहयोग करें और उपर्युक्त परियोजना से प्रभावित लोगों को सर्वनाश होने से बचाने के लिए उनके मौलिक अधिकारों की बुनियादी लड़ाई में कूद पड़े। कोई भी जुल्म करने वाला तो अपराधी होता ही है उससे भयंकर अपराधी वह होता है जो जुल्म को देख कर भी चुप रहता है।

जन संघर्ष समिति (पलामू–गुमला) का वार्षिक प्रतिवेदन

भूमिका– सेनाधिकारियों के कथानुसार वर्ष 1965 में नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज की स्थापना हुई थी। बिहार सरकार Manoeuvers field and Artillery Practice Act : 1938 की धारा 9 के तहत् फायरिंग रेंज के लिए 308 वर्ग कि.मी. भूमि को अधिसूचित किया था। वर्ष 1964 से 1994 तक अधिसूचित क्षेत्र के अन्तर्गत 104 वर्ग कि.मी. भूमि को सेना संघात क्षेत्र के अन्तर्गत 104 वर्ग कि.मी. भूमि को सेना संघात क्षेत्र करके 30 वर्षों तक प्रति वर्ष तोप चालन का अभ्यास करती रही। सेना और प्रशासन स्थानीय लोगों की अज्ञानता गरीबी और मौन संस्कृति का नाजायज फायदा उठाते हुए दस–दस वर्षों के अंतराल में अधिसूचनाएं जारी करती रही। पीपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिव राइट्स (R.U.D.R.) के रिपोर्ट, अक्टूबर 1994 के मुताबिक भारत के कुल 93 फायरिंग रेंज हैं। इनमें से 30 रेंजों पर भूअर्जन की आवश्यकता समझी गयी, किन्तु भूअर्जन में कठिनाईयों को देखते हुए प्रयोग के रूप में 1992 में देश के चार रेंजों का चयन करके पायलट प्रोजेक्ट के तहत भूअर्जन की योजना बनाई गयी।

बिहार में नेतरहाट, मध्यप्रदेश में रीवा, आंध्रप्रदेश में समीरपेट, राजस्थान में कोलायत किन्हीं कारणों से नेतरहाट को छोड़कर शेष तीन स्थानों के प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्टों पर अमल नहीं हुआ. इधर नेतरहाट क्षेत्र के प्रभावित लोगों के विरोध के कारण पहला प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्ट ही अब अधर में लटक गया है।

पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज की स्थापना हेतु वर्ष 1991–92 में दो अधिसूचनाएं जारी की गयी। इसके प्रारंभिक चरण में 245 गांवों की 1471 वर्ग कि.मी. भूमि का अधिग्रहण करके आदर और नेतरहाट के पास 18 वर्ग कि.मी. का संघात क्षेत्र स्थापित करने की योजना थी। यह पठार, छेछाड़ी, बरवे, बाहर बरवे के मूल निवासियों के चिरस्थायी विस्थापन का संकेत मात्र था। सेनाधिकारियों ने उक्त प्रोजेक्ट के लिए कम से कम 19,856 वर्ग कि.मी. की मांग की थी। जन संघर्ष समिति की स्थापना एवं विस्तार अधिसूचना पारित होते ही प्रशासन और सेना देश की सुरक्षा के बहाने गुपचुप तरीके से भूअर्जन की वैधानिक प्रक्रिया पूरी करती रही। स्थानीय लोगों को जब पता चला तो संबद्ध अधिकारियों से उनके बारे पूछताछ की गयी किन्तु कोई संतोषजनक

उत्तर नहीं मिला। अत: 25 सितम्बर 1993 को महुआडांड़ में सैनिक छावनी संघर्ष समिति का गठन किया।

27 सितंबर 1993 को संभावित विस्थापन के विरोध में प्रथम जुलूस और आस–सभा का आयोजन महुआडांड़ में किया गया। इसके पश्चात् बरवे और बाहर बरवे में नामों में विभिन्नों विरोधी संगठनों की स्थापना की गयी जिन्हें बाद में समेकित करके 'जन संघर्ष समिति पलामू–गुमला' का नाम दिया गया।

प्रथम ऐतिहासिक सत्याग्रह

14 जनवरी 1994 में जब सेना द्वारा नियमित गोलाबारी अभ्यास हेतु नोटिस जारी की गयी तब जन संघर्ष समिति ने महात्मा गांधी के अहिंसावादी सिद्धांत के तर्ज पर पहली बार जोकीपोखर टुटुवापानी में सत्याग्रह आन्दोलन करके पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज का विरोध करने का निर्णय लिया।

20 मार्च 1994 से 25 मार्च 1994 तक प्रभावित क्षेत्र की जनता लाखों की संख्या में सत्याग्रह स्थल पर एकत्र हुई और पांच दिनों तक लगातार दिन–रात धरना देकर सैनिक कार्यक्रम को रोका। प्रबल जनविरोधी के फलस्वरूर प्रशासन के अनुरोध पर पहली बार सैनिक कार्यक्रम स्थगित किया गया। लेकिन पुन: 25–17 अप्रैल तथा 27–28 जून को सेना के गोलाबारी अभ्यास कार्यक्रम की सूचना देकर जन संघर्ष समिति की एकता एवं स्थायित्व को परखने की कोशिश की गयी। तमाम कठिनाईयों के बावजूद सत्याग्रहियों ने सेना व प्रशासन के सभी प्रयास विफल कर दिए।

इसी बीच 9 अप्रैल 1994 को रांची में जुलूस एवं आम सभा तथा 9 मई 1994 को प्रेस–सम्मेलन का आयोजन किया गया।

त्रिपक्षीय वार्त्ता 9 जुलाई 1994

9 जुलाई 1994 को गुलाम के तत्कालीन उपायुक्त विद्यासागर की मध्यस्थता में सेना अधिकारियों, गुमला–पलामू जिले के प्रशासनिक अधिकारियों तथा जन संघर्ष समिति पलामू–गुमला के प्रतिनिधियों के बीच त्रिपक्षीय वार्ता हुई। प्रशासन ने प्रस्तावित पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट के रद्द होने का मौखिक आश्वासन देकर नियमित गोलाबारी अभ्यास कार्यक्रम को जारी रखने के लिए जन संघर्ष समिति से सहयोग मांगा किन्तु सेनाधिकारियों के दूरा 30 वर्षों तक गोलाबारी अभ्यास के दरम्यान पठारी जनता की शारीरिक, मानसिक और आर्थिक क्षति की जिम्मेवारी

लेने से इन्कार करने की वजह से जन संघर्ष समिति ने नेतरहाट फायरिंग रेंज पर सभी प्रकार के सैनिक गतिविधि पर रोक लगा दी।

30 वर्षों की त्रासदी

सेना द्वारा नियमित गोलाबारी अभ्यास के दौरान पठारी किए जाने पर जन संघर्ष समिति ने प्रभावित क्षेत्रों का गहन सर्वेक्षण कर निम्नलिखित तथ्य प्राप्त किए.

1.	गोलाबारी के फलस्वरूप मृत लोगों की संख्या	–25
2.	गोलों के फटने से घायल लोगों की संख्या	– 2
3.	सामूहिक बलात्कार के बाद लापता महिलाओं की संख्या	– 3
4.	सामूहिक बलात्कार से महिलाओं की मृत्यु	– 3
5.	सामूहिक बलात्कार	– 35
6.	महिलाओं पर सामूहिक बलात्कार के प्रयास	– 63
7.	गोलाबारी से मवेशियों की मृत्य	– 30
8.	फसल और खेत की बर्बादी की शिकायतें	– 259
9.	घर और अन्य सम्पति की बर्बाद	– 14
10.	गोलाबारी के दरम्यान सैनिकों द्वारा घरेलू सम्पति की चोरी	– 27
11.	व्यक्तिगत पेड़ की क्षति	– 27
12.	सरना की क्षति	– 23
13.	सार्वजनिक वृक्षों की क्षति	– असंख्य
		कुल 485

टिप्पणी – (क) ध्यातव्य है कि महिलाओं के ऊपर किए गए कुल अत्याचार वास्तविक आंकड़ों से कहीं अधिक हैं। लोकलाज, प्रतिकूल सामाजिक दृष्टिकोण एवं मानसिक यंत्रणा की वजह से अधिकांश घटनाएं भुक्तभोगियों तक ही सीमित रह गयी हैं।

– (ख) सैनिकों के दुर्व्यवहार से व्यक्तिगत व सामूहिक मानसिक, शारीरिक, आर्थिक यंत्रणाओं एवं परेशानियों का समुचित विवरण व मूल्यांकन प्रस्तुत कर पाना सहज संभव नहीं है। जैसे :

- गोलाबारी अभ्यास के समय प्रसव या गम्भीर बीमारी की अवस्था में घर-गांव खाली करके अन्यत्र जाने की विवशता।
- मृत्यु होने पर चांदमारी समाप्त होने तक इंतजार करने की मजबूरी।
- जाड़ा या बरसात में -बाल बच्चों, घरेलू मवेशियों के साथ खुले आकाश में दिन-रात बिताने की यंत्रणा।
- शादी-व्याह, पर्व और अन्य सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यक्रम स्थागित करने की मजबूरी।
- घरेलू सम्पत्ति की सुरक्षा का भय।

30 वर्षों के अन्तर्गत हुई जान-माल की क्षति की रिपोर्ट न सेना अधिकारियों और न पुलिस के पास उपलब्ध है। भुक्तभोगियों द्वारा रिपोर्ट करने पर उन्हें डराने धमकाने के साक्ष्य मिलते हैं। सेनाधिकारियों ने जन संघर्ष समिति द्वारा प्रस्तुत सर्वे रिपोर्ट को मनगढ़ंत घोषित कर किसी प्रकार की जिम्मेवारी लेने से साफ इन्कार कर दिया है।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग

22-23 सितम्बर 1994, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एरं जनजाति आयोग ने प्रभावित क्षेत्र का दौरा किया। बनारी, जोकीपोखर-टुटुवापानी, चोरमण्डा, महुआडांड़ और चैनपुर में जन-सभाएं हुई। आयोग ने लोगों को आश्वासन दिया कि वे जनता की मांग सरकार तक अवश्य पहुँचाएंगे और आदिवासी बहुल इलाकों में ऐसी परियोजनाओं को न लागू करने की अनुशंसा करेंगे।

11-13 नवम्बर 1994 में आदिवासी सामाजिक एवं सांस्कृतिक संघ पटना के तत्वावधान में तीन दिवसीय सेमिनार का आयोजन किया गया। सेमिनार में राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न आदिवासी संगठनों से सम्पर्क रखकर आदिवासियों की समस्याओं के समाधान हेतु एकजुट होकर संघर्ष करने के लिए कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गए।

तत्पश्चात् प्रत्येक महीने केन्द्रीय जन संगर्ष समिति पलामू-गुमला की ज्ञापिका तैयार की गई। समय-समय पर इस पर विचार-विमर्श होते रहे और लोगों की सविधासुसार सर्व सम्मति से आवशयक के परिवर्त्तन लाए गए।

पायलट प्रोजेक्ट की वर्त्तमान स्थिति

नेतरहाट फायरिंग रेंज पर पायलट प्रोजेक्ट की स्थापना के तहत भूअर्जन के

विरोध में प्रभावित लोगों के आंदोलन एवं जनाक्रोश को देखते हुए भारत सरकार ने राज्य सरकार को निर्देश दिया कि इस प्रोजेक्ट के लिए किसी गैर आदिवासी क्षेत्र में जगह दिया जाए। इसी के फलस्वरूप बिहार सरकार ने चतरा, पलामू, औरंगाबाद एवं गया जिलों के एक भूभाग को इसके लिए निश्चित किया। तत्पश्चात् वहां भी सैनिकों के द्वारा सर्वेक्षण शुरू किया गया, अब तक वहां के लोगों के द्वारा प्रस्तावित प्रोजेक्ट का विरोध करने की जानकारी नहीं है। जहां तक वहां की जनसंख्या की बात है, वहां लगभग 82 हजार सामान्य वर्ग, 63 हजार दलित वर्ग, एवं लगभग 4 हजार आदिवासी रहते हैं।

प्राप्त जानकारी के अनुसार इस प्रोजेक्ट का विरोध एम.सी.सी. के द्वारा किया जा रहा है। इसी बीच यह सुनने में आया कि बिहार-नेपाल सीम के चम्पारण जिले में पायलट प्रोजेक्ट की स्थापना करने की चर्चा छिड़ी थी किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के नजदीक होने के कारण उस स्थल को त्यागना पड़ा। तत्काल सरकार की क्या मंशा है उसकी सही जानकारी नहीं है। इसे देखते हुए नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज के बाबत हमें और अधिक सजग रहने की आवश्यकता है। जरूरत पड़े तो 2002 तक यह इसके बाद भी आंन्दोलन जारी रखा जाएगा।

प्रथम वर्षगांठ

पूर्व निर्धारित संकल्प के मुताबिक 6 अप्रैल 1995 को पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट के विरोध में आयोजित ऐतिहासिक सत्यागह की स्मृति में प्रथम वर्षगांठ मनाया गया। हजारों की संख्या में लोगों ने आकर अपने संकल्प दुहराए कि जब तक पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट और फील्ड फायरिंग रेंज की स्थापना हेतु पारित अधिसूचना विधिवत रद्द नहीं की जाती है तब तक जन संघर्ष समिति पलामू-गुमला के सदस्य इस योजना का विरोध करते रहेंगे।

महुआडांड़

13-14 मई 1994 प्रथम वर्षगांठ के पशत्त्वात् केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक महुअकडांड़ में सम्पन्न हुई। उक्त बैठक में निम्नलिखित निर्णय लिए गए। संगठन की मजबूरी के लिए आवागमन और संचार सुविधा के मद्देनजर बड़े क्षेत्रों को छोटे-छोटे क्षेत्रों में बांटने का प्रस्ताव रखा गया, महुवाडांड़ प्रखण्ड को पांच क्षेत्रों, चिरोपाठ, गोठगांव, महुआडांड़, साले, दीना में विभाजित करके अलग-अलग क्षेत्रीय जन संघर्ष समिति का गठन किया गया।

समिति की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए वर्ष 1995 में 10/- (दस रू.) प्रति परिवार सहयोग राशि निर्धारित की गयी। नौकरीरत परिवारों से कम से कम एक दिन का वेतन तथा व्यवसायी वर्ग से स्वेच्छा से आर्थिक सहयोग देने की अपील की गयी।

- **सूचना व समाचारों के आदान-प्रदान हेतु पत्रिका प्रकाशित करने का प्रस्ताव रखा गया।**
- **यात्री पड़ाव को सभास्थल से हटाकर अन्यत्र बनवाने, स्मारक स्थल के लिए जमीन उपलब्ध कराने तथा स्मारक के लिए स्वेच्छा से आर्थिक सहयोग देने की अपील की गयी।**
- **पलामू-गुमला के प्रशासनिक अधिकारियों और जन संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों के बीच त्रिपक्षीय वार्त्ता के लिए सहमति प्रकट की गयी।**
- **क्षेत्रीय जन संघर्ष समिति के सदस्यों एवं ग्रम संचालन मण्डल के सदस्यों से सर्वे कार्य में सहयोग देने को कहा गया ताकि क्षेत्र की सामाजिक, आर्थिक और संस्कृतिक स्थिति की जानकारी मिल सके।**
- **मई और जून महीने में नेतृत्व प्रशिक्षण शिविर के लिए टोंगो और डुम्बरपाठ का चयन किया गया। इसके अतिरिक्त विभिन्न मुद्दों पर निम्नलिखित संकल्प पारित किए गए।**
- **आपातकालीन परिस्थिति में पठार जन संघर्ष समिति समुचित निर्णय लेकर प्रखंड एवं क्षेत्रीय समितियों को यथाशीघ्र सूचित करेगी।**
- **पंचायत राज अधिनियम के तहत भूरिया कमिटी द्वारा प्रस्तावित आदिवासी स्वशासन-व्यवस्था लागू करने के लिए जन जागृति लाई जाएगी।**

झारखंड मुक्ति मोर्चा द्वारा आहूत - आम सभा में जन संघर्ष समिति के सदस्यों की भागीदारी के विषय में केन्द्रीय समिति ने अपनी नीति स्पष्ट करते हुए यह निर्देश दिया कि जन संघर्ष समिति सभी धर्म, जाति एवं राजनीतिक दलबंदी से ऊफर है, अत: समिति किसी राजनीतिक दल विशेष द्वारा आहूत कार्यक्रम में शरीक नहीं होगी लेकिन समिति के सदस्यों की व्यक्तिगत भागीदारी में किसी प्रकार की पाबंदी नहीं होगी।

फायरिंग रेंज पर सेना के कभी कार्यक्रम पर रोक लगाने का संकल्प दुहराया गया। संभावित त्रिपक्षीय वार्त्ता में अधिसूचना रद्द करने, 30 वर्षों के अन्तराल में गोलाबारी अभ्यास के दरम्यान जान-माल की क्षति का आंकड़ा पेश करके, मौजूदा

मुआवजा राशि की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित करके Maneouvers Fild Firing and Artillery Practice Act: 1938 में यथोचित सुधार लाने तथा आदिवासियों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने की मांग रखने का प्रस्थाव रखा गया।

संख जल विद्युत परियोजना प्रक्रम-2 को पर्यावरण के विनाश और आदिवासियों के विस्थापन का नया मुद्दा मानकर पूर्वजों की विरासत जंगल, जमीन एवं संस्कृति की रक्षा हेतु संगठित होकर संघर्ष करने का संकल्प लिया गया।

सांकेतिक सत्याग्रह – 1995

सेना द्वारा फायरिंग अभ्यास कार्यक्रम की सूचना पुन: प्रेषित किए जाने पर 25 सितम्बर को आपातकालीन बैठक में प्रशासन को ज्ञापन देकर अभ्यास कार्यक्रम रूकवाने का अनुरोध किया गया। खेतों में खड़ी फसल की बर्बादी और कृषि कार्य में बाधा होने पर वर्ष भर आर्थिक संकट की स्थिति पैदा होने की आशंका से अधिकारियों को अवगत कराया गया। किन्तु उनके तटस्थ रवैये को देखकर जनता से मोर्चाबन्दी के लिए तैयार रहने की हिदायत दी गयी। प्रत्येक क्षेत्र से कम से कम 10 प्रतिनिधि भेजकर साकेतिक सत्याग्रह करने का निर्णय लिया गया। सांकेतिक सत्याग्रह 26-27 सितम्बर तक चला। सैनिकों की कोई गतिविधि नजर न आने पर, 27 सितम्बर अपराह्न धरना स्थगित किया गया।

सत्याग्रह के दौरान सम्पन्न सभा में यह निर्णय किया गया कि अगली बार सेना द्वारा नियमित गोलाबारी अभ्यास कार्यक्रम के लिए नोटिस जारी किए जाने पर प्रशासन को ज्ञापन नहीं दिया जाएगा। वरन् मोर्चा की सूचना देकर जनता सत्याग्रह स्थल पर सेना का अहिंसापूर्ण तरीके से सामना करेगी और इसकी पूरी जिम्मेदारी प्रशासन पर होगी।

पठार सर्वे – 2

14 अक्टूबर से 4 नवम्बर तक पठारी क्षेत्र का गह सर्वे किया गया। कुछ अपरिहार्य कारणों से केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक अक्टोबर में न हो सकी।

3 नवम्बर 1995 को संख जल विद्युत परियोजना प्रक्रम दो के बारे स्थानीय अखबारों (आज, प्रभात खबर) में बिहार जल विद्युत घावर कॉरपोरेशन (बी.ए.पी.सी.) द्वारा आम सूचना जारी की गयी। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक रायडीह, चैनपुर,

और डुमरी अंचल के 26 गांवों के डूबने और दो (2) गांव शक्ति गृह से प्रभावित होने की सूची जारी की गयी। 434 करोड़ की लागत पर बनने वाली इस परियोजना के लिए 7600 हेक्टेयर एकड़ जमीन अधिगृहीत करने की योजना बनी।

जन संघर्ष समिति के सर्वेक्षण के मुताबिक इस परियोजना से 208 गांव प्रभावित होंगे एवं 46694 लोग विस्थापित होंगे जिनमें आदिवासियों की संख्या 35,187 है।

महुआडांड़

18–19 नवम्बर 1995 को महुआडांड़ में केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक बुलायी गयी। इस बैठक में निम्नलिखित बिंदुओं पर प्रस्ताव पारित किए गए।

- जन संघर्ष समिति के कार्यक्रम को किसी धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक दल, के कार्यक्रम से न मिलाया जाए और यथोचित कारण के बिना जन संघर्ष समिति की बैठक की तिथि और स्थान में कोई परिवार्त्तन न लाया जाय। आपात कालीन परिस्थिति में सचिव केन्द्रीय सलाहकार मण्डल से परामर्श लेकर यथोचित निर्णय लेने तथा सूचना सभी क्षेत्रीय समितियों को दी जाएगी।
- किसी भी कार्यक्रम को स्थगित करने या रद्द करने के पहले यथा संभव केन्द्रीय संचालन मण्डल (सलाहकार मण्डल एवं प्रखंड प्रतिनिधि) की पूर्व सहमति लेना जरूरी होगा।
- सूचना एवं प्रसार माध्यम को सुव्यवस्थित करने के लिए प्रतिमाह–केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक की कार्यवाही की प्रतिलिपि सभी क्षेत्रों को भेजी जाएगी। जन संघर्ष समिति के कार्यक्रमों के प्रति प्रेस का रवैया सहानुभूतिपूर्ण रहा है। लेकिन वस्तुस्थिति की सही जानकारी अधिकाधिक लोगों तक पहुँचाने के लिए जन संघर्ष समिति की अपना समाचार पत्र (न्यूज बुलेटिन) शुरू करने की आवश्यकता महसूस की गयी। किन्तु आर्थिक स्थिति ठीक न होने की वजह से कोई ठोस कदम नहीं उठाया जा सका। संक जलविद्युत परियोजना स्टेज दो के विरोध में हस्ताक्षर अभियान विरोध पत्र, जन जागरण अभियान तथा आम सभा का आयोजन करने का निर्णय लिया गया। इसके पूर्व 17 नवम्बर चैनपुर में प्रभावित क्षेत्र के जन प्रतिनिधियों की सभा बुलाकर निम्नलिखित कार्यक्रमों की सूचना–केन्द्रीय जन संघर्ष समिति को दी गयी।

  3 दिसम्बर 1995 बारडीह में आम सभा।

  10 दिसम्बर मरियम टोली में आम सभा।

टोंगो – 16–17 दिसम्बर 1995

इस बैठक में संख जलविद्युत परियोजना प्रक्रम दो के बारे विस्तृत चर्चा हुई। पर्यावरण और आदिवासियों के अस्तित्व पर विनाशकारी प्रभाव पर विचार विमर्श करते हुए बड़े बांधों की आवश्यकता एवं उपयोगिता पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया। साधनहीन लोगों का हक छीनकर सम्पन्नता के लिए बिजली तथा अन्य संसाधन उपलब्ध कराने की योजना का विरोध करने के लिए जन जागरण अभियान तेज करने, संगठन को सुदृढ़ करने का संकल्प लिया गया।

रायडीह प्रखण्ड को 12 क्षेत्रों में विभाजित करके क्षेत्रीय जन संघर्ष समिति और गांवों में ग्राम जन संघर्ष समिति का गठन करने की योजना बनायी गई। पठारी क्षेत्र में बॉक्साइट के अवैध खनन के कारण पठार की स्थानीय जनता के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, शरीरिक शोषण पर चिंता व्यक्त की गयी। ओरसा (चीरोपाठ) में कुछ स्थानीय लोगों के साथ सांठगांठ कर उद्योगपतियों द्वारा क्षेत्र के मूल निवासियों के हितों का नजरअंदाज कर खनिज सम्पदा का दोहन करने की सजिश रची जा रही है। अत: इसका विरोध करने के लिए महुआडांड़ प्रखण्ड जन संघर्ष समिति को आगे आने के लिए अनुरोध किया गया।

प्रखण्ड स्तरीय रैली – 18 दिसम्बर 1995

डुमरी, चैनपुर, रायडीह और सिमडेगा में प्रखंड स्तर पर रैली का आयोजन किया गया। संख जलविद्युत परियोजना के विरोध में व्यापक जन आंदोलन का यह प्रथम कार्यक्रम था।

जिला स्तरीय रैली – 30 दिसम्बर 1995

बरवे, नवागढ़ और बीरू के लोगों का संयुक्त रूप से जिला–स्तर पर गुमला में जुलूस और रैली का आयोजन किया गया।

बरवे सर्वे – 2

2 जनवरी 1996 से संख जलविद्युत परियोजना से प्रभावित क्षेत्रों में सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सर्वे शुरू हुआ। इसी दिन ग्राम–प्रतिनिधियों का दल पदयात्रा प्रारंभ करने के लिए चोरमण्डा रवाना हुआ। 3 जनवरी 1996 को पदयात्री विभिन्न दलों में विभाजित होकर टुडुरमा की ओर चल पड़े। 13 जनवरी 1996 को पदयात्री टुडुरमा पहुंचने पर आम–सभा का आयोजन किए। जिसमें लगभग पन्द्रह हजार लोग शामिल हुए।

टुडुरमा

14 जनवरी 1996 केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक टुडुरमा में सम्पन्न हुई। इस बैठक में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए गए।

- प्रत्येक महीने केन्द्रीय समिति की बैठक के दो सप्ताह बाद सभी क्षेत्रों में क्षेत्रीय समिति की बैठक बुलायी जाएगी उसके बाद ग्राम जन संघर्ष समिति की बैठक होगी।
- विभिन्न परियोजनाओं से उत्पन्न विस्थापन की समस्या से संघर्ष करने राली समितियों, संगठनों के बीच पारंपरिक सहयोग बढ़ाने के लिए केन्द्रीय समन्वय समिति का गठन करने का निर्णय लिया गया। विचारों के आदान प्रदान और स्थानीय कार्यक्रम में आपसी सहयोग देने के लिए तीन महीने में एक बार गुमला में बैठक करने का प्रस्ताव पारित किया गया।
- यह भी निर्णय लिया गया कि केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की मासिक बैठक में क्षेत्रीय सचिव और कोषाध्यक्ष की उपस्थिति अनुपस्थिति का ब्योरा रखने के लिए नियमित उपस्थिति पुस्तिका रखी जाएगी। जन संघर्ष समिति पलामू-गुमला के प्राधिकृत लेटर हेड में आवश्यक परिवर्त्तन लाकर महुआडांड़ चैनपुर सिमडेगा में शाखा कार्यालय रखने तथा रांची में संपर्क कार्यालय की स्थापना करने का निर्णय लिया गया।
- समिति की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने के लिए वर्ष 1996 में प्रति परिवार 10 रू. की दर से सहयोग राशि तथा पत्रिका प्रकाशन एवं मोर्चा आयोजन के लिए 5 रू. प्रति परिवार वार्षिक अनुदान रखा गया।
- वर्षगांठ की तैयारी के लिए क्षेत्रीय संचालन मण्डल को अपने स्तर पर कार्याक्रम तय करने की जिम्मेदारी सौंपी गयी।

कटकाही

24-25 फरवरी 1996 को कटकाही में केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक सम्पन्न हुई। इस बैठक में उपस्थित सभी क्षेत्रीय प्रतिनिधियों से अपने अपने क्षेत्र की रिपोर्ट पेश करने का अवसर दिया गया। संगठन को सुदृढ़ करने के लिए अनेक उपाय सुझाए गए। सूचना एवं समाचार पत्र के निमित इच्छुक व्यक्तियों एवं गांवों को 'जनहक' नामक पत्रिका उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई. वर्षगांठ समारोह में सक्रिय भाग लेने के लिए कार्यक्रम पारित किया गया।

समीक्षा :-

केन्द्रीय जन संघर्ष समिति को यह जानकारी है कि पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज तथा संख जल विद्युत परियोजना के बारे यथोचित जानकारी दिए जाने के बावजूद कुछ स्वार्थी तत्व लोगों को धर्म, जाति एवं राजनीतिक दल के आधार पर गुमराह करके मतभेद पैदा करने में प्रयत्नशील हैं।

केन्द्रीय जन संघर्ष समिति के कार्यक्रम को किसी जाति धर्म और राजनैतिक दल के साथ जोड़ना गलत है। स्थानीय एवं प्रादेशिक स्तर पर लोगों को धर्म जाति क्षेत्र और राजनीतिक दलबंदी से ऊपर उठकर अन्याय एवं शोषण के खिलाफ एकजूट होकर संघर्ष करने की आवश्यकता है।

जन संघर्ष समिति (पलामू–गुमला) का वार्षिक प्रतिवेदन

भाइयों एवं बहनों,

आज 23 मार्च 1997 जनसंघर्ष समिति (पलामू- गुमला) अपने सत्याग्रह की तीसरी वर्षगांठ मना रही है। इस शुभ अवसर पर हम जनान्दोलन के उद्देश्य एवं नीति स्पष्ट करने, वर्त्तमान परिस्थिति और भावी कार्यक्रम पर विचार विमर्श करने तथा जल, जंगल, जमीन और जज्बात की रक्षा हेतु पुनः अपने संकल्प दुहराने के लिए एकत्र हुए हैं।

वर्ष 1997 में जन संघर्ष समिति पलामू–गुमला को कई आन्तरिक और बाह्य चुनौतियों का सामना करना पड़ा जो निम्नलिखित हैं।

1. संख जलविद्युत परियोजना प्राक्रम -2

यों तो 3 नवम्बर 1995 में ही जल विद्युत परियोजन क्रम–2 के पुनः शुरू होने की सूचना समाचार पत्रों के माध्यम से मिल चुकी थी, फिर भी विस्थापन के इश नए मुद्दे को लेकर जन संघर्ष समिति पलामू–गुमला को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा। यह एक सर्वविदित तथ्य है कि इस परियोजना के द्वारा संभावित विस्थापन से प्रभावित जनता पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट के विरोध में जन संघर्ष समिति से पूर्णतः जुड़ चुकी था, क्षेत्र एक था और मुद्दा भी विस्थापन का ही था अतः एक अलग संगठन और नयी रणनीति की आवश्यकता नहीं समझी गयी। समिति का क्षेत्रीय विस्तार करके संगठन की एकरूपता और सामूहिक नेतृत्व के सिद्धांत को

बरकरार रखते हुए उसे जन संघर्ष समिति का एक अभिन्न मुद्दा माना गया। इसी परिप्रेक्ष्य में कांसजोर जलाशय परियोजना तथा संख जल विद्युत परियोजना प्राक्रम-3 (दनगदी) के मद्देनजर बीरू में जन संघर्ष समिति सिमडेगा का गठन किया गया जो स्वतंत्र अस्तित्व रखते हुए जन संघर्ष समिति पलामू-गुमला के साथ कार्य करने लगी।

आज से ठीक एक वर्ष पहले 23 मार्च 1996 को पहली बार झारखंड के तीन सशक्त संगठन-जन संघर्ष समिति पलामू-गुमला, जन संघर्ष समिति सिमडेगा तथा कोईल-कारो जन संगठन की ऐतिहासिक मुलाकात पलामू-गुमला की सीमा में स्थित जोकीपोखर-टुटुवापानी के सत्याग्रह स्थल पर हुई। इसी ऐतिहासिक मिलन में जन संघर्ष समन्वय समिति की नींव पड़ी जिसे आपसी सहयोग के द्वारा एक सम्मिलित जनान्दोलन का रूप दिया गया। एक वर्ष का लंबा सफर तय करने के बाद जन संघर्ष समन्वय समिति के प्रतिनिधि इस शुभावसर पर एक दूसरे का मनोबल हेतु पुनः यहां उपस्थित हैं।

2. सुरंगी जलाशय परियोजना से जन संघर्ष समिति का सीधा संपर्क नहीं था फिर भी इससे संबंधित दायर केस में माननीय उच्च न्यायालय रांची बेंच द्वारा आदिवासी खूंटकट्टी तथा भुंईहरी जमीन, पूजास्थल, सरना ससनदिरी, हड़गड़ी के अन्तरण अथवा विक्रय की छूट दिए जाने से यहां के मूल निवासियों के विस्थापन की संभावनाएं बढ़ गयी जिसका खामियाजा आदिवासी समाज को भुगतना पड़ेगा। जन संघर्ष समिति संविधान प्रदत मौलिक अधिकारों के हनन के हर प्रयास का विरोध करती है।

3. बिहार सरकार द्वारा अल्पसंख्यक विद्यालयों के शिक्षकों के लम्बित वेतन का भुगतान नहीं करने, असम राज्य के कोकराझार और बोंगई गांव में उग्रवादियों द्वारा आदिवासियों का नरसंहार और लौखों की संख्या में विस्थापित होने की घटना से जन संघर्ष समिति को गहरा आघात पहुंचा। इन मुद्दों को लेकर जन सं.स. द्वारा क्षेत्रीय स्तर पर जुलूस तथा आम-सथा का आयोजन किया गया और असम के दंगा पीड़ितों के लिए राहत सामग्री जुटाई गयी।

4. प्राकृतिक संसाधनों पर सामूहिक स्वामित्व (सिद्धांत) और परम्परागत रीति रिवाज के कानून की अवहेलना करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के तीन में से एक न्यायाधीश ने जब बेटी को पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार देने के पक्ष में फैसला सुनाया तो आन्दोलन से प्रभावित क्षेत्र में चिंता की लहर फैल गयी। जन संघर्ष समिति ने स्थिति की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए इसके विरोध में जन चेतना जगाने हेतु सक्रिय रूप से काम किया।

5. भूरिया समिति की अनुशंता के आधार पर आदिवासी स्वशासन के लिए पंचायत प्रावधानों (अनुसूचित क्षेत्र में विस्तार) अधिनियम का 24 दिसम्बर 1996 को लागू होना आदिवासी समाज के लिए एक नयी संभावना का द्वार खोल दिया- जन संघर्ष समिति इस पहल का स्वागत करते हुए यथाशीघ्र जनता को प्रशिक्षित करके ग्राम सभा की स्थापना करने का संकल्प लेती है।

6. चिरोपाठ में हिण्डालको द्वारा बॉक्साइट खनन के विरोध में, प्राकृतिक संसाधनों पर सामुदायिक अधिकारों की रक्षा करने, पर्यावरण संतुलन को कायम रखने, सामाजिक, सांस्कृतिक विघटन को रोकने तथा मूल निवासियों के राजनैतिक और आर्थिक शोषण के प्रयास को विफल करने के लिए चिरोपाठ की जनता ने संघर्ष का बिगुल बजाया। विगत महीनों में उद्योगपतियों के बिचौलियों, स्थानीय प्रशासन और पुलिस के द्वारा अनेक जुल्म ढाए गए। जन संघर्ष समिति चीरोपाठ की जनता के अदम्य साहस की सराहना करती है एवं उनके संघर्ष में हर सम्भव सहयोग देने का निर्णय ले चुकी है।

केन्द्रीय जन संघर्ष समिति पलामू-गुमला की बैठक का संक्षिप्त विवरण

वर्ष 1997 में केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की मासिक बैठक क्रमशः 20-21 अप्रैल बनारी, 11-22 मई भिखमपुर, 12-14 जुलाई चैनपुर, 14-15 सितम्बर केड़ेंग, 12-13 अक्टूबर टुडुरमा, 16-17 नवम्बर गोठगांव, 14-15 दिसंबर हेलता में हुई. इसके अतिरिक्ति केन्द्रीच प्रतिनिधियों ने जन संघर्ष समन्वय समिति जिसकी बैठक तीन महीने में एक बार होती हैं। भाग लिया वर्ष 1997 में जन संघर्ष समन्वय समिति की बैठक 1-2 जून गुमला, 7-8 सितम्बर सिमडेगा और 6-7 दिसंबर कोनबीर नवाटोली और 8-9 मार्च तोरपा (तपकरा) में हुई।

अपने विभिन्न बैठकों में समिति ने परिस्थिति के मुताबिक नीति में परिवर्त्तन एवं उद्देश्य का स्पष्टीकरण करके कई महत्त्वपूर्ण संकल्प पारित किए जो निम्नालिखित हैं।

- केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की मासिक बैठक में क्षेत्रीय सचिव और कोषाध्यक्ष की उपस्थिति अनिवार्य होगी। शाम की सभा प्राधिकृत प्रतिनिधियों की होगी दूसरे दिन की बैठक में आम जनता शामिल हो सकती है।
- यद्यपि केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की खास बैठक में स्थानीय प्रतिनिधियों की उपस्थिति पर कोई पाबंदी नहीं है फिर भी किसी प्रकार का संकल्प या निर्णय लेने का अधिकार सिर्फ प्राधिकृत प्रतिनिधियों को है। अन्य सदस्य अपने मंतव्य

पेश कर सकते हैं या आम सभा में स्पष्टीकरण की मांग कर सकते हैं।

- क्षेत्रीय जन संघर्ष समिति अपने क्षेत्र के अन्तर्गत स्थानीय समस्याओं का निदान स्वयं ढूंढ़ने का प्रयास करें। आवश्यकता पड़ने पर अन्य क्षेत्रों से यथोचित मदद की जा सकती है।
- किसी अन्य संगठन, संस्था, राजनीतिक दल द्वारा आहूत कार्यक्रम में व्यक्तिगत तौर पर शामिल होने, कार्य करने के लिए कोई पाबंदी नहीं है बशर्ते उक्त कार्यक्रम जन सं. स. के उद्देश्य एवं नीति के विपरीत न हों।
- प्रखंड अथवा अंतर क्षेत्रीय कार्यक्रम निर्धारित करने के पूर्व संबद्ध क्षेत्र की जनता तथा जन प्रतिनिधियों की सहमति एवं सहयोग जरूरी है। स्थानीय कार्यक्रमों की जानकारी केन्द्रीय ज.सं.स. को देना आवश्यक है।
- आपातकालीन परिस्थिति में केन्द्रीय जन संघर्ष समिति आपातकालीन बैठक बुलाएगी तथा परिस्थिति के मुताबिक निर्णय लेकर आवश्यक कार्रवाई करेगी। सिर्फ प्राधिकृत प्रतिनिधियों के द्वारा सूचना व जनसंपर्क मान्य होगा।
- केन्द्रीय जन संघर्ष समिति की बैठक के बाद क्षेत्र एवं ग्राम स्तर पर महीने में कम से कम एक बार बैठक बुलायी जाए।

  आर्थिक नीति एवं सहयोग राशि का सर्वेक्षण कार्य पूरा होने के बाद वर्ष 1997 में क्षेत्रीय स्तर पर आय–व्यय का आंकेक्षण किया जाएगा। अत: 1997 तक क्षेत्रीय कोषाध्यक्ष अपने क्षेत्र के आय–व्यय व्योरा तैयार रखें।
- आर्थिक समीक्षा पूरा होने के बाद नयी आर्थिक नीति के तहत, जन संघर्ष समिति की स्थायी सदस्यता, कार्यक्रम में भागीदारी, प्रतिनिधियों के कार्यक्रमों का मूल्यांकन, सूचना तथा समाचार पत्रों के आदान–प्रदान के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएंगे।
- क्षेत्रीय कोषाध्यक्ष/सचिव ज.सं.स. द्वारा निर्धारित सहयोग राशि एकत्र कर अपने क्षेत्र के अन्तर्गत गांवों का पंजीकरण करेंगे।
- जन सं.स. के स्थायी सदस्य (व्यक्ति/गांव) को प्रतिमाह समिति की बैठक का रिपोर्ट, कार्यक्रम, समाचार पत्र तथा अन्य पत्रिकाएं उपलब्ध करायी जाएंगी।
- गांव की महिलाओं को संगठित कर सहिया समिति (सामुदायिक हित यापन समिति) का निर्माण किया जाएगा. जो पारिवारिक तथा सामूहिक बचत व विनियोग योजना की जिम्मेदारी सम्भालेंगे।

(छह)

सर्वेश्री भूषण तिर्की, श्री मधुरा प्र. महतो, श्री रवीन्द्रनाथ महतो, स. वि. स. से प्राप्त ध्यानाकर्षण प्रस्ताव की सूचना

गुमला तथा पलामू जिला में आदि काल से जंगल (पठारी) में यह आदिम जनजातिए तथा अनुसूचित जाति बाहुल्य 245 से 255 गाँव का क्षेत्रफल में प्रस्तावित नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज का प्रस्ताव संयुक्त बिहार काल से चला आ रहा है। 1993 से उक्त क्षेत्र में विकास करने वाले जन समुह भयाक्रान्त होकर जन (संघर्ष मोर्चा) नामक संगठन तैयार कर (जान देगें-जमीन नहीं देंगे) का संकल्प लेकर संघर्षरत है।

वास्तव में देखा जाए की पठारी, क्षेत्र के आ0 ज0 जा0 एवं आ0 ज0 जा0 जिन्हें केन्द्र एरं राज्य सरकार द्वारा सहायता देकर पोषण करते आयी है, ताकि ये विलुप्त न हो जाय। आज उन्हीं को उजाड़ कर फायरिंग रेंज बनाया जाना। लोकहित के लिये कलंक साबित होगा। चूंकि आदिकाल से इनके वंशजों की परम्परा, रीति रिवाज, रहन-सहन आदि का सम्बन्ध अन्यंत्र पुनर्वास किये जाने से संभव नहीं है।

अत: मैं सरकार अपनी मंशा स्पष्ट करें कि उक्त प्रस्तावित फायरिंग रेंज के लिए जमीन देना चाहिए है कि नहीं ताकि सरकार के स्पष्ट मंशा से उक्त क्षेत्र के भयाक्रान्तजनों की विश्वास हो सके। इस ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट करते हैं।

सरकार का वक्तव्य

महोदय,

वस्तुस्थिति यह है कि नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंग का क्षेत्र वर्तमान गुमला जिले के 127 गाँव तथा लातेहार जिले के 29 ग्रामों में कुल 156 गाँव में पड़ता है। बिहार सरकार के गृह (विशेष विभाग की अधिसूचना ज्ञापांक-1862 दिनांक- 20.81999 द्वारा सेना को इन क्षेत्रों में मैदानी गोली बारी एवं तोप खाना अभ्यास के लिए प्राधिकृत किया गया था। पूर्व में लगभग 40 वर्षों से अधिक समय से यह अभ्यास सेना द्वारा किया जाता है। वर्ष 1993 से जन विवोध के कारण यह अभ्यास बन्द है। इस परियोजना अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को भूमि से विस्थापित करने की कोई परियोजना नहीं है। वर्तमान में झारखण्ड राज्य के सृजन के बाद से सेना को मैदानी गोला बारी एवं तोप खाना अभ्यास के लिए कोई अनुमति नहीं दी गयी है, न तो सेना द्वारा कोई आवेदन प्राप्त है।

अतः इससे यह स्पष्ट है कि इस क्षेत्र में किसी को विस्थापित करने, उजाड़ कर फायरिंग रेंज बनाने का कोई मामला वर्तमान में सरकार के विचारधीन नहीं है। नेतरहाट फिल्ड फायरिंग रेंज के लिए आदिवासियों की 245 से 255 गाँवों को उजाड़कर उनकी भूमि राज्य सरकार नहीं देगी। भविष्य में नेतरहाट फिल्ड फायरिंग रेंज़ के लिए किसी को विस्थापित नहीं किया जायेगा।

झारखण्ड सरकार

राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग

ज्ञापांक-5/वि.स.ध्याना.-16/2007-830/ रा0, दिनांक 14.3.2016/

प्रतिलिपि- उप सचिव झारखण्ड विधान सभा को उनके पत्रांक 1057/ वि0स0, दिनांक-12.3.2007 के प्रसंग में सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्यार्थ प्रेषक।

उप सचिव

ओहरे नागपुरियर एका तरा कादर की गीतों से गूंजता रहा सभास्थल

पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज विरोधी जन संघर्ष समिति की 13वीं सत्याग्रह

पहले वे मुआवजा के नाम पर रूपया बांटेगे, फिर हड़िया दारू बांटेगें आखिर में आपको बांट देंगे। यह चेतावनी तरूणोदय (कांके) के युवकों ने फायरिंग रेंज विरोधी आंदोलनकारियों को दी। अवसर था पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज विरोधी जन संघर्ष समिति की 13वीं सत्याग्रह का। हर बार की तरह इस बार भी जोकीपोखर–टुटुवापानी में जन जुटान हुआ। 22–23 मार्च 07 को हुए फायरिंग रेंज विरोधी आंदोलन में महिलाओं की व्यापक भागीदारी रही। जान देंगे जमीन नहीं देंगे, का नारा समूचे पाठ क्षेत्र में गूंजता रहा। भाषण कम हुए और विस्थापन, पलायन, हड़िया–दारू के खिलाफ युवक युवतियों ने नाटक प्रस्तुत किये। 2022 तक सेना की रुटीन फायरिंग अभ्यास के बाबत जारी अधिसूचना को रद्द करने की मांग करते हुए आंदोलनकारियों संकल्प लिया। 23 मार्च कार्यक्रम समापन के पहले शपथ ग्रहण करते हुए आंदोलनकारियों ने कहा कि हम पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट के प्रभावित लोग अपने पूर्वजों की धरोहर जल, जंगल, जमीन की रक्षा करने हेतु जब तक फील्ड फायरिंग रेंज की अधिसूचना रद्द नहीं हो जाती है, तब कि अहिंसात्मक सत्याग्रह का आंदोलन जारी रखने का संकल्प लेते हैं। दो दिनों तक संपूर्ण सभास्थल, पाठ क्षेत्र ओहरे नागपुरियर एका तरा कादर एंदेरगे राजीन सुना नांदर, देशेन, सुना नांदर गीत में गूंजता रहा।

विस्थापन के विरोध में जैव विविधता और सांस्कृतिक विविधता की रक्षा के साथ पुरखौती हक के लिए चल आ रहा नेतरहाट का आंदोलन अप्रतिम है। यह आदिवासी स्वायत्तता और असिमता का ऐसा जीवंत दस्तावेज है, जिस शब्दों में बांध

पाना मुश्किल है। इस बार 13वीं आंदोलन की बरसी में पुराने तमाम लोग जुटे, जिन्होंने 1993-94 में आंदोलन को उभारा, मजबूती और दिशा दी। इमिलिया का योगदान इमिलिया की दृढ़ उपस्थिति से लोग स्मरण करते रहे। किस तरह उन्होंने जान देंगे जमीन नहीं देंगे, को आज सर्वव्यापी नारा बना दिया। फिल्ड फायरिंग रेंज विरोधी संघर्ष की चेतना ने पूरे इलाके में विस्तार पाया है। परंतु चुनौतियों उतनी ही दरपेश हुई है। नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज विरोधी जन संघर्ष समिति को इस बात का खतरा है कि कुछ ताकतें उनके लोगों के बीच फूट पैदा करने में लगी है। आंदोलन कारियों को प्रलोभन देकर उन्हें हड़िया दारू में डूबोने की कोशिश की जा रही है। ताकि विकास के नाम पर उनकी जमीन पर कब्जा किया जा सके।

पूर्व विधायक बर्नाड मिंज ने कहा कि नेतरहाट आंदोलन कारियों ने जब जब सरकार और प्रशासन पर विश्वास किया उनके साथ छल किया गया। कभी भी पूरी सूचना गांव वालों को नहीं दी गयी और गांव खाली करने के लिए सेना आ धमकती रही है। 1993 में प्रारंभ आंदोलन के 13 वर्ष हो गये। 1995 और 2004 में सेना नेतरहाट क्षेत्र में घुसने का प्रयास किया। रुटीन फायरिंग अभ्यास करने की कोशिश की। लेकिन भारी जन प्रतिरोध की वजह से यह संभव नहीं हो सका।

मार्च 2007 में रक्षा मंत्री एके अंटोनी के राज्यसभा सदस्य माबेल रिबेलो के प्रश्न के उत्तर में किसी सैनिक छावनी का प्रस्ताव नेतरहाट में न होने की बात कहने के बावजूद 2022 तक की अधिसूचना जारी कर दी गयी। श्री मिंज कहते हैं कि यह अधिसूचना सेना को इलाके में घुसने और फायरिंग अभ्यास करने का अधिकार देती है। यही वजह है कि सेना के खिलाफ नेतरहाट के अदिवासियों की गोलबंदी बढ़ी है। उन्होंने कहा कि झारखंड में विस्थापित की पीड़ा सुनने की पहल नहीं की गयी। पूर्व में हुए विस्थापितों को मुआवजा और नौकरी नहीं मिल सकी है। भारत सरकार ने आज तक कोई पुनर्वास नीति नहीं बनायी है। फायरिंग रेंज के विरोध में हुए सत्याग्रह मोरचा में पीठ पर बच्चा बांधे, मुट्ठी तान हवा में लहराती औरतें सिनगी दई कइली दई को स्मरण कराती है। जिन्होंने मुगल सैनिकों को पछाड़ा था और विजयी हुई थी। ठीक उसी तरह जैसे सेना के अत्याचार, बलात्कार, अपहरण, फसलों की क्षति और मवेशियों के नुकसान के बावजूद नेतरहाट की पाठ औरतें अपने हक-हकियत की रक्षा कर जीत हासिल करती आयी है। दरअसल जंगल-जमीन पर पारंपरिक मालिकाना हक की रक्षा करने का सत्याग्रह जतरा टानाभगत ने अंग्रेजों के खिलाफ (1990-1914) प्रारंभ किया था। ऐतिहासिक सत्याग्रह स्थल की भूमि आज भी जतरा टाना भगत को याद करती है। नेतरहाट आंदोलन ने इसलिए जतरा की राह पकड़ी कि

जतरा–गांधी के अहिंसा और सत्यग्रह के रास्ते से ही पारंपरिक धरोहर की रक्षा की जा सकेगी। नेतरहाट सत्याग्रह जतरा के सत्याग्रह का ही विस्तार माना जाता है।

गुमला और लातेहार के 245 गांवों उरांव आदिवासी बहुल गांव है। इनके साथ विलुप्त होती जनजातियां असुर और बिरहोर भी विस्थापन के संभावित खतरे का शिकार होगी। जबकि इन विलुप्त होती जनजातियों के संरक्षण और कल्याण के लिए सरकार करोड़ों रुपये का बजट प्रावधान करती है। 1963 में चल रही 23 इंफेंन्ट्री डिवीजन द्वारा रुटीन फायरिंग अभ्यास के खिलाफ अचानक 1993 में नेतरहाट की जनता गोलबंद हो उठी, जब सेना की स्थायी छावनी बनाने को लेकर हवाई सर्वे किया जाने लगा। तब जनता को पता चला कि 12 मई 1992 में 11 मई 2002 तक अधिसूचना जारी कर गांव खाली कराने और सैनिक छावनी बनने की बात है। जन संघर्ष समिति का मानना है कि सैनिक छावनी बनी, तो लगभग दो लाख 25 हजार लोग विस्थापित हो जायंगे। इनमें से लगभग पौने दो लाख आदिवासी है। जन संघर्ष समिति का कहना है कि 11 मई 2022 तक की अधिसूचना फिर से जारी की गयी है। तमाम आश्वासन मुख्यमंत्री से लेकर देश के रक्षा मंत्री के आश्वासन के बाद भी यह अधिसूचना जारी की गयी। आदिवासी इसलिए सशंकित हैं. लटकती तलवार की भांति जब तक यह अधिसूचना निरस्त नहीं की जाती है, तब तक आदिवासी अपराजेय संघर्ष गाथा को सांस्कृतिक पहचान स्वायत्तता के साथ जारी रखेंगे।

प्रेस विज्ञप्ति

नेतरहाट पायलॅट प्रोजेक्ट फील्ड फायरिंग रेंज के विरोध में जनान्दोलन

मार्च 22–23, 2005

झारखंड के नेतरहाट पठार में सेना द्वारा 1964 से 1993 तक लगातार तोप चालन अभ्यास, अधिसूचना 1956 के अन्तर्गत किया जाता रहा। इस दौरान बहुत सारी घटनाएँ घटी, जैसे बलात्कार, बम फटने से मृत्यु, बम से घरों का क्षतिग्रस्त होना, छेड़खानी, चोरी, मवेशियों और गाछ–वृक्ष तथा पर्यावरण की हानि, और उस संघात क्षेत्र के लोगों की अभूतपूर्व कठिनाइयाँ। इन ज्यादतियों के विरोध में प्रशासन या पुलिस के यहाँ शिकायत किये जाने पर भी कोई जाँच की गई न ही किसी प्रकार की कार्रवाई।

1992 में सरकार ने अधिसूचना द्वारा पायलट प्रोजेक्ट फील्ड फायरिंग रेंज की बृहद योजना अधिसूचित की जिसमें 'जन संघर्ष समिति' के सर्वेक्षण के अनुसार कुल 245 गाँवों की करीब 2.6 लाख जनसंख्या प्रभावित होती है। उपर्युक्त योजना के लिए जमीन अधिग्रहण की बात उठी और इसकी कार्रवाई भी प्रारम्भ की गई। तब से जनता का यह आंदोलन प्रारम्भ हुआ। 1994 में सेना अपने रूटीन फायरिंग अभ्यास के लिए पठार क्षेत्र में पहुँच चुकी थी कि प्रभावित क्षेत्र के लाखों लोगों ने शांतिपूर्ण और अहिंसात्मक प्रदर्शन द्वारा सेना को वापस जाने के लिए मजबूर कर दिया। तब सेना वापिस चली गई। 1994 के बाद दस–ग्यारह वर्षों तक सेना अभ्यास के लिए नहीं गई। वर्ष 2004 में सेना अभ्यास के लिए पुनः पहुँच गई जिसका शांतिपूर्ण विरोध लाखों लोगों ने जमकर किया और सेना को वापस जाने पर बाध्य किया।

1994 एवं 2004 के बीच सरकार ने अपनी अधिसूचना 1999 द्वारा

योजना का अवधिविस्तार 2002 से लेकर 2022 तक के लिए अधिसूचित कर दिया. केन्द्रीय जन संघर्ष समिति, नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज एवं प्रभावित क्षेत्रा की सम्पूर्ण जनता, पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज का विरोध करती है। हमारी सिर्फ एक ही माँग है कि इस योजना को हमेशा के लिए रद्द कर दिया जाए और इसके निरस्तीकरण की अधिसूचना शीघ्र निर्गत की जाए।

कारणः—

1. पायलट प्रोजेक्ट फील्ड फायरिंग रेंज के अंगगर्त तत्काल 206 वर्ग किलोमीटर के लाखों का विस्थापन किया जाना है। आदिवासियों का विस्थापन एक विकराल रूप लेता जा रहा है। इससे आगे आदिवासियों का अस्तित्व ही समाप्त हो जाने का खतरा पैदा हो रहा है।
2. नेतरहाट पठार क्षेत्र सम्पूर्ण झारखंड का अति सुन्दर पर्यटन स्थल है। पर्यावरण की दृष्टि से भी पायलट प्रोजेक्ट नहीं बनाया जा सकता है।
3. विगत तीस वर्षों की अवधि में सेना द्वारा तोप चालन अभ्यास किया गया था। उस दौरान जो भी घटनाएँ घटीं, जिसका संक्षिप्त विवरण उपर दिया गया है। उसकी किसी भी स्तर पर न तो कोई जाँच की गई न ही कोई संज्ञान लिया गया।
4. पायलट प्रोजेक्ट की योजना पूर्व में गया जिले के देवरी डुमरी क्षेत्र में बनायी गई थी। किन्तु उसे इस कारण रद्द कर दिया कि उस क्षेत्र में आबादी अधिक है और वहाँ ऐतिहासिक पुरातत्व अवशेष हैं, उन्हें बर्बाद नहीं किया जा सकता है। किन्तु यह असत्य और बहाना मात्र है। तत्पश्चात झारखंड के नेतरहाट पठारी क्षेत्रा को पायलट प्रोजेक्ट के लिए चुना गया। इसके अंतगर्त दो जिलों के छह प्रखंड आते हैं। यह क्षेत्रा आदिवासी बहुल हैं। कई आदिम जनजाति जो लुप्तप्राय हो रही हैं, उनकी शरणास्थली है। इस तरह यह योजना स्थल के चयन में भेदभाव बरता गया है, जिसके कारण हमारी भावनाएँ आहत हुई हैं।

राग कोड़ा (धुड़िया)

हरे लड़ाई चोचा हरे लड़ाई चोचा
टुटवा नू हरे लड़ाई चोचा रे
नेतरहाटनू हरे लड़ाई चोचा
गुचा भइया रे लड़ाई नना कालोत रे
नेतरहाटनू लड़ाई नना कालोत
जिया ची लघओत मुंदा ख़ल्लन मला चिओत
टुटवानू लड़ाई नना कालोत
सोट्टाती माला बल्लू ती माला
सत्याग्रह ननोत की नम्हैं राजीन बच्छाबाओत
टुटवानू लड़ाई नना कालोत रे
नेतरहाटनू लड़ाई नना कालोत

सामूहिक वर्षगांठ गान
ओहरे नागपुरियर

ओहरे नागपुरियर एका तरा कादर
एन्देरगे राजीन सुना नान्दर हो
एन्देरगे देशेन सुना नान्दर
किर्रा बरा किर्रा बरा रे भाइरो
ओहरे नगापुरियर ....

कोहां कोहां परेता टोंगोरी झरिया
निमन मेखा लगी भइया मन मासा करेगा
किर्रा बरा किर्रा बरा रे भाइरो
ओहरे नगापुरियर ....

एन्देर घटी मंजा निंग्है अदियानू,
एन्देर टुटी मंजा निंग्है कुड़ियानू
किर्रा बरा किर्रा बरा रे भाइरो
ओहरे नगापुरियर ....

उल्ला बिरिंग–माखा कीड़ा ओनका,
उनिम नापे किचरी गे कालोय नेखय चाली
उनिम कंवर मंडीगे कालोय नेखय बली
किर्रा बरा किर्रा बरा रे भाईरो
ओहरे नगापुरियर ....

आयो–बाबा, भाई–बहिन नम्हैं पुरखारिन,
खरा खिलपइत सहचर गा
जियन गावां बाचरगा
आम्बा काला चोन्हा जोगे भाई–बहिनरो
ओहरे नगापुरियर ....

चश्मदीद गवाहों के बयान

बोया टोप्पो (36 वर्ष) ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला का बयान 1964 से 1993 तक प्रतिवर्ष गोड़ा धान में बम गिरता और फसल जलकर बर्बाद हो जाता। खलिहाल में 4 गांज गोड़ा और 5 गांज गोंदली जल गया, करीब 900 मन फसल की क्षति हुई अर्थात् एक लाख छब्बीस हजार रूपये की क्षति हुई, जिसकी कोई भरपाई नहीं की गई।

ठेपा टोप्पो (60 वर्ष) अभिभावक – कोहां टोप्पो ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला। नवंबर महीने में ठेपा टोप्पो खेत में काम कर रहा था उस वक्त उसके पेट में गोली लगी और तत्काल उसकी मृत्यु हो गई।

बोया टोप्पो (45 वर्ष) ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला 1986–87 में फायरिंग की सूचना मिलते ही प्राण बचाने के लिए अन्यत्र गए थे। उसी समय बोया टोप्पो के घर का सारा सामान चोरी हो गया। इसकी सूचना चैनपुर, विशुनपुर, महुआडांड़ थाना के अधिकारियों को दिया गया था लेकिन कुछ सुनवाई नहीं हुई।

मोया असुर (30 वर्ष) ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला। मोया असुर के खलिहान में 2 गांज धान था, बम गिरने से पूरा गांज जलकर राख हो गया। यह क्षति 21 दिसंबर 1980 को हुई।

मकडू बरवा (60 वर्ष) ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला दो एकड़ पचास डिसमिल जमीन के गोड़ा धान के पंजा को बम से जलाकर भस्म कर दिया गया। करीब 25 मन गोड़ा धान की बर्बादी हुई अर्थात् साढ़े तीन हजार रूपये की क्षति हुई। जिसकी कोई भरपाई नहीं की गई।

बया टोप्पो (48 वर्ष) ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला। 1964 से 1993 तक बया टोप्पो के 5 एकड़ गोंदली, जटंगी के फसल को

लगातार गाड़ी से रौंदा गया प्रतिवर्ष 8 मन फसलों की बर्बादी हुई है।

सावना बरवा (20 वर्ष) अभिभावक का नाम– तेतरा बरवा ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला। 5 मई 1982 को फायरिंग के दौरान गोली के छींटे पड़ने से सावना असुर के घर का बांस, कोरो और खपड़ा की बर्बादी हुई। मुआवजे का कोई प्रावधान नहीं।

मार्शेल एक्का (65 वर्ष) ग्राम डिपाटुटुवा, पंचायत लंगडाटांड प्रखंड विशुनपुर, (गुमला) मार्शेल एक्का का तैयार गोंदली जो पांच एकड़ में था, बम गिरने से जलकर नष्ट हो गया।

दुखनी टोप्पो (65 वर्ष) ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला 1964 से 1993 तक प्रतिवर्ष गोड़ा धान को फौजी गाड़ी से रौंदा गया करीब 900 मन गोड़ा धान अर्थात् सवा लाख रूपये का धान बर्बाद हुआ।

स्तेफन बेंग (40 वर्ष) ग्राम चोरमंडा, पंचायत आराहंस प्रखंड महुआडांड़, ज़िला पलामू स्तेफन बेंग का लगभग 20 हजार रूपये का बटवृक्ष दिसंबर 1965 में गोलाबारी से बर्बाद हो गया।

नोवस आईन्द (30 वर्ष) ग्राम चोरमंडा, पंचायत अराहंस, प्रखंड महुआडांड़ जिला पलामू नोवस आईन्द का चार आम पेड़ काट दिया गया चूँकि फायरिंग के समय सैनिकों को असुविधा होती थी, कोई क्षतिपूर्ति नहीं की गई।

तोफर टोप्पो (35 वर्ष) ग्राम बांसटोली, पंचायत जनावल, प्रखंड चैनपुर, जिला गुमला। 1991 में तोफर टोप्पो का 2 एकड़ जमीन पर का गोड़ा धान बारूद के कारण बर्बाद हो गया।

सुलेमान आईन्द (39 वर्ष) ग्राम बांसटोली, पंचायत जनावल, प्रखंड चैनपुर, जिला गुमला। 1991 में सखुआपानी तरफ काम करने गया था उधर ही गोली लगी और घायल हो गया।

डिबरू असुर (35 वर्ष) अभिभावक का नाम – दुखनी असुर

फगुवा असुर (28 वर्ष) अभिभावक का नाम – भोया असुर

फगुवा टोप्पो (16 वर्ष) अभिभावक का नाम – डुंडकू टोप्पो

ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला।

20 अक्टूबर 1985 को 14 व्यक्ति यह देखने गए थे कि गोली कहां गिरता है। उसी समय 14 व्यक्ति में से 3 जन क्रमशः डिबरू असुर, फगुवा असुर और फगुवा टोप्पो को गोली लगी और घटना स्थल पर ही उनकी मृत्यु हो गई। मृतकों को अधिकारी देखने आए थे किंतु कुछ भी असर नहीं पड़ा। उन्होंने स्वयं लिखा कि उन्हें

कुछ नहीं हुआ है और उसपर जबरदस्ती हस्ताक्षर करवाया गया।

महुआडांड़ प्रखंड की एक 40 वर्षीय महिला अपने बेटी दामाद के पास गई थी। वहां से वह एक दिन आंवला तोड़ने नेतरहाट आयी थी उसी समय 3 सैनिकों ने उसके साथ बलात्कार किया फलस्वरूप महिला की मृत्यु हो गई। यह घटना 1987 की है।

एक वर्ष का बच्चा, ग्राम खैरीपाठ, पंचायत बहागड़ा, प्रखंड विशुनपुर, जिला गुमला। 1992 में गांव को अचानक खाली करने की सूचना दी गई। बया असुर की पत्नी अपने एक माह के बच्चे को हड़बड़ी में इतना जोर से बांधी कि रास्ते में ही बच्चे की मृत्यु हो गई।

पालकोट–रायडीह–सिमडेगा के एक लाख आदिवासी प्रभावित होंगे हुंडार वनप्राणी आश्रयणी परियोजना से

लगभग एक लाख आदिवासियों के जीवन को इस बार वनप्राणी आश्रयणी के नाम पर प्रभावित करने की सरकारी साजिश के खिलाफ गुमला के आदिवासियों में भारी रोष है। आदिवासियों की धारणा है कि पहले तो कोयलकारो परियोजना के नाम पर ढाई लाख आदिवासियों पर विस्थापन की तलवार लटकायी गई। आदिवासियों के प्रखर विरोध के कारण परियोजना बनाने का काम रूका हुआ है और सरकार यह बात समझने लगी है कि आदिवासियों ने टुडुरमा परियोजना के नाम पर आदिवासियों की लाखों की आबादी को उजाड़ने की योजना की घोषणा कर दी। आदिवासियों ने टुडुरमा परियोजना के विरोध में भारी रोष जाहिर किया और परिणाम यह निकला कि सरकार की साजिश के कारण आदिवासी यह समझने लगे कि उनकी पूरी सांस्कृतिक विरासत को खत्म करने की योजना को जानबूझं कर अमल में लाने की बात की जा रही है। अभी इन खतरों से सांस लेने की फुरसत भी नहीं मिली कि 79 गांवों को प्रभावित करने वाली वन्य प्राणी आश्रयणी परियोजना की तलवार लटका दी गई। इस कारण एक लाख आदिवासियों में आशंका के बादल गहरे रूप में मंडरा रहे हैं और वे सोच रहे हैं कि क्या झारखंड में आदिवासियों के विनाश की पूरी योजना ही बना ली गई है। एक ओर इन योजनाओं का प्रकोप है तो दूसरी ओर कोयला क्षेत्र में भी स्थानीय लोग भारी खतरे में घिरे हुए हैं।

वन्य आश्रयणी परियोजना के लिए सरकार ने सिमडेगा, रायडीह और पालकोट

प्रखंड के 79 गांवों का चयन किया है और इन गांवों की आबादी लगभग एक लाख की होगी। इन गांव के लोगों ने इस योजना का विरोध करना भी शुरू कर दिया है और वे कह रहे हैं कि क्या सरकार विकास के नाम पर केवल आदिवासियों को उजाड़ना ही जानती है? इस सवाल के जबाव में सरकार के लोगों के पास कोई तर्क नहीं है। इन इलाकों की जनसंघर्ष समिति ने पूरी ताकत के साथ इस योजना के विरोध का संकल्प लिया है और साथ ही सरकार के समक्ष प्रश्न रखा है कि क्या उनको उजाड़ने की राजनीति को कबतक जारी रखा जाएगा? आदिवासी इलाकों में इन परियोजनाओं से न तो जंगल का संरक्षण होता है और न ही वन प्राणी बच पाते हैं। झारखंड क्षेत्र में इसके पहले के दो आश्रयणी इस बात के साक्षी हैं। बेतला में हालत खराब है। इसके इलाके के गारू में लगातार 15 सालों से सूखे की स्थिति है और सरकार की ओर से किसी भी तरह यह विश्वास नहीं दिलाया जा रहा है कि यह व्याघ्र परियोजना क्षेत्र के लोगों के लिए भी चिंतित है। इसी तरह हजारीबाग का वन्य आश्रयणी है जो लगातार दम तोड़ रहा है। वहां न तो पर्यटकों के लिए कुछ है और न ही वन प्राणी का ही संरक्षण हो रहा है। यहां तक कि रांची के पास का बिरसा मृग विहार भी अपनी दुर्दशा पर आंसू बहा रहा है और ऐसी हालत में सरकार के लिए न तो आदिवासी सवाल ही महत्व का है और न ही वनों के प्राणी का सवाल। सरकार किसी भी योजना को लागू करने के पहले जनता को विश्वास में नहीं लेती है। यहां तक कि यह भी नहीं बताती है कि वास्तविक योजना क्या है और उसका जनता के जीवन पर क्या असर होना है?

यहां इस बात को गैर से देखना चाहिए कि इस परियोजना में वे क्षेत्र शामिल किए गए हैं जो कांसजोर और टुडुरमा योजना से किसी कारण बाहर रह गए थे। इस कारण आदिवासियों का यह सोचना बिल्कुल उचित है कि उनके पूरे इलाके को या तो डुबा दिया जा रहा है या फिर उन्हें ऐसी परियोजनाओं के हवाले कर दिया जा रहा है। आखिर आदिवासी जाएं तो जाएं कहां?

गुमला के आदिवासियों का कहना है कि सरकार ने इस परियोजना के लिए भी जनता को विश्वास में नहीं लिया है और यह भी नहीं बताया है कि अचानक इस योजना के लिए इसी क्षेत्र को क्यों चुना गया है। हुंडार आश्रयणी के लिए 1990 में राज्यपाल के नाम पर अधिसूचना जारी की गई और कहा गया कि यहां वन प्राणी आश्रयणी बनाया जाएगा। गुमला के उपायुक्त ने 30 दिसंबर 1997 को रांची से प्रकाशित होने वाले अखबारों में इस बाबत सूचना प्रकाशित की। सरकार की ओर से कहा जा रहा है कि इस परियोजना का लक्ष्य वनखंडों की रक्षा करना है और साथ ही

वनप्राणियों का भी। वन संपदा के दोहन को भी सरकार रोकने की बात कर रही है।

नेतरहाट आंदोलन के बाद से झारखंड क्षेत्र के आदिवासी परियोजनाओं के विरोध में सशक्त आंदोलन की राह पकड़ रहे हैं. इन आंदोलनों ने बता दिया है कि झारखंड में योजना निर्माण बिना जनता की सहमति के संभव नहीं है।

इस परियोजना के कारण आदिवासियों में वन के भीतर अपने परंपरागत हथियार को ले कर चलना भी दूभर हो जाएगा और इसे अपराध माना जाएगा। योजना के अनुसार इसमें रैयती जमीन नहीं होगी। लेकिन परियोजना क्षेत्र के मध्य के गांवों को विस्थापित होना होगा। इसी तरह परियोजना के मध्य के खेतों में किसानों को बेदखल होना होगा।

सरकारी आंकड़े के अनुसार 45 लाख 26 हजार 484 एकड़ की परियोजना परिधि में लगभग 45 लाख व्यक्ति निवास करते हैं। गैर-सरकारी आंकड़े के अनुसार यह संख्या लगभग एक लाख है। लोगों को जिन कारणों से अविश्वास होता है उसमें इस तरह के आंकड़ों के अंतर प्रमुख भूमिका निभाते हैं। स्थानीय लोग मानते हैं कि इस परियोजना के निर्माण से वन-उत्पाद पर से लोगों का अधिकार समाप्त हो जाएगा। वन से जरूरी काम के सामान को लेना भी असंभव हो जाएगा। यहां तक कि जरूरी लकड़ी भी नहीं मिलेगी। एक पर्यावरण संरक्षण का कार्य करने वाली संस्था अहेड का मानना है कि वन उजाड़ने में 90 प्रतिशत भागीदारी माफिया और सरकारी अधिकारियों की होती है। स्थानीय जनता तो मात्र 10 प्रतिशत जंगल उत्पाद का ही उपभोग कर पाती है।

एच. ई. सी. यानी विकास का मकबरा

भारी अभियंत्रण निगम की स्थापना और इतिहास की एक झलक

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त मानवशास्त्री स्व.डा. एल पी. विद्यार्थी ने अपनी शोध पुस्तिका में लिखा है कि हटिया औद्योगिक प्रक्षेत्र छोटानागपुर के पठारी इलाका में अवस्थित बड़े औद्योगिक प्रक्षेत्रों में से एक है। यह 9200 एकड़ को अपने दायरे में लाता है जिससे प्रारंभ में 12 गांव और बाद में 16 और 4 गांवों को अधिग्रहित किया गया। 12 गांव पूरी तरह से विस्थापित किए गए।भौगोलिक तौर पर यह इलाका 8518 एन लैटिटयूड और 2322 ई लोंगीटयूड में अवस्थित है।यह समुद्र तल से 2225 उपर है।

निगम की स्थापना मुख्यतः धुर्वा, लटमा, सतरंजी, और हटिया के एक बड़े हिस्से में की गई है। फैक्टरी ने इसके लिए 1900 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया है। निगम के लिए टाउनशिप की स्थापना के लिए 5600 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया। इसके फलस्वरूप दस गांवों भुसूर, आनी, पुदांग, मुड़मा, कूटे, होटवासी, लाबेद, तिरिल, हड़सेर और जगन्नाथपुर गांवो का अधिग्रहण किया गया. यह सभी गांव सामाजिक और सांस्कृतिक तौर पर एक दूसरे से गहरे तौर पर जुड़े हुए थे।

रेलवे, कच्चा माल के आवागमन और अन्य संसाधनों के लिए 1700 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया जिसके तहत 12 गांव कल्याणपुर, कचनारटोली, हेसाग, बालसिरिंग, सीठियो, बालालौंग, भंडराटोली, बारियाडीह,सिमबो, नचियातू गांवों का अधिग्रहण किया गया। जून जुलाई 1962 तक लगभग सभी गांवों को विस्थापित कर दिया गया था। विस्थापित और प्रभावित गांवों का एथनोग्राफी और एथनोलोजी एक जैसी बताई जाती है। विस्थापित गांवों का जुड़ाव हरमू नदी से भी रहा है। सभी गांवों के लोग पूरी तरह से कृषि कार्य करते थे और उनकी जीवन जीविका उसपर ही निर्भर थी। कुछ ही लोग अन्य पेशे से जुड़े थे।

सभी गांवों का एथनोग्राफी और एथनोलोजी सर्वे 1962 में पूरा किया गया।

कल्याणपुर गांव की आबादी 1480 थी। जिसमें उरांव 1289, 54 लोहरा, 137 धर्म परिवर्तित उरांव थे. प्रारंभ में यह उरांव बहुल गांव ही था।सरना धर्मावलम्बी और ईसाई समुदाय के लोग यानी कि विभिन्न धर्मों को मानने वाले भी थे।

भुसुर गांव की आबादी 572 थी। इसमें 255 सरना उरांव, 212 मुण्डा,41 बड़ाइक, 31 लोहरा, 20 राजपूत और 13 ईसाई धर्म ग्रहण किए हुए उरांव रहते थे।

जगन्नाथपुर गांव की आबादी 1490 थी। इसमें 434 उरांव, 372 मुस्लिम, 272 राजपूत, 165 मुण्डा, 57 चिरकुट, 50 ब्राहमण, 48 लोहार, 48 महली और 44 घासी समुदाय के थे।

तिरिल गांव की आबादी 320 थी। इस गांव में 106 उरांव, 50 मुण्डा, 45 महली, 41 राजपूत, 39 लोहार, 32 घासी और 17 उरांव ईसाई धर्मावलम्बी थे।

कुटे गांव की आबादी 348 थी। 33 हिन्दू परिवार, 10 राजपूत परिवार 52 परिवार आ।देवासी थे।इनमें 8 ईसाई समुदाय से थे।

लाबेद गांव भी आदिवासी बहुल गांव है। तब इस गांव की आबादी 325 हुआ करती थी। इनमें 205 उरांव, 103 मुण्डा, 17 लोहार समुदाय से थे।

धुर्वा गांव में 1947 तक कोई भी स्कूल नहीं था। 1947 के बाद आदिमजाति सेवा मंडल की तरफ से 1947 में तिरिल आश्रम की स्थापना की गई। इसमें 1958 तक केवल 40 बच्चे ही पढ़ने को आते थे।

सतरंजी में 1936 में कैथोलिक मिशनरियों द्वारा धार्मिक सह शैक्षिक स्कूल खोला गया।

भारी अभियंत्रण निगम की स्थापना 15 दिसम्बर 1958 को रांची के नजदीक हटिया नामक प्रमुख स्थान के आस पास के लगभग 32 गांवों को विस्थापित कर स्थापित की गई थी। भूमि अधिग्रहण की विधिवत् प्रक्रिया के तहत एच ई सी के लिए 7133 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया। लेकिन धीरे धीरे जमीन की नापी की भारी हेराफेरी का एच. ई. सी. ने लगभग 9200 एकड़ भूमि का अधिग्रहण कर लिया। एच ई सी की स्थापना से आस पास के जो गांव प्रभावित हुए उनमें हेसाग, ओबेरिया,डांडेल, जियारप्पा, हुटार, चिकोर, भंडरा, सेनेगुटू है।

तालिका नं. 1.30

विभिन्न गांवों की भूमि फैक्टरी के लिए अधिग्रहित की गई।

क्रम सं.	गांवों के नाम	गांवों की क्षेत्र एकड़ में	विस्थापित परिवारों की संख्या	भूमि अधिग्रहित	उद्देश्य
1.	भुसूर	414.82	130	414.82	टाउनशिप
2.	आनी	569.37	62	569.37	वही
3.	पुन्दाग	2475.16	458		वही
4.	मुड़मा	710.31	393	710.31	वही
5.	कूटे	395.68	85	395.68	वही
6.	होटवासी	368.15			वही
7.	लाबेद	343.48	70	343.48	वही
8.	तिरिल	548.70	75	548.70	वही
9.	हड़सेर	575.71	62	आंशिक	वही
10.	बालालोंग	927.97		आंशिक	डैम
11.	भंडराटोली	575.71		आंशिक	डैम
12.	बरियाडीह	807.27		आंशिक	वही
13.	सिमबो	690.78		आंशिक	वही
14.	नचियातू	648.22	31	648.22	वही
15.	धुर्वा	325.82	37	325.82	फैक्टरी
16.	लटमा	929.31	90	929.31	व्ही
17.	जनगन्नाथपुर	986.30	280	986.30	टाउनशिप
18.	कल्याणपुर	701.61	296	701.61	रेलवे और होटल
19.	कचनारटोली	255.89		आंशिक	रेलवे
20.	हेसाग	724.46		आंशिक	रेलवे व अन्य
21.	हटिया	823.78		आंशिक	फैक्टरी
22.	सतरंजी	837.22	112	837.22	वही
23.	जोजोसिरिंग	89.83		आंशिक	रेलवे
24.	बालसिरिंग	1003.58		आंशिक	रेलवे
25	सीठियो	1468.48		आंशिक	डैम

भूमि का मुआवजा इस प्रकार निर्धारित किया गया ।

प्रथम श्रेणी दोन जमीन 1650 रू. प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

दूसरी श्रेणी दोन जमीन 1330 रू प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

तीसरी श्रेणी दोन जमीन 830 रू. प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

प्रथम श्रेएी टांड जमीन 660 रू. प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

दूसरी श्रेणी टांड जमीन 330 रू. प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

तीसरी श्रेणी टांड जमीन 82.50 रू. प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

वेस्ट लैंड 45 रू. प्रति एकड़ 15 प्रतिशत ब्याज के साथ

मुआवजा की इस दर से विस्थापितों में भारी आक्रोश था। इसके खिलाफ विस्थापितों ने रांची के उपायुक्त को ज्ञापन भी दिया और मांग की कि मुआवजा की रकम बढ़ाई जाए। बिना पूर्ण भुगतान के कोई कार्य नहीं किया जाए। इसके साथ ही एक समान मुआवजा दिए जाने क मांग की गई। टाउनशिप एरिया में ही ग्रामीणों को भी बसे रहने दिया जाए। पुनर्वास कार्य समुचित तरीके से किया जाए। मुआवजा का भुगतान एकमुश्त किया जाए।

टाउनशिप के लिए जिन 10 गांवों को अधिग्रहित किया गया उन्हें अलग दर से मुआवजा का भुगतान किया गया।प्रथम श्रेणी के दोन जमीन के लिए 4360 रू. प्रति एकड़ दूसरी श्रेणी के लिए दोन जमीन के लिए 4360 रू प्रति एकड़, सभी प्रकार के टांड़ लैंड के लिए 3200 रू. प्रति एकड़ और बाकी बची हुई जमीन के लिए भी 3200 प्रति एकड़ की दर से मुआवजा 15 प्रतिशत ब्याज के साथ देना निर्धारित किया गया।

एच ई सी की स्थापना से कुल 2198 परिवारों 12990 लोगों के उजड़ने की बात कही गई है। आज इन विस्थापित परिवारों की आबादी दोगुना से भी अधिक यानी लगभग 50 हजार के करीब हो गई है।

वर्ष 2005-06 के बाद से सकल बिक्री, उत्पादन, उत्पादकता और लाभ का विवरण नीचे दिया गया है।

तालिका नं. 1.31

	कुल करोबार करोड़ रु.	उत्पादन करोड़ रु.	प्रति कर्मचारी कारोबार लाख रु.	शुद्ध लाभ करोड़ रु.
2005-06	17818	16563	520	-8689
2006-07	3039	28081	910	286
2007-08	41292	38286	1380	417
2008-09	45387	41947	1580	1837
2009-10	52813	53772	1840	4427
2010-11	68121	70055	2460	3814
2011-12	72523	68774	3020	858
2012-13	74047	67677	3100	2038
2013-14	41167	44771	2024	29931
2014-15	39150	31958	2229	(-) 24169

बहुमत का धौंस और नए 2013 लारा कानून और अध्यादेश का उल्लंघन

अभी अभी हमलोंगों ने बिरसा मुण्डा की शहादत दिवस मनाया। बिरसा हुलगुलान का आहवान कर बिरसा ने अपनी बैठकों में कहा था कि " हमारी जमीन वैसी ही उड़ी जा रही है जैसे कि आंधी में धूल उड़ा जाता है। एच. ई. सी. को पुरखों ने जमीन क्या दिया 55 सालों बाद भी एच. ई. सी. को दी गई आदिवासी जमीन की बंदरबांट बंद नहीं हो रही है. धूल के समान जमीन उड़ा ली जा रही है।

एच.ई.सी. की गाथा अंतहीन और कानून के मखौल के सिवा कुछ भी नहीं है। अगर इसी तरह बिना नियम कानून की मर्यादा के आदिवासियों की जमीन अगर लेनी ही है तो कानून की क्या जरूरत है।

आदिवासियों और मूलवासियों के द्वारा एच. ई. सी. को दी गई आदिवासी भूमि अब रातोंरात सरकारी जमीन बना दी गई। वह भी तमाम संवैधानिक प्रावधानों को ताक पर रखकर। सवाल है कि कौन करेगा इंसाफ। बहुमतवाली सरकार बेखौफ हो गई है। अपने ही बनाए कानून का धत्ता बताकर आदिवासी जमीन को सरकारी जमीन बना दिया गया।

आखिरकार एच.ई.सी. की अतिरिक्त भूमि 2555.79 एकड़ भूमि कानून का मखौल उड़ाते हुए 3 मार्च 2015 को झाड़खंड सरकार को हस्तान्तरित कर दी गई। इस हस्तान्तरण में 2013 के नए भूमि अधिग्रहण कानून का कोई ख्याल नहीं रखा गया। न ही दूसरी बार लाए गए अध्यादेश का।

जबकि 2013 का कानून धारा 24 के 2 के मुताबिक पांच साल या उससे अधिक सालों तक एच. ई. सी. के द्वारा पोजेशन यानी दखल कब्जा नहीं किए जाने पर एच.ई. सी. द्वारा किया गया अधिग्रहण स्वतः ही रद्द हो गया। इसी धारा में सरकार के लिए अवसर प्रदान करते हुए यह प्रावधान किया गया है कि सरकार अगर चाहे तो उसी भूमि का पुनः नए सिरे से अधिग्रहण कर सकती है। लेकिन एच. ई. सी. की अतिरिक्त पड़ी भूमि के 2013 के कानून के मुताबिक स्वतः अधिग्रहण रद्द होने के प्रावधान की घनघोर अनदेखी करते हुए सरकार ने रैयतों के बजाए एच. ई. सी. से भूमि लेने का गैरकानूनी काम को 3 मार्च 2015 को अंजाम दिया। इससे यह साबित हो गया है कि 2013 के लारा कानून जो कि संसद में भाजपा की मदद से पारित किया गया था, के पालन की कोई मंशा रघुवर दास सरकार नहीं रखती है। यही नहीं 31 दिसम्बर 2014 को पहली बार जारी अध्यादेश और दोबारा 31 मई 2015 को जारी अध्यादेश जो कि एच.ई. सी. के अतिरिक्त भूमि के संदर्भ में रैयतों के पक्ष में है, के पालन की भी कोई मंशा नहीं रखती है। मतलब साफ है कि रघुवर सरकार ने अपने बहुमत वाली सरकार का धौंस दिखाकर ही आदिवासियों की भूमि को हड़प कर हजम कर जाना चाहती है। अगर ऐसा ही करना है तो फिर भूमि अधिग्रहण कानून बनाए जाने की आवश्यकता क्यों है। सरकार आदिवासियों को ऐसे ही खदेड़ कर जमीन हथिया सकती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि झाड़खंड में फासीवादी सरकार अपने पंजे फैलाना प्रारंभ कर दिया है जिसे बस अंधाधुंध विकास करना है। किसी भी कानून की परवाह नहीं करनी है। जबकि अमित शाह ने रांची में कहा था कि एक इंच भी आदिवासियों की जमीन नही ली जाएगी। आदिवासियों की भूमि एच. ई. सी. ने ली और वह सरकार की कैसे हो गई! यह बताने का कष्ट रघुवर सरकार करेगी क्या!

रांची भी पांचवीं अनुसूची के अन्तर्गत आता है और पांचवी अनुसूची के मुताबिक आदिवासियों की भूमि अधिग्रहित करने के पूर्व ग्राम सभा से सहमति लेना आवश्यक है। लेकिन इस मामले में ऐसा करने की जरूरत भी नहीं समझी गई। पांचवीं अनुसूची भारतीय संविधान का अंग है और आदिवासियों को इसके तहत मिल संवैधानिक अधिकार का पालन भी इस संदर्भ में नहीं किया जा रहा है।

जनजातीय परामर्शदातृ समिति की बैठक 2015 में हुई लेकिन इस

बैठक में भी रघुवर सरकार ने इस मसले पर विचार विमर्श नहीं किया। इसका मतलब क्या है। मतलब यह है कि सरकार आदिवासियों के आंखों में धूल झोंकने का काम कर रही है। दिखावे के लिए जनजातीय परामर्शदातृ समिति की बैठक आहूत की जा रही है। लेकिन जो तात्कालिक जरूरत के मसले है उनपर सरकार विमर्श नहीं करा रही है। आदिवासियों के साथ इससे बड़ा अन्याय और क्या हो सकता है।

एच. ई. सी. को आदिवासी और मूलवासी रैयतों ने एच. ई. सी. की स्थापना करने और आदिवासियों और मूलवासियों को मुख्य धारा में लाने के महती उद्देश्य के लिए दिया था। जिस मकसद से आदिवासियों ने 9200 एकड़ जमीन दी उसमें से लगभग पांच हजार एकड़ भूमि का उपयोग एच. ई. सी. नहीं कर पाई और यह अतिरिक्त भूमि में पारम्पारिक बसाहट के साथ उपजाउ भूमि रह गई।

विस्थापितों की जुबानी उनकी दर्दनाक कहानी

ग्राम – जगन्नाथपुर

नाम– श्री प्रवीरनाथ शाहदेव

1. द्वितीय पंचवर्षीय योजना में एच0ई0सी0 की स्थापना हुई। 1957 से अधिग्रहण का काम शुरू हुआ।
2. प्रथम 7 हजार 200 एकड़ भूमि प्लॉट और शहर के लिए अधिग्रहित की गई । डैम के लिए 4.5 एकड़ जमीन का अधिग्रहण किया गया।
3. 9000 भूमि अधिग्रहित किया गया।
4. अधिग्रहित भूमि आदिवासी और सदानों की थी, सभी जमीन खेती योग्य थी।
5. 15 से 20 हजार लोग विस्थापित हुए।
6. एच0ई0सी0 ने पुनर्वास के नाम पर 10 डिसीमिल जमीन दी। इसके अलावा परिवार से एक सदस्य को नौकरी दी।
7. पुनर्वासित गॉवों को नया सराय, नया लतमा, नया धुर्वा, नया भुसुर आदि जगहों में बसया गया।
8. पुनर्वास की योजना 1960 से 1962 तक गई।
9. 7 हजार 200 एकड़ भूमि में प्लॉट एवं हटिया शहर स्थापित किए गये।
10. विस्थापित परिवारों से एक सदस्य को नौकरी दी गई। नौकरी चतुर्थ श्रेणी की थी।
11. प्रवीर नाथ शाहदेव ने कहा कि 1996 में deed of conveyance बना यह कारखाना स्थापना के बाद तुरंत बना था लेकिन हुआ नहीं। यह त्रुटिपूर्ण हैं। इनमें बहुत–सी चीजों को नहीं जोड़ा गया हैं।
12. गॉव का प्रबंधन गॉवों के लोगों को मिले जिसे गॉव की जमीन नहीं जंगल, मानव संसाधन को व्यवस्थित कर सके। जिससे लोगों को रोजगार गॉव में ही मिल जाये।
13. गॉव का मसना, श्मशानघाट, सरना स्थल, हड़गड़ी, मंदिर, मेला जैसी कितने चीजें भी। जो मिटा दिया गया। हमें मिटाकर विकास किया जा रहा हैं।

प्रवीर नाथ शाहदेव ने कहा–

प्रथम सी0एम0डी0 नागराज राव उनकी बड़ी महत्वाकांक्षी योजना 11000 क्यु0आर0 हैं। कचड़ा से खाद, उर्जा की योजना थी। जिसके लिए जमीन टोंको में अधिग्रहित की गई। वहीं गैस प्लॉट की संरचना रखी गई। जर्मनी की कम्पनी से संबंध था जो हुआ नहीं। जब जवाहर लाल नेहरू ने एच0ई0सी0 कारखाना का उद्घाटन किया उसके बाद सी0एम0डी0 से कहा कि गैस प्लॉट का उद्घाटन करना हैं वे बोले कि वो होगया। नागराज राव को हटा दिया गया। इसके बाद टी0आर0 गुप्ता आये।

बड़े बनिया टाइप के थे। उन्होंने गैस प्लॉट का काम ठप कर दिया। अब तक गैस प्लॉट टोंको में dead asset की तरह हैं।

ग्राम– कुटे

नाम–श्री राहुल उरॉव एवं श्री प्रेमप्रकाशनाथ शाहदेव

1. एच0ई0सी0की स्थापना 1962 में हुआ।
2. सात हजार एकड़ भूमि अधिग्रहित की गई।
3. भूमि अधिग्रहण का कार्य 1957–58 वर्ष में प्रारम्भ हुआ।
4. 50 प्रतिशत आदिवासी भूमि और 50 प्रतिशत गैर आदिवासी (सदान) की थी, सभी भूमि खेती योग्य थी।
5. 13 गॉव पूर्णविस्थापित हुए और 20 में आंशिक विस्थापन हुआ। जगन्नाथपुर, आनि, कुटे, मुड़मा, तिरिल, लबेदे सभी गॉव आज भी वहीं बसे हैं। जिसमें रैयतों का कब्जा हैं।
6. विस्थापित गॉवों को नया लतमा, नया सतरंजी, नया सराय, नया धुर्वा, नया भुसुर में पूर्णवासित किया और उस गॉव के आगे नया शब्द जोड़ा गया।
7. खेती योग्य भूमि अभी भी हैं, आर0 एन0 डी0 के बगल में अभी भी खेती होती हैं।
8. पुनर्वास नीति के तहत विस्थापितों के लिए घर, स्कूल, अस्पताल, सामुदायिक भवन का निर्माण एवं सड़क, बिजली–पानी की सुविधा मुहैया कराना था परन्तु कुछ भी कार्य पुरा नहीं किया गया। रोजगार के नाम पर परिवार के केवल एक सदस्य को नौकरी दी गई बाकि सभी

बेरोजगार पड़े रहे। विस्थापित के नाम पर बाहरी लोग नौकरी किए। अतिरिक्त भूमि को विभिन्न संस्थानों को लीज पर दिया गया परन्तु इस भूमि को विस्थापितों के लिए आंवटित नहीं किया जाता हैं। इन संस्थानों में विस्थापित को नौकरी भी नहीं दी गई।

9. 220 लोगों को नौकरी दी गई जबकि 5000 लोग विस्थापित हुए। सभी को चर्तुथ श्रेणी में नौकरी दी गई।
10. 1992 में अनिश्चितकालीन हड़ताल से घाटा आरम्भ हुआ। 2004 में सी0एम0डी0 आये तब से 5000 करोड़ की आय होनी आरम्भ हुई। एच0ई0सी0 वर्तमान में अच्छा चल रहा हैं। 5000 करोड़ के मुनाफे में हैं।

वर्तमान में वर्कस की स्थिति–

स्थायी वर्कस– 22000

ट्रेनी – 382

ठेका मजदूर – 2500

ठेका मजदूर के सहारे ही एच0ई0सी0 चल रहा हैं। विस्थापित मजदूर ठेका मजदूर हैं। 382 ट्रेनी के साथ लोकल एवं विस्थापित दोनों हैं। विस्थापितों के लिए अलग से जगह नहीं हैं। सामुदायिक विकास के लिए अभी तक कुछ भी नहीं किया गया। स्वास्थ्य संबंधी कार्य एवं रथ मेला जैसे आयोजन में भी 15 साल से एच0ई0सी0 ने कुछ सहयोग नहीं किया हैं। नया सेल विस्थापितों को नौकरी देना बंद कर दिया हैं। विस्थापित गॉव कांसेटीप सोसाइटी के माध्यम से ठेका मजदूरों की बहाली दोनों अभी हैं। उस पर भी बाहरी लोगों को बहाली कर रही हैं जबकि नियम हैं कि इसे विस्थापित चलायेंगे।

विस्थापितों को 10 डिसीमल देने की बात एच0ई0सी0 की प्रबंधन कर रही हैं पर विस्थापितों का कहना हैं कि 10 डिसीमल तो दिया गया उसके बदले पैसा भी लिया गया। मलिकाना हक नहीं हैं। जमीन दिया नहीं सिर्फ बेचा हैं विस्थापितों ने पहले कोर्ट में केस किया था पर वह रिजेक्ट कर दिया गया। अभी भी कोशिश चल रही हैं। शिबु सोरेन, संतोष मोहन सिंहदेव, सुबोधकांत सहाय ने विस्थापितों के साथ धोखा किया हैं एच0ई0सी0 प्रबंधन रिवाईवल पैकेज की आड़ में जमीन राज्य सरकार को बेची हैं, जबकि जमीन का मलिक खुद राज्य सरकार होती हैं।

विस्थापित परिवार की पीढ़ी जमीन बचाने में लगी हैं। उनकी स्थिति अच्छी नहीं हैं। लम्बे आंदोलन के बाद भी सरकार विस्थापितों पर ध्यान नहीं दे रही हैं। अर्जुन मुण्डा ने कहा कि रैयतों से समझौता नहीं होगा तब तक कोई भी काम नहीं होगा। दस दिन के अंदर से हाईकोर्ट का काम प्रारम्भ हो गया।

प्रेम प्रकाश शाहदेव ने कहा कि विधानसभा स्पीकर शंशाक शेखर भोक्ता जी के बयान से विस्थापित परिवार को काफी ठेस पहुँचा। उन्होंने बार–बार विस्थापित लोगों का अपमानित करते हुए कहा कि वे विकास विरोध ी हैं। अगर वे खुद विस्थापित होते तो उन्हें मालूम होता कि विस्थापन का दर्द क्या होता हैं।

राहुल उरॉव ने कहा कि राज्य की सभी राष्ट्रीय राजनैतिक पार्टी एवं क्षेत्रीय राजनैतिक पार्टी को विस्थापित परिवार की ओर संदेश दिया जाता हैं कि जो भी पार्टी विस्थापित रैयतों की बात अपनी घोषणा पत्र में करेगा। उसे ही विस्थपित परिवार की ओर से चुनाव में सहायता प्रदान की जाएगी।

अनवर हुसैन मुड़मा, महावीर सिंह तिरिल, अशोक शाहदेव कुटे, रामेश्वर महली तिरिल

एच0ई0सी0 की स्थापना 14 नवम्बर 1962 को हुआ। 1961 की गजट में प्रकाशित 1956 नापी प्रारम्भ की गई। कु अधिग्रहित भूमि 9000 एकड़ थी। जिसमें सभी धानवाली एवं खेती योग्य थी। कुछ गॉव में पूर्ण विस्थापन एवं कुछ भी आंशिक विस्थापन रहा। लाबेद, तिरिल, कुटे को पुनर्वास का लाभ नहीं मिला। अधिग्रहण के बाद भी जमीन पर ग्रामीणों का कब्जा रहा साथ ही खेती का कार्य चला रहा हैं।

एच0ई0सी0की पुनर्वास नीति के तहत 10 डिसीमल जमीन कुछ ही परिवार को मिली साथ ही कुछ ही परिवारों के सदस्यों में से एक की नौकरी चतुर्थ श्रेणी में मिली। पुनर्वास का लाभ आंशिक लोगों को मिला। कहा जाता हैं कि 75 प्रतिशत को लाभ नहीं मिला। पुनर्वास की गलत नीति के कारण लोगों का जीवन दयनीय हो गया। बेकारी, बेरोजगार, शिक्षा, स्वास्थय पर असर पड़ा। एच0 ई0 सी0 Surplus land को कमाई का जरिया बना दिया। विभिन्न संस्थानों को करोड़ में जमीन बेचकर मुनाफ कमा रही है और

विस्थापित अपने ही जमीन से बेदखल हो रहे हैं।

एच0ई0सी0 प्रबंधन ने विधान सभा निर्माण के लिए झारखण्ड सरकार को बेच दिया। इसी जमीन पर विस्थापित खेती कर अपनी जीविका चला रहे हैं। एच0ई0सी0 प्रबंधन ने सामुदायिक विकास हेतु किसी भी प्रकार के कार्य नहीं किए। हम विस्थापित बुनियादी सुविधा के अभाव मे रहे। सड़क, बिजली, पानी, अस्पताल, शिक्षा, मनोरंजन के लिए तरसते हैं।

गोविंद बैठा, पुलिया महतो, कुटे, तिरिल

सारी जमीन एच0ई0सी0 में चला गया। दादाजी को पैसा मिला था। हमारे पास कुछ भी नहीं हैं। पूरा परिवार बिखर गया। किसी भी तरह से गुजारा हो रहा है। परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं हैं। बच्चों की शिक्षा, स्वास्थय पर भी असर पड़ता हैं। पहले केस हुआ था। अभी भी केस किए हैं। क्या होगा नहीं मालूम। हम ग्रामीणों को लारा कानून की जानकारी हैं। उसी के तहत जमीन वापसी का केस किए हैं।

मनोज उरॉव लाबेद गांव

लाबेद गॉव की अधिग्रहित भूमि कुल 342.20 एकड़ हैं। सी0आर0पी0एफ0 को 101 एकड़ जमीन एच0ई0सी0 प्रबंधन ने दे दी हैं। मनोज उरॉव का कहना हैं कि बड़ा लाबेद गॉव अधिग्रहित नहीं किया गया हैं। 1985 तक रसीद कटा हैं। श्री सुधीर प्रसाद जब डी0सी0 थे तब उन्होंने ग्रामीणों को कहा कि आपका गॉव राजस्व गॉव हैं। 1985 के बाद रसीद नहीं कटा गया। पुनर्वास नीति के तहत लाबेद के रैयतों को पैसा नहीं मिला और गॉव वहीं का वहीं बसा हुआ हैं। खेती का कार्य भी पहले की तरह होता हैं।

लाबेद को ब्लॉक की तरफ से सभी प्रकार की सुविधा मिलती हैं।

पंकज शाहदेव कुटे

विस्थापन 1958–59 से शुरू हुआ। उस समय सपना दिखाया गया कि ग्रामीणों का जीवनस्तर उठ जायगा। विस्थापित गॉवों को आर्दश ग्राम बनाया जाएगा। विस्थापित गॉवों को सभी प्रकार की बुनियादी सुविधा प्रदान की जाएगी। नौकरी, घर देने का वादा किया गया। जिस तरह से आप यहॉ खेती–बारी करते हैं। उसी तरह आपको नौकरी भी मिलेगी। रैयतों से सिर्फ

वायदा किया गया जो आज तक पूरा नहीं हुआ। आज एच0 ई0 सी0 विस्थापितों की बदहाली की जिम्मेवारी विस्थापित तत्कालीन प्रधानमंत्री, एच0ई0सी0 प्रबंधन, तत्कालीन बिहार सरकार पर थोपते हैं। कभी भी रैयतों को विश्वास में लेकर कार्य नहीं किया गया। मूल विस्थापित पर कभी भी ध यान नहीं दिया जाता हैं हम विस्थापितों को अतिक्रमणकारी कहा जाता हैं। राज्य सरकार और एच0 ई0 सी0 प्रबंधन बताये कि अतिक्रमणकारी की परिभाषा क्या हैं। अपनी ही जमीन से बेदखल कर दिये गये लोग अतिक्रमणकारी हैं तो हमारी जमीन पर नजर टिकाये हुए एच0 ई0 सी0 प्रबंध ान एवं राज्य सरकार को क्या कहा जा सकता हैं।

हाईकोर्ट को राज्यसरकार और एच0ई0सी0 प्रबंधन गुमराह कर रही हैं। विस्थापित परिवार के लिए विस्थापन अभिशाप की तरह हैं। हम विस्थापित लोग अपनी लड़ाई लड़ रहे हैं, पर न्याय नहीं मिल रहा हैं। जिसके लिए हाईकोर्ट और राज्यसरकार दोषी हैं।

पंकज शाहदेव का कहना हैं कि हमारी दशा से सभी राज्यवासियों को सीखना होगा कि अगर कभी तुम भी विस्थापित हुए तो हमारी तरह ही दशा होगी। झारखण्ड सरकार को कभी भी अपनी जमीन नहीं देना।

1. एच0ई0सी0 की स्थापना 1962 ई0 में हुई
2. स्थापना के लिए भूमि अधिग्रहण का कार्य 1958 में प्रारम्भ हुआ। जो 1961 को समाप्त हुआ।
3. कुल 7000 भूमि अधिग्रहित की गई।
4. आदिवासी, सदानों और रैयतों की सभी जमीन कृषि योग्य थी।
5. 10,000 लोग विस्थापित हुए।
6. 12 गॉव पूर्ण विस्थापित एवं 20 गॉव में आंशिक विस्थापन था।
7. पुनर्वास की योजना का लाभ नहीं मिला, शायद ही किसी विस्थापित जानते होगे कि एच0ई0सी0 उनके लिए पुनर्वास नीति भी बनाया हैं। कुछ लोगों को प्रति 10 डिसीमल जमीन 500रूपया जमा लेकर दिया गया कहा जाय तो विस्थापित लोग जमीन अपने रूपये से खरीद कर रह रहे हैं।
8. विस्थापितों को नया सराय, नया लटमा, नया धुर्वा, नया भुसुर आदि जगहों में बसाया गया।
9. लगभग 2000 एकड़ में एच0 ई0 सी0 के तीनों प्लांटों को बनाया गया।

10. Surplus land पर खेती होती हैं। यह जमीन रैयतों के कब्जे में हैं, यहाँ अभी भी गाँव बसे हुए हैं।
11. कुछ परिवार के लोगों को नौकरी चतुर्थ श्रेणी में दी गई। विस्थापित परिवारों में से कुछ युवक आई0टी0आई0, बी0ए0 पास कर मेरिट में थे परन्तु उन्हें भी विस्थापित कोटा से नौकरी दी गई।

एच0 ई0 सी0 की पुनर्वास नीति पूर्णरूप से गलत थी क्योंकि यहाँ जो सैकड़ों एकड़ के मलिक थे उनको दस डिसमिल दिया गया और जो 1 एकड़ के मालिक थे उन्हें भी 10 डिसीमल मिला। जो क्लर्क बन सकता था उन्हें भी चतुर्थ श्रेणी की नौकरी मिली। नौकरी देने में भी अनियमितता बरती गई। जहाँ चार भाई हैं, वहाँ एक को नौकरी मिली बाकी भाई बेरोजगार एवं बेघर हो गए। घाटा दिखाकर जमीन को सम्पति बताया गया और उसे बेचकर आर्थिक लाभ उठाया गया। एच0 ई0 सी0 प्रबंधन स्थापना काल से ही घाटा दिखा रहा हैं। 1990 में लाभ दिखाया गया हैं।

सामुदायिक विकास के नाम पर कुछ कार्य पूरा नहीं हुआ हैं सभी बातों को एच0 ई0 सी0 प्रबंधन कागज तौर पर ही रखी हैं, जमीनी स्तर पर कुछ भी नहीं किया गया। एच0 ई0 सी0 झूठा विस्थापित परिवार दिखाकर बाजार, तालाब इत्यादि का टेंडर गुप्त तरीके से पास कर रही हैं। विभिन्न संस्थानों को जमीन बेचकर लाभ की स्थिति में हैं परन्तु विस्थापितों को रोजगार नहीं मिल रहा हैं। पढ़े–लिखे विस्थापित दर–दर की ठोकर खा रहे हैं।

भूमि अधिग्रहण कानून 2013 में आया हैं, जिसमें जमीन पर रैयतों का 5 वर्ष तक कब्जा रहे या विस्थापित 5 वर्ष या उसे अधिक वहाँ रह रहे हो या खेती करते हो उन्हें जमीन वापस की जायगी। जबकि अधिग्रहण 5 वर्ष पूर्व किया गया है।

राज्य सरकार विधानसभा की आड़ में लोगों को उजाड़ने का कार्य कर रही हैं सिर्फ विधान सभा की बात नहीं परन्तु पूरा शहर बसाया जायेगा। जिसमें विभिन्न औधोगिक घराने के ऑफिस, मॉल, पांचसितारा होटल और भी बड़ी–बड़ी इमारतें होगी।

जन कल्याण समिति

एच0ई0सी0 विस्थापितों के लिए कल्याण हेतु जन कल्याण समिति सन् 1957–58 में बनाई गई। समिति के संस्थापक चिंतामणि शरण नाथ शाहदेव

थे। अध्यक्ष सुशील कुमार बागे, उनके बाद स्वर्गीय एन.ई. होरो बने तथा वर्तमान में अध्यक्ष श्री रत्न तिर्की एवं सचिव श्री मुख्तार अंसारी हैं।

श्री रत्न तिर्की, सदस्य, जनजातीय परामर्शदातृ समिति

जन कल्याण समिति के अध्यक्ष श्री रत्न तिर्की का कहना हैं कि एच0ई0सी0 हमारी जमीन पर बनी हैं। हमें अधिकार हैं कि हमें सही और जायज हक मिले। हमें संवैधानिक अधिकार दिया जाए जो हम विस्थापितों के लिए बनाया गया। विस्थापितों के सहयोग के लिए पूरे राज्य के लोग हैं। सभी लोगों का साथ हैं। अंततः संघर्ष का रास्ता अपनाया गया। पावर का धुर्वीकरण किया गया। चुनौती अंततः बनी हुई हैं। एच0ई0सी0 सी0एस0आर0 से भाग रहा हैं। इसकी कोई सी0एस0आर0 नीति नहीं हैं। जमीन के बदले ना हमें सुविधा मिली, ना ही शिक्षा सामाजिक जिम्मेदारी, पारम्पारिक धरोहर, संस्कृति का भी हनन कर रही हैं सी0एस0आर0 की बात विस्थापित कर रहे हैं। बुनियादी सुविधा कुछ भी नहीं मिला हैं। अभी तक कुछ भी नहीं किया गया हैं। 1984 तक कुछ कार्य किया गया परन्तु उसके बाद से अभी तक कुछ भी नहीं किया गया। एच0ई0सी0 परिसर में स्थिति, शैक्षणिक संस्थाओं में विस्थापितों के बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए। हर स्कुल में 25 प्रतिशत सीट विस्थापितों के लिए सुरक्षित किया जाए। यदि स्कूल प्रबंधन यह व्यवस्था नहीं माने तो उसकी लीज रद्द किया जाए। जितने भी विस्थापित परिवार हैं उन्हें 10 डिसीमल जमीन का पटट्ा दिया जाए। एच0ई0सी0 बड़ा दलाल हो गया हैं गैर कानूनी तरीके से अधिकार चल रहा हैं। टाउनशीप में एक भी विस्थापित नहीं रहते हैं पर उनसे रेंट लिया जाता हैं।

एच0ई0सी0 के रैयतों को नोटिफिकेशन नहीं किया गया। फैक्टरी इलाके सतरंजी, धुर्वा, लटमा एवं सीठियों के जमीन में नियम विरूद्ध अस्थायी क्वार्टरों का निर्माण किया गया हैं। झूठी दलील के सहारे आदिवासियों की जमीन को 90 वर्ष के लिए लीज पर दिया गया हैं। तमाम अस्थायी क्वार्टर ए0,बी0, डी, टी एवं एस.टी. क्वार्टरों का लीज एग्रीमेंट रद्द किया जाए। आवासीय एरिया में लोगों का अवैध कब्जा हैं। लटमा, धुर्वा डैम का अतिक्रमण किया गया। विस्थापितों को हटाकर बाहरी लोगों को बसाया गया हैं। Surplus land की मॉग एच0ई0सी0 प्रबंधन से की जा रही हैं परन्तु प्रबंधन का ध्यान विस्थापितों को मिटाने पर हैं। 1996 में Deed of Conveyance बनाया गया जो गलत

था। Deed of Conveyance अपने लाभ के लिए बनाई गई। पावर का सही इस्तेमाल होना चाहिए था जो नहीं हुआ 1957 से पुनर्वास नीति के तहत आंशिक कार्य हुआ। पूरा कुछ भी नहीं किया गया। कहा जाए तो एच0ई0सी0 की पुनर्वास नीति गलत हैं ईमानदारी से कुछ भी नहीं किया गया। विस्थापित लोग गंदी राजनीति का शिकार हुए। संस्कृति धरोहर को साजिश के तहत मिटा दिया गया।

मुख्तार अंसारी

जन कल्याण समिति के सचिव ने कहा कि दिनांक 31 दिसम्बर 1960 एच0ई0सी0 के इतिहास के साथ विस्थापितों के लिए भी महत्वपूर्ण दिन हैं। एच0ई0सी0 की आधारशिला रखते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरू ने विस्थापितों के सम्पूर्ण पूनर्वास एवं सभी विस्थापितों को निरंतर नौकरी देने एवं आधुनिक सुख–सुविधाएँ उपलब्ध कराने का वादा किया था।

54 वर्षो के बाद भी विस्थापितों को नौकरी नहीं दी गयी हैं। विस्थापित बेरोजगार एवं बेकार हो गये हैं। ग्रामों में सुविधाएँ नहीं हैं। यह सरासर अन्याय हैं। एच0ई0सी0 प्रबंधन विस्थापितों की उपेक्षा कर रही हैं। एच0ई0सी0 हमारी धार्मिक भावना को ठेस पहुँचकर टाउनशीप एवं अन्य बड़े भाग का कब्जा किया हैं। नगर प्रसाशन पुलिस कुछ भी नहीं करती हैं।

एच0ई0सी0 का इलाका अपराधियों का निवास बन गया हैं। धुर्वा गंगोत्री नगर, पटेल नगर, लंका नगर, आर्दश नगर, 32 अवैध कॉलोनी बनी हैं। एक भी विस्थापित परिवार वहाँ निवास नहीं करते हैं। अवैध कारोबार का एच0ई0सी0 संरक्षण बन गया हैं। अवैध बस्तियों को हटाने का नोटिस निकालती हैं पर हटती नहीं हैं।

पुनर्वास के नाम पर रैयतों से धोखा किया गया हैं,जो10 डिसीमल जमीन उन्हें दी गई हैं, उसका भी पटट्ा लोगों को नहीं दिया गया। Surplus land पर अवैध रूप से क्वाटरों, शैक्षिण संस्थाओं एवं प्रतिष्ठानों का निर्माण किया गया हैं। यहाँ भी विस्थापितों को रहने एवं नौकरी की व्यवस्था नहीं हैं।

एच0ई0सी0 प्रबंधन की ओर से कोई भी सामाजिक अध्ययन नहीं किया गया हैं कि विस्थापितों की आज क्या हालत हैं। कौन सी परिस्थिति में वे जीवन गुजार रहे हैं।

विधान सभा सिर्फ एक बहाना हैं Unplaning Town पर Planing Town नहीं हो सकता हैं। विधान सभा की ही बात नहीं पूरा टाउनशीप का निर्माण

करना हैं। झारखण्ड के किसी भी शहर में विधान सभा बन सकती है, पर रॉची में ही बनाने पर क्यों जोर दिया जा रहा हैं? हमारी उपराजधानी दुमका हैं वहॉ भी तो विधान सभा बनाई जा सकती हैं?

महावीर मुण्ड़ा–नया सराय, संतोष महतो, मेघनाथ महतो–मुड़मा

1. एच0ई0सी0 की स्थापना 1962 में हुई। भूमि अधिग्रहण का कार्य 1957 से 1958 से शुरू हुआ।
2. 9000 एकड़ लगभग भूमि ली गई थी।
3. सभी खेती योग्य भूमि थी। 75 प्रतिशत आदिवासियों की और 25 प्रतिशत सदानों की जमीन थी, जिसमें आदिवासियों की जनसंख्या ज्यादा थी।
4. 12 पूर्णविस्थापित गॉव, 32 प्रभावित गॉव– मुड़मा, कुटे, आनी, तिरिल, लटमा, जगन्नाथपुर, सतंरजी, नचियातू, धुर्वा, चैटे, कल्याणपुर, लाबेद, हड़सेर गॉव थे।
5. अधिग्रहित जमीन को तीन भाग किया गया–
   क. कारखाना के लिए धुर्वा, लटमा, सतरंजी, कल्याणपुर।
   ख. टाउनशीप कुटे, मुड़मा, तिरिल, जगन्नाथपुर, भुसुर, चोरिया अधिग्रहित किया गया।
   ग. डैम के लिए भंडारटोली, हड़ेसर, नचियातु, धुर्वा।
   पुनर्वास नीति के तहत टाउनशीप के विस्थापितों को 10 डिसीमल जमीन, सतरंजी, लटमा के विस्थापितों को 20 डिसीमल जमीन और नया सराय, नया टोली में बाकी लोगों को 10 डिसीमल जमीन दिया गया। पीढ़ी दर पीढ़ी सात प्रतिशत नौकरी तृतीय और चतुर्थ श्रेणी में विस्थापितों को दी जायेगी। ऐसा समझौता पूर्वजों से हुआ था, जो हित के लिए था।
10. पुनर्वास की योजना 1962 से शुरू होकर 1963 तक चला।
11. नया सराय, नया लटमा, नया धुर्वा, नया भुसुर, नया मुड़मा आदि जगहों में विस्थापितों को बसाया गया।
12. तीनों प्लॉटों को 3000 एकड़ भूमि में स्थापित किया गया।
13. 2555.79 एकड़ भूमि अतिरिक्त हैं। जिसमें 158 एकड़ भूमि सी0आई0एस0एफ0 को दिया गया। सभी खेती योग्य भूमि हैं जिसमें कुछ गॉव भी बसे हुए हैं। वर्तमान में कुटे, आनि, तिरिल, लाबेद तथा कुछ भाग में मुड़मा बसा हुआ हैं।

14. विस्थापित 4000 परिवार को नौकरी दी गई। किसी परिवार में से एक सदस्य को नौकरी दी गई, तो किसी परिवार से चार सदस्य को नौकरी दी गई।
15. स्थापना काल में 100 प्रतिशत उत्पादन था, धीरे धीरे उत्पादन घटता गया। वर्तमान में 25 प्रतिशत उत्पादन होता हैं घाटा 1980 से प्रारम्भ हुआ और जो धीरे–धीरे बढ़ता गया। घाटा होने का प्रमुख्य कारण एच0ई0सी0 प्रबंधन हैं। ऑफिसरों का एकाधिकार था, बंदरबाट कर दिया गया।

    सामुदायिक विकास के नाम पर नया सराय में Commuity Hall बनाया गया। अभी तक एक चापाकल लगाया गया हैं। बुनियादी सुविध ाा और कुछ भी नहीं मिली हैं।
16. रैयतों से 2000 प्रतिएकड़ भूमि अतिरिक्त अधिग्रहित किया और उसे अच्छा मुनाफा के लिए बेच दिया। एच0ई0सी0 25 प्रतिशत जमीन राज्य सरकार को बेचा। सी0आई0सी0एफ0 का पैसा बकाया था, जिसके बदले में 158 करोड़ में जमीन बेची गई। 111 करोड़ राज्य सरकार से एच0ई0सी0 को बाकी हैं। सभी जमीन पर रैयतों का कब्जा हैं, इनमें कृषि कार्य किया जाता हैं और गॉव बसे हुए हैं।
17. ग्रामीणों को लारा कानून 2013 की जानकारी हैं।
18. 158 लोगों ने सिविल कोर्ट में केस किया। हाईकोर्ट में 200 लोगों ने 2014 में केस किया।

हटिया विस्थापित संयुक्त संघर्ष मोर्चा

हटिया विस्थापित संयुक्त संयुक्त संघर्ष मोर्चा ने 1993 में 32 विस्थापित गॉवों के लिए इस संगठन को खड़ा किया गया। ठेला फोड़वा रैली निकाले जाते थे। उस समय 10,000 लोग जुटे थे।

अभी तक 17–18 साल में एच0ई0सी0 में 2000 लोगों की बहाली कराई गई। अभी भी बहाली होती हैं तो 60 प्रतिशत हमारी प्राथमिकता में विस्थापित होते हैं विस्थापितों की शिक्षा के अनुसार दी गई हैं।

करमा उरॉव (मुड़मा, नया सराय)

1993 में एप्परेंटिस संघ चलाते थे, मुख्तार अंसारी उप सचिव थे। उस समय से विस्थापित समस्याओं का समाधान करने की कोशिश की जाती रही हैं। एच0ई0सी विस्थापित को जब पुनर्वास के तहत नया सराय में बसाया तब

से लेकर कर आज तक मोटेशन नहीं किया गया। 10 डिसीमल जमीन का मालगुजारी नहीं कटता हैं। सरना मसना धार्मिक हड़गडी, अखड़ा, आदि चीजों को नक्शा में चिहि्त नहीं किया गया। रजिस्टर–2 में दखल नहीं किया गया। जिसे ग्रामीणों में सद्भावना नहीं हो पा रही हैं। 50 एकड़ जमीन की बंदरबाट कर दिया गया हैं। जिसमें कुछ आदिवासी एवं कुछ गैर आदिवासी के पास हैं और कुछ को बेच भी दिया गया हैं, जो जमीन एच0ई0सी0 पुनर्वास के तहत अधिग्रहित की गई थी। राज्य सरकार द्वारा विस्थापित नया सराय, आनि के सरना मसना स्थल से रिंग रोड़ गुजरा हैं जिसमें 60 डिसीमल जमीन चला गया हैं। 20–30 डिसीमल जमीन मुस्लिम समुदाय द्वारा अतिक्रमण किया गया हैं। इस संबंध में ग्रामीण अंचल पदाधिकारी से कई बार बात किए। डी0सी0 ने कहा कि मसना की जो जमीन दब गई हैं। उसके बदले जमीन दी जाएगी। ग्रामीणों से सहमति बनी और रिंगरोड़ का विरोध नहीं किया गया। कागजी कारवाई की जा रही हैं। अंचल पदाधिकारी ध्यान नहीं देते हैं। पंचायत भवन पर धार्मिक स्थल पर बना पर बदले में जमीन नहीं दी गई।

कोर कैपिटल नहीं बनने दिया जायेगा। विस्थापितों के साथ सरकार कोई सकारात्मक कार्य नहीं किया हैं। सरकार भूमि पर कुछ भी कर सकती है। पर विस्थापितों की मॉग पूरा करने के बाद। वैकल्पिक सुविधा मुहैया किया जाए। प्रति एकड़ भूमि 1 करोड़ रु. दिया जाए।

सामुदायिक विकास के तहत ही ग्रामीणों को विकास की ओर ले जानी की बात थी। निगम सिर्फ कागज में ही रह गया। बुनियादी सुविधा नहीं दी गई। एच0ई0सी0 के द्वारा जो टेंड़र निकलता था, वो विस्थापितों के नाम पर होता था लेकिन बाहरी लोगों को बेच दिया जाता हैं।

नौकरी हेतु नियुक्ति विभाग अलग से था। विभाग विस्थावितों को कोई सुविधा नहीं दी। मनमानी बहाली की जाती है। ये अभी तक चला। आज नियुक्ति सम्पूर्ण भारत के आधार निकाली जाती हैं। ये नियम विस्थपितों पर लागू नहीं होने चाहिए।

वर्तमान सांसद रामटहल चौधरी के नेतृत्व में जब जे0पी0 पांडेय चेयरमैन थे। उस समय विस्थापितों को 60 प्रतिशत, विधवा आश्रित को 30 प्रतिशत बाहरी लोगों के लिए 10 प्रतिशत सीटें होगी। नियम तोड़कर बाहरी लोगों का प्रतिशत ज्यादा कर दिया।

एच0ई0सी0 विस्थापितों के लिए ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट बनाया गया।

आई0टी0आई0 पास और शिक्षित विस्थापित लड़कों को ट्रेनिंग देकर नौकरी पर रखने की बात थी। उस समय कुछ बहुत हल्ला भी हुआ, लेकिन अभी तक षड़यंत्र के तहत उस संस्थान में आई0टी0आई0 इंस्टीट्यूट चल रहा हैं और उससे एच0ई0सी0 प्रबंधन को काफी मुनाफा हो रहा हैं।

विस्थापित लड़के–लड़कियॉ भी शिक्षा में पीछे नहीं है। उन्हें दरकिनार कर दिया गया हैं। करमा उरॉव जी ने कहा कि मूल विस्थापितों को अतिक्रमणकारी कहा जा रहा हैं। आनि और मौसीबाड़ी में 300 एकड़ भूमि में अवैध कब्जा हैं। उन्हें न हटाकर मूल विस्थापितों को हटाने की बात होती हैं।

सोमनाथ तिर्की एवं विल्सन मुण्डा

एच0 ई0 सी0 द्वारा अधिग्रहित गॉव आनि की जमीन खेती योग्य था और अभी भी खेती के कार्य किए जाते हैं। आनि आदिवासी बहुल वा.ला गॉव था।

40 प्रतिशत आबादी पूर्णविस्थापित हुए तथा 60 प्रतिशत रैयतों का कब्जा अभी भी हैं। आनि पूर्णविस्थापित गॉव हैं। एच0ई0सी0 का पुनर्वास की कोई योजना नहीं थी। नया सराय में 10 डिसीमल जमीन दी गई, उसके बदले भी पैसा लिया गया। विस्थापितों को नया सराय और मुड़मा में पुनर्वासित किया गया। लगभग 2500 एकड़ अतिरिक्त जमीन पर खेती होती हैं, अभी भी गॉव बसे हैं।

कुछ परिवार ऐसे हैं जिसमें 1 सदस्य को नौकरी मिली बाकी परिवार को नौकरी नहीं मिली। पीढ़ी–दर–पीढ़ी नौकरी की बात थी, जो नहीं दिया गया। अनुकंपा में नौकरी का प्रावधान एच0ई0सी0 में था, पर सोमनाथ तिर्की को ये सुविधा नहीं मिली। पिता की मृत्यु के बाद परिवार की आर्थिक स्थिति दयनीय हो गई। परिवार के नाबालिग सदस्यों की शिक्षा, स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ा। गरीबी का दंश झेलकर सोमनाथ तिर्की 10+2 तक की शिक्षा पूरी की, परन्तु अभी तक एच0ई0सी0 प्रबंधन ने सोमनाथ तिर्की को नौकरी उपलब्ध नहीं कराई हैं। सम्पूर्ण परिवार खेती पर आश्रित हैं। सोमनाथ तिर्की ने कहा कि जमीन चली जाएगी तो परिवार में खाने के लाले पड़ जायेगें। आनि के विस्थापित परिवारों का कहना हैं कि सरकार ही कानून बनती हैं और सरकार ही कानून तोड़ती हैं। सही कानून चले तो हम विस्थापित जायज मॉग कर रहे हैं।

एच0ई0सी0 ने अधिग्रहित जमीन पर विभिन्न शैक्षिणक संस्थानों एवं प्रतिष्ठानों को लीज पर दी या फिर पूर्णरूप से बेच दिया हैं। बेची गई संस्थानों पर विस्थापितों को नौकरी भी नही हीं दी, जबकि जमीन विस्थापितों से ही ली गई हैं।

अभी 2014 फरवरी में हाईकोर्ट में केस फाइल किया गया हैं।

कभी एच0ई0सी0 ने दबाव नहीं दिया कि जमीन छोड़ दिया जाए। जीवनयापन इसी जमीन पर चलता हैं। 2011–2012 से जमीन छोड़ने की बात हो रही हैं। रैयतों को अतिक्रमणकारी कहा जा रहा हैं। 65 साल से रसीद नहीं कटा जा रहा हैं। कोई मालगुजारी की व्यवस्था सरकार की तरफ से नहीं हैं। विस्थापितों की मॉग थी कि रसीद काटा जाए। कोर कैपटिल बनने से कोई समस्या नहीं हैं। विकास के हम विस्थापित विरोधी नहीं हैं पर रैयतों की जमीन नहीं ली जाए।

एच0ई0सी0 प्रबंधन अपने फायदे के लिए साजिश कर हमें अपनी जमीन से हटा रही हैं।

चंपा उरॉव, बासुदेव महली, शिवाचरण मुण्डा, बुधवा मुण्डा (लटमा)

एच0ई0सी0 की स्थापना 1962 में हुआ। 1956 से 1958 तक भूमि अधिग्रहण का काम प्रारम्भ हुआ। 32 गॉव विस्थापित हुए। जिसमें 12 गॉव पूर्णविस्थापित गॉव हैं। लटमा पूर्णविस्थापित गॉव हैं। भूमि अधिग्रहण के समय जमीन में खेती होती थी। अधिकांश भूमि धानवाले खेत थे। पूर्णवास के नाम पर 10 से 20 डिसीमल जमीन दी गई। लटमा में 20 डिसीमल जमीन दी गई। पुनर्वास की योजना 1956 से 1966 तक चला। लटमा गॉव को नया लटमा में पुनर्वासित किया गया।

लटमा की अतिरिक्त जमीन पर खेती होती हैं। अभी कुछ ही लोग खेती कर रहे हैं। एच0ई0सी0 प्रबंधन ने कहा कि कुछ निर्माण नहीं होता हैं तो खेती कर सकते हैं। चार भाई में से चारों को नौकरी दी गई थी। जो विस्थापित तब नौकरी नहीं किए, उनके नाम पर दूसरे नौकरी कर रहे हैं।

एच0ई0सी0 को प्रारम्भ से ही घाटा होता आ रहा हैं। 1992 में 21 दिन का हड़ताल फिर 72 दिनों का हड़ताल हुआ। जिसमें वर्कस को 21 दिन और 72 दिनों का वेतन नहीं मिला। एच0ई0सी0 द्वारा सामुदायिक विकास के लिए कुछ कार्य नहीं किया गया बुनियादी सुविधा का अभाव रहा।

पुनर्वास के तहत दी गई जमीन का कुछ लोगों को रसीद दिया गया पर अधिकांश रैयतों के पास जमीन का कागज नहीं हैं। जहाँ–तहाँ बसा दिया गया हैं आज भी लटमा से सटे गॉव हेतू चंदाकासी, छोटा घाघरा की जमीन पर अंतर्राष्ट्रीय हवाई अडड्ा बन रहा हैं। आदिवासी जमीन का अधिग्रहण किया जा

रहा हैं, जिसके बदले पुनर्वास की योजना नहीं हैं।

एच0ई0सी0 32 गॉवों को विस्थापित किए हैं उसका रसीद रैयतों को नहीं दिया गया। जो गॉव के पुराने रैयती हैं उसके रिकोर्ड रूम में नाम नहीं हैं।

लटमा के विस्थापितों का कहना हैं कि जितने विस्थापित हैं मालगुजारी दे रहे हैं, पैसा देने के बाद भी क्यों मयूटेशन नहीं किया गया हैं। विस्थापित परिवारों की स्थिति दयनीय हैं। शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सभी प्रकार की बुनियादी सुविधा का अभाव हैं। लोग नदी से पानी लाकर पीते हैं। एच0ई0सी0 प्रबंधन ने कोई सुविधा मुहैया नहीं कराया हैं विस्थापितों को लारा कानून की जानकारी नहीं हैं। अतिरिक्त जमीन वापसी का केस कभी भी नहीं किया गया हैं।

लाल नीलाम्बर नाथ शाहदेव (लटमा)

विस्थापन के बाद यहॉ का दुंदशा हो गया। लोग भूमिहीन हो गये। राज्य और देश का विकास होगा के नाम जमीन लोगों ने दे दी। कहा गया कि आपको और आपके वंश को नौकरी दी जाएगी। कुछ भी नहीं हुआ सिर्फ परिवार से एक को नौकरी दी गई। सीधे–साधे लोगों को विस्थापित कर दिया गया।

विस्थापन के समय लोगों को उजाड़ दिया गया।घर परिवार बिखर गया। विस्थापित लोग अपने से कुम्बा बनाकर रहे। विस्थापन से पहले रहने की व्यवस्था नहीं की गई। केंद्र सरकार ने एच0ई0सी0 बनाई पर रैयतों की गाय–बैल की तरह यहॉ से वहॉ कर दिया गया।

एच0ई0सी0 का उत्पादन शुरूआत में अच्छी रही। ऊंचे पदों पर बाहरी लोगों की बहाली क़ी गई। कर्मचारियों की मनमानी से उत्पादन कम हो गया। नातेदारी रिश्तेदारी में एच0ई0सी0 खत्म हो गया। एशिया का सबसे बड़ा कारखाना था, दिन–रात काम हुआ। नींव पर काफी मेहनत किया गया, पर व्यवस्था खराब के कारण एच0ई0सी0 की ये हालत हो गई।

विस्थापितों के नाम पर बाहरी लोगों को नौकरी दी गई। लटमा के कुछ विस्थापित परिवार गढ़वा, चतरा, पलामू की ओर चले गये।

कुछ नेताओं ने एच0ई0सी0 को कमीशन खाने वाला कारखाना बना दिया। बाहरी लोगों की बदले जो भी 2 प्रतिशत विस्थापितों को बहाली होती थी। उनके आने के बाद सब चौपट हो गया। विस्थापन के समय यहॉ की जमीन पर फसल लहलाते थे। फसलों की पैदावार अच्छी थी। पुनर्वास के समय

भू–अर्जन पदाधिकारी की ओर से प्रत्येक लोगों को 20 डिसीमल जमीन दिया गया। पुनर्वास तो कर दिया पर जमीन पर अधिकार नहीं हैं। भवन–निर्माण पर भी रोक लगा दिया गया। मालगुजारी जाता हैं, उसका रसीद लाल नीलाम्बर नाथ शाहदेव के पास हैं और कुछ को रसीद नहीं मिला हैं पर मालगुजारी दी जाती हैं। किस जमीन पर कौन बसा हैं, उसका कागजात नहीं मिला हैं। आज भी लटमा से सटे गॉवों में अंतर्राष्ट्रीय हवाई अडड्ा बनाने के नाम पर लोग विस्थापित हो रहे हैं।

एच0ई0सी0 ने सामुदायिक विकास के नाम पर कुछ भी नहीं किया। आज भी गॉवों में बुनियादी सुविधा का अभाव हैं। जानवरों सा व्यवहार एच0ई0सी0 ने हम विस्थापितों के साथ किया। आज हमारी जमीन दूसरों को बेच दी जा रही हैं। कॉलोनियॉ बसाई जा रही हैं। बाहर से आये लोगों के पास अच्छा मकान हैं पर हम विस्थापित उसी उजड़ घर में रहने के लिए विवश हैं।

रितेश टोप्पो, करम सिंह टोप्पो, पेरो टोप्पो, मंगरा टोप्पो, सुकरा टोप्पो (भुसुर)

एच0ई0सी0 की स्थापना 1962 में हुई। भूमि अधिग्रहण का काम 1956 से 1959 तक हुआ। जिस समय भूमि अधिग्रहित की गई तब सभी जमीन में खेती होती और अच्छी फसल होती थी। भुसूर के रैयतों की 13 डिसीमल में 3069 का पमेंट हुआ और 8 एकड़ 18000 हजार। लगभग 193 परिवार विस्थापित हुए। पुनर्वास के नाम 20 डिसीमल जमीन तथा परिवार के एक सदस्य को नौकरी दी गई। पुराना भुसूर को नया भुसुर में बसाया गया। जो अब रिंगरोड़ के समीप हैं। कभी यहॉ आदमी भी नहीं आते थे। विस्थापितों का कहना हैं कि जंगलझाड़ हुआ करता था। बहुत मेहनत के बाद जमीन रहने लायक बने हैं। जो 20 डिसमिल मिला उसका 111 रू0 लिया गया और उसका पट्टा नहीं मिला हैं। कुछ एक परिवार की मालगुजारी रसीद क़टती हैं, पर उन्हें भी पट्टा नहीं मिला हैं। ग्रामीणों को सभी कामों में दिक्कत का सामना करना पड़ता हैं। पट्टा न होने की वजह से ब्लॉक स्तर पर भी सुविधा नहीं मिलता हैं।

सामुदायिक विकास के लिए कुछ नहीं किया गया हैं ग्रामीण अपनी सुविधा खुद किए हैं, अभी राज्य सरकार की ओर से रिंग रोड़ बनाया गया हैं पर गॉवों में कच्ची सड़क ही हैं।

प्रारम्भ में एच0ई0सी0 काफी अच्छा चलता था। 22000 वर्कस काम करते थे पर प्रबंधन में बाहरी लोगों को तहजीर देने के कारण घाटा होने लगा। एच0ई0सी0 के अफसर की मिली भगत के कारण मशीनों की चोरी करके कहीं और बिक्री की जाती थी।

पुराना भुसुर में कुछ जमीनों पर खेती होती थी पर एच0ई0सी0 प्रबधन ने साइटलाइट कॉलोनी की जमीन बेच दी। अधिग्रहित भूमि का एक बड़े भू–भाग में खेती होती थी। अभी पुराना भुसुर के पुलिस कैंप के पास खेती होती हैं पर एच0ई0सी0 प्रबंधन धीरे–धीरे विभिन्न संस्थानों और प्रतिष्ठानों को बेचती जा रही हैं।

निफ्ट की स्थापना कर विस्थापित बच्चों की पढ़ाया जाएगा बोलकर की गई थी पर एक भी विस्थापित बच्चे नहीं पढ़ते हैं। विस्थापित ग्रामीणों की तरफ से जमीन वापसी केस नहीं हुआ और न ही इन्हें लारा एक्ट 2013 की जानकारी हैं।

राजेश टोप्पो (ग्राम प्रधान भुसुर)

द्वितीय पंचवर्षीय योजना के तहत जवाहरलाल नेहरू ने एच0ई0सी0 बनाई थी। 1956–1957 से भूमि अधिग्रहण का कार्य शुरू हुआ। 1962 में कारखाना बनकर तैयार था। पुनर्वास के तहत 1962–1963 में नया भुसुर में लोगों को पुर्नवासित किया गया। 10 डिसीमल जमीन और परिवार के एक सदस्य को नौकरी दी गई।

एच. ई. सी. हटिया विस्थापित परिवार समिति के मनोज, उरांव, लक्ष्मी देवी, लक्ष्मी मिर्धा, मघेया उरांव, बालमिकी, छोटू उरांव वैधनाथ मुण्डा, पवन मुण्डा ने भी वक्तव्य दर्ज कराया। महिलाओं ने भी खासकर मोनिका मुण्डा शकूरवार, जसिंता गाड़ी, रीता तिर्की, अनिता तिर्की, रीना कुजूर, निर्मला कुजूर, लीला कुजूर, लीलावती देवी, लीलमुनी देवी ने भी वक्तव्य दिए।

एच.ई.सी. हटिया विस्थापित परिवार समिति

नया सराय, कुटे, तिरिल आश्रम, धुर्वा–834004, रांची, झाड़खंड

पत्रांक – रा./झाड़/कुटे/2015–013 दिनांक 25 जून/2015

सेवा में,
माननीय अध्यक्ष
संयुक्त संसदीय समिति, भूमि संशोधन अध्यादेश 2015
संसद एनेक्सी, तीसरा तल, नई दिल्ली

विषय : 2013 भूमि अधिग्रहण पुनर्वास व पुनर्स्थापन कानून के धारा 24 उपध ारा 2 और अध्यादेश 2015 के तहत 1960 में अधिग्रहित भूमि का नए सिरे से अधिग्रहण करने के संबंध में झाड़खंड सरकार को आवश्यक दिशानिर्देश देने के लिए अनुरोध

परम आदरणीय अध्यक्ष जी,
जोहार

तत्कालीन दक्षिणी बिहार तथा वर्त्तमान में झाड़खंड राज्य की राजधानी रांची स्थित हटिया में भारी अभियंत्रण निगम की स्थापना के लिए लगभग 9200 एकड़ भूमि सन् 1955–61 के दौरान अधिग्रहित की गई थी। यह पूरा क्षेत्र आदिवासी बहुल था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में औद्योगिकीकरण और राष्ट्र के विकास के लिए आदिवासियों को मुख्यधारा में लाने के महत्ती उद्‌देश्य से राँची के पिछड़े इलाके में एच0ई0सी0 की नींव पड़ी। भारत के संविधान के पाँचवीं अनुसूची का क्षेत्र होने के साथ साथ CNT Act 1908 प्रभावी होने के कारण एच0ई0सी0 की स्थापना में भू–अर्जन बेहद जटिल

था। तत्कालीन बिहार सरकार ने 1894 के LAA एवं BLRA 1950 के तहत जरूरत से तीन गुणा अधिक भू–भाग को अधिग्रहित किया। **भूमि अधिग्रहण** 1955 **में और** Deed of Conveyance 1996 में। ऐसा बिहार सरकार और H.E.C. ने किया। इसका निष्पादन कैसे हुआ। इसकी वैधानिकता का सार क्या था। विनम् अनुरोध है कि इसे भारत सरकार संज्ञान में ले और सी. बी. आई जांच की जाए।

तत्कालीन भारत सरकार एवं बिहार सरकार ने विस्थापितों / प्रभावितों को विकास के लंबे–चौड़े सपने, बेहतर पुनर्वास पुनर्स्थापन, रोजगार, नगरीय सुविधा, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं अन्य बुनियादी सुविधायें देने का वादा किया था। यहाँ भोले–भाले आदिवासियों और मूलवासियों ने राष्ट्र के विकास के नाम पर अपनी अपनी **जमीन दो हजार रू. प्रति एकड़ की दर** से दे दी। CNT Act 1908 और पॉचवी अनुसूची के बावजूद 1894 के LAA कानून लागू किया गया।

भू–अर्जन में Specific public purpose यानी कि Heavy Engineering Corporation दिखाकर जरूरत से तीन गुणा ज्यादा भूमि का अधिग्रहण कर लिया गया। surplus land को कानूनन रैयतों को वापस किया जाना चाहिए। लेकिन ऐसा नहीं किया जा रहा है। विस्थापित 60 के दशक् से लगातार संघर्ष कर रहे है। विस्थापितों रैयतों को भूमि वापसी का नोटीस भी मिला था। लेकिन भूमि वापसी नहीं की गई।

लगभग 4 हजार एकड़ भूमि surplus हो गई। surplus भूमि को एच. ई. सी. के अधिकारियों ने दूसरे संस्थानों को Sub-lease कर बड़े पैमाने पर हेराफेरी कर करोड़ो रू. का बंदरबांट किया। ऐसा कर अधिकारियों ने भू–अर्जन कानून के धारा–48 का भी उल्लंघन किया। एच. ई. सी. प्रबंधन को Sub-lease surplus land Sub – lease देने पर जिला प्रशासन ने भी कई बार आपत्ति जताते हुए कार्यवाही हेतु सरकार को पत्र प्रेषित किया था। ऐसा कर एच. ई. सी. प्रबंधन ने lease के तहत बहुत बड़ी **बाहरी आबादी** को बसाने का काम किया। इससे Scheduled Area के प्रावधानों की धज्जियां उड़ गई और 32 ग्रामों के अस्तित्व को मिटा दिया गया। यह क्रम एच0ई0सी0 प्रबंधन ने 1967 से ही प्रारंभ कर दिया था। जो आज तक जारी है। अनेक सरकारी आदेशों को धत्ता बताकर भूमि की बंदरबांट की गई।

झाड़खंड राज्य बनने के बाद समय समय पर सरकार ने एच. ई. सी. प्रबंधन को भूमि की बंदरबांट करने को मना किया और 2010 में सरकार ने एच. ई. सी. से भूमि अपने अधीन लेने संबंधी बातचीत की शुरूआत की। लेकिन कानूनन/विधिवत् एच. ई. सी. द्वारा झाड़खंड सरकार को भूमि का हस्तान्तरण नहीं किया जा सका। surplus land पर आदिवासियों और मूलवासियों का कब्जा एच. ई. सी. के अधिग्रहण के बावजूद बना रहा है। इस surplus land पर कभी भी एच. ई. सी. प्रबंधन और न ही किसी भी पूर्व की सरकार ने दखल कब्जा possession लेने का काम नहीं किया।

RTFCTLAARA 2013 तथा 31 मई 2015 अध्यादेश का उल्लंघन

13 मार्च 2015 को एच. ई. सी. के द्वारा सरकार के भूमि राजस्व विभाग के प्रधान सचिव के हस्ताक्षर से भूमि का हस्तान्तरण किया गया और अफरी तफरी में 12 जून 2015 को झाड़खंड के नई विधान सभा के लिए संगीनो के साए में शिलान्यास किया गया। यह RTFCTLAARA 2013 तथा 31 मई 2015 अध्यादेश का उल्लंघन है।

9 जून को स्थानीय अखबारों में खबर आई कि 12 जून को विधान सभा का शिलान्यास उसी विवादित स्थान पर होगा जिसका अधिग्रहण स्वतः रद्द हो गया है। काफी अथक प्रयास के बाद माननीय मुख्यमंत्री रघुवर दास से वार्त्ता के लिए समय का अनुरोध किया गया। 11 जून को शाम 8 बजे मुख्यमंत्री ने अपने आवास पर विस्थापितों व प्रभावितों के परिवारों को वार्त्ता के लिए बुलाया। मुख्यमंत्री ने साफ तौर पर कह दिया कि किसी कानून का पालन नहीं होगा। सरकार का फैसला है कि विधान सभा वहीं बनेगा। मुख्यमंत्री नए सिरे से अधिग्रहण करने को तैयार नहीं हैं। यह 2013 नए कानून का घोर उल्लंघन हैं। उन्होंने कहा कि अध्यादेश और 2013 कानून को अफसरों से पढ़वा लिया जाएगा। मुख्यमंत्री ने कहा कि 39 एकड़ भूमि पर विधान सभा बनेगा। भारी पुलिस बंदोबस्त कर रघुवर सरकार ने नई विधान सभा का 12 जून 2015 को शिलान्यास कर निर्माण कार्य प्रारंभ कर दिया है।

सरकारी रिकॉर्ड के अनुसार 2555.79 एकड़ भूमि एवं विस्थापित ग्रामों क्रमशः कुटे, तिरिल, लाबेद, आनी, मुड़मा, जगरनाथपुर आदि को अपने पूर्ववत स्थान पर मौजूदगी बताते हुए उक्त भूमि को विस्थापितों का जीविका का आधार बताया गया है।

विदित हो कि उक्त भू–भाग को कब्जा करने की नीयत से वर्ष 2004 में राज्य के कुछ अधिकारियों एवं प्रबंधन ने मिलकर Revival Package बनाया और माननीय उच्च न्यायालय से Monitoring कराया। इस क्रम में राज्य सरकार एवं प्रबंधन ने उच्च न्यायालय को गुमराह करते हुए पुनरूद्धार योजना पर मंजूरी ले ली और विस्थापितों की खेती योग्य भूमि का बंदरबांट करना प्रारंभ किया। कौड़ी की कीमत मुआवजा देकर करोड़ों रूपये प्रति एकड़ का Real Estate का कारोबार H.E.C. ने प्रारंभ किया। राज्य सरकार संवैधानिक जिम्मेदारी नहीं निभाकर इसमें मौन स्वीकृति देती चली गई। नतीजा आज सामने है कि एक बहुत बड़ा भू–भाग से यहाँ के आदिवासी मुलवासी का अधिकार छिन गया। यह जाँच का विषय है।

1894 के LAA तथा 2013 के LAARA कानून के तहत विस्थापित रैयतों को surplus भूमि वापस मिल जाना चाहिए था। लेकिन ऐसा नहीं कर उक्त भूमि में कोर कैपिटल बनाने हेतु Master Plan Site-1 बनाकर विस्थापितों के अस्तित्व को समूल मिटाने का षडयंत्र रचा दिया गया। आदिवासी मूलवासी भूमि देने को तैयार हैं. लेकिन सरकार नए सिरे से अधिग्रहण करने को तैयार नहीं है।

भारत सरकार ने 120 वर्ष पुरानी भू–अर्जन कानून 1894 को समाप्त कर नये कानून The Right to Fair Compensation and Transparency in Land Acquistion, Rehabilitation and Resettlement Act, 2013 **लागू किया है। अतएव भारत सरकार से अनुरोध है कि–झाड़खंड सरकार को 2013 कानून के तहत जरूरी संवैधानिक दिशानिर्देश दिए जाएं ताकि आदिवासियों मूलवासियों को न्याय मिल सके।**

1. एच0ई0सी0 विस्थापित ग्रामों क्रमशः कुटे, तिरिल, लाबेद, मुड़मा, आनी एवं जगन्नाथपुर जो अधिग्रहण के पूर्व से अपने पारम्पारिक बसाहट में कायम है, को राजस्व ग्राम का दर्जा दिया जाए।
2. वैकल्पिक जीवन स्रोत के लिए कुल रैयतवार अधिग्रहित भूमि का 25 फीसदी भूमि रैयतों/वारिशों को वापस किया जाय। चूँकि अधिग्रहण

के पूर्व काल से ही अतिरिक्त अधिग्रहित भूमि जो शुद्ध रूप से कृषि भूमि है। कुल रकबा– 2555.79 एकड़ में विस्थापित रैयत किसान कृषि कार्य कर अपनी आजीवीका चलाते आ रहे है।

3. हटिया विस्थापित ग्रामों को नये भू–अर्जन कानून 2013 में शामिल किया जाय. 2013 कानून के धारा 24 के उपधारा 2 के तहत यह प्रावधान है कि यदि 1894 कानून के धारा 11 के तहत जिस भूमि का अधिग्रहण किया उस भूमि का मुआवजा भुगतान नहीं किया गया हो या इस कानून के आने के पाँच साल या अधिक समय तक possession नहीं लिया गया हो। वैसे परिस्थिति में अधिग्रहण स्वतः रद्द माना जाएगा. भूमि रैयतों को स्वतः वापस हो जाएगा. (Shall be deemed to have lapsed)

यहां उल्लिखित सर्वोच्च न्यायालय के आदेश हैं जो इस संदर्भ में दिए गए हैं।

1. 2013 के RTFCTLAARA के आलोक में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई आदेश भी दिया है। Karnail Kaur & others Vrs. Civil appeal no. 7424 of 2013 State of Punjab 22 jan 2015 etc.
2. Sree Balaji Nagar Residential Association C. A NO. 8700 OF 2013,8701,8702,8703, 8704 OF 2013vrs.State of Tamilnadu
3. Bharat Kumar Versus State of Haryana & other के आलोक में निर्णय लिया जाए. Bharat Kumar civil appeal no. 1971 of 2014 vrs State of Haryana.

धन्यवाद

सभी ग्राम वासी

एच. ई. सी. हटिया विस्थापित परिवार समिति

नया सराय, कुटे, तिरिल आश्रम, धुर्वा–834004

पत्रांक .... दिनांक ....

आमत्रंण पत्र

सेवा में

विषयः– एच.इ.सी. क्षेत्र में नयी राजधानी बनाने के विरोध में बैठक 32 गांवों के लोग एकजुट हो

जोहार साथियों!

जैसा की आपको मालूम हैं कि नई सरकार एच. ई. सी. एरिया में नई राजधानी बनाने जा रही है। इससे लगभग 3 से 4 हजार एकड़ भूमि ली जाएगी। पूर्व में एच. ई. सी. ने हमारी जमीन को टुकड़े–टुकड़े में बेच कर और लीज पर देकर करोड़ो रू. का बंदरबांट किया है। लेकिन हम आदिवासी मूलवासी राष्ट्र की बलि बेदी पर कुर्बान होकर भी भिखमंगे और मजदूर बनकर दाने दाने को मोहताज हैं। हमारे बच्चों को न तो शिक्षा है और न ही स्वास्थ्य की सुविधा ही है। हम रोज कमाने और खाने के लिए जद्दोजहद करते हैं। वहीं एच. ई. सी. और अन्य संस्थान के अधिकारी कर्मचारी मौज व ऐश का जीवन जी रहे हैं। उनके बच्चे इंजीनियर डाक्टर बन रहे हैं वहीं हमारे बच्चे साधारण शिक्षा भी हासिल नहीं कर पा रहे हैं। हमारी बेटियां दूसरों के घरों में दाई काम करने को मजबूर हैं। हमारी बेटियां दिल्ली के घरों में आया का काम करने को मजबूर हैं।

1960–61 में एच. ई. सी. की स्थापना के नाम पर हमारे पुरखों ने जमीन दिया। धान से हरी भरी एक नम्बर खेतों को देकर हमलोगों ने एच. ई. सी. को बसाया। आदिवासियों मूलवासियों के 35 गांव उजाड़े गए। जिसका दंश आज तक हम तीसरी पीढ़ी के लोग झेल रहे हैं। अधिग्रहित गांवों जो आज भी अपनी परम्परागत बसाहट में कायम है को विस्थापित करने की तैयारी की जा रही है। जो एक बार उजड़ा तो फिर कभी बस नहीं सका। मुआवजा और नौकरी बाहर के लोगों को ही नसीब हुआ। हम तीसरी पीढ़ी के लोग आज भी बेरोजगार और अच्छे दिन के लिए तरस रहे हैं। हमारी परम्परा और संस्कृति सब खतम कर दिया गया। सरना मसना हड़गड़ी के लिए कोई स्थान नहीं मिला। हमारी भाषा, जीवन शैली और पारिवारिक ढांचा, ग्रामीण परिवेश सब कुछ खतम हो गया और हम रैयत से मजदूर हो गए।

हमें अब आखिरी बार एक बड़ी लड़ाई की तैयारी करना है। नई राजधानी बनने से हम सब लोग दर दर की ठोकरें खाने को मजबूर हो जाएंगे। हमारा अस्तित्व ही मिट जाएगा।

एक बार फिर से उठ खड़े होकर हम अपनी आवाज बुलंद करें और अपने पुरखौती हक को हासिल करें. अपनी एकता प्रदर्शित करते हुए बैठकों में शामिल हो।

भवदीय
एचईसी हटिया विस्थापित परिवार समिति

राज्य की नदियों और रिजर्वायर की स्थिति

तालिका नं. 1.32

नदी/डैम	डेंजर लेबल एफ.आर.एल.		वर्तमान लेबल (मीटर में)
गंगा (साहेबगंज)		27.25	26.88
स्वर्णरेखा मानगो		121.50	121.56
खरकई आदित्यपुर		129	130.75
चांडिल डैम		181	181.50
गालुडीह बराज		93	91.50
तेनुघाट डैम (बोकारो)		259	260.12
अजय रिवर (जामताड़ा)		146.50	138.05
परास रिजर्वायर (गुमला)		674.39	672.25
नंदिनी रिर्जवायर (लोहरदगा)		674.40	674.78
	जिला रांची		
बुचापा रिजर्वायर		667.29	667.96
गेतलसुद रिजर्वायर		590.24	589.42
सुरंगी रिजर्वायर		626.91	623.25
	जिला खूंटी		
लतरातु रिजर्वायर		626.91	623.25
	जिला गुमला		
मसरिया		624.39	622.93
जयपुर रिजर्वायर		742.99	742.99
धनसिंहटोली रिजर्वायर		535.98	536.00
कटारी		647.26	647.25
अपर शंख		767.50	767.50
तपकारा रिजर्वायर		580.64	581.09
	जिला रामगढ़		
लार्वा रिजर्वायर		587.20	586.19
भैरवी		356.70	354.30

	जिला सिमडेगा		
चिंडा रिजर्वायर		409.39	409.50
कंसजोर		428.35	425.50
रामरेखा		463.29	363.32
	जिला-पं. सिंहभूम		
टोरलो		308.54	308.74
जनसाई		250.31	250.95
सोनुवा		343.90	343.90
नकटी जलाशय		317.70	313.30
	जिला पाकुड़		
सरयूडीह		80.79	79.95
	जिला गोड्डा		
सुंदर रिजर्वायर		110.92	107.70
	जिला दुमका		
बरंडी		128.05	127.71
दिगाल पहाड़ी		130.18	129.39
कैराबानी		137.11	134.57
मसानजोर डैम		119.340	118.19
	जिला-हजारीबाग		
गोंडा		619.82	618.60
घाघरा		522.26	520.73
जमुनिया		445.73	445.43
बौधा		561.89	561.28
लोटिया		487.81	487.04
	जिला चतरा		
हिरू		458.54	457.62
ढुलकी		189.94	189.33
बक्सा		413.26	407.75
अंजनवा		412.12	412.12
बरही रिजर्वायर		400.15	399.70
पंचखेरो		350.75	350.75

	जिला गढ़वा		
अनराज		252.44	252.44
धनकाई		225.30	224.78
चिरका		415.63	416.30
दानरो		294.51	294.51
बांकी		278.96	276.90
पंड़रवा		298	294.55
बाभनीखर		256.70	255.20
चैतन्याघाट		192.07	191.60
	जिला पलामू		
मलय		293.44	291.34
बुटानडूबा		257.31	252.82
तेमारान		256.09	253.23
बटारे		2145.33	212.49
बटाने डैम		232.85	226.75

स्त्रोत : आपदा प्रबंधन विभाग जल संसाधन विभाग (साभार प्रभात खबर)

खदानें, खनिज और जीवनयापन

भारत में खनन : मौजूदा परिदृश्य

भारत दुनिया में प्रमुख और व्यवसायिक तौर पर महत्वपूर्ण खनिजों का एक बहुत बड़ा उत्पादक देश है। भारत दुनिया में सबसे ज्यादा अभ्रक का उत्पादन करता है। कोयले के उत्पादन के मामले में इसका तीसरा स्थान है। लौह अयस्क में चौथे, मैग्नीज और बॉक्साइट में छठे तथा कच्चे तेल के क्षेत्र में दुनिया में भारत 11वें नंबर पर है। हालांकि हाल के वर्षों में भारत की जीडीपी में खनन क्षेत्र का योगदान औद्योगिक क्षेत्र के 11.5 फीसदी के मुकाबले 3 फीसदी है जो काफी कम है। खनिजों के मामले में झारखंड जैसे समृद्ध राज्यों में खनन उसकी जीडीपी के 10 फीसदी हिस्से का निर्माण करता है और उड़ीसा में ये थोड़ा कम 10 फीसदी है। देश के समूचे औद्योगिक क्षेत्र के विकास के लिहाज से खनिज संसाधनों की भूमिका निर्विवाद तौर पर महत्वपूर्ण है। उदाहरण के लिए देश में मौजूदा 55 फीसदी ऊर्जा उपभोक्ताओं के जरूरत की बिजली कोयले के जरिये पैदा की जाती है और देश में कोयले के उत्पादन के 75 फीसदी हिस्से का इस्तेमाल बिजली पैदा करने में होता है। 1990 के दशक से देश में शुरू हुई उदारीकरण की प्रक्रिया के बाद खनन के स्तर में लगातार बढ़ोत्तरी हुई है और आने वाले समय में इसके और विस्तारित होने के आसार हैं।

कोयले को अगर एक उदाहरण के तौर पर लिया जाए तो हम पाते हैं कि भारत दुनिया में तीसरा कोयला उत्पादक देश है। सार्वजनिक क्षेत्र की महारत्न कंपनी कोल इंडिया लिमिटेड (सी.आई.एल.) अकेले कोयले के 85 फीसदी का उत्पादन करती है। इसने एक अकेले वित्तीय वर्ष 2015-15 में 494.23 मिलियन टन (एमटी) मात्रा में कोयले का उत्पादन कर रिकार्ड बनाने का काम किया और इसके साथ ही उत्पादन विकास दर को 6.9 फीसदी कर दिया। इसी साल फरवरी में सी.

आई.एल. ने भविष्य के लिए अपनी महत्वाकांक्षी योजना का खुलासा किया जिसमें कोयले के उत्पादन को दुगुना कर उसे 2 बिलियन टन तक करने का लक्ष्य रखा गया। जबकि कोयला मंत्रालय द्वारा कुल घरेलू उत्पादन का लक्ष्य 1.5 बिलियन टन खा गया है। खनिज उत्पादन में विस्तार का मतलब होगा कि खदान आपरेशनों के साथ-साथ जमीन का भी विस्तार। देश में कुल कोयले का 70 फीसदी भंडार उड़ीसा, झारखंड और छत्तीसगढ़ में है। ये वही राज्य हैं जहां हम खनन के काम में तीव्र स्तर पर बढ़ोत्तरी को देंखेगे। उसी हिसाब से जमीनें भी खदानों के काम में लायी जाएंगी। तीनों राज्य उच्च स्तर के लोहे का 80 फीसदी हिस्सा अपनी जमीन के गर्भ में रखते हैं। जबकि ये बाक्साइट के 60 फीसदी और क्रामाइट के करीबन पूरे हिस्से के मालिक हैं। ये राज्य संयोग से भारत के देसी आदिवासियों के भी रिहाइशी स्थल हैं। साथ ही समृद्ध जंगलों और महत्वपूर्ण नदियों से परिपूर्ण हैं। खनन, आदिवासियों की जमीनें, जंगलों और नदियों के बीच आसमानता और खनन के बाद के इन तीनों को होने वाला नुकसान भारत के खनन की एक अलग कहानी है।

अगर सहायता और पुनर्वास की एक बहुत ज्यादा खराब परंपरा, आजीविका के नुकसान और आबादी के विभिन्न हिस्सों के मानवाधिकारों के लगातार हनन को जोड़ा जाए तो हम इस लिहाज से एक बेहतर समझ विकसित कर सकते हैं कि मौजूदा भारत में खनन क्यों एक गहरा विवाद का विषय हुआ है।

खनन से जुड़ी मुख्य समस्याएं और चिंताएं

हालांकि खनन के आर्थिक और विकासगत महत्व को समझा गया है लेकिन इससे प्रभावित होने वाले समुदायों की एक आलोचनात्मक छानबीन बहुत जरूरी है। खनन के लिए बड़े स्तर पर किया जाने वाला जमीन का अधिग्रहण प्रकृति में बहुत अनैच्छिक होता है और इसे देश में बने जमीन अधिग्रहणों के कानूनों तहत संचालित किया जाता है। और फिर इस तरह से यह बड़े पैमाने पर विस्थापन को जन्म देता है। वाल्टर फर्नांडिस ने 2006 में इस बात का अनुमान लगाया था कि स्वतंत्रता के बाद से अब तक 60 मिलियन लोगों का विस्थापन हो चुका है साथ ही उनका कहना था कि इसके पहले 20 मिलियन विस्थापित लोगों के बारे में अनुमान ही नहीं लगाया जा सका। 60 मिलियन टन का खनन होने से तकरीबन 10 मिलियन लोग विस्थापित होते हैं खनन उद्योग में कोयले का खनन अकेला विस्थापित करने वाला सबसे बड़ा स्रोत है और अब तक ये 7 मिलियन लोगों को विस्थापित कर चुका है।

देश के विस्थापितों में सबसे ज्यादा दलित या अनुसूचित जाति (एससी) और आदिवासी समुदायों के लोग शामिल हैं। रजनी कोठारी का अनुमान है कि स्वतंत्रता

से लेकर 1990 तक विकास के प्रोजेक्टों में विस्थापित हुए लोगों में से 40 फीसदी आदिवासी हैं जबकि देश की आबादी में उनकी तादाद महज 8 फीसदी है। विस्थापन का आंकड़ा तब और ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है जब इसका पुनर्वास के नजरिये से परीक्षण किया जाता है। आजादी से लेकर 2000 ई. तक भारतीय संदर्भ का परीक्षण करते हुए वाल्टर फर्नांडिस और गीता भाराली जैसे विद्वानों का कहना है कि तकरीबन 75 फीसदी विस्थापित लोगों की हालत बेहद बुरी है और विस्थापन के बाद उन्हें बड़ी परेशानियों का सामना करना पड़ा है। केवल 29 फीसदी विस्थापितों का ही पुनर्वास हो सका।

आदिवासी जैसे समुदायों के लिए विस्थापन बेहद नुकसानदायक रहा है क्योंकि उनके सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों का सबसे ज्यादा उल्लंघन हुआ है। भारतीय संदर्भ में विस्थापन के प्रभाव को माइकल सेरेनिया का गरीबी के जोखिम का डर बेहतर तरीके से पकड़ता है। इसमें खनन समेत विकास से प्रेरित विस्थापन के आयामों की परिभाषा दी गई है। इसमें शामिल आठ जोखिमों में: 1. भूमिहीनता, 2. बेरोजगारी, 3. हाशिये पर पहुंच जाना, 4. साझी संपत्ति के संसाधनों तक पहुंच कर नुकसान, 5. मृत्यदर में बढ़ोत्तरी, 6. खाद्य असुरक्षा, 7. बेघर होना, 8. सामाजिक बिलगाव।

हालांकि समाज के कुछ हिस्सों के लिए खनन संपत्ति का स्रोत है लेकिन उसके साथ ये भी सोचने की जरूरत है कि खनन विस्थापन को बढ़ावा देता है और फिर इस तरह से भारी तादाद में गरीबों के जीवन के स्रोत को बरबाद कर देता है। साथ ही उनके भोजन और जीवनयापन के अधिकार का उल्लंघन होता है। ये विस्थापित और प्रोजेक्ट से प्रभावित लोगों के जीवन के साधन खेती के स्रोत को बरबाद कर देता है जो बिल्कुल वही रहते हैं जहां खदानों की जमीन होती है। विस्थापन का नतीजा, खराब पुनर्वास और कम मुआवजा शोषण, गरीबी और हिंसा के पूरे चक्र के तौर पर सामने आते हैं खदान के लिए अधिग्रहीत जमीन जमीन का प्रभाव एक जाति-आदिवासी पूर्वाग्रह भी लिए होता हे। उदाहरण के लिए दूसरों के मुकाबले आदिवासियों के बीच भूमिहीन लोगों की संख्या में बढ़ोत्तरी 16.7 प्रतिशत और दलित विस्थापितों की 13 फीसदी ज्यादा थी। झारखंड के उत्तर कर्णपुरा कोलफील्ड में जहां 1520 विस्थापित परिवारों में ज्यादातर परिवार आदिवासी या दलित हैं इलाके में खेती के लिए विस्थापन से पहले प्रति परिवार के हिसाब से 4. 41 एकड़ जमीन थी जो बाद में घटकर .57 एकड़ हो गयी। जमीन का नुकसान और आजीविका को सहायता देने के लिए उसकी क्षमता में लगातार गिरावट बड़े

स्तर पर पलायन को जन्म देता है और फिर लोग पास के शहरों और कस्बों में जाने के लिए मजबूर हो जाते हैं। प्रवासी आबादी ज्यादातर बा़र दोटा रोजगार करने के लिए बाध्य हो जाती है और फिर इस तरह से उनके ।ाए गरीबी के जाल से निकलना मुश्किल हो जाता है।

जमीन के नुकसान, आजीविका और सामान्य गरीबी के अलावा खनन का प्रभाव पर्यावरण और समाज के विभिन्न हिस्सों पर कई नकारात्म ५ तरीके से पड़ता है और उन्हें एक छोटी बातचीत में सूचीबद्ध करना बेहद कठिन है। खनन के इलाकों में नाबालिग मजदूरों की बाढ़ आ जाती है। झारखंड में कुजु कस्बे के एक फाउंडेशन सृजन का अनुमान है कि पूरे झारखंड में तकरीबन 100000 बच्चे और उनके परिवार के सदस्य गैरकानूनी तौर पर कोयले के खनन में शामिल हैं। महिलाओं और बच्चों की बड़े पैमाने पर तस्करी एक और विपत्ति बनकर सामने आई है जो खनन के इलाकों को नुकसान पहुंचा रही है। विस्थापित आदिवासी समूहों के महिलाओं का स्तर भी उल्टे तरीके से प्रभावित होता है क्योंकि जंगलों और आर्थिक संसाधनों तक उनकी पहुंच खत्म हो जाता है जो पहले उन्हें परिवार की आर्थिक गतिविधियों में एक केंद्रीय भूमिका देती है। विस्थापन के चलते आदिवासियों के सांस्कृतिक अधिकार का भी उल्लंघन होता है क्योंकि विस्थापित समूहों का गांवों के मैदानों, शवदाह स्थलों और पास के जंगलों जैसे साझे स्थानों पर पहुंच ठप हो जाती है जो उनके सांस्कृतिक अभ्यासों और ऐतिहासिक यादगारों के केंद्र में होते हैं।

मूल कारण और कानूनी कमियां

खनन का विस्थापितों और प्रभावित समूहों पर नकारात्मक प्रभाव के पीछे अस्थाई कई गुना बढ़ जाते हैं और ये समस्या नीति, कानूनी प्रावधानों, उन्हें लागू करने और निगरानी में होती हैं। भूमि अधिग्रहण और विस्थापन खनन उद्योग से जुड़ी एक महत्वपूर्ण समस्या है जहां देश विकास की जरूरतों और सामाजिक न्याय के लक्ष्यों के बीच संतुलन बनाने के लिए संघर्ष कर रहा है। भारत के 664 जिलों में 2013 और 2014 के बीच 250 से ज्यादा भूमि अधिग्रहण के विवाद रिकार्ड किए गए हैं। और इनमें से बड़े हिस्से खनन जिलों से जुड़े हुए हैं।

हाल के दिनों तक खनन से जुड़े प्रोजेक्टों के लिए अंग्रेजों के दौर के भूमि अधिग्रहण के कानून (एलएए) 1894 और ढेर सारे विशिष्ट कानूनों जैसे भूमि अधिग्रहण (खदान) कानून, 1885, दामोदर वेली कारपोरेशन एक्ट और पेट्रोलियम और खनिज पाइपलाइन (जमीन में उपयोगकर्ता के अधिकार का अधिग्रहण) कानून

1962 और कोयला धारक इलाका कानून (अधिग्रहण और विकास) 1957 आदि के तहत भूमि अधिग्रहण होते रहे हैं। केन्द्रीय कानून एलएए 1894 और सीबीएए 1957 जैसे क्षेत्र विशेष के लिए बने कानूनों के तहत अधिग्रहीत जमीनों के मालिक या फिर मालिकान समुदायों के सहमति की जरूरत नहीं पड़ती थी। जमीन को हासिल करने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों को संपूर्ण शक्ति दिए जाने के लिए इन कानूनों की आलोचना होती थी। साथ ही इसमें मुआवजा, सहायता और पुनर्वास की नीति भी बेहद लाचार थी। इस तरह से जब समुदाय अनैच्छिक जमीन अधिग्रहण का विरोध करते हैं तो राज्य को अधिग्रहण कानून के तहत मिली संपूर्ण शक्ति का मतलब होता है कि समुदायों को अधिग्रहण को खारिज करने का कोई अधिकार नहीं है और उसे उनकी इच्छाओं के विपरीत कानूनी तौर पर संचालित किया जा सकता है। जबकि कानून और नीतियां जो मुआवजा, सहायता और पुनर्वास तय करती हैं वो प्रभावित समुदायों की रक्षा करने में पूरी तरह से नाकाम रही है। लागू करने में कमजोर, निगरानी हैं वो प्रभावित समुदायों की रक्षा करने में पूरी तरह से नाकाम रही है। लागू करने में कमजोरी, निगरानी में कमी और प्रभावित समूहों के खिलाफ धोखाधड़ी के व्यवहार हालात को और नाजुक बना देते हैं। और उसी के बराबर गौर करने वाली सबसे महत्वपूर्ण बात ये है कि जंगलों पर निर्भरता, चारगाहों, मछुआरों, भूमिहीन किसानों और आदिवासी समूहों जैसे हाशिये के समुदायों के हितों की रक्षा के लिए बने कानूनों को बहुत लचर तरीके से लागू किया जाता है। मध्य भारत के आदिवासी समूहों के मामले में बात की जाए तो हम पाते हैं कि समुदाय के परंपरागत संसाधनों की रक्षा के लिए बेहद मजबूत कानून बने हैं। फिर भी पांचवीं सूची के तहत कानून पेसा कानून (अधिसूचित इलाकों तक विस्तार) 1996, बन अधिकार कानून 2006 और छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम 1908 को लगातार नजरअंदाज किया गया है और उसे व्यवहार में दरकिनार कर दिया गया है।

अधिकारों के भीषण उल्लंघन और अपनी आजीविका की बरबादी का सामना करते हुए आदिवासी समुदायों ने खनन गतिविधियों का विरोध करने और अपनी जमीन और इन लोगों ने जीवनयापन के संघर्ष के लिए स्थानीय लोगों पर आधारित जन आंदोलन का निर्माण किया है। ये आंदोलन इस तरह के लोकप्रिय शांतिपूर्ण विरोधों के जरिये स्थानीय समुदायों के स्वाभाविक और लोकतांत्रिक विरोध को प्रदर्शित करने में सक्षम हुए हैं। हालांकि जबरन विस्थापन को रोकने और व्यापक मुआवजा हासिल करने में उनकी सफलता बहुत सीमित रही है। लेकिन उनका संघर्ष तारीफ के काबिल रहा है।

हाल के कानूनी विकास

कड़े जमीन अधिग्रहण कानून की आलोचना की प्रतिक्रिया में भारत सरकार 2000 के मध्य से एक कानून को दुरुस्त करने पर विचार कर रही है। भूमि अधिग्रहण में सहायता और पुनर्वास के साथ पारदर्शिता और समुचित मुआवजे का अधिकार 2013 या फिर आरएफसीटीएलएआरआर 2013 कानून। 2013 का कानून पहली बार पुनर्वास के साथ एकीकृत भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास (आरएंडआर) और सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन (एसआईए)। सबसे महत्वपूर्ण बात ये है कि भूमि अधिग्रहण के लिए इसने प्रभावित समुदायों की मंजूरी को कानूनी तौर पर जरूरी बना दिया है। मंजूरी और एसआईए के प्रावधानों को एक प्रगतिशील उपाय के तौर पर देखा जा रहा है जिसके पास जबरन और अनैच्छिक अधिग्रहण को खत्म करने तथा जमीन अधिग्रहण के चलते-सामाजिक-आर्थिक नुकसान को सीमित करने की क्षमता है।

हालांकि आरएफसीटीएलएआरआर 2013 में बहुत ज्यादा कमियां हैं। इस कानून के सेक्शन 105 के मुताबिक मुआवजे और सहायता तथा पुनर्वास के अलावा 2013 का कोई दूसरा प्रावधान चौथी अनुसूची के तहत आने वाले 13 केन्द्रीय कानूनों पर लागू नहीं होता है। इन कानूनों के जरिये विशेष प्रावधानों के तहत अपने दायरे में ऐसी जमीनों का अधिग्रहण किया जाता है जो विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इस तरह से चौथी अनुसूची में आने वाले 13 कानूनों के तहत जमीन को अधिग्रहीत करने के लिए मंजूरी या फिर सामाजिक प्रभाव मूल्यांकन जैसे प्रावधानों को लागू करने की जरूरत नहीं पड़ती है। 2013 के कानून की अनुसूची चार में भूमि अधिग्रहण (खदान) कानून, 1885, दामोदर वैली कारपोरेशन एक्ट और पेट्रोलियम और खनिज पाइपलाइन (जमीन में उपयोगकर्ता के अधिकार का अधिग्रहण) कानून 1962 और कोयला धारक इलाका कानून (अधिग्रहण और विकास) 1957 जैसे 13 कानून हैं।

राष्ट्रमंडल मानवाधिकार अधिकार पहल के एक हाल के अध्ययन में पता चला है कि 1 जनवरी से 20 जून 2015 के बीच भूमि अधिग्रहण सेक्टर विशेष के कानूनों के तहत हुआ है न कि आरएफसीटीएलएआरआर 2013 कानून के तहत। इस तरह से हम देखते हैं कि इस कानून ने खुद ही कई बड़े छिद्रों को छोड़ दिया है जिसमें पहले की ही तरह अनैच्छिक और जबरन अधिग्रहण को जारी रहने की गुंजाइश है। इस कानून का सकारात्मक पहलू ये है कि इस समय यह पूरी तरह से निरस्त है क्योंकि इसमें आसानी से धोखा दिया जा सकता है।

हालांकि आरएसीटीएलएआरआर 2013 अनैच्छिक जबरन अधिग्रहण को

रोकने में निष्प्रभावी लग सकता है लेकिन नियमगिरी मामले पर एफआरए 2006 का हवाला देते हुए जमीन अधिग्रहण के लिए ग्राम सभाओं की मंजूरी हासिल करने की प्राथमिक शर्त का लागू करने का हाल की सुप्रीम कोर्ट का फैसला कुछ आशा जरूर पैदा किया है। इसी तरह की एक और हाल के सुप्रीम कोर्ट के सकारात्मक फैसले में ऐसा कहा गया है कि उक्त जमीन खदानों और जमीन के मालिकों के ऊपर राज्य का कोई विशिष्ट अधिकार नहीं होता है। ये उन्हें खनन का अधिकार दे देता है। ऐसे आशा कि जाती है कि ये फैसले जमीन और खनिजों पर समुदायों के बड़े अधिकारों का रास्ता साफ करने का आधार बनेंगे।

लक्ष्य

सम्मलेन एक दायरे के ऐसे भागीदारों को साथ लाएगा जो खनन प्रभावित समुदायों के मानवाधिकारों की रक्षा में मुख्य हितधारकों का निर्माण करते हैं सम्मेलन चाहता है किः

- खनन गतिविधियों विशेष कर भूमि अधिग्रहण के नियमन के कानूनी प्रावधानों में नीतिगत खाई और आदिवासी जैसे हाशिये के समुदायों के हितों की रक्षा के लिए लक्षित कानूनी प्रावधानों में कमी के बारे में हितधारकों को संवेदनशील बनाना।
- अपनी आवाज, चिंता और उनके सामने पेश आने वाले मुद्दों को जाहिर करने के लिए पीड़ितों को वास्तविक स्थान मुहैया कराना और मुद्दे का स्थानीय विशिष्ट समाधान विकसित करना।
- प्रभावित समुदायों के लिए कारगर शिकायत निवारण तंत्र की स्थापना के रास्ते को विकसित करना जिसमें प्रभावित समुदायों के लिए कारगर निगरानी और मुआवजा शामिल है।

अपेक्षित नतीजे

- खासकर भूमि अधिग्रहण के रास्ते विस्थापन पर खनन से जुड़े कानूनी मुद्दों और नीति के संबंध में विभिन्न-हितधारकों को संवेदनशील करना।
- जबरन विस्थापन का विरोध और पुनर्वास के दावे और अन्य सुविधाओं के लिए कार्यकारी संचालन के विकल्पों को तय करना।
- खनन प्रभावित समुदायों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए संस्तुतियों की सूची को सूत्रबद्ध करना।

यह जानकारी फियान भारत द्वारा आयोजित सम्मेलन के संकल्प पत्र 20 दिसम्बर 2015 से ली गई है।

पूर्व सांसद भुवनेश्वर मेहता से साक्षात्कार

राज्य में जहां भी कल-कारखाने लग रहे हैं वहां भूमि अधिग्रहण बिचौलियों, दलालों एवं पदाधिकारियों के दवाब से बिना उचित मुआवजा, नौकरी और पुनर्वास के हो रहा है। एक ही जिला और प्रखण्ड के अलग-अलग तरीके से मुआवजा का भुगतान किया जा रहा है। एन.टी.पी.सी., हजारीबाग जिला के बड़कागांव और केरेडारी में 20 लाख रुपये प्रति एकड़ और चतरा जिला के टण्डवा में 15 लाख रुपये प्रति एकड़ जमीन का मुआवजा भुगतान कर रही है जबकि बिहार में 40 लाख रुपये प्रति एकड़ भुगतान हो रहा है। इन्हीं प्रखण्डों में कोल इण्डिया 9 लाख रुपये प्रति एकड़ और दूसरे प्राइवेट कम्पनी कहीं 5 लाख और कहीं 7 लाख रुपये प्रति एकड़ मूल्य तय कर रही है। बड़कागांव, केरेडारी एवं टण्डवा में एस्सार, हिन्डालको एवं उषा मार्टिन के द्वारा किसानों का भयंकर शोषण हो रहा है। नौकरी की कोई गारन्टी नहीं है। टण्डवा प्रखण्ड के आम्रपाली और मगध प्रोजेक्ट में एक वर्ष में कोयला का उत्पादन हो रहा है। इन परियोजनाओं में एक भी नौकरी नहीं मिली। चन्द बिचौलियों, सी. सी.एल. एवं पुलिस प्रशासन के पदाधिकारियों एवं उग्रवादी संगइन करोड़ो रुपया महीना अर्जित कर रहे हैं। लेकिन आम जनता की चिन्ता किसी को नहीं है।

भूमि अधिग्रहण अधिनियम 2013 का खुलेआम उल्लंघन हो रहा है। उपजाऊ जमीन का भी अधिग्रहण हो रहा है, जबकि इस विधेयक में जमीन को बाजार दर से 4 गुणा ज्यादा दर निर्धारित करना है और उपजाऊ जमीन का अधिग्रहण नहीं करना है। केन्द्र और राज्य की भाजपा सरकार को केवल जमीन अधिग्रहण की चिन्ता है। किसानों को उचित मुआवजा, नौकरी और पुर्नवास की व्यवस्था हो रहा है या नहीं इसकी चिन्ता नहीं है। झारखण्ड में अभी तक 43 लाख लोग कर-कारखानों से विस्थापित हो चुके हैं। आधा का कोई अता-पता न भी नहीं है और जिस तरह से विस्थापन हो रहा है विस्थापितों और प्रभावितों की यह संख्या बढ़कर एक करोड़ हो जायेगी।

रघुवर सरकार द्वारा भूमि लूट के लिए आपाधापी/लोकतांत्रिक प्रक्रिया को ताक पर रखा

1. सरकार ने 28.01.2016 को जनजातीय सलाहकार परिषद् द्वारा CNT Act 1908 एवं SPt Act 1949 को संशोधन करने का निर्णय लिवाया। शायद छलावा कर।
2. मई महीने में मंत्रिमंडल ने CNT Act 1908 एवं SPT Act 1949 को आंशिक संशोधन करने का निर्णय लिया।
3. 07.04.2016 को मंत्रिमंडल ने स्थानीय नीति एवं अनुसूचित जिलों में नियोजन नीति पर निर्णय लिया।
4. 29.04.2016 को स्थानीय नीति को गजट में प्रकाशन किया।
5. 26.04.2016 को जनजातीय सलाहकार परिषद् के द्वारा अनुसूचित क्षेत्रों में सरकार द्वारा बनाई गई नियोजन नीति पर सहमति ली।
6. 14.07.2016 को अनुसूचित जिलों की नियोजन नीति को सरकार ने प्रकाशित किया।
7. 13.05.2016 को मुख्य सचिव झारखण्ड के हस्ताक्षर से एक पत्र सभी उपायुक्तों को जारी किया गया और उन्हें निर्देष दिया गया कि राज्य भर में गैर मजरूआ जमीन पर कायम जमाबंदी की जांच की जाए और सही नहीं पाये जाने पर उनको रद्द किया जाए।
8. जनवरी महीने में सरकार ने पूरे राज्य में ग्राम वार गैर मजुरवा खास, गैर मजरूआ जंगल, झाड़ी को भूमि बैंक के रूप में प्रकाशित किया एवं कारपोरेट जगत् को झारखण्ड में उद्योग लगाने के लिए खुला नियंत्रण दिया है।

9. 28 जून 2016 को राज्यपाल द्वारा CNT Act 1908 एवं SPT Act 1949 संशोधन अध्यादेश 2016 पर हस्ताक्षर कर राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया गया। ठीक उसी दिन मंत्रिमंडल ने विधानसभा का सत्र को 22 जुलाई 2016 से बुलाने का निर्णय लिया।

मुकेश कुमार
उपायुक्त सह जिला दंडाधिकारी, हजारीबाग

जन : 06546-224805 (का.)
224806 (आ.)
फैक्स : 06546-264808 (का)
मोबाईल : 8986207333
ई-मेल : dchzb@rediffmail.com
dc-haz@nic.in

सेवा में,

उप विकास आयुक्त,
हजारीबाग।

विषय : विभिन्न राजनीतिक दलों से प्राप्त लिखित मांग पत्र के संबंध में।

महाशय,

बुद्धिजीवी मंच, बड़कागांव के द्वारा किए जा चिता सत्याग्रह के सदस्यों से प्राप्त मांग पत्र पर विचार करते हुए निम्न निर्णय लिया जाता है। आप जिला प्रशासन की भावनाओं से बुद्धिजीवी विचार मंच (विभिन्न राजनीतिक दलों एवं सामाजिक संगठनों के सदस्य) के सदस्यों को अवगत करावें। जिला प्रशासन द्वारा लिये गये निर्णय निम्नलिखित हैं:-

1. भूमि अर्जन, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन में उचित प्रतिकार और पारदर्शिता का अधिकार अधिनियम, 2013 का पूरी दृढ़ता के साथ जिला प्रशासन अनुपालन करेगा। विशेष संदर्भों में विभिन्न राजनीतिक दलों एवं सामाजिक संगठनों के लिखित मांग के आलोक में अधिकतम 30 सदस्यों वाली एक समिति, जिसमें माननीय सांसद, माननीय स्थानीय विधायक, संबंधित प्रभावित पंचायतों के मुखिया एवं प्रखंड प्रमुख, जिला परिषद अध्यक्ष तथा बुद्धिजीवी विचार मंच (विभिन्न राजनीतिक दलों एवं सामाजिक संगठनों के सदस्य), द्वारा प्रस्तावित सदस्यों को शामिल किया जाएगा और जिला मुख्यालय में समय निर्धारित करते हुए जिला प्रशासन के साथ त्रिपक्षीय वार्ता की जाएगी।
2. धरना समाप्ति के चौबीस घंटे के भीतर मांग पत्र में किए लाठी चार्ज की शिकायत की जांच हेतु मजिस्टेरियल जांच टीम का गठन कर दिया जाएगा।

3. प्रशासन विधिसम्मत तरीकों से रैयतों की मांगों पर गंभीरतापूर्वक विचार करेगी।
4. आपको शांतिपूर्वक चल रही चिता सत्याग्रह को समाप्त कराते हुए विधि व्यवस्था संधारण में जिला प्रशासन को सहयोग की अपेक्षा के साथ।

विश्वासभाजन

ज्ञापांक......../सी. हजारीबाग, दिनांक 12 जून, 2016

प्रतिलिपि : श्री लोकनाथ महतो, माननीय पूर्व विधायक, बड़कागांव को सूचनार्थ एवं आवश्यक कार्रवाई हेतु प्रेषित।

उपायुक्त हजारीबाग

श्रद्धेय राज्यपाल जी

श्रीमती द्रौपदी मुर्मू
राज्यपाल, झारखंड ,राज भवन, रांची

प्रेषक : डॉ. रामेश्वर उराँव
अध्यक्ष
भारत सरकार
राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग
अ.शा. पत्र सं. झारखंड/1/2016-आर.यू-3

(भूतपूर्व सांसद-लोकसभा)
(पूर्व जनजातीय कार्य राज्यमन्त्री)

06 सितम्बर, 2016

1. आप के द्वारा संविधान के अनुच्छेद 213 के अंतर्गत निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम, 1908 (सीएनटीए) और संथाल परगना काश्तकारी (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 (एसपीटीए) में संशोधन हेतु प्रस्तावित अध्यादेशों की प्रतियां जनजातीय कार्य मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग को सलाह के लिए भेजी गई है।

2. उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग अनुच्छेद 338क के अन्तर्गत गठित एक संवैधानिक संस्था है, अन्य कर्तव्यों के निर्वहन के साथ-साथ संविधान या किसी समय प्रवृत्त किसी अन्य कानून (अनुच्छेद) 338क का खंड 5 (क) के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों को उपलब्ध सुरक्षा उपायों से संबंधित सभी प्रकरणों का अन्वेषण एवं निगरानी करने और अनुसूचित जनजातियों को प्रभावित करने वाले सभी प्रमुख नीति संबंधी प्रकरणों पर केन्द्र एवं राज्य सरकारों को सलाह देने का कर्तव्य सौंपा गया है।

3. आयोग ने प्रस्तावित संशोधनों की समुचित जांच के पश्चात् निम्नानुसार अपना मत प्रकट किया है–

संवैधानिक मुद्दे

झारखण्ड के अनुसूचित क्षेत्र दो विशेष कानून (जो राज्य के दो भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों पर लागू होते हैं) द्वारा नियंत्रित है, में संशोधन प्रस्तावित है। दोनों

कानूनों का प्राथमिक बिन्दु, अनुसूचित क्षेत्रों की भूमि के स्वामित्व, काश्तकारी, अन्तरण (विक्रय गिरवी आदि शामिल) और अनुसूचित क्षेत्रों के शासन पर केन्द्रित है। वे इन अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि और शासन से संबंधित नियमों, विनियमों, अधिसूचनाओं, दिशा-निर्देशों को निर्मित करने के लिए आधारभूत है। यद्यपि, ये दोनों अधिनियम ब्रिटिश सरकार के समय के हैं, उन्हें संविधान की नवीं अनुसूची में क्रम सं. 209 और 210 में शामिल करके अनुच्छेद 31(ख) (कुछ अधिनियमों एवं विनियम की मान्यता) के अन्तर्गत संवैधानिक संरक्षण दिया गया है।

इसके अतिरिक्त, भारत के संविधान की पांचवीं एवं छठी अनुसूची के साथ पठित अनुच्छेद 244 के अन्तर्गत किए गए प्रावधान के अनुसार अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विशेष शासन तंत्र को जारी रखा गया है। पांचवी अनुसूची के अन्तर्गत अनुसूचित क्षेत्रों की शांति एवं सुशासन के लिए, राज्यपाल में विनियम बनाने की शक्ति निहित की गई है। उक्त अनुसूची के पैरा 5 में शक्ति के प्रमुख क्षेत्रों में से एक "ऐसे क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों द्वारा या उनके बीच भूमि के अन्तरण पर प्रतिबंध या निर्बधन" लगाना है।

परन्तु प्रस्तावित संशोधन से प्रतिबंध या संरक्षण निम्नानुसार समाप्त हो जाएगा–

(क) जहां वर्तमान में भूमि के कृषि एवं सम्बद्ध उपयोग की ही अनुमति है, स्वामियों/काश्तकारों द्वारा जनजातीय भूमि का गैर-कृषि उपयोग,

(ख) विविध वाणिज्यक उद्देश्यों के लिए उपायुक्त (डीसी) की अनिवार्य पूर्व लिखित अनुमति के बिना जनजातीय भूमियों का अन्तरण जो वर्तमान में निषिद्ध है।

भूमि के उपयोग का व्यावसायीकरण एवं अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि के अन्तरण पर प्रतिबंधों को हटा देना संवैधानिक मानकों के विपरीत होगा। अनुसूचित क्षेत्रों में जनजातीय भूमि अधिकारों के संरक्षण के महत्व पर विभिन्न निर्णयों के माध्यम से संवैधानिक न्यायालयों द्वारा जोर दिया गया है। जनजातीय भूमि के अन्तरण को प्रतिबंधित/निर्बधित करने और अवैध रूप से अंतरित भूमि की पुनर्बहाली को आवश्यक बनाने वाले संस्थाल परगना काश्तकारी अधिनियम, 1949 एवं छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम, 1908 जैसे कई कानून हैं। ये कानून संविधान के अनुच्छेद 15 (4) "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्ही वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष प्रावधान" के साथ सामंजस्य रखने के कारण न्यायालय में खरे उतरे हैं।

समता बनाम आंध्र प्रदेश सरकार एवं अन्य (1997)8 एससीसी 191 के प्रमुख वाद में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि पांचवी अनुसूची के पैरा 5 का उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों को समाजार्थिक सशक्तीकरण सुनिश्चित करते हुए समतावादी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करना है। हस्तांतरण से जनजातीय भूमि के संरक्षण के लिए राज्य विनियमों का सख्त कार्यान्वयन और प्रथागत एवं पारंपरिक अधिकार संरक्षण को सुनिश्चित करने को भी स्पष्ट किया है। सर्वोच्च न्यायालय का उद्देश्य सरकारी सम्पति के निपटान के लिए अनुच्छेद 298 के अंतर्गत कार्यकारी शक्ति एवं अनुच्छेद 245 के अन्तर्गत विधायी शक्ति उक्त अनुसूची के पैरा 5 के परिपेक्ष में परीक्षण करना भी है।

अनुसूचित क्षेत्रों में जनजातीय भूमि के हस्तान्तरण को रोकने के लिए संविधान ने दोनों कानूनों और बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियम, 1969 को भारत के संविधान की नवीं अनुसूची (अनुच्छेद 31ख) में क्रमशः क्रम सं. 209, 210 और 211 पर इन्हें शामिल करके संरक्षण उपलब्ध कराया गया है।

उक्त दृष्टिकोण से, अनुच्छेद 213 के अन्तर्गत कार्य करते हुए, यह प्रतीत होता है कि राज्यपाल ने अनुसूचित क्षेत्रों में शांति एवं सुशासन के लिए; विशेषतः जनजातीय भूमि के हस्तान्तरण को रोकने के लिए, इन महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर विचार नहीं किया है और भेजे गए प्रस्ताव में भी इसका उल्लेख नहीं किया गया है यदि किया भी गया है तो भी प्रस्ताव को तर्क आधारित नहीं बनाया गया है।

1969 विनियमन के पश्चात्, यह देखा गया है कि संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम (झारखंड के अनुसूचित क्षेत्रों के लिए) में संशोधन बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, 1969 में संशोधनों के माध्यम से किये गये थे (छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम में 1972, 1974, 1983 और 1986 तथा संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम में 1972, 1986 और 1998 (बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियमन 1969 में संशोधनों के माध्यम से)। प्रस्तावित अध्यादेश, संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम में सीधा संशोधन चाहते हैं जो उक्त मानकों से विचलित करता हैं।

प्रस्तावित संशोधनों के संबंध में कुछ विशिष्ट टिप्पणियां

संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन, जनजातीय भूमि उपयोगों के संरक्षण को व्यापक रूप से शिथिल करता है। उदाहरणार्थ संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम की धारा 13 और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की धारा 21 को प्रभावी बनाने के लिए

मौलिक परिवर्तन करने की मांग करते हैं जो भूमि के स्वामी/काश्तकार द्वारा भूमि के गैर-कृषि उपयोग को प्रतिबंधित करती हैं, क़ो इन संशोधनों के माध्यम से हटाया जा रहा है। जबकि ये सारे प्रतिबंध गैर-कृषि उपयोग को अनुमति देने के लिए संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम की धारा 13(क) और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की धारा 21(ख) के प्रस्तावित संशोधनों द्वारा हटा दिए जाने की मांग करते हैं।

इसी प्रकार, छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की धाराएं 46, 47, 48 और 240 जो कई परिस्थितियों में उपायुक्त की पूर्व लिखित अनुमति के बिना जनजातीय भूमि को गैर-जनजातीय लोगों को अंतरित करने पर निर्बधन आरोपित करती हैं, वे प्रस्तावित संशोधनों के अंतर्गत अपरिवर्तित रह जाती है। उपायुक्त की ऐसी अनुमति के बिना अन्तरण धारा 49(1) के अंतर्गत दो परिदृश्यों में निर्बधित है। यह दोहराना महत्वपूर्ण है कि 'अन्तरण' में व्यापक रूप से विक्रय, गिरवी, पट्टा, उपहार, संविदा या करार को शामिल होना समझा जाता है। धारा 71ख अपरिवर्तित है जो प्रावधान करती है कि इन प्रावधानों के उल्लंघन में किया गया भूमि अन्तरण कारावास के साथ दण्डनीय अपराधिक दोष है जो तीन वर्ष तक का और/या शास्ति के रूप में विस्तारित हो सकता है।

एक बार भूमि का उपयोग कृषि से गैर-कृषि रूप में परिवर्तित हो जाता है जो छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की धारा 46, 47 एवं 48 और संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम की धारा 20 द्वारा जनजातीय भूमियों के अन्तरण पर लगाये गये प्रतिबंध लागू नहीं होंगे। तब ऐसी गैर-कृषि भूमियों का अन्तरण संपति अन्तरण अधिनियम द्वारा शासित होगा एवं छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम और संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम के कोई भी लाभकारी प्रतिबंध लागू नहीं होगे। इस प्रकार प्रस्तावित संशोधन से जनजातीय भूमियों के अंधाधुंध हस्तांतरण होने लगेंगे।

धारा 49(1) में प्रस्तावित संशोधन एक नए उपखंड (ग) को समाविष्ट करने की मांग करता है जो विकासात्मक गतिविधियों के एक समूह "या किसी लोक उद्देश्यों/परियोजना या गतिविधि जिसे राजपत्र में अधिसूचना के तरीके से राज्य सरकार द्वारा जोड़ा जाए" को उपायुक्त की लिखित अनुमति के बिना जनजातीय भूमि के अंतरण की अनुमति देता है। यद्यपि जनजातीय सलाहकार परिषद् की सिफारिश के लिए अनिवार्यता है तथापि ऐसी अनिवार्यता वैकल्पिक प्रतीत होती हैं

प्रस्तावित संशोधन का सरल पठन स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता हे कि राज्य कार्यकारिणी में किसी परियोजना या गतिविधि के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करें, जनजातीय

भूमियों के अन्तरण की अनुमति देने के लिए, इस प्रकार निष्फल कानून के निकाय के अन्तर्गत मौलिक प्रतिबंध लगाते हुए, व्यापक शक्तियों को निहित करता है।

प्रस्तावित संशोधन, संवैधानिक न्यायालयों में चुनौती देने के लिए अत्यधिक संवेदनशील प्रतीत होते हैं तथा निहित अधिकारों के दुरूपयोग की परिधि में भी आ सकते हैं।

शक्तियों को प्रत्यायोजित करना

कानून के अर्थ एवं विषयवस्तु में एक मौलिक परिवर्तन, नियमों एवं अधिसूचनाओं (जो कार्यकारिणी के अधिनियम होते हैं) के माध्यम की बजाय स्वयं कानून (जो कि एक विधायी अधिनियम होता है) में संशोधन के माध्यम से किया जाना चाहिए। यहां तक कि यदि कुछ खास स्थितियों में जब ऐसी शक्ति विधायिका द्वारा कार्यपालिका को प्रत्यायोजित की जाती है, तो इस बारे में स्पष्ट एवं असंदिग्ध दिशा-निर्देश होने चाहिए कि इस प्रत्यायोजित शक्ति का प्रयोग कैसे किया जाएगा। यह सुस्थापित है कि ऐसे दिशा-निर्देश उपलब्ध करवाने में असफल होना ऐसी शक्ति के प्रत्यायोजन को निरंकुश एवं असंयमित, और इस प्रकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के विपरीत बनाता है (उदाहरण के लिए एग्रीकल्चरल मार्केट कमेटी बनाम शालीमार केमिकल वर्क्स लिमिटेड (1997) 5 एससीसी 516; किशन प्रकाश शर्मा एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य (2001) 5 एससीसी 212, के.टी.प्लांटेशन प्राईवेट लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य (2011) 9 एससीसी 1 को देखें)।

इस प्रकार प्रस्तावित संशोधनों का परिणाम झारखण्ड के अनुसूचित क्षेत्रों में जनजातीय भूमि के अन्तरण को रोकरने से संबंधित विस्तारित कानून में एक उदाहरणात्मक मौलिक परिवर्तन के रूप में होगा। तथापि, प्रस्तावित संशोधन इस बात पर कोई दिशा-निर्देश नहीं देते कि राज्य कार्यपालिका में ऐसे परिवर्तन की सीमाओं को परिभाषित करने के लिए शक्ति का प्रत्यायोजन करते हुए ऐसे परिवर्तन की प्रकृति और विसतार क्या है।

उदाहरण के लिए, संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम की प्रस्तावित धारा 13(क) और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की प्रस्तावित धारा 21(ख) दोनों ही राज्य कार्यपालिका को ''ऐसे भौगोलिक क्षेत्रों में भूमि के गैर-कृषि उपयोग को विनियमित करने एवं राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर तथा अधिसूचित ऐसे उपयोगों के लिए विनियमित करने हेतु समर्थ बनाते हैं'' (महत्व दिया गया)। तथापि, इस बात का कोई संकेत नहीं है कि ऐसे उपयोग एवं क्षेत्र निर्धारित कैसे किए जाएंगे।

इसके अतिरिक्त, प्रस्तावित छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की धारा 49(1) का उप-खंड (ग) राज्य सरकार में "किसी लोक उद्देश्य/परियोजना या गतिविधि जिसे राज्य सरकार झारखंड राज्य में जनजातीय सलाहकार परिषद् की सिफारिश के आधार पर शासकीय राजपत्र में अधिसूचना के माध्यम से जोड़ेगी या किन्ही अन्य उद्देश्यों के लिए जिन्हें राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा उसके लिए सहायक घोषित करें या किसी ऐसे उद्देश्य के लिए उपयोग की गई या आवश्यक भूमि को प्राप्त करने के लिए" छूट देने के लिए व्यापक शक्तियां निहित करता है (महत्व दिया गया)। इस बात के लिए कोई दिशा-निर्देश नहीं है कि राज्य सरकार यह कैसे निर्धारित करेगी कि इस प्रकार से जनजातीय सलाहकार परिषद् की सिफारिश की आवश्यकता के अलावा, कौन-सी परियोजनाएं अधिसूचित की जाएंगी। उपरोक्त प्रावधानों की भाषा अपर्याप्त होने के साथ-साथ ऐसा दर्शाती है कि जनजातीय सलाहकार परिषद् की सलाह लेना अनिवार्य नहीं है।

उपरोक्त से यह स्पष्ट है कि परिवर्तन का मूल पाठ इस उद्देश्य और या अधि ासूचना के लिए नियम बनाने के माध्यम से पूर्ण रूप से राज्य कार्यकारिणी को दिया गया है। ऐसी प्रत्यायोजित शक्ति के प्रयोग के लिए प्रस्तावित संशोधनों में कोई दिशा-निर्देश नहीं हैं; इसके विपरीत, यह तर्क दिया जा सकता है कि ऐसा प्रत्यायोजन अस्पष्ट, अपर्याप्त तथा संविधान के अनुच्छेद 14 के विपरीत होगा।

प्रस्तावित संशोधन सांविधिक प्रावधानों में किसी भी संशोधन के प्रस्ताव के बिना राज्य कार्यकारिणी में ऐसी व्यापक नियम बनाने की शक्ति निहित करता है, भी अबोधगम्य है जो संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम की धारा 71, और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम की धारा 264 एवं 266 के होते हुए भी राज्य सरकार को नियम बनाने की शक्ति प्रदान करता है।

केन्द्रीय अधिनियमों के साथ समनुरूपता

इसके अतिरिक्त प्रस्तावित संशोधन संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम और जहां ऐसे क्षेत्रों पर पूर्व-विद्यमान केन्द्रीय अधिनियम पहले से ही मौजूद है, जो अनुसूचित क्षेत्रों के लिए भी लागू है, के बीच संभावित विरोधाभास/संघर्ष पैदा करेगा।

पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों का विस्तार) अधिनियम, 1996 (पेसा) "इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी" अनुसूचित क्षेत्रों में शासन के संबंध में भारत के संविधान के अनुच्छेद 243-एम(4) के अनुसार यह एक महत्वपूर्ण

अधिनियम है। इसलिए पेसा संविधान के उन विभिन्न उपबन्धों को प्रभावित करता है जो केन्द्र एवं राज्य के बीच विधायी शक्तियों के विभाजन से संबंधित हैं।

पेसा की अपेक्षा है कि राज्य सरकार उन पंचायतों के संबंध में कानून बनाएगी जो "रूढ़िजन्य विधि सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं और समुदाय के संसाधनों की परंपरागत प्रबंध पद्धतियों के अनुरूप होगा" (धारा 4 (क) और यह भी सुनिश्चित करेगी कि ग्राम सभा "लोगों की परंपराओं और रूढ़ियों, उनकी सांस्कृतिक पहचान, समुदाय के संसाधनों को विवाद निपटाने के रूढ़िजन्य ढंग का संरक्षण और परिरक्षण करने के लिए सक्षम होगी" (धारा 4(घ))।

आर्थिक विकास के बारे में, पेसा की अपेक्षा है कि ग्राम सभा सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं का, इसके पूर्व कि ग्राम स्तर पर पंचायत द्वारा ऐसी योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं के कार्यान्वयन के लिए हाथ में लिया जाए, अनुमोदन करेगी (धारा 4(ड) (1)। धारा 4(1) की अपेक्षा है "अनुसूचित क्षेत्रों में विकास परियोजनाओं के लिए भूमि का अर्जन करने के पूर्व क्षेत्रों में ऐसी परियोजनाओं से प्रभावित व्यक्तियों को फिर से बसाने और अनुसूचित क्षेत्रों में ऐसी परियोजनाओं से प्रभावित व्यक्तियों को फिर से बसाने या उनको पुनर्वासित करने के पूर्व उपयुक्त स्तर पर ग्राम सभा का पंचायतों से परामर्श किया जाएगा।

पेसा की धारा 4 (ड) (3) अपेक्षा करती है कि "अनुसूचित क्षेत्रों में भूमि के अन्य संक्रमण को निवारित करने और किसी अनुसूचित जनजाति की विधिविरूद्धतया अन्य संक्रमित भूमि प्रत्यावर्तित करने के लिए उपयुक्त कार्रवाई करने की शक्ति ग्राम सभा में निहित की जानी चाहिए"।

इसके अतिरिक्त अनुसूचित जाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (भूमि अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (एफआरए) सातवीं अनुसूची की सूची 3 की प्रविष्टि 17-क और 17-ख के अन्तर्गत अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए संसद द्वारा अधिनियमित किया गया है। अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया है जिसका अधिभावी प्रभाव (overriding) है (एफआरए की धारा 4(1) और 13)। एफआरए के अन्तर्गत अपने परम्परागत वन एवं संसाधनों के बारे में निर्णय लेने में ग्राम सभा की भूमिका के बारे में उड़ीसा खनन निगम बनाम पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (2013) 6 एससीसी 476 में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्धारित किया है।

भूमि अर्जन, पुनर्वास और पुनर्व्यवस्थापन में उचित प्रतिकर और पारदर्शिता अधिकार अधिनियम, 2013 (एलएआरआर एक्ट) सातवीं अनुसूची की 3 की

प्रविष्टि 42 के अन्तर्गत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए संसद द्वारा अधिनियमित किया गया है अनुसूचित क्षेत्रों में जनजातीय भूमियों की विशेष स्थिति को भी मान्यता देता हे। यह विशेष रूप से एलएआरआर एक्ट की धारा 2(2) में निम्नानुसार है:

"यह भी कि ऐसे अनुसूचित क्षेत्रों में प्रचलित भूमि अन्तरण के संबंध में कोई भूमि किसी विधि (न्यायालय के किसी आदेश या निर्णय सहित जो अंतिम हो गया है) के उल्लंघन में अनुसूचित क्षेत्रों में अर्जन के माध्यम से अंतरित नहीं की जाएगी।"

एलएआरआर अधिनियम की धारा 41 में अनुसूचित क्षेत्रों में ऐसी भूमि का अर्जन निषिद्ध है परन्तु जहां ऐसा अर्जन पूर्णतः आवश्यक है, वहां ग्राम सभा की पूर्व सहमति आवश्यक है। धारा 42 एफआरए के अन्तर्गत वन अधिकारों की क्षतिपूर्ति पुनर्स्थापन को आवश्यक बनाती है, जहां ऐसे अधिकार एलएआरआर अधिनियम के अन्तर्गत प्राप्त करने होते हैं।

यह कहा गया है कि संथाल परगना काश्तकारी अधिनियम और छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन सातवीं अनुसूची की सूची 2 की प्रविष्टि 18 के अन्तर्गत शक्तियों का प्रयोग करते हुए किए जा रहे हैं।

प्रस्तावित संशोधन न तो उपरोक्त या किसी अन्य केन्द्रीय अधिनियम का संदर्भ देता है, और न ही इन अधिनियमों की अपेक्षाओं के अनुरूप है तथा भूमि के जनजातीय समुदाय के अधिकारों के संरक्षण के लिए पूर्णतः कोई प्रावधान नहीं है। वाणिज्यिक गैर-कृषि उपयोग और अन्तरण करने हेतु ग्राम सभा, ग्राम प्रमुख, या किसी अन्य तंत्र के परामर्श करने का अधिकार निहित नहीं है। विकास गतिविधियों के लिए भूमि के हस्तान्तरण में निर्णय लेने की प्रक्रिया में या भूमि अर्जन के समय ग्राम सभा की पूर्व सहमति का कोई प्रावधान नहीं है। वास्तव में, उपरोक्त प्रस्ताव द्वारा विद्यमान नियंत्रण, जो सीमित प्रकृति का है, को हटाया जा रहा है।

प्रस्तावित संशोधन जहां तक यह केन्द्रीय अधिनियमों के विपरीत है, वह राज्य विधान सभा और राज्यपाल में निहित विधायी शक्तियों से बाहर होगा।

अध्यादेश के माध्यम से अधिनियम

संविधान के अनुच्छेद 213 के अन्तर्गत अध्यादेश विधायी सक्षमता की कमी, शक्ति, का संभाव्य प्रयोग और मूल अधिकारों का उल्लंघन आदि जैसे आधारों पर न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन है, (उदाहरण के लिए देखें, सतपाल एण्ड कंपनी बनाम लेफ्टिडेंट गवर्नर, दिल्ली (1979) 4 एससीपी; टी.वेंकलता रेड्डी बनाम आंध्र

प्रदेश राज्य (1985) 3एसपीपी 198; गुरूदेवदत्त वीकेएसएस मर्यादित बनाम महाराष्ट्र (2001)4 एससीसी 534)।

अनुच्छेद 213 के अन्तर्गत, राज्यपाल संतुष्ट है कि "विद्यमान परिस्थितियां ऐसी है कि तत्काल कार्रवाई करने की आवश्यकता है" न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन नहीं है। तथापि, यह आवश्यक है क राज्यपाल को स्वयं को संतुष्ट होना चाहिए कि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान हैं, और इस संबंध में तथ्य और सामग्रियां न्यायोचित है (ए के रॉय बनाम भारत संघ (1982)1 एससीसी 271 को देखें)। वर्तमान मामले में उपलब्ध सामग्री यह प्रदर्शित नहीं करती कि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान है।

उपलब्ध सूचना के अनुसार, प्रस्तावित संशोधन पर जनवरी, 2016 में जनजाति सलाहकार परिषद् द्वारा चर्चा की गई थी, और तत्पश्चात् मई, 2016 में राज्य मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित किया गया। झारखण्ड विधानसभा, जो हाल में सत्रावसान हुई थी उसका अगला सत्र शीघ्र ही आरंभ होगा। अतः संविधान के अनुच्छेद 213 के अंतर्गत अध्यादेशों के माध्यम से दूरगामी प्रभाव वाले संशोधन प्रख्यापित करने के लिए तथ्यात्मक आधार प्रतीत नहीं होता, जबकि इसे आगामी सत्र में, चयनित जनप्रतिनिधियों की संवीक्षा के साथ विधानसभा में प्रस्तुत किया जाना होगा।

कुछ कारणों से राज्य विधानसभा के समक्ष विधेयक को उसी रूप में प्रस्तुत करने की बजाय संथाल परगना काश्कारी अधिनियम और छोटा नागपुर काश्कारी अधिनियम के संशोधनों को लाने के लिए अनुच्छेद 213 के अन्तर्गत प्रक्रिया को नहीं अपनाना अविवेकपूर्ण हो सकता है।

पांचवी अनुसूची के क्षेत्रों में जनजातीय लोगों के भूमि अधिकारों की सुरक्षा, और इस विषय पर संवैधानिक एवं विधायी प्रावधानों की जटिल संरचना के साथ-साथ न्यायिक पूर्व निर्णय की संवेदनशील प्रकृति को देखते हुए और उक्त अनुच्छेदों में बताये गये कारणों के आधार पर आयोग ने सिफारिश की है कि प्रस्तावित अध्यादेशों पर भारत के माननीय राष्ट्रपति की सहमति नहीं दी जाए जब तक कि उन्हें संविधान एवं उसके अन्तर्गत बनाए गए अधिनियमों की मूल भावना के अनुरूप लाने के लिए सम्यक् रूप से संशोधित नहीं कर दिया जाता है।

सादर

आपका

(डॉ. रामेश्वर उरांव)

भाजपा का शासनकाल झाड़खंड में सर्वाधिक 11 सालों का रहा है। इन 11 सालों में 7 गोली कांड हुए है। दिलचस्प तथ्य तो यह है कि सभी गोलीकांड जमीन बचाने को लेकर हुए और विस्थापितों पर ही गोली चालन हुए हैं।

भारतीय जनता पार्टी के कार्यकाल में झाड़खंड में हुए गोली कांडों की सूची।

क्र. संख्या	परियोजना का नाम	गोलीकांड वर्ष	मृतकों की संख्या	घायलों की
1.	कोइलकारो जलविद्युत परियोजना	2001 के दो फरवरी	8 आंदोलनकारी और एक पुलिस वाला	36
2.	काठीकुंड गोली कांड सी ई एस सी कंपनी पावर प्लांट	2008 के छह दिसम्बर	2 आंदोलनकारी	12
3.	पकरी बरवाडीह एन.टी.पी.सी. बड़कागांव गोली कांड	23 जुलाई 2013	1	6
4.	एन.टी.पी.सी. गोली कांड	14 अगस्त 2015	0	6
5.	भैरवी जलाशय परियोजना रामगढ़ जिला	28 अगस्त 2016	2	8
6.	नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन	1 अक्टूबर 2016	5	62 घायलों में 12 गंभीर रूप से और 50 घायल
7.	सोयको गोली कांड	22 अक्टूबर 2016	1	6
		कुल	19	

2008 में दिशोम गुरू शिबू सोरेन मुख्यमंत्री थे तब काठीकुंड दुमका में गोली चली थी। लेकिन पावर प्रोजेक्ट भाजपा के कार्यकाल में ही प्रारंभ हुई।

गायघाट में अडानी पावर प्लांट

गोड्डा जिला के पोड़ैयाहाट प्रखंड के बक्सरा मौजा के 8 गांव को विस्थापित कर गायघाट में अडानी द्वारा पावर प्लांट लगाने और जबरन भूमि अधिग्रहण के खिलाफ रैयतों ने बीते एक साल से आंदोलन छेड़ दिया है। 2013 के भूमि अधिग्रहण में पारदर्शिता, मुआवजा, पुनर्वास और पुनरस्थान कानून के तहत बहुफसली भूमि का अधिग्रहण नहीं किया जाना है। लेकिन सरकार जबरन बहुफसली भूमि का अधिग्रहण कर पावर प्लांट लगाना चाहती है। रैयतों के आंदोलन को झाड़खंड विकास मोरचा ने समर्थन देकर रैयतों के विस्थापन के खिलाफ जंग छोड़ दिया है। रैयतों ने पावर प्लांट के खिलाफ 16 अप्रैल 2017 से अनिश्चितकालीन सत्याग्रह प्रारंभ किया है। झाविमो का कहना है कि पावर प्लांट झाड़खंड की धरती पर लगेगा और बिजली बांग्लादेश को जाएगी। सरकार जबरन तीन फसली भूमि को एक फसली बताकर 2013 कानून का उल्लंघन कर भूमि का अधिग्रहण कर रही है। यह बात माकपा की पूर्व राज्यसभा सांसद वृन्दा करात ने भी रांची में आयोजित एक प्रेस वार्त्ता में कही है कि बिजली बांग्लादेश को जाएगी। झाविमो का कहना है कि 5 मार्च 2017 को पर्यावरण के संदर्भ में सुनवाई का आयोजन किया। इसमें 95 प्रतिशत लोग पावर प्लांट के खिलाफ थे। इसके वाबजूद कुछ लोगों को प्रायोजित कर अडानी ने अपने पक्ष में फैसला करवाया है। झाविमो ने इसकी न्यायिक जांच की मांग की है।

रांची में स्मार्ट सिटी

सरकार ने जबरन रैयतों की खेती वाली जमीन पर स्मार्ट सिटी लगाने का फैसला किया है। इससे 15 गांवों के लोग प्रभावित होगें। यह रांची के एच.इ.सी. एरिया में 656 एकड़ में बनाई जाएगी। पूर्व में सरकार ने 375 एकड़ में स्मार्ट सिटी के निर्माण की मंजूरी दी थी। इस भूमि को सरकार के साथ एच. ई. सी. ने गैरकानूनी तरीके से 14 मार्च 2015 को डीड ऑफ कन्वेयंस किया है और जमीन का हस्तान्तरण किया है। जबकि 2013 अधिनियम के धारा 24 के उपधारा दो के तहत कहा गया है कि पूर्व के अधिग्रहण स्वतः रद्द हो गए है। क्योंकि एच. ई. सी. ने अधिग्रहण के 55 साल बाद भी भूमि पर दखल कब्जा नहीं किया है। दखल कब्जा गांव वालों का बना हुआ है और वे उसमें खेती करते हैं।

निष्कर्ष

भारत में विस्थापन विरोधी आंदोलन उसकी राजनीति और समस्याएं इतनी सघन हैं कि बहुत ही सहज और सरल तरीके से निष्कर्ष निकाल पाना थोड़ा कठिन है। फिर भी देश की आजादी के करीब लगभग 70 सालों में विकास से उपजे विस्थापन की त्रासदी को हल करने के लिए अनेक सुझाव दिए गए हैं तथा कानून व नीतियां बनाई गई हैं। लेकिन विस्थापितों का सवाल हल नहीं हो पाया है निष्कर्ष पर शोध करते हुए जो तथ्य उभर कर आते हैं उसके तीन वृहत् पहलू हैं। एक तो पूर्व के परियोजनाओं के विस्थापितों की समस्याओं को चिन्हित एवं रेखांकित करना और दूसरा ऐसी विकास की योजनाओं का खाका तैयार करना जो विस्थापन के अवसर पैदा न करे या फिर अत्यंत ही कम विस्थापन के साथ विकास हो। यदि कम विस्थापन हो तो उनके पुनर्वास और पुनर्स्थापन और सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक और सम्पूर्ण तरीके से उन्हें पुनर्वासित करने का कार्य कर एक ऐसा मॉडल विकसित किया जाना चाहिए जो हमेशा हमेशा के लिए अनुकरणीय हो। हालांकि ऐसी पहल अब तक नहीं की जा सकी है।

महाराष्ट्र के लातूर में भूकंप के कारण जो विनाशलीला आई उसकी क्षत्तिपूर्त्ति के तौर पर उन्हें आवास निर्माण कर उन्हें दिया गया। यह अत्यंत साधारण तरीके से किया गया। जिसमें आवास मुहैया कराना सबसे बड़ी प्राथमिकता थी। लेकिन विकास से उपजे विस्थापन के मामलों में जिस तरह के पुनर्वास व पुनर्स्थापन का कार्य किया जाना चाहिए उसका सर्वथा अभाव रहा है।

पूरे भूमंडल में एक पहलू जो अत्यंत ही महत्वपूर्ण है वह है बिना विस्थापन के

विकास की अवधारणा का सृजित न होना और इस परिकल्पना को अब

तक मूर्त्त रूप नहीं दिया जा सका है कि आखिर मानव समाज को मानवाधिकार के बुनियादी अधिकारों से वंचित किए बिना विकास को सरजमीं पर कैसे उतारा जाए।

भारत के अलावा अन्य विकसित देशों ने भी इस पहलू पर गौर फरमाने की जरूरत कभी नहीं समझी है।यहीं कारण है कि अमेरिका के टेनेन्सी घाटी निगम की तर्ज पर बने दामोदर घाटी निगम से पैदा हुई विस्थापन की भीमकाय समस्या का निदान अब तक नहीं ढूंढा जा सका है। भारत के निर्माण और विकास की आधारशिला रखते हुए पंचवर्षीय योजनाओं के तहत अंधाधुंध विकास की योजनाओं को अंजाम दिया गया उसके भंयकर परिणाम सामने आए हैं।

समूचे भारत में एक भी ऐसी परियोजना नहीं है जहां से लोगों को उजाड़कर कर उनके अपने पारम्पारिक पर्यावरणीय परिवेश में उन्हें बसा दिया गया हो। विस्थापितों को अपना सामाजिक सांस्कृतिक सामूहिक परिवेश रिश्तेदारी नातेदारी पुनर्वास स्थल पर ही हासिल हुआ हो। ऐसा तो एक भी उदाहरण नहीं मिलता है। लेकिन विस्थापितों को एक बार नहीं दो बार नहीं तीन बार उजाड़ कर बसाने के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

कोइलकारो का अगर उदाहरण लें तो सर्वोच्च न्यायालय के आदेश पर दो गांवों को आदर्श गांव बनाकर मॉडल के तौर पर सरकार को उदाहरण स्थापित करना था।

लेकिन सरकार ऐसा नहीं कर सकी और आदिवासियों का विश्वास उनको खोना पड़ा तथा भारी जनप्रतिरोध का सामना करना पड़ा। आदिवासियों मूलवासियों का ऐसा प्रतिरोध रहा कि कोइलकारो परियोजना बन ही नहीं सकी और सरकार को झुकना पड़ा। विधान सभा में घोषणा के बाद सरकार पीछे हट गई।

ऐसे अनेक उदाहरण है तब विकास के नाम पर केवल भूमि अधिग्रहण कर विस्थापितों कों उनके हाल पर छोड़ देने का काम किया गया और थोड़ें से मुआवजे और थोड़ी सी नौकरी देकर उन्हें मरने के लिए छोड़ दिया गया।

इन परियोजनाओं के विरोध आंदोलन से यह निष्कर्ष निकलता है कि विकास की परियोजनाओं को लेकर एक नई बहस की जरूरत है और विकास की मान्य जन स्वीकृत परिभाषा तय की जानी चाहिए।

निष्कर्ष के लिए विभिन्न पहलूओं पर गौर करें तो दुनिया का सबसे बड़ा

लोकतांत्रिक देश होने के नाते भारत के नीति निर्धारकों ने बड़ी या मध्यम और छोटी परियोजनाओं के लिए कभी भी जन प्रतिभागीदारी कर विकास की योजना को मूर्त्त रूप देने की कोशिश नहीं की।ए सी के कमरों में बैठकर डी पी आर बनाकर ग्रामीणों को गांव खाली करने का हुकुम बजाया जाता रहा है। यह प्रक्रिया ही घातक साबित हुई है। एक तरफ तो विकास के नाम पर लोगों को गांव खाली कराकर उन्हें दूसरे स्थान पर बसाने की कवायद होती रही है और इस प्रक्रिया में केवल कुल विस्थापितों का 20 प्रतिशत ही पुनर्वास होता रहा है। वहीं संविधान में उल्लिखित नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उनके जीने के अधिकार, आवास का अधिकार, स्वास्थ्य का अधिकार, बच्चों के शिक्षा का अधिकार, लोगों के आजीविका का अधिकार की अनदेखी होती रही है। संविधान में उल्लिखित कल्याणकारी राज्य की अवधारणा विकास के कारण उपजे विस्थापन की समस्या के कारण धराशायी होती रही है।इस पहलू पर योजनाओं को बनाते समय हमेशा से नजरअंदाज किया जाता रहा है। अतएव महत्वपूर्ण तो यह है कि किसी भी मेगा मध्यम और छोटी सिंचाई परियोजनाओं की रूपरेखा तैयार करते समय प्रभावितों ग्रामीणों और अन्य विंशेषज्ञों से राय ली जानी चाहिए। एक समग्र योजना के लिए समाजशास्त्री, मानवशास्त्री, मानवाधिकार विशेषज्ञ, महिला और बच्चों के अधिकार पर काम करनेवाले प्रतिनिधि आदिवासी मामलों के विशेषज्ञ, आदिवासियों के सामाजिक सांस्कृतिक रीति रिवाजों के जानकार और विशेषज्ञों को तकनीकी अधिकारियों और इंजीनियरों को विभागीय समन्वय के साथ बैठाने और योजना का प्रारूप तैयार करने की जरूरत है। ऐसा समग्र और वृहत् दृष्टिकोण नहीं अपनाया गया तो विकास के नाम पर आदिवासियों दलितों अति पिछड़े वर्गों और गरीबों का बार बार विस्थापन होता रहेगा और उनके मानवाधिकार का घोर उल्लंघन होता रहेगा।दूसरा महत्वपूर्ण निष्कर्ष तो यह निकलता है कि देश की आजादी के बाद से बनी तमाम मेगा परियोजनाओं चाहे वह भाखंड़ा नांगल हो, हीराकुंड डैम हो, नार्गाजुन सागर परियोजना हो, भारी अभियंत्रण निगम हो, सुवर्णरेखा बहुउद्देश्यीय परियोजना हो, बोकारो स्टील फैक्टरी हो,दामोदर घाटी निगम आदि परियोजनाओं का सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक अंकेक्षण किया जाना चाहिए। वास्तव में इन परियोजनाओं से विकास कितना हुआ कितने लोगों को लाभ हुआ और वास्तव में किस तरह की प्रगति हुई। जिन गांवों को विस्थापित किया गया उन गांवों के लोगों में

साक्षरता और शिक्षा का स्तर कितना बढ़ा, रोजगार के कितने अवसर पैदा हुए, कितनों की आर्थिक उन्नति हुई और समृद्धि का पैमाना क्या रहा है। खुशहाली, शिक्षा का प्रतिशत बढ़ने विस्थापितों के परिवारों में खुशियां और रोजगार पाने के कितने अवसर पैदा हुए इन बातों का आकलन किया जाना चाहिए। आम तौर पर ऐसा नहीं किया गया और विकास के नाम पर सभी बड़ी परियोजनाओं के सामाजिक अंकक्षेण के कार्य से सरकार बचती रही है। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है और समय रहते सरकार मेगा परियोजनाओं के परिणामों का आकलन कर पूर्व विस्थापितों के लिए कुछ ठोस पहल कर उनके राहत के लिए विशेष पैकेज बनाने का कार्य कर सकती है। इससे आजादी के बाद से लगातार विस्थापन की मार झेल रहे विस्थापितों को बुनियादी नागरिक अधिकार हासिल हो जाएंगे। कम से कम विस्थापितों और उनके बच्चों के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार के स्थायी समाधान हों तो वह अपने लिए आवास आदि की व्यवस्था करने लायक हो जाएगा। आर्थिक तौर पर ताकतवर होने से विस्थापितों को प्रगति के लिए रास्ता खुल जाएगा। विस्थापन के राष्ट्व्यापी कुप्रभाव और उसके व्यवस्था पर पड़ते असर के मद्देनजर सरकार को चाहिए की एक आयोग का गठन कर पूर्व में विस्थापितों के हालात पर एक सामाजिक आर्थिक रिर्पोट जारी करे। उस आयोग की अनुशंसा पर विस्थापितों के नागरिक अधिकारों और संबंधित जिलों में सरकारी योजनाओं में विस्थापितों को उसका लाभ देने में प्राथमिकता तय करे। ऐसा करके सरकार देश के लगभग 10 करोड़ लोगों के साथ हो रहे प्राकृतिक अन्याय को हमेशा के लिए समाप्त कर सकती है।जिन लोगों ने राष्ट् के विकास के लिए जमीन दी और अपने सात पुश्तों के जीवन की गारंटी, खाद्य सुरक्षा, आजीविका के अधिकार, भूमि के साथ सांस्कृतिक और कृषिपूर्ण रिश्ते सबको खो दिया उनके लिए आज कुछ भी नहीं है और उनके जीवन में अंधेरा ही अंधेरा है।

विस्थापन एक ऐसी अंधी सुरंग है जिससे विस्थापितों की अनेक पीढ़ियां निकल ही नहीं पाती हैं।उनके लिए शिक्षा शेरनी की दूध की भांति दुलर्भ हो जाती है। उच्च शिक्षा का सपना तो वे देख ही नहीं सकते हैं। इंजीनियर डाक्टर बनना तो उनके ख्वाब में नहीं होता है। खेती समाप्त होने पर उनके लिए कोई काम ही नहीं होता और तकनीकी तौर पर अकुशल होने पर वे किसी प्रकार की नौकरी के लायक ही नहीं होते हैं।

रांची झाड़खंड की राजधानी रांची में भारी अभियंत्रण निगम की स्थापना की गई। इसके लिए 9200 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया गया। लेकिन यह तीन गुना अधिक भूमि का अधिग्रहण हुआ और नतीजा यह रहा कि लगभग 5 हजार एकड़ जमीन अतिरिक्त सरप्लस हो गई। उसे भारी अभियंत्रण निगम ने खाली नहीं कराया। फलतः गांव बसे रह गए और खेती वाली जमीन पर लोग खेती करते रहे। कुल 32 गांवों का उजाड़ने की योजना के आधार पर एच ई सी की स्थापना की गई। इसमें से 12 गांव तो पूरी तरह से उजाड़ दिए गए और बाकी गांवों के खेतों को ले लिया गया। एच ई सी की स्थापना से हुए विस्थापन और विस्थापितों की विविध समस्याओं से रूबरू होने पर पता चलता है कि विस्थापितों की केवल एक पीढ़ी और एक परिवार से केवल एक को नौकरी देने तथा दस एकड़ या उससे अधिक जमीन देने वाले परिवार के दो सदस्यों को नौकरी देने दी गई। इसका परिणाम यह हुआ कि दूसरी और तीसरी पीढ़ी के लोग फाकाकशी में जीवन गुजारने लगे। चूंकि आदिवासी और मूलवासी परिवारों ने भूमि दी थी।

आदिवासियों की अधिक भूमि ली गई थी। यह समाज मूलतः खेतीहर समाज रहा है। इसलिए जमीन के बिना इनके परिवारों में अन्य लोग बेरोजगार हो गए और उनके लिए कोई काम नहीं रह गया। इन उदाहरणों से समझा जा सकता है कि राष्ट्र के विकास के नाम पर कुर्बानी देने वालों ने अपना सब कुछ गंवा दिया लेकिन उन्हें और उनकी पीढ़ी को वाजिब हक नहीं मिल पाया।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाएं और विस्थापन – भारत की आजादी के बाद राष्ट्र के निर्माण के लिए तत्कालीन सोवियत संघ की विकास नीति को अंगीकार कर पंचसाला परियोजनाएं प्रारंभ की गई। पंचवर्षीय योजना के नाम से जाना जाने वाली इस योजना के तहत ही विकास के लिए बड़े कल कारखाने और बांध बनाने की योजना को साकार करने का कार्य किया गया। इसके तहत ही देश ही बड़ी नदियों में बांध बनाने और पनबिजली पैदा करने से लेकर खेतों को पानी देने और बहुउद्देश्यीय परियोजनाओं बताकर आदिवासियों और अन्य खेती पर निर्भर समुदायों से भूमि ले ली गई। बड़े पैमाने पर कोयला और अन्य खनिज के खनन के लिए भी आदिवासियों और मूलवासियों की जमीन ली गई।इससे उपजे विस्थापन की समस्या को समग्रता में हल करने के प्रयास कभी भी नहीं हुए। विभिन्न कंपनियों ने

विस्थापन से निपटने के लिए अपने अपने मानक बनाए। कहीं मैट्रिक पास को तो कहीं कॉलेज जानेवाले को कहीं दो एकड़ वाले को एक नौकरी तो तीन एकड़ वाले को भी एक नौकरी जैसे प्रावधान कर विस्थापितों को ठगने का कार्य किया गया।

विस्थापितों की जमीन पर लगे पेड़ों फलदार वृक्षों और बहुत सारे छोटे बड़े पेड़ों की तो कीमत भी नहीं दी गई। जबकि वे जीविका के बहुमूल्य स्त्रोत् हुआ करते थे।

इससे विस्थापितों के जीवन में यकायक परिवर्त्तन आ गया और उन्हें कुछ भी समझने का मौका नहीं मिला।आजादी के बाद साठ और सत्तर के दशक में हुए विस्थापितों को पेड़ों और उनके कीमती लकड़ी देने वाले पेड़ों और औषधीय गुणों वाले पेड़ों की तो कोई कीमत की नहीं मिल पाई। लेकिन अस्सी के दशक के बाद कीमती पेड़ों की कीमत की मांग की जाने लगी।

वास्तव में पंचवर्षीय योजनाओं के कारण उजाड़े गए लोगों का ही किसी भी सरकार ने लेखा जोखा नहीं किया कि परियोजनाओं के कारण कितने लोग विस्थापित हो रहे हैं और इसका राष्ट्र के विकास पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। सबसे बड़ी गड़बड़ी तो इस बात की हुई कि सरकार ने परियोजना विस्थापितों और प्रभावितों के लिए सम्पूर्ण नागरिक अधिकारों की रक्षा और मानवीय अधिकारों की रक्षा के साथ उनका पुनर्वास के लिए कोई ठोस सुचिंतित योजना ही तैयार नहीं किया। परियोजना काल और उसके बाद भी उनकी कोई सुध नहीं ली गई। विस्थापितों का राष्ट्र निर्माण में क्या योगदान है और उनकी कितनी प्रगति हुई इस बात को लेकर भी बहुत कोई चिंता विभिन्न सरकारों में नहीं रही है। पंचवर्षीय योजनाओं के कारण विस्थापितों का आकलन किए बगैर ही प्रत्येक साल और दशक में विभिन्न मेगा परियोजनाओं को सरजमीं पर उतारा जाने लगा। यहीं सत्ताधीशों से बड़ी भूल हुई।

अंतएव पंचवर्षीय योजनाओं की समीक्षा और मूल्यांकन किंए बगैर अब किसी प्रकार की मेगा परियोजनाओं को धरती पर उतारे जाने के किसी भी निर्णय पर रोक लगाना आवश्यक होगा।निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि सरकार बिना विलम्ब किए पंचवर्षीय योजनाओं का मूल्यांकन करे और विस्थापन लाने वाली बड़ी परियोजनाओं का पुनः आकलन कर रद्द किए जाने की दिशा में कदम उठाए। सरकार ने जिस तरह से योजना आयोग को

समाप्त कर नीति आयोग की स्थापना की है उसके तहत उन योजनाओं को खारिज किया जाना चाहिए जो विकास के नाम पर बड़े पैमाने पर विस्थापन लाता है। चीन जैसे देश में भी बड़े पैमाने पर विस्थापन लानेवाली योजनाओं को सरकारें मंजूरी नहीं देती और कोशिश यह होती है कि कम विस्थापन से विकास हो। बड़े पावर प्लांट की जगह मिनी पावर प्लांट की योजनाओं को चीन में अमली जामा पहनाया गया है।

साठ के दशक में यानी कि 1960 में जिस सरदार सरोवर परियोजना को लागू किया गया उसके परिणाम 2016 में देखने को मिल रहे हैं। बांध की उंचाई 17 मीटर उपर करने पर 245 गांवों के डूबने की नौबत आ गई और पुनर्वास कार्यक्रमों में भ्रष्टाचार और अनियमितताओं का बोलबाला हो गया है। इससे असली विस्थापितों को जमीन के घर और नौकरी और मुआवजा नहीं मिल पाएगा। इसके लिए अब भी नर्मदा बचाओ आंदोलन के तहत लोग अपनी लड़ाई लड़ रहे हैं। नर्मदा जैसी विशाल नदियों में हजारों बांध बनाकर पानी रोककर विस्थापितों की फौज खड़ी कर किसको फायदा पहुंचा है। इस बात का खुलासा अब तक नहीं किया गया है। सरदार सरोवर परियोजना के कारण विस्थापन की जो विभीषिका खड़ी हुई है उससे तो कम से कम इसे स्थगित कर आकलन मूल्यांकन के सामाजिक अंकेक्षण कार्य में जाना चाहिए। इस परियोजना के संदर्भ में निष्कर्ष बहुत स्पष्ट हैं कि सरकार बिना पुनर्वास किए किसी तरह के बांध की उंचाई बढ़ाने का कार्य हर हाल में नहीं किया जाना चाहिए।नर्मदा परियोजना में पुनर्वास कार्य में हो रहे भ्रष्टाचार पर सात साल जांच के बाद जो रिर्पोट दी गई है वह चौंकानेवाली है। असली विस्थापितों की जगह अन्य किसी व्यक्तियों को जमीन की बंदोबस्ती की गई है। ऐसा दो हजार से भी अधिक फर्जी बंदोबस्ती के मामले प्रकाश में आए हैं।कोइलकारो परियोजना और सरदार सरोवर परियोजना में अलग अलग आदेशों में सर्वोच्च न्यायालय ने बिना पुनर्वास के विस्थापन न किए जाने का स्पष्ट आदेश दिया है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय के किसी भी आदेश का पालन न तो कोइलकारो और न ही सरदार सरोवर परियोजना के संदर्भ में किया गया है. अतएव यह भी निष्कर्ष निकलता है कि विभिन्न परियोजनाओं को लागू करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न आदेशों को सख्ती से पालन किया जाना चाहिए। उसके बिना किसी भी परियोजना को अमलीजामा नहीं पहनाया जाना चाहिए.योजना आयोग के तहत लिए गए

तमाम विकास संबंधी फैसलों को नीति आयोग में समीक्षा की जानी चाहिए। बड़ी और अधूरी परियोजनाओं को केवल इसी आधार पर पूरा नहीं किया जाना चाहिए कि वे पूर्व की पंचवर्षीय योजनाओं के तहत स्वीकृत की गई हों। बल्कि सुवर्णरेखा बहुउद्देश्यीय परियोजना की तरह उसे रोक दिया जाना चाहिए। यहां जन प्रतिरोध की वजह से ही परियोजना को पूरी तरह से पूरा नहीं किया जा सका और लम्बे समय तक यह लटकता रहा है। सुवर्णरेखा बहुउद्देश्यीय परियोजना के तहत पनबिजली और खेतों को पानी देने की योजना खटाई में पड़ गई। परियोजना झाड़खंड में और बिजली पानी पश्चिम बंगाल को मिलने की योजना ही लोगों को नागवार गुजरी। झाड़खंड के हिस्से में केवल आंदोलन और अधिकारों की लड़ाई ही आई। लड़ कर भी वह हक नहीं मिला जिसका वह हकदार था। अतएव ऐसी परियोजनाओं का नए सिरे से मूल्यांकन किए जाने की जरूरत है और इन्हें तब तक यथास्थिति में रहने दिया जाना चाहिए।निष्कर्ष के तौर पर ऐसी परियोजनाओं से भी सबक लेने की जरूरत है।

जिसके विरोध में लगातार संघर्ष चल रहे हों। महत्वपूर्ण बात तो यह है कि बड़ी परियोजनाओं के विरोध में जो आंदोलन चल रहे हैं और पूर्व के दशकों में बड़े आंदोलन होते रहे हैं उनकी विभिन्न सरकारों के द्वारा अनदेखी होती रही है। उन विस्थापन विरोधी आंदोलन के विभिन्न मांगों को सिरे से ही नकारा जाता रहा है।दशकों से चल रहे विस्थापन विरोधी आंदोलन को सरकारें सुनने को तैयार नहीं होती हैं। अब भी झाड़खंड में दो बड़ी परियोजनाओं के खिलाफ बड़े आंदोलन चल रहे हैं और परियोजनाओं को रद्द किए जाने की मांग की जाती रही है। लेकिन इन दोनों परियोजनाओं में से किसी भी परियोजना को अब तक रद्द नहीं किया गया है। इनमें से एक परियोजना कोइलकारो जलविद्युत परियोजना के विरोध में चल रहा आंदोलन है जो सत्तर के अंतिम दशक से प्रारंभ होकर नब्बे के दशक तक लगातार विभिन्न नेतृत्व में लड़ा जाता रहा है। कोइलकारो परियोजना के विरोध में चल रहे आंदोलन में भी परियोजना को महाविनाशकारी बताकर उसे रद् करने की मांग की जाती रही है। कोइलकारो होकाएपे यानी कोइलकारो परियोजना को बंद करो की मांग की जाती रही है। इसे महाविनाशकारी परियोजना बताया जाता रहा है। 2001 में परियोजना स्थल पर आंदोलन करते हुए लोगों पर गोलीचालन किया गया। आठ लोग मारे गए। लेकिन अब

तक 2016 में भी कोइलकारो परियोजना को रद्द करने संबंधी अधिसूचना जारी नहीं की गई है।हर साल 2 फरवरी को शहीदों की याद में तपकरा घटनास्थल पर लोग जमा होते हैं और परियोजना का विरोध कर शहीदों को याद करते हैं।

झाड़खंड विधान सभा में प्रथम मुख्यमंत्री बाबूलाल मरांडी द्वारा घोषणा की गई कि अगर जनता परियोजना नहीं चाहती है तो परियोजना नहीं बनेगी।कोइलकारो परियोजना का प्रतिरोध इसलिए भी जोरदार तरीके से किया गया क्योंकि पूर्व के अनुभवों ने जनता की आंखे खोल दी थी। कोइलकारो परियोजना विरोधी आंदोलनकारियों और जनता को भारी अभियंत्रण निगम एच. ई. सी. की स्थापना के लिए दिए गए 32 गावों के विस्थापितों के हालात की जानकारी थी। उन्हें दामोदर घाटी निगम से विस्थापित हुए लोगों की समस्याओं और उनके दर दर भटकने की गाथाएं मालूम थी। पूर्व के कड़वे अनुभवों ने उन्हें धारदार बनाया और वे तीखा प्रतिवाद करने लगे। उन्हें यह अहसास हो गया था कि वे एक बार उजाड़ दिए जाएंगे तो फिर हमेशा के लिए बस नहीं पाएंगे। क्योंकि सरकार के पास विस्थापितों की कोई ठोस योजना नहीं है।

दूसरी बड़ी विस्थापन लानेवाली परियोजना में पायलट प्रोजेक्ट नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज है। इसके तहत सेना की स्थायी छावनी बनने वाली है। 1993 से ही फील्ड फायरिंग रेंज के खिलाफ वहां की लाखों की जनता प्रतिरोध करती आ रही है। लगभग 25 सालों के इस विस्थापन विरोधी आंदोलन के बावजूद सरकार ने इसे रद् करने की कोई अधिसूचना जारी नहीं की है। नेतरहाट फील्ड फायरिंग रेंज के विरोध में चल रहे आंदोलन के पीछे भी वही अनुभव और पूर्व में विस्थापित हुए लोगों की पीड़ा है जिसकी वजह से वे व्यापक तौर पर विस्थापन लानेवाली परियोजनाओं का विरोध करते रहे हैं। यही कारण है कि अस्सी के दशक के बाद से कोई भी बड़ी परियोजनाओं को लागू नहीं किया जा सका है। जनता से सवांद के बदले आंदोलन का दमन करने के उपाय विभिन्न सरकारों के द्वारा किया जाता रहा है।

विस्थापन की समस्या के विकराल स्वरूपों को जनता ने भलीभांति समझा और परखा है। इसी वजह से प्रतिरोध के स्वर भी उतने ही मुखर रहे हैं। विकास और विस्थापन के निष्कर्ष के विभिन्न पहलूओं पर गौर करें तो इसका एक अनन्य पहलू यह है कि भारत के संविधान के अन्तर्गत पांचवीं

अनुसूची का प्रावधान दरअसल अनुसूचित क्षेत्रों के लिए है।अनुसूचित क्षेत्रों का शासन प्रशासन पांचवीं और छठी अनुसूची के प्रावधानों के मुताबिक संचालित किया जाना है। लेकिन दुर्भाग्य से अनुसूचित क्षेत्रों के लिए विकास संबंधी फैसले में कभी भी प्रावधानों का पालन नहीं किया जाता है। पांचवी अनुसूची के प्रावधानों के तहत साल में दो बार जनजातीय परामर्शदातृ समिति की बैठक आहूत की जानी है। आजादी के बाद से ऐसा उन सभी राज्यों में नहीं हो सका जहां पांचवीं अनुसूची के प्रावधान लागू हैं। इसके साथ ही पांचवीं अनुसूची के इलाके की एक प्रशासनिक प्रतिवेदन भी प्रतिवर्ष राज्यपाल के माध्यम से भारत के राष्ट्पति को भेजा जाना है।लेकिन इस प्रावधान का भी पालन नहीं किया जाता रहा है। झाड़खंड का ही उदाहरण लें तो गत 16 सालों में केवल एक प्रशासनिक प्रतिवेदन ही राज्यपाल के माध्यम से राष्ट्रपति को भेजी गई है।

आदिवासी इलाकों में शासन प्रशासन के लिए भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने पंचशील के सिद्धान्त दिए थे। पंचशील के सिद्धान्तों के मुताबिक आदिवासी इलाके में विकास की प्रक्रिया चलाने से पूर्व उनकी परम्परा और संस्कृति को प्राथमिकता देने की बात कही गई थी। पंचशील के प्रथम सिद्धान्त के मुताबिक आदिवासी इलाकों में विकास की किसी भी मेगा योजनाओं को थोपा नहीं जाना चाहिए। यदि विकास की जरूरत हो तो विकास संबंधी निर्णय प्रक्रिया में आदिवासियों और विकास से प्रभावितों की भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए। पंचशील के दूसरे सिद्धान्त के तहत कहा गया कि आदिवासियों के भूमि और जंगल संबंधी अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए। पंचशील के तीसरे सिद्धान्त के मुताबिक आदिवासी इलाके के शासन प्रशासन के लिए प्रशासकों की ऐसी फौज खड़ी की जानी चाहिए जो आदिवासियों की भाषा, संस्कृति, परम्परा, रीति रिवाजों से गहरा सरोकार रखता हो। चौथे सिद्धान्त के मुताबिक आदिवासियों का विकास उनकी संस्कृति और परम्पराओं को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। पंचशील के आखिरी पांचवें सिद्धान्त के मुताबिक किसी भी परियोजना का मूल्यांकन खर्च की गई राशि के आंकड़ों के आधार पर नहीं किया जाना चाहिए बल्कि यह आंका जाना चाहिए कि विकास के कारण कितना नैतिक और आध्यात्मिक विकास हुआ है। लेकिन आजादी के बाद प्रथम प्रधानमंत्री पंडित नेहरू ने ही और उनकी पार्टी ने ही यह सब कुछ भूला दिया और

अंधाधुंध तरीके से आदिवासी राज्यों में बड़ी बड़ी परियोजनाओं का शिलान्यास अपने प्रधानमंत्रित्व काल में ही किया। इसका परिणाम आज लगभग 70 सालों में देखने को मिल रहा है। विकास से उपजे विस्थापन इन्हीं पंचशील के सिद्धान्तों की गहरी अनदेखी का सबसे बड़ा कुपरिणाम है।

निष्कर्ष स्वरूप इन बातों का उल्लेख करने का मकसद यह है कि आदिवासी इलाकों में बिना विलम्ब के पंचशील के सिद्धान्तों को लागू करना और भारत के संविधान के अन्तर्गत पांचवी अनुसूची के प्रावधानों का सख्ती से लागू किया जाना चाहिए। यही नहीं विकास के लिए तैयार की जा रही परियोजनाओं के डिजाइन और उसके मेकेनिज्म में संभावित विस्थापितों और प्रभावितों को भागीदार बनाया जाना चाहिए।डी पी आर तैयार करते समय भी उच्चस्तरीय कमेटी में ग्रामीण प्रतिनिधि के तौर पर उन्हें शामिल किया जाना चाहिए। ऐसा किए जाने से उनके सुझावों और उनकी जरूरत के मुताबिक परियोजना का ढांचा तैयार करने में मदद मिलेगी और संभावित विस्थापित अपनी पसंद के अनुरूप पुनर्वास आदि की प्रकिया में साझेदार हो सकेगें। उपरोक्त पहलूओं का उल्लेख करने का उद्देश्य यह है कि विकास की छोटी मध्यम या मेगा परियोजनाओं को लागू करने के पूर्व विस्थापितों की सही संख्या, उनकी आर्थिक स्थिति, सामाजिक व सांस्कृतिक परिस्थति का सही सही आंकड़ा तैयार किया जाना चाहिए। बिना पूर्ण मुआवजा, पुनर्वास और पुनर्स्थापन के किसी भी गांव को खाली नहीं कराया जाना चाहिए। पेड़ों और बहुमूल्य प्राकृतिक संसाधनों का मूल्य का भी भुगतान किया जाना चाहिए। ब्रिटिशकालीन कानून 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत केवल भूमि का अधिग्रहण किया गया। चाहे एच ई सी हो या बोकारो स्टील फैक्टरी हो जरूरत से चार गुना ज्यादा जमीन ले ली गई। 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत अतिरिक्त भूमि रैयतों को वापस किया जाना चाहिए था। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। अतिरिक्त भूमि की खरीद बिक्रीं की जाने लगी और रैयतों जमीन वापसी के लिए संघर्ष ही करते रह रहे है।अतएव भविष्य में कल कारखाना, बांध या अन्य विकास की परियोजनाओं के लिए जरूरत से अधिक जमीन नहीं लिए जाने का प्रावधान किया जाना चाहिए।

भूमि अधिग्रहण के बाद मुआवजा नौकरी और जमीन के बदले जमीन जैसे पुनर्वास की व्यवस्था से विस्थापितों की पीड़ा और उनकी समस्या का

हल नहीं हो पाया है। जमीन के बदले जमीन दिए जाने के अनेक मामलों में यह पाया गया है कि ऐसे वातावरण और दूरस्थ स्थानों पर उन्हें उठाकर ले जाया जाता है जो शहर से तो क्या अपने पारम्पारिक गांवों से भी अत्यंत दूर होते हैं जहां नागरिक सुविधाओं की पहुंच नहीं हो पाती है। पूर्वी परेज कोयला खनन परियोजना से विस्थापित हुए लोगों को जमीन के बदल जमीन देकर ऐसे स्थान पर ले जाया गया जहां न तो उन्हें पीने का पानी नसीब हो रहा था और न ही स्वास्थ्य की कोई सुविधा ही उपलब्ध थी।पूर्वी परेज हजारीबाग जिला में विश्व बैंक संपोषित परियोजना है। यहां से विस्थापित किए गए आदिवासियों को चनारो के जंगल के पास ले जाकर बसा दिया गया। जहां न तो बिजली की सुविधा है और न ही किसी तरह की सड़क और पानी की ही व्यवस्था है। जंगल के किनारे की भूमि पर लाकर इन्हें बसा दिया गया।

मलेरिया के कारण अनेक बच्चे और औरतें बीमार होकर मर गए। एक परिवार के सात बच्चे इस कारण से अनाथ हो गए क्योंकि उनकी मां को ही मलेरिया हो गया और इलाज के अभाव में वह मर गई।

अतएव जमीन के बदले जमीन का प्रावधान होने के बावजूद उन्हें ऐसी बसाहट में जगह दी जानी चाहिए जहां वे आसानी से शहर पहुंच सकें और नागरिक सुविधाएं उन्हें भी हासिल हो सके। शहर के विस्तार के नाम पर रैयतों विस्थापितों को शहर के किनारे के स्थान पर ले जाना और बाहरी आबादी को शहर के मुख्य स्थान पर बसाने की योजना सरकारें बनाती रही हैं। इन योजनाओं से भी विस्थापितों के साथ अन्याय होता रहा है।

1894 के अधिनियम के समाप्त होने के साथ गत लगभग 119 बरस पुराना कानून के बदले सरकार ने 2013 का भूमि अधिग्रहण में पारदर्शिता, प्रतिकर, पुनर्वास पुनर्स्थापन अधिनियम एक जनवरी 2014 से लागू किया है। 2013 के नए अधिनियम के मुताबिक सरकार को भूमि अधिग्रहण के पूर्व ग्राम सभा से अनुमति लेनी होगी और ग्रामीणों से विचार विमर्श करने के बाद ही किसी भी परियोजना को लागू किया जा सकेगा। सरकार किसी परियोजना को लागू करने के लिए गांव के 70 प्रतिशत लोगों की सहमति प्राप्त करके परियोजना को लागू कर सकती है। इसके साथ निजी कंपनी को 80 प्रतिशत ग्रामीणों की सहमति के बाद परियोजना को लागू करने का प्रावधान किया गया है।

पूर्व के अनुमानों और अनुभवों के आधार पर विशेषज्ञों की राय है कि 2013 का कानून विस्थापन को रोकने या कम करने में महत्ती भूमिका अदा कर करेगा। इसके धारा 24 के उपधारा 2 के तहत यह उल्लेख किया गया है कि 1894 के भूमि अधिग्रहण अधिनियम के धारा 11 के तहत यदि भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया प्रारंभ की गई और भूमि का अधिग्रहण किया गया।

लेकिन 2013 के भूमि अधिग्रहण पुनर्वास व पुनर्स्थापन कानून के आलोक में भूमि पर पोजेशन यानी कि दखल नहीं किया गया हो तो पुराने अधिग्रहण स्वतः रद्द हो जाएंगें। रैयत या गांव के बसे होने या खेती होने की स्थिति में सरकार उन गांवों को बिना 2013 कानून के आलोक में बिना प्रक्रिया और ग्रामीणों की सहमति के खाली नहीं करा सकती हैं। यदि सरकार को उन भूमि की जरूरत होगी तो नए सिरे से अधिग्रहण की प्रक्रिया प्रारंभ कर बाजार दर से 4 गुना ज्यादा मुआवजा देना होगा। इस धारा में इस बात का भी उल्लेख है कि अगर भूमि अधिग्रहण के बाद मुआवजा का भुगतान नहीं किया गया हो तब भी अधिग्रहण स्वतः रद्द हो जाएगा। अतएव सरकार को आदिवासियों, दलितों, पिछड़े और गरीबों को विस्थापित करने से रोकना है तो 2013 के कानून को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए। लेकिन ऐसा देखा जा रहा है कि सरकार इस कानून के लागू होने के बावजूद इसका पालन नहीं कर रही है और कानून विरूद्ध जबरन आदिवासियों मूलवासियों की भूमि का अधिग्रहण कर रही है। इससे प्रतीत होता है कि सरकार कल्याणकारी अवधारणा को समाप्त कर देना चाहती है।किसी तरह चंद लोगों का विकास कर आदिवासियों मूलवासियों को उजाड़ देना चाहती है। इसके लिए सरकार पर दबाब बनाने की भी जरूरत है ताकि कानून का राज कायम हो सके। रांची स्थित भारी अभियंत्रण निगम के द्वारा 1960 में किए गए अधिग्रहण और

पूर्ण तथा आंशिक विस्थापन को इस संदर्भ में समझा जा सकता है। अतिरिक्त जमीन होने पर अनेक गांवों को लगभग 56 साल पूर्व खाली नहीं कराया गया और उन्हें पारम्पारिक बसाहट में रहने दिया गया.लेकिन झाड़खंड राज्य बनने के पश्चात् सरकार मास्टर प्लान लागू कर 1960 में अधिग्रहित गांवों को उजाड़ने में आमादा है। इसके लिए 2013 के धारा 24 के उपधारा 2 का पालन करने से मना कर रही है। सरकार का कहना है कि कानून से देश नहीं चलता है। ऐसे में ग्रामीणों के सामने अदालत का दरवाजा

खटखटाने के सिवा कोई चारा नहीं था। सैकड़ों परिवार के लोग अदालत में मुकदमा दर्ज कर न्याय की मांग कर रहे हैं। अंत में यह कहना आतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारे देश में सरकार उसी तरह का आचरण कर रही है जैसे आस्टिेलि्या में **टेरान्यूलास** का सिद्धान्त है। यानी जो जमीन किसी की नहीं है वह राजा की जमीन हो जाती है। यानी किसी भी जमीन को राजा अपनी जमीन बता सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

सरकारी दस्तावेज

1. कोइलकारो ज़ल विद्युत परियोजना भू अर्जन एवं पुनर्वास निदेशालय रांची हमारा संकल्प, 1991, बिहार सरकार, रांची
2. नेशनल हाइड्रोइलेक्ट्रिक पावर कोरपोरशन लिमिटेड, मई 2000 कोइलकारो प्रोजेक्ट तोरपा, रांची, बिहार, इनफोरमेंशन ब्रोसर
3. पर्यावरण समिति का प्रतिवेदन,झरिया में जमीन धंसने की घटना से उत्पन्न परिस्थिति तथा स्थानीय आबादी के पुनर्वास की समस्या, बिहार विधान परिषद्, पटना, दिसम्बर 1996
4. विद्यार्थी एल. पी. इंडस्ट्रियलाइजेशन इन इंडिया ए केस स्टडी ऑफ बिहार, रिसर्च प्रोग्राम कमेटी,प्लानिंग कमीशन, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1970
5. बिहार विधान परिषद, तीसरा प्रतिवेदन : ए रिर्पोट ऑन वर्स्ट इम्पैक्ट ऑफ यूरेनियम रेडियेशन , राजमहल परियोजना, बॉक्साइट माइनिंग, पब्लिशड बाई बिहार विधान परिषद दिसम्बर 1998
6. सिंहभूम डिस्ट्रिक्ट गजेटियर
7. भारत का संविधान,भारत सरकार विधि न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय 1999 नई दिल्ली

पुस्तकें

1. अरीपरम्पील मैथ्यू 1995 ट्राइबल्स ऑफ झाड़खंड भिक्टिमस ऑफ डेवलपमेंट, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट नई दिल्ली
2. ओन डेवलपमेंट डिसप्लेसमेंट एंड रिप्रेशन इन झाड़खंड टुडे, 2009 इंडिपेंडेंट पीपुल्स ट्रिब्यूनल, इंडियन सोशल एक्शन फोरम, नई दिल्ली

3. एक्का अलेक्स, आसिफ मोहम्मद दिसम्बर 2000 डेवलपमेंट इंडयूस्ड डिसप्लेसमेंट एंड रिहैबिलिटेशन इन झाड़खंड, 1951 टू 1995ः ए डाटाबेस ओन इटस एक्सटेंट एंड नेचर, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली
4. गुप्ता रमणिका, 2008 आदिवासीः विकास से विस्थापन, राधाकृष्ण नई दिल्ली
5. तिर्की पीयूष विस्थापन का आतंक, 2011 केंद्रीय जन संघर्ष समिति लातेहार, गुमला, झाड़खंड
6. पांडेय बालाजी 1998 डिसपेल्समेंट डेवलपमेंट इम्पैक्ट ऑफ ओपन कास्ट माइनिंग ओन वुमेन , फ्रेडरिक इबर्ट इसटिफटंग, नई दिल्ली
7. फर्नाडीस वाल्टर एंड परांजपे विजय,1997 रिहैबिलिटेशन पोलिसी एंड लॉ इन इंडिया : ए राइट टू लाइभलीहुड, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट नई दिल्ली
8. फर्नाडीस वाल्टर, भाराली गीता, 2011 : अपरूटेड फोर हूज बेनेफिट, नोर्थ ईस्टर्न सोशल रिसर्च सेंटर गुवाहाटी
9. फर्नाडीस वाल्टर 1993 द इंडिजिनिस क्वेसचनस सर्च फोर अन आइडेंटीटी, इंडियन सोशल इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली
10. बड़े बांध, भारत का अनुभव विश्व बांध आयोग के लिए तैयार की गई रिर्पोट, नई दिल्ली, जून 2000
11. बांध और विकास : निर्णय तैयारी के लिए नया प्राधार विश्व बांध आयोग का विवरण एक पर्यावलोकन, ब्रिटेन अर्थस्कैन लिमिटेड, नवम्बर 2000
12. महतो शैलेंद्र जनवरी 2011झाड़खंड की समरगाथा, निधि बुक्स, गाजीपुर, नई दिल्ली
13. मार्टिना क्लास और हार्टिंग सेबसटिन, 2003 द कोइल कारो प्रोजेक्ट अन इमपीरिकल स्टडी ऑफ द रेसीसटेंस मूभमेंट ऑफ द आदिवासी इन झाड़खंड, इंडिया : प्रकाशक यूनिवर्सिटी ऑफ कैसल, जर्मनी
14. आदिवासी अस्तित्व पर सुनियोजित हमला, स्टेन स्वामी,झाड़खंड एक्सप्रेस मई 2015
15. झाड़खंड में विस्थापन एवं मानवाधिकार, पी. ए. चाको प्रकाशक जेसुइटस ऑफ संथाल सोसायटी, दुधानी, दुमका 814101, 2008

पत्र पत्रिकाएं

1. कोइलकारो जन संगठन पत्र 1995
2. जन सत्याग्रह संवाद यात्रा, किसका जल, किसकी जमीन, किसका जंगल, महात्मा गांधी सेवा आश्रम, मध्यप्रदेश, 2011–2012
3. संघर्ष संवाद नई दिल्ली जुलाई 2012
4. रांची घोषणापत्र और जनविकास मॉडल, विस्थापन विरोधी जनविकास आंदोलन, प्रकाशन रांची, 2015
5. डैमस रिभर एंड पीपुल भोल्यूम 4 इश्यू 6 नई दिल्ली, जुलाई 2006
6. प्रसाद अर्जुन, भोला, 2010 औरंगा का जंग,औरंगा ग्रामीण विकास समिति,
7. पंडित के. एन., 2015 विस्थापन एवं जन आंदोलन, विस्थापन विरोधी जनविकास आंदोलन की ललकार के चुनिंदे लेखों का संग्रह अंक 1 से 8 तक, विस्थापन विरोधी जनविकास आंदोलन, रांची मोरहाबादी झाड़खंड
8. विस्थापन विरोधी जनविकास आंदोलन,रांची घोषणापत्र और जनविकास मॉडल, रांची, 2015
9. साउथ एशिया नेटवर्क ओन डैमस रिभरस एंड पीपुल, नई दिल्ली
10. दि इंडियन पीपुल्स ट्रिब्यूनल ऑन एनवायर्नमेंट एंड हयूमन राइटस, जनवरी 2002 कोइलकारो तपकरा में हुई पुलिस फायरिंग और झाड़खंड स्थित कोइलकारो परियोजना के विरोध के विषय में स्वतंत्र जांच रिर्पोट, मुम्बई
11. जनहक, 1998 जनहक संवाद नेटवर्क, विशेषांक, प्रकाशक वासवी,रांची
12. जनहूल, 1996,जनसवांद, कोइलकारो जन संगठन, रांची
13. तपकरा पुलिस फायरिंग और कोइलकारो परियोजना पर स्वतंत्र जांच रिपोर्ट : दि इंडियन पीपुल्स ट्रिब्यूनल ऑन एनवासर्नमेंट एंड हयूमन राइट्स जनवरी 2002
14. द लैंड क्वेशचन एंड द मारजीनलाइज्ड, इंडिया सोशल डेवलपमेंट रिर्पोट, काउंसिल फोर सोशल डेवलपमेंट,नई दिल्ली, 2010,
15. नर्मदा बचाओ आंदोलन और नेशनल एलायंस ऑफ पीपुल्स मूवमेंट, नई दिल्ली ई मेल द्वारा जून 2016

16. नर्मदा बचाओ आंदोलन 30 इयरस ऑफ रेसीलेंस, नई दिल्ली, 2015
17. विकास आधारित बेदखली एवं विस्थापन पर संयुक्त राष्ट्र के मूल सिद्धान्त व दिशानिर्देश, एक पुस्तिका, आवास और भूमि अधिकार संगठन, यूथ फॉर यूनिटी एंड वालंटरी एक्शन, नई दिल्ली 2011
18. मेहता प्रसाद भुवनेश्वर 2015, झाड़खंड में विस्थापन एक बड़ा अभिशाप, भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी, रांची
19. श्रीधर आर, 2011, खनन खलता है, एनवायरोनिक्स ट्रस्ट, ऑक्सफेम इंडिया, एम एम डी आर
20. शर्मा रमेश,2014 जनसत्याग्रह जिन्दाबाद, एकता परिषद, नई दिल्ली
21. सिंह एच. के. 2005, इम्पलीकेशन ऑफ इंडस्ट्रियलाइजेशन फोर द ट्राइबल्स ऑफ झाड़खंड, जेवियर रिसर्च जरनल 2005 : 4 : 13–23
22. स्वामी स्टेन, सोरेंग जेवियर, 15 फरवरी 2015 भूमि अधिग्रहण अध्यादेश 2014 अर्थात् विस्थापन का आदेश, झाड़खंड एक्सप्रेस सिमडेगा भवन, डंगरा टोली, रांची
23. डेवलपमेंट एंड डिस्पेलसमेंट इंडिया सोशल डेवलपमेंट रिर्पोट, काउंसिल फोर सोशल डेवलपमेंट,ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2008
24. अप्रकाशित शोध प्रपत्र कोइलकारो वी किड़ो 2006
25. आदिवासी अस्तित्व पर सुनियोजित हमला, स्टेन स्वामी,झाड़खंड एक्सप्रेस मई 2015
26. झाड़खंड में विस्थापन एवं मानवाधिकार, पी. ए. चाको प्रकाशक जेसुइटस ऑफ संथाल सोसायटी, दुधानी, दुमका 814101, 2008
27. स्पीयर संस्था द्वारा उपलब्ध दस्तावेज।

वेबसाइट

1. डबल्यू डबल्यू डबल्यू डोट डिक्सनरी डोट कैम्ब्रिज डोट ओआरजी
2. डबल्यू डबल्यू डबल्यू डोट एन ए पी एम डैस इंडिया डोट ओआरजी
3. डबल्यू डबल्यू डबल्यू डोट नर्मदा डोट ओआरजी
4. डबल्यू डबल्यू डबल्यू डोट नोटोडिसप्लेसमेंट डोट कॉम
5. डबल्यू डबल्यू डबल्यू डोट फियानइंडिया डोट ओआरजी
6. डबल्यू डबल्यू डबल्यू डोट यू एन डोट ओआरजी

□□□



डॉ. वासवी किड़ो

डॉ. वासवी किड़ो झाड़खंड की जानी–मानी पत्रकार रही हैं. उनका जन्म 1967 रांची में उरांव आदिवासी परिवार में हुआ। उनकी परवरिश नाना नानी के परिवार में हुई। वह कम उम्र की थी तब पिता का निधन हुआ। अभावों में बढ़ते हुए उन्होंने अपनी मेहनत से एम. ए. तक की पढ़ाई पूरी की और पी–एच.डी. किया। विभिन्न राष्ट्रीय अखबारों में उन्होंने लगभग 17 सालों तक काम किया।

पत्रकारिता के क्षेत्र में उनके योगदान के लिए उन्हें चमेली देवी जैन नेशनल अवार्ड, 2011,सरोजिनी नायडू अवार्ड; 2002 और शहीद शंकर गुहा नियोगी अवार्ड से सम्मानित किया गया। वे बिहार की प्रथम हाई टेक पत्रकार रही है। विस्थापन विरोधी आंदोलन, जंगल अधिकार आंदोलन, महिलाओं के अधिकार और आदिवासी अस्मिता के सवाल पर उनके योगदान के लिए उन्हें झारखंड रत्न की उपाधि से विभूषित किया गया। वे भारत सरकार की दो राष्ट्रीय कमेटियों की सदस्य रही हैं। झारखंड राज्य महिला आयोग में 2010 से 2013 तक सदस्य रही।

उनकी प्रमुख कृतियां हैं ताबेन जोम, झाड़खंड ही क्यों, झाड़खंड की बेटी रूप की मंडी, उलगुलान की औरतें तथा भारत की क्रांतिकारी आदिवासी नारियां आदि है। वे अखिल भारतीय आदिवासी साहित्यिक मंच की संस्थापकों में से एक और राष्ट्रीय संगठन सचिव है। वे टोड़ांग ट्रस्ट की संस्थापक हैं। उन्होंने आदिवासी और महिला मुद्दों पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग लेते हुए आठ देशों का दौरा किया है। उन्होंने अनेक मसलों पर शोध आलेख सम्मेलनों के लिए तैयार किया। वे विस्थापन विरोधी आंदोलनों में सक्रिय रही है।आदिवासी औषध होड़ोपैथी के विकास के लिए वे प्रयासरत है।

स्वराज प्रकाशन

4648/1, 21, अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली- 110002
दूरभाष : 011- 23289915
Email: swaraj_prakashan@yahoo.co.in

ISBN : 978-93-83514-16-8